अनुक्रमणिका/Index

01. अनुक्रमणिका /Index 01

02. क्षेत्रीय सम्पादक मण्डल/सम्पादकीय सलाहकार मण्डल 06/07

03. निर्णायक मण्डल 08

04. शासकीय महाविद्यालय, धामनोद में दिनांक 23, 24 फरवरी 2015 को आयोजित राष्ट्रीय शोध संगोष्ठी की झलकियाँ 10

(Science / विज्ञान)

05. Study Of Species Diversity And Effect Of Seasonal Changes In Grassland 11
Vegetation Of Panna (M.P.) (Dr. Mukta Shrivastava)

06. Waste Disposal Practices in a Slum of Bhopal (Dr. Deepika Gupta) 14

07. A Beautiful Exotic Plant Senna Alata Found n Dhar (M.P.)India 16
(Nirbhay Singh Solanki, S.C. Mehta)

08. Vermiculture Biotechnology for Waste Management and Sustainable Agriculture 19
(Dr. Seema Bhola)

09. Incidence Of Submucous Fibrosis Due To 21
Tobacco Chewing At Satna (Dr. Rashmi Singh)

10. Seasonality And Phenology In Grassland Community Of Panna (M.P.) (Dr. Mukta Shrivastava) 23

11. बुन्देली लोक परम्पराओं में निहित मानव जाति पारिस्थितिकी एवं पर्यावरण संरक्षण (डॉ. मुक्ता श्रीवास्तव) 25

12. आध्यात्मिक प्रश्नों के समाधान में भौतिक शास्त्र की उपयोगिता (डॉ. आर. के. गुप्ता) 27

(Home Science / गृह विज्ञान)

13. शहरी एवं ग्रामीण किशोरों में जाति के आधार पर चिंता एवं कुंण के मध्य सहसंबंधात्मक अध्ययन 29
(डॉ. नंदिनी रेखड़े, जयश्री बाथम)

(Commerce & Management / वाणिज्य एवं प्रबंध)

14. "A Study On The Impact Of Foreign Direct Investment (FDI) In An Indian 32
Economy" With Special Refrence To Retail Sector In M.P. (Antima Shekhawat Bhatia)

15. Human Resource Management And Occupational Health & Safety System 36
In Construction Industry (Vikram Singh, Dr. Kapil Dev Sharma)

16. मध्यप्रदेश के धार जिले में औद्योगीकरण की वर्तमान स्थिति एवं संभावनाएँ (वर्ष 2014 की स्थिति में) 39
(डॉ. सुरेन्द्र कुशवाह, पंकज कुशवाह)

17. भारत का विदेशी व्यापार – मूल्य, संरचना एवं दिशा (डॉ. विजय ग्रेवाल) 41

18. प्राचीन भारतीय ज्ञान में शासन व्यवस्था (डॉ. विम्मी बहल, डॉ. ओ.पी. शर्मा) 44

19. भूमण्डलीय व्यापार के अंतर्गत अंतर्राष्ट्रीय सम्प्रेषण –ई – कॉमर्स का बढ़ता महत्व (डॉ. श्रद्धा काबरा) 47

20. मुद्रा स्फीति तथा मुद्रा अपस्फीति (मनोज कुमार साहू) 49
21. कैसा होगा भावी पर्यावरण ? (डॉ. अभय मुंगी) 51
22. नैतिक मूल्य – प्रभाव एक अध्ययन (डॉ. गणेश प्रसाद दावरे) 53

(Economics / अर्थशास्त्र)

23. The Alternatives To Economic Planning (Dr. R.P. Saharia) 55
24. अनुसूचित जातियों के आर्थिक उत्थान में स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना की भूमिका 58
(बिलासपुर जिले के कोटा विकास खण्ड के विशेष संदर्भ में) (मोहन लाल पटेल)
25. उद्यमिता विकास में वित्तीय संस्थानों की भूमिका – एक अध्ययन (खण्डवा जिले के संदर्भ में) (मनु श्रॉफ) 61
26. मध्यप्रदेश का निर्यात व्यापार – एक अध्ययन (डॉ. दीपाली बेहेरे) 64
27. जनसंख्या, गरीबी एवं पर्यावरण संकट (रावेन्द्र सिंह पटेल) 66
28. स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना का अनुसूचित जनजाति अर्थव्यवस्था पर प्रभाव 68
(बिलासपुर जिले के कोटा विकास खण्ड के विशेष संदर्भ में) (मोहन लाल पटेल)
29. शहरी सहकारी बैंकों में उत्कृष्ट ग्राहक सेवाएँ – एक आवश्कता (डॉ. सोनी व्यास) 71
30. आदिवासी समाज की आर्थिक – समस्या एवं समाधान (रावेन्द्र सिंह पटेल) 73
31. बैंकिंग क्षेत्र की नवीन चुनौतियाँ (डॉ. सोनी व्यास) 75

(Political Seience / राजनीति विज्ञान)

32. भारत में महिला हिंसा एवं विधिक प्रावधान(डॉ. ज्योति मार्टिन) 77
33. संवैधानिक प्रावधान तथा बाल विकास व संरक्षण (डॉ. विनिता भालसे, अंजू बाला ठाकरे) 80
34. भारत में महिला सशक्तिकरण एवं विधिक प्रावधान (डॉ. अनिल कुमार जैन) 82
35. महात्मा गांधी का जन आन्दोलन एवं नारी की भूमिका (डॉ. आभा तिवारी) 84
36. सोवियत साम्यवाद के संदर्भ में पं. जवाहर लाल नेहरू का राजनैतिक विचार (डॉ. श्री नाथ त्रिपाठी) 86
37. विकसित एवं विकासशील देशों में राजनीतिक चुनौतियाँ, समस्या एवं समाधान (डॉ. ममता शर्मा) 88

(Sociology / समाजशास्त्र)

38. Sexism : A dark Shade of the Indian Society(Dr. Anita Sonwal) 90
39. जनजातियों के सामाजिक एवं आर्थिक विकास में पंचायती राज की भूमिका (डॉ. आर. सी. पान्टेल) 93
40. सामाजिक विकास में बैंकों का योगदान (धनीराम प्रजापति) 96
41. शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र के कमजोर वर्ग के विकास में बैंक की भूमिका (डॉ. अजेन्द्र नाथ प्रजापति) 98

(History / इतिहास)

42. मध्यकालीन संत लल्लेश्वरी का धार्मिक , सामाजिक, कला एवं साहित्य के क्षेत्र में योगदान (डॉ. जितेन्द्र चावरे) 100

43. धोड़ो केशव कर्वे और महिला विश्वविद्यालय की स्थापना – एक अध्ययन (डॉ. शालिनी शुक्ला) 104

(Psychology / मनोविज्ञान)

44. To Study Self Concept And Mental Health In Relation To Socio-Economic Status 106
(Sunita Dhenwal, Preeti Mathur)

45. Spirituality And Happiness (Jyotsna Jharia) 108

46. Treating Anxiety – Systematic Desensitization And Relaxation Techniques (Smita Jain) 110

(Hindi Literature / हिन्दी साहित्य)

47. नारीवाद साहित्य का मूल और मूल्य (डॉ. रत्नेश विश्वक्सेन) 111

48. रहीम – काव्य में नारी विषयक चिंतन एवं अभिव्यंजन (डॉ. चेतना शर्मा) 113

49. आधुनिक नाट्य लेखन: रंगमंच एवं प्रस्तुतिकरण की आधुनिकता (डॉ. रश्मि जैन) 115

50. विरह की साकार प्रतिमा महादेवी वर्मा (डॉ. शाजिया खान) 117

51. विवेकानन्द एक अनुशीलन (डॉ. गुलाब सोलंकी, प्रो. वीणा बरड़े) 119

52. इक्कीसवीं शताब्दी और हिन्दी भाषा (डॉ. भावना यादव) 121

(English Literature / अंग्रेजी साहित्य)

53. Women Empowerment : The Living Legends (V. M. Audichya) 123

(Sanskrit / संस्कृत)

54. संस्कृत रूपकों में नवीन प्रवृत्तियों का उदय और प्रयोग (डॉ. लज्ञा शुक्ला) 125

(Music / संगीत)

55. भक्ति संगीत मैं कीर्तन (सिक्ख संतों की वाणियों के संदर्भ में) (डॉ. श्रीपाद् आरोणकर) 127

56. लोक संगीत एवं शास्त्रीय संगीत (डॉ. नीरज राव) 129

57. वर्तमान सामाजिक परिवेश में भारतीय संगीत की दशा एवं दिशा(डॉ. नीरज राव) 131

(Education / शिक्षा)

58. Academic Achievement of Senior Secondary School Students in Relation to Anxiety, ... 132
Learning Style, and School Environment (Dr. Satish Kumar Gill, Dr. S.K. Upadhyay)

59. विभिन्न वर्गों के. बी.एड. प्रशिक्षणार्थियों में प्रशिक्षण पूर्व एवं प्रशिक्षण पश्चात् उनकी अध्यापन अभिवृति का 136
तुलनात्मक अध्ययन (जसवंत सिंह)

(Physical Education / शारीरिक शिक्षा)

60. बी.पी.एड विद्यार्थियों की मन : शारीरिक दशाओं का अध्ययन (शिवा संतोषी) 139

(Others / अन्य)

61. Social Empowerment And Education Of Women In India : Reality & Way Ahead 141
(Dr. Rashmi Verma)
62. Right To Information: A Tool of Good Governance (Vinay Dubey) 143
63. भारत में महिला सशक्तिकरण एवं संवैधानिक प्रावधान (प्रो. अलका जैन) 144
64. कामकाजी महिलाओं की स्थिति एंव वैश्वीकरण (डॉ. सुमित्रा वर्मा) 147
65. महिला हिंसा – कारण एवं जागरूकता (डॉ. भारती जोशी) 149
66. भारत में जल प्रदूषण – कारण, निवारण (डॉ. सुनील शर्मा) 151
67. महिला सशक्तिकरण में उच्च शिक्षा की भूमिका (डॉ. सुशीला श्रीवास्तव) 153
68. सार्थक सफलता से ही मिलती है संतुष्टि (डॉ. ए. के. पारीख) 154

राष्ट्रीय शोध संगोष्ठी –वर्तमान परिप्रेक्ष्य में नैतिक मूल्यों की आवश्यकता, चुनौतियां एवं समाधान (दि. 23, 24 फरवरी 2015) शासकीय महाविद्यालय धामनोद, जिला – धार (म.प्र.) में आयोजित शोध संगोष्ठी में प्रस्तुत शोध पत्र एवं आलेख

69. The Moral Values of Literature (Dr. P. S. Nargesh) 155
70. Moral Values, Education & Literature : interlinked factors to fostering society (Preeti Pantel) 157
71. Need and Importance of value-based Higher Education in Global Era (Dr. Kushal Jain) 159
72. Moral Value, Moral Judgment in Childhood (Dr. Neeta Deshmukh) 161
73. Necessity of moral Values in Modern Era (Dr. Kiran Sitole) 163
74. NeednessOf Moral Value In Present Condition (Nisha Pathak) 165
75. Osho Said Scarcity in moral values (Dr. Umesh Kakeswar) 167
76. वर्तमान समय में नैतिक मूल्यों की आवश्यकता (डॉ. अरूणा मोटवानी) 168
77. समाज में नैतिक मूल्यों के पतन के कारण तथा नैतिक मूल्यों को पुन:स्थापित करने के उपाय – एक अध्ययन (देवेन्द्र सिंह ठाकुर) 170
78. आधुनिक जीवन और सामाजिक मूल्य (धनीराम प्रजापति) 172
79. नैतिक मूल्य एवं कौशल विकास (प्रो. अर्जुन गोरे) 174
80. वर्तमान शिक्षा को स्वदेशी, सार्थक और मूल्य आधारित बनाने के लिए विशेष पाठ्यक्रम एवं प्रयास की आवश्यकता 176
(डॉ. अंजना जैन)
81. नैतिक मूल्य की वर्तमान दशा एवं दिशा (डॉ. प्रवीण चौधरी) 178
82. नैतिक मूल्य और साहित्य (डॉ.पी.एन.फागना, श्री कमलेश भार्गव) 181

83. नैतिक मूल्य और साहित्य (डॉ. संतरा चौहान) 183
84. मानव जीवन में नैतिक मूल्यों की उपादेयता (डॉ. किशोर सिंह सोलंकी) 185
85. नैतिक मूल्य और युवा पीढ़ी (डॉ. प्रकाश चन्द्र अलंसे) 187
86. भारतीय युवाओं में गिरते नैतिक मूल्य (प्रो. आर. आर. पल्ले) 189
87. नैतिक मूल्य के अभाव में भौतिक विकास घातक (प्रो. ऋचा एस. मेहता) 191
88. नैतिक मूल्यों के उत्थान में शिक्षक की भूमिका (सुबानसिंह टैगोर) 193
89. आधुनिक जीवन और सामाजिक मूल्य (साधना राज) 195
90. वर्तमान परिप्रेक्ष्य में नैतिक मूल्यों की आवश्यकता, चुनौतियाँ एवं समाधान (स्वीटी शर्मा) 197
91. वर्तमान शिक्षा पद्धति में नैतिक मूल्यों की आवश्यकता–एक अध्ययन (डॉ. अरूणा कुसुमाकर) 199
92. नैतिक मूल्यों का उत्थान एक सतत् प्रक्रिया है (डॉ. अशोक ठाकुर) 202
93. वर्तमान परिप्रेक्ष्य में नैतिक मूल्यों की आवश्यकता चुनौतियाँ एवं समाधान (ब्रह्मप्रकाश शर्मा, सुहेल खान) 204
94. वर्तमान परिपेक्ष्य में नैतिक मूल्यों की आवश्यकता, चुनौतियां एवं समाधान (तृप्ति नेगी, डॉ. धीरज नेगी) 207
95. वर्तमान परिवेश और नैतिक मूल्य (डॉ. कल्पना कोठारी) 209
96. नैतिक मूल्यों के विकास में राष्ट्रीय सेवा योजना की भूमिका(डॉ. ज्योति ढोले, डॉ. बी.एस. निगवाले) 211
97. वर्तमान समय में नैतिक मूल्यों की आवश्यकता – एक अध्ययन (डॉ. औंकार सिंह परिहार) 213
98. भारतीय समाज में नैतिक मूल्यों का औचित्य (डॉ. आर. सी. पन्टेल) 216
99. शैक्षणिक विकास में पाठ्योत्तर गतिविधियों का योगदान नैतिक मूल्यों के संदर्भ में (डॉ. टी. एम. खान) 218
100. वर्तमान परिप्रेक्ष्य में नैतिक मूल्यों की आवश्यकता, चुनौतियां एव समाधान (प्रो. अभय सिंह मंडलोई) 220
101. वर्तमान समय में नैतिक मूल्यों की आवश्यकता (डॉ. सुनील शर्मा) 222
102. वर्तमान शिक्षा में नैतिक मूल्यों की भूमिका (डॉ. अभय मुंगी) 223
103. वर्तमान परिप्रेक्ष्य में नैतिक मूल्यों की आवश्यकता, चुनौतियां एवं समाधान (डॉ. गुलाब सोलंकी, प्रो. वीणा बरडे) 224
104. नैतिक मूल्यों के विकास में राष्ट्रीय सेवा योजना की भूमिका (डॉ. आर. के. रावत) 226
105. समाज में नैतिक शिक्षा की आवश्यकता (डॉ. भूपेन्द्र सिंह डावर) 227
106. नैतिक मूल्य और वर्तमान शिक्षा – एक अध्ययन (प्रो. अंजना सेठिया) 228
107. वर्तमान समय में नैतिक मूल्य की आवश्यकता (नैतिक मूल्य एवं वर्तमान शिक्षा) (डॉ. यशोदा चौहान) 229
108. वर्तमान परिप्रेक्ष्य में नैतिक मूल्यों की आवश्यकता, चुनौतियाँ एवं समाधान (डॉ. श्यामबिहारी मिश्रा, रवीन्द्र उपाध्याय) 231
109. मुक्तिबोध के काव्य में मूल्य चेतना (डॉ. मीना भावसार) 233
110. शिक्षा में नैतिक मूल्यों का योगदान (डॉ. पुष्पलता खरे) 234
111. वर्तमान समय में नैतिक मूल्यों की आश्यकता (डॉ. विक्रम सिंह चौहान) 235
112. नैतिक मूल्य एवं सामाजिक विकास (डॉ. निशा जैन) 237
113. नैतिक मूल्यों की गिरावट में परिवार एवं समाज की भूमिका (भारत भूषण श्रीवास्तव, कमलेश भार्गव) 238
114. वर्तमान परिवेश में नैतिक मूल्य (डॉ. वन्दना अग्निहोत्री) 240
115. आधुनिक जीवन और सामाजिक मूल्य (डॉ. मंगला ठाकुर) 242
116. नैतिक मूल्य एवं सामाजिक विकास (डॉ. प्रेमलता तिवारी) 243

क्षेत्रीय सम्पादक मण्डल अन्तर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय (Regional Editor Board- International & National) मानद्

(01) श्री अशोककुमार ..... एम्प्लॉयब्लिटी ऑपरेशन्स मैनेजर, एक्शन ट्रेनिंग सेन्टर लि. लन्दन, यूनाईटेड किंगडम
(02) श्री खगेन्द्रप्रसाद सुबेदी ..... सीनियर सॉयकोलॉजिस्ट, पब्लिक सर्विस कमीशन, सेन्ट्रल ऑफिस, अनामनगर, काठमाँडू, नेपाल
(03) डॉ. मनीषा ठाकुर ..... फुल्टन कॉलेज, एरिजोना स्टेट यूनिवर्सिटी, अमेरिका
(04) प्रो. डॉ. ज्ञानचंद खिमेसरा ..... प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.) भारत
(05) प्रो. डॉ. प्रमोद कुमार राघव ..... शोध निदेशक, ज्योति विद्यापीठ महिला विश्व विद्यालय, जयपुर (राज.) भारत
(06) प्रो. डॉ. एन.एस.राव. ..... संचालक, जनार्दनराय नागर राजस्थान विद्यापीठ विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
(07) प्रो. डॉ. अनूप व्यास. ..... (पूर्व) संकायाध्यक्ष, वाणिज्य, देवी अहिल्या विश्व विद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत
(08) प्रो. डॉ. पी.पी. पाण्डे ..... संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन), अवधेश प्रतापसिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत
(09) प्रो. डॉ. संजय भयानी. ..... अध्यक्ष, व्यवसाय प्रबंध विभाग, सौराष्ट्र विश्व विद्यालय, राजकोट (गुजरात) भारत
(10) प्रो. डॉ. प्रताप राव कदम ..... अध्यक्ष, वाणिज्य, शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.) भारत
(11) प्रो. डॉ. बी.एस. झरे . ..... प्राध्यापक वाणिज्य विभाग, श्री शिवाजी महाविद्यालय, आकोला (महाराष्ट्र) भारत
(12) प्रो. डॉ. राकेश शर्मा ..... अध्यक्ष, अर्थशास्त्र विभाग, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गुड़गांव (हरियाणा) भारत
(13) प्रो. डॉ. संजय खरे ..... प्राध्यापक, समाजशास्त्र विभाग, शास. स्वशासी कन्या स्नात. उत्कृष्टता महा., सागर (म.प्र.) भारत
(14) प्रो. डॉ. आर.पी. उपाध्याय .... परीक्षा नियंत्रक, शासकीय कमलाराजे कन्या स्वशासी स्नातकोत्तर महा., ग्वालियर (म.प्र.) भारत
(15) प्रो. डॉ. प्रदीप कुमार शर्मा ..... प्राध्यापक, वाणिज्य विभाग, शासकीय हमीदिया कला एवं वाणिज्य महा., भोपाल (म.प्र.) भारत
(16) प्रो. अखिलेश जाधव ..... प्राध्यापक, भौतिकी, शासकीय जे. योगानन्दम् छत्तीसगढ़ महाविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़) भारत
(17) प्रो. डॉ. कमल जैन ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत
(18) प्रो. डॉ.डी.एन. खड़से ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, धनवते नेशनल कॉलेज, नागपुर (महाराष्ट्र) भारत
(19) प्रो.डॉ. वन्दना जैन ..... प्राध्यापक, हिन्दी, शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(20) प्रो. डॉ. हरदयाल अहिरवार .... अर्थशास्त्र, शासकीय स्नातकोत्तर (स्वशासी) महाविद्यालय, शहडोल (म.प्र.) भारत
(21) प्रो. डॉ. शारदा त्रिवेदी ..... सेवानिवृत्त प्राध्यापक, गृहविज्ञान, इंदौर (म.प्र.) भारत
(22) प्रो. डॉ. उषा श्रीवास्तव ..... अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, आचार्य इंस्टीट्यूट ऑफ ग्रेच्यूट स्टडी. सोलदेवानली, बैंगलुरू (कर्ना.) भारत
(23) प्रो. डॉ. अभय मुंगी ..... वाणिज्य, शासकीय महाविद्यालय, बड़वाह (म.प्र.) भारत
(24) प्रो. डॉ. एच.के. चौरसिया ..... प्राध्यापक, वनस्पति, टी.एन.वी. महाविद्यालय, भागलपुर (बिहार) भारत
(25) प्रो. डॉ. विवेक पटेल ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय महाविद्यालय, कोतमा, जिला अनूपपुर (म.प्र.) भारत
(26) प्रो. डॉ. दिनेशकुमार चौधरी ... प्राध्यापक, वाणिज्य, राजमाता सिन्धिया शासकीय कन्या महविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत
(27) प्रो. डॉ. अनिल कुमार जैन ..... राजनीति शास्त्र, शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत
(28) प्रो. डॉ. जितेन्द्र के. शर्मा ..... प्राध्यापक, वाणिज्य एवं प्रबंध, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय केन्द्र, पालवाल (हरियाणा) भारत
(29) प्रो. डॉ. आर.पी. सहारिया ..... प्राध्यापक, अर्थशास्त्र, शासकीय जे.एम.पी. महाविद्यालय तख्तपुर जिला,बिलासपुर (छ.ग.) भारत
(30) प्रो. डॉ. गायत्री वाजपेयी ..... प्राध्यापक, हिन्दी, शासकीय महाराजा स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.) भारत
(31) प्रो. डॉ. अविनाश शेन्द्रे ..... विभागाध्यक्ष, अर्थशास्त्र, प्रगति कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, डोम्बीवली, मुम्बई (महाराष्ट्र) भारत
(32) प्रो. डॉ. जी.सी. मेहता ..... अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल वाणिज्य, देवी अहिल्या विश्वविद्याय, इंदौर (म.प्र.) भारत
(33) प्रो.डॉ. बी.एस. मक्कड़ ..... अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल वाणिज्य, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(34) प्रो.डॉ. पी.पी. मिश्रा ..... विभागाध्यक्ष, गणित, छत्रसाल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पन्ना, (म.प्र.) भारत
(35) प्रो.डॉ. सुनील कुमार सिकरवार .... प्राध्यापक, रसायन, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, झाबुआ (म.प्र.) भारत
(36) प्रो.डॉ. के.एल. साहू..... प्राध्यापक, इतिहास, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत
(37) प्रो.डॉ. मालिनी जॉनसन ..... प्राध्यापक, वनस्पति, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, महू (म.प्र.) भारत
(38) प्रो.डॉ. विशाल पुरोहित ..... एम.एल.बी. शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, किला मैदान, इन्दौर (म.प्र.) भारत

****

सम्पादकीय सलाहकार मण्डल (Editorial Advisory Board, INDIA) मानद्

(01) प्रो. डॉ. नरेन्द्र श्रीवास्तव ..... प्रसिद्ध वैज्ञानिक 'इसरो' बैंगलुरू (कर्नाटक) भारत
(02) प्रो. डॉ. आदित्य लूनावत ..... निदेशक, स्वामी विवेकानंद कॅरियर मार्गदर्शन प्रकोष्ठ उच्च शिक्षा विभाग, म.प्र. शासन, इंदौर (म.प्र.) भारत
(03) प्रो. डॉ. संजय जैन ..... सहायक नियंत्रक, म.प्र. व्यावसायिक परीक्षा मंडल भोपाल (म.प्र.) भारत
(04) प्रो. डॉ.एस.के. जोशी ..... प्राचार्य, शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय रतलाम (म.प्र.) भारत
(05) प्रो. डॉ. जे.पी.एन. पाण्डेय ..... प्राचार्य, शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टा महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत
(06) प्रो. डॉ. सुमित्रा वास्केल ..... प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत
(07) प्रो. डॉ. पी.आर. चन्देलकर .... प्राचार्य, शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत
(08) प्रो. डॉ. मंगल मिश्र ..... प्राचार्य, श्री क्लॉथ मार्केट, कन्या वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
(09) प्रो. डॉ.आर.के. भट्ट ..... प्राचार्य, शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत
(10) प्रो. डॉ. अशोक वर्मा ..... प्राचार्य एवं संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय सेंधवा (म.प्र.) भारत
(11) प्रो. डॉ. राकेश ढण्ड ..... संकायाध्यक्ष, विद्यार्थी कल्याण विभाग विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(12) प्रो. डॉ. अनिल शिवानी ..... अध्यक्ष, वाणिज्य एवं प्रबंध विभाग श्री अटल बिहारी वाजपेयी हिंदी विश्वविद्यालय भोपाल (म.प्र.) भारत
(13) प्रो. डॉ. बी.के. मेहता ..... अध्यक्ष, रसायन एवं जैविक रसायन अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन (म.प्र.) भारत
(14) प्रो. डॉ. पद्मसिंह पटेल ..... अध्यक्ष, वाणिज्य विभाग शासकीय महाविद्यालय महिदपुर (म.प्र.) भारत
(15) प्रो. डॉ. मंजु दुबे ..... संकायाध्यक्ष (डीन), गृह विज्ञान संकाय, जीवाजी विश्वविद्यालय ग्वालियर (म.प्र.) भारत
(16) प्रो. डॉ.ए.के. चौधरी ..... प्राध्यापक, मनोविज्ञान, राजकीय मीरा कन्या महाविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
(17) प्रो. डॉ. के.एल. जाट ..... प्राध्यापक एवं अध्यक्ष, भौतिकी विभाग शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत
(18) प्रो. डॉ. प्रदीप सिंह राव ..... प्राध्यापक एवं अध्यक्ष, राजनीति विभाग शासकीय महाविद्यालय, सैलाना, जिला–रतलाम (म.प्र.) भारत
(19) प्रो. डॉ. नटवर लाल गुप्ता ..... प्राचार्य, शहीद भीमा नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

****

निर्णायक मण्डल (Referee Board) मानद्

**** विज्ञान संकाय ****

गणित:- .... **(1) प्रो. डॉ.वी.के. गुप्ता,** संचालक वैदिक गणित एवं शोध संस्थान, उज्जैन (म.प्र.)

भौतिकी:- .... **(1) प्रो. डॉ. एन.के. डबकरा,** शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)

(2) प्रो.डॉ. रवि कटारे, शासकीय आदर्श विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

कम्प्यूटर विज्ञान:- .... **(1) प्रो. डॉ. उमेश कुमार सिंह** अध्यक्ष कम्प्यूटर अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

रसायन:- .... **(1) प्रो. डॉ. बी.के. दानगढ़,** समन्वयक राष्ट्रीय इन्दिरा गाँधी मुक्त विश्वविद्यालय, केन्द्र नीमच (म.प्र.)

वनस्पति:- .... **(1) प्रो. डॉ. सुचिता जैन,** राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)

(2) प्रो.डॉ. अखिलेश आयाची, शासकीय आदर्श विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

प्राणिकी:- .... **(1) प्रो.डॉ. मंजुलता शर्मा,** एम.एस.जे., राजकीय महाविद्यालय, भरतपुर (राज.)

(2) प्रो. डॉ. अमृता खत्री, माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)

सांख्यिकी:- .... **(1) प्रो. डॉ. रमेश पण्ड्या,** शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

सैन्य विज्ञान:- .... **(1) प्रो. डॉ. कैलाश त्यागी,** शासकीय मोतीलाल विज्ञान महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

जीव रसायन:- .... **(1) डॉ. कंचन डींगरा,** शासकीय एम.एच. गृह विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

भूगर्भ शास्त्र:- .... **(1) प्रो. डॉ. आर.एस. रघुवंशी,** शासकीय मोतीलाल विज्ञान महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. सुयश कुमार, शासकीय आदर्श महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)

चिकित्सा विज्ञान:- .... **(1) डॉ. एच.जी. वरूधकर,** आर.डी. गारड़ी मेडिकल महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

**** वाणिज्य संकाय ****

वाणिज्य :- .... **(1) प्रो. डॉ. पी.के. जैन,** शासकीय हमीदिया महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. शैलेन्द्र भारल, शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

(3) प्रो. डॉ. लक्ष्मण परवाल, शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

**** प्रबंध संकाय ****

प्रबंध :- .... **(1) प्रो. डॉ. रामेश्वर सोनी,** अध्यक्ष अध्ययन शाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. आनन्द तिवारी, शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर कन्या उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

मानव संसाधन:- .... **(1) प्रो. डॉ. हरविन्दर सोनी,** पैसेफिक बिजनेस स्कूल, उदयपुर (राज.)

**** व्यवसाय प्रशासन संकाय ****

व्यवसाय प्रशासन:- .... **(1) प्रो. डॉ. कपिलदेव शर्मा,** राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)

**** विधि संकाय ****

विधि:- .... **(1) प्रो. डॉ. एस.एन. शर्मा,** प्राचार्य, शासकीय माधव विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. नरेन्द्र कुमार जैन, प्राचार्य श्री जवाहरलाल नेहरू स्नातकोत्तर विधि महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)

**** कला संकाय ****

अर्थशास्त्र:- .... **(1) प्रो. डॉ. पी.सी. रांका,** श्री सीताराम जाजू शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. जे.पी. मिश्रा, शासकीय महाराजा स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)

(3) प्रो. डॉ. कमलेश श्रीवास्तव, विजयाराजे शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय मुरार, ग्वालियर (म.प्र.)

राजनीति:- .... **(1) प्रो. डॉ. रवींद्र सोहोनी,** शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. अनिल जैन, शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

दर्शनशास्त्र:- .... **(1) प्रो. डॉ. हेमन्त नामदेव,** शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

समाजशास्त्र:– ..... **(1) प्रो. डॉ. आशुतोष व्यास,** राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, चित्तौड़गढ़ (राज.)
(2) प्रो. डॉ. एच.एल. फुलवरे, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.)
(3) प्रो. डॉ. इन्दिरा बर्मन , शासकीय गृह विज्ञान महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)

हिन्दी:– ..... **(1) प्रो. डॉ. चन्दा तलेरा जैन,** अध्यक्ष अध्ययन मण्डल, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र)
(2) प्रो. डॉ. जया प्रियदर्शनी शुक्ला, वनस्थली विद्यापीठ (राज.)
(3) प्रो. डॉ. कला जोशी, श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)

अंग्रेजी:– ..... **(1) प्रो. डॉ. प्रशांत मिश्रा**, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. अजय भार्गव, शासकीय महाविद्यालय, बड़नगर (म.प्र.)
(3) प्रो. डॉ. मंजरी अग्निहोत्री, शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)

संस्कृत:– ..... **(1) प्रो. डॉ. भावना श्रीवास्तव,** शासकीय स्वशासी महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. बालकृष्ण प्रजापति, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गंजबासौदा जिला विदिशा (म.प्र.)

इतिहास:– ..... **(1) प्रो. डॉ. नवीन गिडियन,** शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

भूगोल:– ..... **(1) प्रो. डॉ. राजेन्द्र श्रीवास्तव** शासकीय महाविद्यालय, पिपलियामण्डी, जिला मंदसौर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. अर्चना भार्गव, शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.)

मनोविज्ञान:– ..... **(1) प्रो. डॉ. कामना वर्मा,** प्राचार्य, शासकीय राजमाता सिंधिया कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. सरोज कोठारी, शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)

चित्रकला:– ..... **(1) प्रो. डॉ. अल्पना उपाध्याय,** शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय उज्जैन (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. रेखा श्रीवास्तव, महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

संगीत:– ..... **(1) प्रो. डॉ. भावना ग्रोवर (कथक),** सुभारती विश्व विद्यालय मेरठ (उ.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. श्रीपाद् अरोणकर, राजमाता सिन्धिया शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाडा (म.प्र.)

✲✲✲ *गृह विज्ञान संकाय* ✲✲✲

आहार एवं पोषण विज्ञान:– .... **(1) प्रो.डॉ. प्रगति देसाई,** शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(2) डॉ. मधु गोयल, स्वामी केशवानन्द गृह विज्ञान महाविद्यालय, बीकानेर (राज.)
(3) डॉ. संध्या वर्मा, शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)

मानव विकास:– ..... **(1) प्रो.डॉ. मीनाक्षी माथुर,** अध्यक्ष, जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर (राज.)
(2) प्रो.डॉ. आभा तिवारी, अध्यक्ष अध्ययन मण्डल रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

पारिवारिक संसाधन प्रबंध:– ... **(1) प्रो.डॉ. मंजु शर्मा,** माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इंदौर (म.प्र.)
(2) प्रो.डॉ. नम्रता अरोरा, वनस्थली विद्यापीठ (राज.)

✲✲✲ *शिक्षा संकाय* ✲✲✲

शिक्षा ..... **(1) प्रो. डॉ. मनोरमा माथुर,** प्राचार्य, अरावली शिक्षा महाविद्यालय, फरीदाबाद (हरियाणा)
(2) प्रो. डॉ. एन.एम.जी. माथुर, प्राचार्य एवं डीन पेसेफिक शिक्षा महाविद्यालय, उदयपुर (राज.)
(3) प्रो. डॉ. अर्चना श्रीवास्तव, बी.सी.जी. शिक्षा महाविद्यालय, देवास (म.प्र.)

✲✲✲ *शारीरिक शिक्षा संकाय* ✲✲✲

शारीरिक शिक्षा ..... **(1) प्रो. डॉ. अक्षयकुमार शुक्ला,** अध्यक्ष शारीरिक शिक्षा पेसेफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)

✲✲✲ *ग्रन्थालय विज्ञान संकाय* ✲✲✲

ग्रन्थालय विज्ञान ..... **(1) डॉ. अनिल सिरौठिया,** शासकीय महाराजा महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)

शासकीय महाविद्यालय, धामनोद, जिला – धार (म.प्र.) में दिनांक 23, 24 फरवरी 2015 को आयोजित राष्ट्रीय शोध संगोष्ठी की झलकियाँ

Study Of Species Diversity And Effect Of Seasonal Changes In Grassland Vegetation Of Panna (M.P.)

Dr. Mukta Shrivastava *

Abstract - Species diversity and composition of the vegetation constitute an important aspect in the community analysis. The vegetation varies from season to season. The vegetation has been studied by tiller analysis. Seasonal changes in vegetation were determined on all the five study site. In the present study sites each erect annual plant is considered as a unit of plant (tiller).

Introduction - The multiplicity of factors and their interactions produce a large variety of habitats for plant group and determine to a large extent, the botanical composition of the communities. A study of bio-ecology of grasslands of Madhya Pradesh (India) revealed to Tiwari (1955) a wide flux in the floristics on account of response, reaction and co-action (clements & Shelford 1939) in the boine and led him to recognize five bioseral associations. According to Heady (1958) the vegetation suggests a response by each species population to the incoming heat, moisture and light as modified vegetation it self. According to later worker like Pandeya (1953), Raman (1959) and Sant(1961) the grassland are seral in nature. Misra (1967) discussed fire levels of changes, for example seasonal, annual, successional, historical and genetical. Cotton and Wilson (1966) have described long term vegetational changes in ploughed parairie, Northern great plains, and artificial parairie respectively.

Material and Method - For the present study five study sites were selected.

Study site I - Protected grassland on Panna - Ajaygarh road This area is mainly occupied by grasses.

Study site II - Grazed grassland near Bisramganj. It is purely open for grazing.

Study site III - Grassland is situated Panna-Satna road. It is situated in low lying area.

Study site IV - Grassland is situated back side of the science block. It is situated on slopes of the hill.

Study site V - This grassland is situated on top of the hill known as Madar hill.

On all the study sites the third week of August are representative of winter season, a number of 50 cm x 50 cm quadrates was laid at random. In the month of August and November these segments were cut from the field up to 5 cm depth and brought to the laboratory. Each of them was submitted into four 5 x 5 cm segments and individuals counted separately. All the data were mixed and values for each 10 x 10 cm segments were counted and recorded.

Density represented "The average number of individuals of a species per quadrat obtained by the dividing the total number of individuals of that species in all quadrate by the total number of quadrates examined.

Abundance represents "The average number of individuals of a species per quadrate of occurrence obtained by total number of individuals of the species, only by the number of quadrate in which occurred.

The relationship between frequency and abundance indicates the nature of species distribution so frequency has also been calculated. The term "plant" and tiller are considered as synonymous here.

Table 1,2,3,4,5 (see in next page)

Conclusion - All the five study sites were within the area of 10 Kms. from Panna town. Study site I is purely protected but study site II is open for grazing. Similarly study site III shown low lying area. Study site IV shows the slopes of the hill. Frequency density, abundance and number of seedling of each species worked out for all the the study sites, most of the species shows contagious distribution.

References :-

1. Celments, F.S. and V.E. Shelford 1939. Bioecology, John Willey, New York.
2. Cotton, G. and Wilson, H.C. 1966 - Community dynamics of an artificial Prairie. Ecology 47:88-97.
3. Heady, H.F. 1958. Vegetation changes in the Californic annual type, Ecoloyg 39:402-416.
4. Misra, R. 1967. Ecology of flora and vegetation of some tropical and sub tropical regions of India. A lecture delivered under the captain thirty years of ecological study of the Indian Botanical society of Hyderabad, Manusc. pp.20
5. Pandey, S.C. 1953. Ecological studies of grasslands of Sagar, Ph.D. Thesis, Sagar University, Sagar.
6. Raman S.S. 1959 Soil root relationship in grassland community of Varanasi, Ph.D. Thesis, Banaras Hindu University, Varanasi, India.
7. Sant H.R. 1961. A study of reproductive capacity of some grasses and forbs of the grounds of Banaras Hindu University, Ph.D. Thesis, B.H.U. India.

*Assistant Professor, Govt. M.L.B. Girls P.G. (Auto) College, Bhopal (M.P.) INDIA

Table 1 FREQUENCY, DENSITY AND ABUNDANCE OF GRASSLAND SPECIES ON SITE I

Species	Rainy Season			Winter Season		
	F	D	A	F	D	A
Chrysopogon montanus	35	376	600	45	465	898
Heteropogon contortus	48	4350	9000	71	580	809
Apluda mutica	25	35	110	30	30	160
Zornia diphylla	18	18	100	15	30	200
Sporobolos diander	13	70	525	-	-	-
Vernonia cinera	18	18	100	15	30	200
Setaria glauca	36	400	1145	-	-	-
paspalum simplex	8	16	200	5	15	300
paspalum royaleanum	35	360	1115	-	-	-
Indigofera linifolia	40	40	100	21	21	100
Evolvulus numularius	93	740	874	70	520	742
E. alsinoides	8	10	200	3	3	100
Euphorbia hirta	3	3	100	5	15	300
Dichanthium annulatum	65	520	800	66	650	900
Bothriochloa pertusa	13	90	675	5	16	333
Eragrastis viscosa	10	50	60	-	-	-
Alysicarpus monilifar	10	18	100	8	13	160

F = Frequency D= Density A=Abundance

Table 2 FREQUENCY, DENSITY AND ABUNDANCE OF GRASSLAND SPECIES ON SITE II

Species	Rainy Season			Winter Season		
	F	D	A	F	D	A
Chrysopogon montanus	35	108	109	45	256	570
Heteropogon contortus	8	16	200	54	433	800
Apluda mutica	-	-	-	-	-	-
Zornia diphylla	38	306	800	-	-	-
Vernonia cinera	13	26	200	11	25	214
Sporobolos diander	11	35	300	-	-	-
Setaria glauca	55	523	951	+	+	+
Eragrastis viscosa	10	50	60	+	+	+
paspalum royaleanum	51	568	1100	-	-	-
Panicum humile	28	250	882	-	-	-
Indigofera linifolia	18	18	100	15	15	100
Evolvulus numularius	33	200	600	53	373	700
E. alsonoides	58	58	100	55	61	112
Euphorbia hirta	8	8	100	8	16	200
Dichanthium annulatum	46	280	600	41	250	600
Cynodon dectylon	13	100	750	15	195	1300
Cassia tore	13	40	300	-	-	-
Bothriochloa pertusa	76	536	700	58	233	400
Alysicarpus monilifar	13	13	100	6	20	120

F = Frequency D= Density A= Abundance

Table 3 FREQUENCY, DENSITY AND ABUNDANCE OF GRASSLAND SPECIES ON SITE III

Species	Rainy Season			Winter Season		
	F	D	A	F	D	A
Chrysopogon motanus	35	166	476	45	256	570
Heteropogon contortus	51	330	638	54	433	800
Apluda mutica	-	-	-	-	-	-
Zornia diphylla	41	360	264	-	-	-
Vernonia cinera	11	331	285	-	-	-
Sporobolos diander	15	51	344			
Setaria glauca	58	560	966			
Eragrastis viscosa	45	550	1222			
paspalum royaleanum	11	30	257			

Panicum humile	25	211	846			
Indigofera linifolia	16	16	100	18	18	100
Evolvulus numularius	45	350	777	58	395	678
E. alsonoides	55	109	200	53	65	121
Euphorbia hirta	6	18	275	10	14	140
Dichanthium annulatum	55	350	636	54	43	800
Cynodon dectylon	15	191	1277	4	18	450
Cassia tore	58	280	480	-	-	-
Bothriochloa pertusa	85	580	682	50	50	170
Alysicarpus monilifar	15	18	112	6	8	133

F = Frequency D= Density A= Abundance

Table 4 FREQUENCY, DENSITY AND ABUNDANCE OF GRASSLAND SPECIES ON SITE IV

Species	Rainy Season			Winter Season		
	F	D	A	F	D	A
Chrysopogon motanus	35	166	476	45	256	570
Heteropogon contortus	51	330	638	54	466	800
Apluda mutica	25	25	100	20	30	150
Zornia diphylla	35	270	771	7	15	200
Vernonia cinera	-	-	-	-	-	-
Sporobolos diander	16	71	430			
Setaria glauca	41	520	1248	-	-	-
Eragrastis viscosa	-	-	-	-	-	-
paspalum royaleanum	-	-	-	-	-	-
Panicum humile	20	160	233	-	-	-
Indigofera linifolia	28	28	100	25	25	100
Evolvulus numularius	51	65	125	45	45	100
E. alsonoides	51	65	125	45	45	100
Euphorbia hirta	6	16	250	8	16	200
Dichanthium annulatum	58	38	651	60	543	900
Cynodon dectylon	31	350	1105	208	150	720
Cassia tore	-	-	-	-	-	-
Bothriochloa pertusa	-	-	-	-	-	-
Alysicarpus monilifar	-	-	-	-	-	-

F = Frequency D= Density A= Abundance

Table 5 FREQUENCY, DENSITY AND ABUNDANCE OF GRASSLAND SPECIES ON SITE V

Species	Rainy Season			Winter Season		
	F	D	A	F	D	A
Chrysopogon motanus	35	108	309	45	256	570
Heteropogon contortus	8	16	200	54	433	800
Apluda mutica	-	-	-	-	-	-
Zornia diphylla	38	306	800	-	-	-
Vernonia cinera	13	26	200	11	25	214
Sporobolos diander	11	35	300	-	-	-
Setaria glauca	55	523	951	-	-	-
Eragrastis viscosa	-	-	-	-	-	-
paspalum royaleanum	51	568	1100	10	30	30
Panicum humile	28	250	882	-	-	-
Indigofera linifolia	18	18	100	15	15	100
Evolvulus numularius	33	200	600	53	373	700
E. alsonoides	58	56	100	8	16	200
Euphorbia hirta	-	-	-	-	-	-
Dichanthium annulatum	46	280	600	41	250	600
Cynodon dectylon	-	-	-	-	-	-
Cassia tore	13	40	300	-	-	-
Bothriochloa pertusa	76	536	700	58	233	400
Alysicarpus monilifar	13	13	100	6	20	120

F = Frequency D= Density A= Abundance

Waste Disposal Practices in a Slum of Bhopal

Dr. Deepika Gupta *

Introduction - Waste is a consequence of life. The human efforts for betterment of living have no doubt, helped to increase the facilities and comfort but at the same time it has lead to deterioration of the environment. The society has transformed to a "throw away" culture due to numerous disposable products available in the market. This is a great contribution to the increase in the waste generation. Much of the waste ends up in open dumps. Implication for public health and other problem have been linked to mismanagement of waste.

The relationship between public health and improper disposal of waste has long been recognized. The lack of any plan for the management of waste led to the many subsequent epidemic and high death rate. Disease vectors breed in open dumps and in residential areas or other places where food is available. In order to improve the sanitary conditions, there should be proper disposal of waste. Few people do not consider that they are responsible for pollution of the environment. They always say to themselves that their little bits of waste will not make much difference. There never seems to be great harm in just the little pollution but there may be heavy expenses involved in trying to clean it up which the polluter does not realize. One of the major sources of waste generation is household sector and women are the key member in such activities like cleaning and disposal of garbage. Hence it is essential to know the waste disposal practices followed by women. Considering all the above factors this paper is designed to find out the waste disposal practices followed by the women of slums.

Objectives:-

1. To know the waste disposal practices of women from a slum area.
2. To study the facts regarding waste collection and cleaning services provided to them.

Methodology - The study is a descriptive research. It is based on household survey of Durga Nagar Jhuggi Basti located near Kolar road square, Bhopal. A survey of 25 women was conducted with the help of an interview schedule. The schedule considers questions on their family background, type of waste and waste disposal practices etc.

Discussion and Analysis - This piece of research tries to find out the waste disposal practices prevalent among the resident of a slum area. Due to paucity of time only 25 women dwellers were interviewed. However due to their socio-economic background and living conditions being homogeneous, it was possible to draw relative conclusion from such a small sample of study.

The following data majorly focused on the slum dwellers women's relevant socio-economic attributes and the waste disposal practices observed by them.

Information about family background -

Table 1: Size of the family

S.	No. of members	No .of respondents	Percentage
1	2 to 4	11	44
2	5 to 7	14	56
3	8 & above	00	00
	Total	25	100

The above table shows that the more than 1/3 (44 percent) women having 2 to 4 family members while more than half (56 percent) women are having 5 to 7 family members. This comes under large family.

Table 2 : Education level of the respondents

S.	No. of members	No .of respondents	Percentage
1	illiterate	10	40
2	Up to primary	10	40
3	Middle to secondary	05	20
	Total	25	100

As per their responses 2/3 of the women are literate and rest are illiterate.

Table 3 : Income of the family

S.	No. of members	No .of respondents	Percentage
1	Up to 2000	02	08
2	2000 to 5000	18	72
3	Above 5000	05	20
	Total	25	100

Most of the respondents come (72 percent) under low income group, while 8 percent respondents come under very low income group and only 20 percent are able to earn more than Rs. 5000/- per month.

* Atal Bihari Vajpai Hindi University, Bhopal (M.P.) INDIA

Table 4 : Type of occupation

S.	Type of occupation	No of respondents	percentage
1	Labour	17	68
2	handicrafts	03	12
3	Small shops	03	12
4	potter	02	08
	Total	25	100

More than 2/3 of women are labours, while rests are having their own occupation. Hence they run it from their houses only.

Type of waste and waste disposal practices - This discussion includes information on the type of waste from each household included in the sample, the drainage system available in the community and waste disposal practices.

Type of waste from the houses of respondents is depends on their type of occupation they are having. Although litter from floor and kitchen waste are common in all houses, while potters are having mud soil waste and handcrafters are having cloth and wool waste additionally.

Availability of toilets is a major factor in disposal of waste. Therefore data on this issue was considered important.

Table 5 : Availability of toilets

S.	Type of toilet	No of respondents	percentage
1	kachcha	08	32
2	pakka	02	08
3	No toilet	15	60
	total	25	100

Only8 percent women are having pakka toilets in their houses. Rest are using either kachcha toilets or going in the open for defecation. Although BMC has provided them with Sulabh Shochalaya within the slum area, but they are having crisis of water. The respondents also say that only youth and men crowd is using these shochalayas, hence they hesitate to visit them.

Table 6 : Availability of bathroom

S.	Type of bathroom	No of respondents	percentage
1	kachcha	20	80
2	pakka	02	08
3	No bathroom	03	12
	Total	25	100

Pakka bathrooms are available only in 8 percent houses. Rest of them has Kachcha bathrooms. Some (12 percent) of them have made bathing area with bamboo or chatai or asbestos sheet covering them cloths.

Availability of drainage system - They have got pakki nalis in the slum, which are made by the BMC. But due to lack of hygiene awareness in some women, they throw waste on these nails. This results in the choking of nalis. Then they register a complaint to the BMC office, who arranges to clean up nalis. Sometimes BMC people do not pay any attention, at such time the dwellers approaches their Parshad. They do agree that they face inconvenience due to heap of litter, such as bed smell and lots of mosquitoes. They are also aware that due to these conditions they suffer from water borne diseases such as diarrhea, vomiting and malaria.

Management of sanitary napkins - All of the women use unsterile old cloth as napkins. They throw the used napkins mostly in the nearby nalas or in the containers provided by the BMC. All said that they do not cover the used napkins as they do not get any paper to wrap them. They cannot afford to buy newspapers, hence lack of availability of paper.

Results -

1. Their education level varies from illiteracy to high school level.
2. BMC facilities are available in their area.
3. The disposal of waste collection containers is quite regular
4. The respondents try to keep the inside of their houses clean but do not bother about the cleanliness of their surroundings. This causes much accumulation of litter on the nalis, which sometimes over flow on the roads. The roads of the slums are not pakka roads, hence much mud and bad odour is spread.
5. The respondents are also well aware of the ill effects of accumulation of litter, such as spreading of water and air borne diseases. But they lack any will power to make their conditions better.
6. They are also aware that the way they are disposing their napkins is improper but they say that they are helpless.

Suggestions -

For the Government - To improve the sanitary conditions the Government should encourage and help the voluntary organizations to establish several pilot projects and slums development programmes and extend their services for cleaning and collections of waste from slums.

For the BMC - However the BMC has provided containers in every slum for dumping the waste, but they are insufficient in numbers. The BMC should also collect the waste regularly.

For the dwellers - There are many things that the public could do to reduce quantity of waste generated on an individual basis. The women could be trained to make compost out of household garbage.

References:-

1. Mazumdar, N.B., Energy Environment Monitor, Vol 12, No 2 (1990)
2. Colin, H.C.,Domestic solid waste as a fuel in cement making, Practical waste management, John Wileyand sons ltd. (1983)
3. Bhide, A.D. et al, Studies on refuse in Indian cities, Part-II: variation in quantity and quality, Indian journal of environment and health, Vol-17, No 3 (1975)

****

A Beautiful Exotic Plant *Senna Alata* Found In Dhar (M.P.)India

Nirbhay Singh Solanki * S.C. Mehta **

Abstract - *Senna alata*, the candle bush, is an important medicinal tree, as well as an ornamental flowering plant in the subfamily Caesalpinioideae. It also known as a candelabra bush,empress candle plant, ringworm tree, or candletree Ringworm shrub is native to Mexico, and can be found in diverse habitats. In the tropics it grows up to an altitude of 1,200 meters. It is an invasive species in Austronesia. In Sri Lanka this is use an ingredient of Sinhala traditional medicine.This plant has found in Dhar.

Keywords - Parasites, Ethanomedicine, Ringworm, Antimicrobials,Decoction.

Introduction - *Senna alata* is an Exotic plant. Medicinal plants have been used for centuries as remedies for human diseases because they contain components of therapeutic value. Recently, some higher plant products have attracted the attention of microbiologists to search for some phytochemicals for their exploitation as antimicrobials such plant products would be biodegradable and safe to human health (Kumar *et al*., 2008; Wang *et al*., 2010). The acceptance of traditional medicine as an alternative form of health care hassled researchers to further investigate antimicrobial activity of medicinal plant. Countries in Africa, Asia and Latin America use traditional medicine to help meet some of their primary healthcare needs. Worldwide this plant is used as ethanomedicinal plant.

Study Area - Dhar District :-Dhar district is located at 22degree to 22degree 49 minute north latitude and 75degree 6 minute to75degree 42 minute east longitude, average altitude of Dhar district is 588 meters above the sea level.

Plant Classification -

Kingdom: Plantae – Plants
Subkingdom: Tracheobionta – Vascular plants
Superdivision: Spermatophyta – Seed plants
Division: Magnoliophyta – Flowering plants
Class: Magnoliopsida – Dicotyledons
Subclass: Rosidae
Order: Fabales
Family: Fabaceae – Pea family
Genus: *Senna* Mill. – senna
Species: *Senna alata* (L.) Roxb. – emperor's candlesticks

Synonym - *Senna alata*, *Herpetica alata, Cassia bracteata, Cassia herpetica*

Common names - guajava, amana-putir-i, bajagua, bois dartre, candlebush, candlestick senna, candlesticks, Christmas-candle, daoen koepang, dartres, dates jaunes, emperor's candlesticks, empress-candleplant, fleur a dartres, fleur St Christophe, fleur dartre, fleur palmiste, gelenggang, guacamaya francesa, herbe a dattes, ketepeng kebo, ketepeng tijna, ketepeng, ketepeng badak, ki manila, ludanggan, mata-pasto, matupa, mocoté, retama, ringworm senna, ringworm bush, ringworm shrub, seven-golden-candlesticks

Sanskrit: Dadrughna, Dvipagasti
English: Ringworm shrub
Hindi: Dadmurd.

Plant Description - The thick, pithy stems are upright (i.e. erect or ascending) and branched.The once-compound (i.e. pinnate) leaves are alternately arranged along the stems and very large (45-80 cm long and 12-25 cm wide). They are borne on stalks (i.e. petioles) 2-4 cm long and have 8-14 pairs of large leaflets. The individual leaflets(5-17 cm long and 2-5.5 cm wide) are either oblong, oval (i.e. elliptic) or egg-shaped in outline (i.e. ovate) and have entire margins. They are finely hairy (i.e. pubescent) and have rounded or slightly notched tips (i.e. obtuse, retuse or emarginate apices).

The cup shaped flowers are bright yellow, and carried in erect terminal clusters arising from leaf axils. The individual flowers are about an inch (2.5 cm) across. The standard is the longest petal and the other petals are similar to each other. The sepals that protect the flowers before they open are waxy and smooth to the touch. The candle-like flower clusters include open flowers at the bottom and unopened flowers with their waxy coverings at the top. The clusters stand 6-24 in (15-60 cm) tall. The fruit is a straight or slightly curved, winged pod around 4-8 in (11-19 cm) long. Late in the season, the inflorescence will have dry, brown pods at the bottom; green, still ripening pods above that; open flowers above that; and waxy sepal-covered flowers at the top.

* Assistant Prof. (Botany) Govt. P.G. College, Dhar (M.P.) INDIA
** Prof. (Botany) Govt. P.G. College, jaora (M.P.) INDIA

Traditional medicinal uses - Leaves or sap are used to treat fungal infections such as ringworm. They contain a fungicide, chrysophanic acid. Because of its anti-fungal properties, it is a common ingredient in soaps, shampoos and lotions in the Philippines. The effectiveness of this plant against skin diseases is confirmed by modern scientific studies.

Other chemicals contained in the plant includes saponin which acts as a laxative and expels intestinal parasites. In Africa, the boiled leaves are used to treat high-blood pressure. In South America, besides skin diseases, it is also used to treat a wide range of ailments from stomach problems, fever, asthma to snake bite and venereal diseases (syphilis, gonorrhoea).

Ethnomedical Uses -

1. The seeds used for intestinal parasitism.
2. Tincture from leaves reported to be purgative.
3. Decoction of leaves and flowers for cough and as expectorant in bronchitis and asthma. Also used as astringent.
4. Crushed leaves and juice extract used for ringworm, scabies, eczema, tinea infections, itches, insect bites, herpes.
5. Preparation:-Pound enough fresh leaves; express (squeeze out) the juice and apply on the affected skin morning and evening. Improvement should be noticed after 2 - 3 weeks of treatment.
6. Decoction of leaves and flowers used as mouthwash in stomatitis.In veterinary medicine too, a range of skin problems in livestock is treated with leaf decoctions. Such decoctions are also used against external parasites such as mites and ticks.
7. In Africa, the boiled leaves are used for hypertension.
8. In south american, used for skin diseases, stomach problems, fever, asthma, snake bites and venereal disease.
9. InThailand, leaves are boiled and drunk to hasten delivery.
10. As laxative, boil 10-15 dried leaves in water, taken in the morning and bedtime.
11. For wound treatment, leaves are boiled and simmered to one-third volume, then applied to affected areas twice daily.
12. In India, plant used as cure for poisonous bites and for venereal eruptions.
13. In Nigeria locally used for treatment of ringworm and parasitic skin diseases.
14. In Samoa as a purgative; for ringworms, skin problems, snakebite
15. In Mexico as a diaphoretic, diuretic, insecticide, purgative; for fever, rheumatism, ringworms, skin conditions, snakebite, syphilis
16. In Ghana as an abortifacient, insecticide, purgative, vermifuge; for ascites, craw-craw, dhobey-itch, eczema, gonorrhea, herpes, leprosy, mycosis, parturition, ringworm, shingles, skin problems, sores, wounds
17. In India leaf decoctions are used as an expectorant in bronchitis and dyspnoea, as an astringent, a mouthwash and a wash in cases of eczema. Decoctions of the wood are used to treat liver problems, urticaria, rhinitis and loss of appetite caused by gastro-intestinal problems.

Senna alata -Flowering plant

Discusssion- This plant is very beautiful so the birds and butterfly are attract towards it. This yellow flower plant is glory of nature. This plant is very attractive .we should grow as natural beauty in public places like garden, hospitals schools. It has medicinal value along with ornamental value. It cures many diseases.

References :-

1. http://www.stuartxchange.com/Akapulko.html
2. http://www.itis.gov/servlet/SingleRpt/Single Rpt ? search _topic=TSN&search_value=505141
3. http://www.naturia.per.sg/buloh/plants/candlesticks.htm
4. http://www.rain-tree.com/guajava.htm#.VMOpolc0K1s
5. http://en.wikipedia.org/wiki/Senna_alata
6. http://www.tropilab.com/cassia-ala.html
7. http://www.floridata.com/ref/S/senn_ala.cfm
8. http://keyserver.lucidcentral.org/weeds/data/080c0106-040c-4508-8300-0b0a06060e01/media/Html/Senna
9. http://wildlifeofhawaii.com/flowers/996/senna-alata-emperors-candlesticks/
10. http://database.prota.org/PROTAhtml/Senna % 20 alata _En.htm
11. http://www.trumpetflowers.com/plants/care-and-grow-cassia-alata-candlelabra-senna.htm
12. http://luirig.altervista.org/naturaitaliana/viewpics 2. php? rcn=48410
13. http://www.medwelljournals.com/fulltext/? doi = rjbsci. 2010.275.284
14. http://www.toxicologycentre.com/English/plants/Botanical/anattakara.html

Senna alata -Fruit

Senna alata- leaf

Senna alata -Seed

****

Vermiculture Biotechnology for Waste Management and Sustainable Agriculture

Dr. Seema Bhola *

Introduction - Word vermiculture has been derived from Latin word 'vermis' meaning worm. Vermiculture is done for mass production of earthworms for waste recycling/ management and composting with 'vermicast' production. Vermiculture is reported to have started in middle of 20th century and first plants were set up in Holland, England and Ontario, Canada. Later these were started in USA, Italy, France, and Israel. Japan is reported to import 3,000 million tonnes of earthworms for waste degradation.

There are about 3,920 named forms of earthworms so far reported from whole world. In India, so far, 509 species, referable to 67 genera and 10 families are reportedly distributed. Charles Darwin, appreciating beneficial activities of earthworms said. "Earthworms are best ploughmen". These worms are natural biological agents that affect soli fragementation, aeration, bring about soil turn and dispersion, digest organic matter, graze microflora and even reduce salmonella bacteria to about 30 per cent.

Biologically, feeding and excretion in earthworms is significant process as ingested matter is passed out in 24 hours. Excretion of droppings i.e. "castings", carry ammonia, nitrates, nitrogen, phosphors, magnesium and other micronutrients and microbes. These have potentials of generating NPK equal to 10 million tons annually in India as 1,000 tons of waste organic matter can be degraded to 300 tons of vermicompost (Kale 1991).

Earthworms, the major soil fauna form one of the marvels of nature provided to mankind. The enzymes secreted in their long intestine and those by the symbiotic microbes in their gut cavity brings about chemical conversion of all organic wastes in soil. Only 5 to 10 per cent of the ingested material after degradation is absorbed into the body for its own activity and the rest is excreted as fine mucus coated granular aggregates. Aristotle-the Greek philosopher, named them as *"Intestines of Earth".* They are miniature machineries of nature's creation which are doing tremendous services to the mankind.

Worms are segmented animals, without bones. They have tendency to move away from light. Worms have a muscular gizzard. Food is finely ground in the gizzard to a size of 2-4 microns. This increases the surface areas, for the microbial action, in the gut of the worms.

Among the most common type of earthworms found in India are: *Pheritima posthuma, Pheritima elongata, Pontoscdex corethrurus, Lampita mauritil, Perionyx excavatus, Eutyphoeus waltoni, Eisenia fetida, Eudrilus eugeniae, Lumbricus rebellus.*

Earthworms are in general beneficial to agriculture. Their burrows permit the penetration of air and moisture in the porous soil, improve drainage, and make easier the downward growth of the roots. The excretory wastes and other secretions of the worms also enrich the soil by adding nitrogenous matters. Their effect on turning over of soil is considerable. *One acre of fertile land may contain more than 50,000 earthworms and the quantity of earth (soil) brought up from below and deposited on the surface as worm castings has been estimated to be about 18 tons per acre per year.*

The food of earthworms consists of the organic matter of the soil, fresh and decaying leaves, leaves, larvae and small animals, living or dead, and the bacteria mixed with earth. Earthworms swallow soil in large quantity which passes through the alimentary canal equipped with mini grinder gizzard. The swallowed soil and organic matter, thoroughly mixed, is ejected on the ground in the form of casting. Nutrient qualities of vermicasts and compost would obviously vary with base nutrients in the waste biomass and conversion capability.

Vermicasts thus offer potential usage as a safe biofertilizer. Apart from these the organic compounds released from the body of worm and from the associated microbes act as the plant growth promoter substances.

The earthworms, as a friend of farmer is a master soil turner and convertor of organic residue into compost. Unfortunately earthworm prevalence in cultivated land has been jeopardized in recent years, mostly because of increasing use of agro-chemicals.

Now more and more emphasis is laid on the organic farming and use of earthworms for the conversion of organic waste into organic manure. There are some earthworm species which are most suitable for waste degradation. Earthworms are chemical engineer, and microbiologist, agricultural scientist and a farmer, all rolled into one. Vermiculture engineer growth of beneficial bacteria and

* Asst. Prof. (Zoology) Govt. Auto. P.G. College, Satna (M.P.) INDIA

actionomycetes in the soil. What is more, they are a committed environmentalist as well, because all their methods are eco-friendly and sustainable.

Vermiculture ensure proper utilization of organic residues such as “sugarcane trash”, “banana stems”, “paddy” and “wheat straw”, “coir waste” and “weeds”. Diverse organic wastes emnating from the homes, agro-based industries such as sugar mills, fruit and vegetable processing units, cattle and poultry units, slaughter houses can be used as raw materials for producing vermicastings on the commercial scale.

Commercial biodegradation and vermicastings production unit requires special technical and management skills. It also requires large quantities of waste organic residues of assured low price for the investment period (5-10years). For a commercially viable unit, the daily production capacity has to be 4-10 tons/day depending upon the cost of raw materials (organic wastes), delivered to the site. These commercial units will be able to market vermicastings of assured quality to the farmers. They would also contribute to the environmental sanitation by utilizing wastes which could have created pollution otherwise. Depending on the delivered cost of waste raw materials, the investment is paid back within 1-2 years.

References :-

1. Bhat,J.V. and Khambata, S.R. (1994): “Role of Earthworm in Agriculture”; *ICAR Research Series no. 22,* New Delhi, pp. 36.
2. Bhawalkar V. and Bhawalkar U. (1994): “*Vermiculture Biotechnology”;* Bhawalkar Earthworm Research Institute (BERI). Pune. (India).
3. Edwards, C.A. (1988):”Breakdown of animal, vegetable and industrial organic wastes by earthworms”; In: *Earthworms in waste and environmental management”;* Publ. SPB Academic, The Hague.
4. Ghial Pushpa (1994): “*Vermiculture Biotechnology: Earthworms for Good Earth”;* Disseration under the Supervision of Dr. R.K. Sinha, submitted for *P.G. Diploma in Human Ecology,* Rajasthan University, Jaipur.
5. Gupta P.K. 2003 Why vermicomposting? In Vermicomposting for sustainable agriculture Agro bios (India); Agro House, Jodhpur, pp. 14-25.
6. Shewta Singh Y.P. and Kumar U.P. 2004 Vermicomposting a profitable alternative for developing country, Agrobios (11) 3: 1516.
7. Sujatha K, Mahalakshmi A and Shenbagarathai R. 2003 Effect of indigenous earthworms on solid waste In: Biotechnology in Agriculture Industry and Environment (Eds. Deshmukh A.M.) Microbiology society Karad, pp. 348-353.
8. Tripathi Y.C. Hazaria P. Kaushik P.K. and Kumar A. 2005 Vermitechnology and waste management In: Verms and vermitechnology, (edi: A. Kumar) A.P.H. Publishing corporation, New Delhi, pp. 9-21.

****

Incidence Of Submucous Fibrosis Due To Tobacco Chewing At Satna

Dr. Rashmi Singh *

Introduction - Sub mucous fibrosis is chronic insidious process characterized by fibrosis in sub mucosal layer of oral cavity and sometimes the pharynx, this disease is prevalent throughout the Indian subcontinent and its prevalence rate varies from 2 to 5 per 1000

Sub mucous fibrosis is caused by habit of chewing tobacco, tobacco is available in different forms like Gutkha, leaf, powders, these all leads to irritation of mucosa, when these materials are chewed for a long period, due to their chemical substance causes chronic irritation they cause oral ulcers, later on Sub mucous fibrosis.

Elastic tissue of sub mucosal layers converts into fibrous tissue hence there is whitening of whole oral mucosa followed by difficulty in opening the mouth and difficulty in protrusion of the tongue, patients find difficulty in taking spicy food, salty food usually patient suffers from recurrent Episodes of oral ulceration which leads to pain and odynophagia.

Material And Method - This study was conducted on patients came to ENT dept. of dist. Hospital Satna from 01/09/2012 to 20/09/2012 number of male and female patients were noted, duration of tobacco chewing and frequency of taking tobacco in any form was also noted habit of chewing tobacco in the form of bolus on one side of cheek was also asked, other associated bad habit of taking betalnut, alcohol, smoking, spicy food was also asked, complaints of difficulty in opening the mouth, difficulty in protruding tongue out, frequency of oral ulcer, pain during swallowing, excessive salivation was also noted, patients belonging to rural as well as urban area was also taken into account.

Result - 614 Cases were examined in ENT outdoors, Sub mucous fibrosis was found in 12 cases, 8 were males 4 were female. Male and female ratio was 2:1, rural to urban population ration was 2:1, total incidence of sub mucous fibrosis patients attending the Dept. of ENT is about 2 per 100 cases.

Discussion -Our study indicates that 2 cases per 100 cases attending the ENT outdoor of Satna is very high as compared to overall incidence of India which is 2 to 5 per 1000, reason is probably tobacco chewing habit is very common in this region, rural people are affected more than urban population because of this tobacco chewing habits and ignorance about the severity of the disease, urban people are comparatively more educated and probably they know about the consequence of tobacco chewing which can even Lead to oral cancers sub mucous fibrosis is a precancerous condition, one thing was noted about tobacco chewing is longer the duration of tobacco chewing more fibrosis in mouth and more ulceration In mouth, more difficulty in opening the mouth and protruding the tongue.

Conclusion - Our study concludes that tobacco chewing is very harmful it leads to sub mucous fibrosis and later on if not treated properly may lead to serious problems as the males are more in habit of chewing tobacco more than females hence they are more prone to sub mucous fibrosis than females and more prone to oral cancer in near future,

Prevention - There are certain means by which incidence of sub mucous fibrosis can be reduced

1. All form of tobacco chewing should be discouraged.
2. There should be a moment among the society especially the rural people to avoid tobacco, they should be informed about the consequence of tobacco chewing.
3. Tobacco should totally banned for selling in market, few states have already taken measures to stop Gutkha tobacco selling.
4. Those who are already suffering from sub mucous fibrosis; they should be properly treated by ENT specialist so that future chances of turning into oral cancer can be prevented.
5. This disease in commonly seen in young age group 20 to 40 mainly, it is responsibility of parents to keep an eye upon these male child so that they do not indulge in tobacco chewing habits.
6. Empty mind and free time are the main cause for young generation to be involved in tobacco chewing, every attempt should be made by parents, teachers social workers and friends to keep there young people busy in some constructive work so that they cannot think about tobacco chewing.

References :-

1. Pindborg JJ, Barmes D, Roed-Peterson B. Epidemiology and histology of oral leukoplakia and leukoedema among Papuans and New Guineans. Cancer. 1968;22:379–84. [PubMed]

* Professor (Zoology) Govt. Auto. P.G. College, Satna (M.P.) INDIA

2. A WHO Meeting report. Control of oral cancer in developing countries. Bull WHO. 1984;62:617–30.
3. Sullivan RJ, Hagen EH. Psychotropic substance-seeking: Evolutionary pathology or adaptation? Addiction. 2002;97:389–400. [PubMed]
4. Shah SM, Merchant AT, Lucy SP, Chotani RA. Addicted school children: Prevalence and characteristics of areca nut chewers among primary school children in Karachi, Pakistan. J Paediatr Child Health. 2002;38:507–10. [PubMed]
5. Farrand P, Rowe RM, Johnstion A, Murdoch H. Prevalence, age of onset and demographic relationships of different areca nut habits amongst children in tower Hamlets. London. Br Dent J. 2001;190:150–4. [PubMed]
6. Oral cancer in India: An epidemiologic and clinical review R. Sankaranarayanan, MD
7. Bhurgri, A., Asif, Y. and Khwaja, I.A., Primary carcinoma of the gall bladder: a 5 year experience. J. Pakistan med. Assoc., 45, 257 (1995).PubMed,CAS
8. Gill, H.H., Desai, H.G., Majumdar, P., Mehta, P.R. and Prabhu, S.R., Epidemiology of Helicobacter pylori: the Indian scenario. Indian J. Gastroenterol., 12, 9-11 (1993). PubMed, CAS
9. Graham, D.Y., Adam, E., Reddy, G.T., Agarwal, J.P., Agarwal, R., Evans, D.J. Jr., Malatay, H.M. and Evans, D.G., Seroepidemiology of Helicobacter pylori in India. Comparison of developing and developed countries. Dig. Dis. Sci., 36, 1084-1088 (1991). CrossRef, PubMed,

****

Seasonality And Phenology In Grassland Community Of Panna (M.P.)

Dr. Mukta Shrivastava *

Abstract - The success of an ecosystem depends on the timing of phenological events. Phenology is also concerned with the relationships among the phenophases of individuals of the same or different species. Today this well established science is used to track the effect of global warming and climate change on organisms and to make predictions about the future health of the environment.

Introduction - Phenology is one of the oldest branches of environmental science dating back thousands of years. Phenological observations have been used for centuries to maximize crop production, prepare for seasonal allergies, and anticipate optimal wild flower viewing conditions. The seasonality of tropical tree phenology is mainly determined by the duration and intensity of seasonal drought (Mooney et.al.1995). Shelford (1929) first used the term to correlate the appearance of certain seasonal events. The studies on the phenology of tropical rain forest have been made by Scheffler (1901) in Africa, Scheimper (1903) in Java, Wright (1905) in Ceylone. Global climate change may force variation in timing, duration and synchronization of phenological events in tropical forests (Reich 1995). The need for functional types has been emphasized to evaluate and predict the nature of vegetation responses to future global change (Box, 1996).

Material and Method - Phenological data were recorded each month from July to February. Six phenological stages were noted. Germination, vegetative phase, flowering stage, fruiting phase and death of the plant in annual and that of serial plant of the perennial.

Result and Discussion - The phenology of various species is discussed in the two season viz., rainy season and winter season.

Rainy Season - After the first few showers during the late June seedlings of a number of species both annual and perennials emerge from the ground until August every year. In the perennial forbs viz., *Indigofera linifolia, Evolvulus numularius, Desmodium triflorum, Dichanthium annulatum,* fresh branches emerge from the rhizomes. In the second week of July the grassland becomes green and bare areas ware filled by young plants of annual and perennial tillers.

All the annuals of rainy season start flowering during the month of August. To a considerable extent fruiting is also observed in a number of species. e.g. *Paspalum roileanum, Panicum humile, Cyperus compresses, Digitaria Sp., Euphorbia hirta and Euphorbia thymifalia* also bear fruits in the same month. Rest annual generally bear fruit in the month of September and during later part of the same month, seeds are formed. *Vandellia crustacea, Altotropsis cinicina* complete their cycle during the month of September. Degeneration of arial shoots also occur in the case of Dichanthium annulatum, Convolvulus pluricaulis, Vernonia cinera, Vanithium strumarium during early part of the season. Among the perennials *Botheriochloa pertusa, Rhyncosia minima* are flowering and fruiting profusely during rainy season.

Winter Season - Degeneration and death of rainy season annual and arial part of *Bothriochloa pertusa* characterized the early part of winter season, Annuals like *Phyllanthus niruri, Trichodesma indicum, Rungia pectinata, Volutarella ramosa* make their appearance in the form of seedling. After the winter, rains are even earlier. A fresh crop of Panicum humile, *Paspalum royleanum, Sporovolous diander and Eragrostis tenella* emerges*. Dighanthium annulatum* and *Desmodium triflorum* are amongst the perennials which make early growth during the early part of winter season. During the later part of season *Convolvulus pluricaulis, Evolvulus numilarius, Evolvulus alinoides, Alvsicarpus monilifer* shows brisk vegetative growth. Three species of *Euphorbia hirta, Euphorbia hypercifolia, Euphorbia thymifoli* flower and fruit extensively. *Chryosopogon montanus, Hateropogan contortus, Apluda aristata and Themeda guadrivalvis, Eragrostris tenella, Panieum humile, Paspalum royleanum* and *Sporobalous diander* also flower and fruit to a considerable extent, although *Paspalum royleanum* is seldom seen beyond January.

Extensive flowering occurs amongst the perennials *Voluterilla ramosa, Trichodesma indicum, Xanthium stumerium, Trivulus terrostria, Vernonia cinerea, Imperata cylendrica, Evolvulus nunularius, Convolvulus arvensis, Desmodium triflorum, Dichanthium annulatum*, start fruiting during the later part of the winter season.

* **Assistant Professor (Botany) Govt. M.L.B. Girls P.G. (Auto) College, Bhopal (M.P.) INDIA**

References:-

1. Box E O. 1966 . Plant functional types and climate at global scale. Journal of vegetation science 7:309-320
2. Mooney H A, Medina E, Bullock S H. 1995. Neotropical deciduous forests. New York. Academic preis.
3. Reich P B. 1995. Phenology of tropical forests : Patterns, causes and consequences. Canadian Journal of Botany 73: 164-174.
4. Scheffler,G (1901) Notizbl.bol.cart.Berl. 3:139-166.
5. Schelford V.E. (1929) Laboratory and field ecology. Baltimore, Williams and Wilkins.
6. Schimper, A.F.W. (1903) Plant geography upon a physiol ogical basis. Edited by P.Groom and I.B. Balfour, Oxford.
7. Wright,H (1905). Ann.Bot. Gdns perandiniya, 2: 415-517.

****

बुन्देली लोक परम्पराओं में निहित मानव जाति पारिस्थितिकी एवं पर्यावरण संरक्षण

डॉ. मुक्ता श्रीवास्तव *

प्रस्तावना – लोक का व्यापक अर्थ है सम्पूर्ण जन–जीवन और इसका गहरा तादात्मय होता है संस्कृति से। ज्ञान एवं व्यवहार की उत्तम चेष्टाएं ही संस्कृति का परिचायक है एवं संस्कृति की जितनी भी परिभाषाएं की जाती हैं, उनमें परम्पराओं को प्रमुख स्थान दिया जाता है। प्रत्येक देश की संस्कृति अपनी लोक आस्थाओं में अभिव्यक्ति पाती है और वही मौखिक परम्पराओं से संस्कृति की संवाहक भी होती है। हमारी परम्पराएं हमारी जीवन शैली के वे तत्व हैं, जो सामाजिक परिवर्तन के दौर में रूपान्तरित होते रहते हैं, किन्तु पूरी तरह नहीं बदलते एवं इस तरह परम्पराएं वर्तमान एवं भूत के विभिन्न आयामों को जोड़ने वाली माध्यम भी हैं। खाद्य, निवास, चिकित्सा सेवाएं, परिवार कल्याण आर्थिक स्तर में सुधार व समाज के विभिन्न लोगों न्यास तथा प्राकृतिक संरक्षण आज हमारी राष्ट्रीय आवश्यकताएं हैं।

बुन्देलखण्ड के पर्वों, तीज–त्यौहारों एवं लोक–कथाओं की अपनी ऐतिहासिकता है एवं उनका पौराणिक एवं आध्यात्मिक महत्व है। बुन्देलखण्ड का सामान्य व्यक्ति भी अपने व्यावहारिक जीवन में उसी आचार–विचार का पालन करता है जिनकी व्यवस्था मनु आदि स्मृतिकारों और पौराणिक ऋषियों द्वारा दी गई थी। लोक कथाओं में जन–साधारण की आशाएं, आकांक्षाएं, परम्पराएं, रहन–सहन और जीवन–मूल्य व्यक्त होते रहते हैं। सामाजिक दबाव व परिवर्तन से ये कथाएं भाषा और कथा के आधार पर परिवर्तन भले ग्रहण कर लें पर उनमें व्यक्त संस्कृति के मूल आधार नहीं बदलते। भारतीय संस्कृति का मूल तत्व है – 'परहित सरिस धर्म नहिं भाई, पर पीड़ा सम नहिं अधमाई', लोक कथाओं में यह भाव हमेशा विद्यमान रहता है। लोक कथाएं सीधे–सीधे उपदेश नहीं देती । ये प्रभाव छोड़ती हैं और श्रोता सोचने के लिए विवश हो जाता है कि बुरे कर्मो का फल बुरा होता है । समाज में जो अमंगल है, अन्याय है उसका प्रतिरोध करने की शक्ति देना भी संस्कृति का लक्ष्य होता है। इसलिए लोक कथाओं में पुरूषार्थी की सहायता दैवीय शक्तियां भी करती हैं।

लोक कथाओं में प्रकृति सदैव मानव के लिए कल्याणकारी रूप में प्रस्तुत हुई है। प्रकृति के साथ संतुलन और साहचर्य का भाव बनाए रखने में लोक कथाएं ही सरलता एवं सहजता के साथ सहायक सिद्ध हुई हैं। प्राय: जनमानस धार्मिक शिक्षा एवं परम्परा को सहजता से ग्रहण कर लेता है अत: ये कथाएं मानवीय मूल्य एवं प्रकृति के संरक्षण के संदेशों को सहजता से पीढ़ी–दर–पीढ़ी संप्रेषित करती चली आ रही हैं। बुन्देली लोक जीवन में, यहां के साहित्य, रीति–रिवाजों धार्मिक चर्चाओं में पादपों एवं पशु–पक्षियों का उल्लेख होने से वे धर्म का अंग बनकर उनके जीवन में समाहित हो गये हैं। बुन्देली लोक–जीवन में मानवेतर प्राणियों में पशुवर्ग में गाय, हाथी, घोड़ा का बहुत महत्व है। इनकी पूजा की जाती है। पक्षियों में नीलकण्ठ, तोता, हंस विशेष रूप से पूजित होते हैं। इनके अलावा विभिन्न देवी–देवताओं के वाहन के रूप में अनेक पशु–पक्षियों की पूजा की जाती है। नागपंचमी पर विषधर नाग की पूजा की जाती है। बुन्देलखण्ड में प्रचलित अधिकांश रीति–रिवाज एवं परम्पराओं में कहीं–न–कहीं वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाने का प्रयत्न किया गया है एवं यह विज्ञान परम्पराओं के माध्यम से पीढ़ी–दर–पीढ़ी संप्रेषित होता चला आ रहा है। सर्वसाधारण में जो परम्परागत ज्ञान है, वह परम्पराओं, रीति–रिवाजों, पूजा–कथाओं प्रचलित धार्मिक निषेधों के माध्यम से मानव जाति पारिस्थितिकी एवं पर्यावरण संरक्षण के क्षेत्र में सहायक है। लोक–कथाओं के आधार पर अनेक महत्वपूर्ण औषधियों की खोज की जा चुकी है। यह सम्भव है कि निकट भविष्य में प्रमाणिक जड़ी–बूटियों के प्रयोग से अनेक असाध्य रोगों का निदान सम्भव हो सकेगा। कुछ ऐसे उदाहरण हैं, जहां वनों का संरक्षण जन–जातियों के धार्मिक विश्वासों के कारण ही सम्भव हो सका है।

बुन्देली लोक–जीवन में प्रकृति सदैव एक मित्र के रूप में प्रस्तुत हुई है। यहां के लोक जीवन में पेड़–पौधों के प्रति गहरी आस्था है जो वर्ष भर ऋतुओं के अनुसार मनाए जाने वाले त्यौहारों में सर्वत्र दिखाई देता है। बट–सावित्री व्रत में बड़ के वृक्ष (*Ficus bengalensis*), सोमवती अमावस्या पर पीपल (*Ficus religiosa*), अक्षयनौमी पर आंवले (*Phylanthus emblica*) के पेड़ की पूजा की जाती है। एकादशी पर तुलसी (*Ocimum sanctum*) पूजा का बहुत महत्व है। हरछट की पूजा में अनेक वनस्पतियों की पूजा की जाती है जिसमें पलाश (*Buteamonosperma*) एवं महुआ (*Madhuca indica*) प्रमुख हैं। प्रसाद में महुआ के फल, चिरौंजी (*Buchanania lanzan*), छुहारा, पलाश के पत्तों से बने दोने एवं पत्तल पर रखकर छ: अनाज (गेंहू, मक्का (*Zea mays*), बाजरा (*Pennisetum typhoideum*), जौ, पसई का चावल, ज्वार या जई (*Avena sativa*)) अर्पित किये जाते हैं। नवरात्रि में देवी को रक्तचन्दन (*Pterocarpus sentalinus*), पान (*Piper bettle*), सुपारी, नारियल एवं लौंग (*Syzygium aromaticum*) इलायची (*Elettaria cardamomum*) चढ़ाना अनिवार्य होता है। शिवरात्रि एवं हरतालिका व्रत में अनेक फूल, पत्ती चढ़ाये जाते हैं। शंकर जी को केशर (*Crocus sativus*), चंदन (*Santalum album*), बेल (*Aegle marmelos*) पत्र, भांग (*Cannabis sativa*), धतूरा (*Datura stramonium*) एवं गणेश जी को दूब (*Cynodon dactylon*) चढ़ाने से वे विशेष प्रसन्न होते हैं, ऐसी मान्यता है। हरतालिका व्रत के एक दिन पूर्व मध्य रात्रि में ककड़ी (*Cucumis sativus*) खाने एवं महुआ की दातौन करने की परम्परा है। मकर संक्रांति पर तिल (*Sesamum indicum*) का बहुत महत्व

* सहायक प्राध्यापक (वनस्पति शास्त्र) शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या (स्वशासी) स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

है। ऋषि पंचमी पर पान के पत्तों पर ऋषि की आकृति चित्रित कर पूजा की जाती है। तिसुआ सोमवार में पलाश के फूल एवं बांस के बैंत की पूजा का महत्व है। बुन्देलखण्ड में छोटी बच्चियों द्वारा 'मामुलिया' खेल खेला जाता हैं इसमें बेर की डाल को तरह-तरह के फूलों जैसे- सदाबहार (*Catharanthus roseus*), गेंदा, पीला कनेर (*Thevatia peruriana*), लाल कनेर (*Nerium indicum*), गुड़हल (*Hibscusrosa sinensis*) आदि से सजाकर पूजा की जाती है। खेल-खेल में प्रकृति से जोड़ने का यह अनुपम उदाहरण है। दशहरे पर्व पर सोनपत्ता (कचनार (*Bauhinia variegata*)) के पत्ते एक दूसरे को देने एवं पान खिलाने की परम्परा है। इसी तरह भुजरियां में छेवले के पत्तों से बने दोनों में बोये हुए गेंहूं के दानों से उगे आठ दिन पुराने पौधों को परस्पर एक दूसरे को दिया जाता है। आपसी सौहार्द बढ़ाने में प्रकृति के ये उपादान एक आदर्श प्रस्तुत करते हैं।

इस तरह बुन्देलखण्ड की लोक आस्थाओं में समाहित ये परम्पराएं, रीति-रिवाज एवं लोक-कथाएं प्रकृति के ममत्व और उपकारी भाव की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट करती हैं। इनमें प्रकृति सदैव मानव के लिए कल्याणकारी के रूप में प्रस्तुत हुई है। पशु-पक्षी, जीव-जन्तु, पेड़-पौधे सच्चे और असहाय व्यक्ति की विपत्ति में सहायक बनते हैं, लोक-कथाओं के माध्यम से यह संदेश सदियों से संप्रेषित होता चला आ रहा है। आधुनिकता के नाम पर विकृति को अपनाना गलत भी है। इन रीति-रिवाजों एवं परम्पराओं को पूरा सम्मान एवं प्रतिष्ठा देने के साथ इनमें निहित वैज्ञानिक दृष्टिकोण को समझना एवं उनका अध्ययन मानव समाज के विकास में सहायक सिद्ध होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Jain, S.K. (1981) Glimpses of Indian Ethno botany Oxford & IBH, New Delhi.
2. Jain, S.K. & Borthakur S.K. (1980) Economic botany 34 (3) : 264-272.
3. Roy G.P., Shukla, B.K. & Datt, Bhasker (1992) - Flora of Madhya Pradesh. Ashish Publishing House, New Delhi.
4. Data was collected and interpreted after survey and consulting persons of different regions of Bundel Khand.

****

आध्यात्मिक प्रश्नों के समाधान में भौतिक शास्त्र की उपयोगिता

डॉ. आर. के. गुप्ता *

शोध सारांश – भौतिक के अनेक सिद्धान्त आध्यात्मिक सिद्धान्तों से मेल खाते है। कार्य ऊर्जा प्रमेय, बल की अवधारणा, न्यूटन के गति का तीसरा नियम, आइंस्टीन का द्रव्यमान–ऊर्जा तुल्यता सम्बंध अध्यात्म के सिद्धान्तों से मेल खाते है। क्वाण्टम यांत्रिकी के कई सिद्धान्त यथा द्रव्य तरंग की अवधारणा, प्लांक का क्वाण्टम सिद्धान्त, हाइजेनवर्ग का अनिश्चितता सिद्धान्त आदि का उपयोग आध्यात्मिक प्रश्नों के समाधान के लिए किया जा सकता है।

प्रस्तावना – विज्ञान एवं अध्यात्म दोनों का लक्ष्य मानव के जीवन को परिपूर्ण बनाना है। अध्यात्म पारलौकिक शक्तियों के द्वारा मानव के जीवन को सुख, समृद्धियों से युक्त बनाने का प्रयास करता है। विज्ञान तर्क के रास्ते से मानव के जीवन में इसे करने का प्रयास करता है। विज्ञान एवं अध्यात्म एक ही सिक्के के दो पहलू है। दोनों के रास्त अलग–अलग, लेकिन उद्देश्य एक समान। विज्ञान एवं अध्यात्म जन–कल्याण का ही कार्य करते है। अध्यात्म, अंहिसा एवं शांति के माध्यम से मानव की प्रगति का रास्ता चुनता है। वर्तमान परिदृश्य में देश में शांति का वातावरण तभी रह सकता है, जब हम ताकतवर होगें। परमाणु शक्ति संपन्नता, किसी देश के ताकतवर होने का प्रतीक है, विज्ञान देश में शांति का वातावरण बनाएँ रखने में सहायक हैं, जिससे मानव की आध्यात्मिक प्रगति हो सके।

भौतिक विज्ञान एवं अध्यात्म : एक ही सिक्के दो पहलू – अध्यात्म कर्म के सिद्धांत पर विश्वास करता है। भौतिकी कार्य पर विश्वास करता है। भौतिकी के अनेक सिद्धांत, आध्यात्मिक सिद्धांतों से मेल खाते है, भौतिकी के सिद्धांतों की विवेचना करने से यह स्पष्ट होता है कि वे हमारी धार्मिक एवं जनसामान्य की मान्यताओं के अनुरूप है, इसे निम्न उदाहरणों से समझ सकते है–

1. **कार्य –** कार्य करने की क्षमता को ऊर्जा कहते है। भौतिकी में ऊर्जा को प्राय: दो रूपो, गतिज एवं स्थितिज ऊर्जा के रूप में जानते है। मनुष्य में भी दो रूपो में ऊर्जा दिखलाई देती है, एक शारीरिक एवं दूसरी मानसिक। मानसिक संतुष्टि एवं प्रसन्नता से प्राप्त ऊर्जा पुन: शारीरिक ऊर्जा में परिवर्तित होती है। सहानुभूति द्वारा एक बीमार व्यक्ति को यदि मानसिक संतुष्टि प्राप्त हो जावे तो उसकी शारीरिक ऊर्जा बढ़ जाती है। यह पराभौतिक ऊर्जा का भौतिक ऊर्जा में परिवर्तन का एक उदाहरण है[1]।

2. **बल –** जिसमें विस्थापन यानि परिवर्तन लाने की क्षमता हो। आध्यात्मिक बल का उपयोग भी मानव के जीवन में परिवर्तन लाने के लिए होता है। बल जितना अधिक होगा, कार्य यानि परिणाम भी ज्यादा होगा। आध्यात्मिक रूप से परिणाम को सुंदर बनाने के लिए मन को लगाना होगा। मानसिक बल का सामर्थ्य अनंत होता है। असंभव सा दिखने वाला कार्य भी इससे किया जा सकता है, कहा गया है कि मन के हारे हार है, मन के जीते जीत। इससे यह स्पष्ट है कि बल की यह परिभाषा आध्यात्मिक भावना को सबल करती है[2]।

3. **न्यूटन का गति का नियम और अध्यात्म –** न्यूटन के गति के तृतीय नियम के अनुसार प्रत्येक क्रिया के बराबर किन्तु विपरीत दिशा में प्रतिक्रिया होती है। यह नियम भी आध्यात्मिक मान्यता के अनुकूल है। कहा गया है कि जैसा बोओगे, वैसा ही काटोगे। किसी के प्रति विकृत कर्मो का फल, विपरीत दिशा में यानि स्वयं को बराबर मात्रा में भोगना पड़ता है। इसी प्रकार किसी के लिए किए गये अच्छे कार्यो का फल विपरीत दिशा में यानि स्वयं को बराबर मात्रा में प्राप्त होता है। इसे ही अध्यात्म में क्रमश: पाप एवं पुण्य की संज्ञा दी गई है। इस प्रकार पाप एवं पुण्य की व्याख्या न्यूटन के गति के तीसरे नियम से हो सकती है।

4. **द्रव्यमान–ऊर्जा तुल्यता सम्बंध की आध्यात्मिक व्याख्या –** प्रसिद्ध वैज्ञानिक आंइस्टीन द्वारा दिए गये संबंध $E = mc^2$ भौतिक विज्ञान का आधार स्तंभ है। द्रव्यमान यानि जड़तत्व को प्रकृति का मूलाधार प्रकाश के संपर्क में लाने पर ऊर्जा यानि चेतना एवं विश्व का संचालक तत्व पावर प्राप्त होता है। अचेतन तत्व (द्रव्यमान) को चेतन तत्व (ऊर्जा) के समतुल्य बताने वाला यह समीकरण अध्यात्म की वैज्ञानिक व्याख्या करता है।

5. **द्रव्य तरंग बनाम चेतन तरंग –** वैज्ञानिक डी–ब्रोगली के अनुसार गतिशील द्रव्य कण के साथ स्वमेव एक तरंग संलग्न हो जाती है, जिसे द्रव्य तरंग कहते है। द्रव्यतरंग के अस्तित्व की वैज्ञानिक पुष्टि हो चुकी हैं गतिशील कण के व्यवहार का अध्ययन उसके स्थान पर संलग्न द्रव्यतरंग के द्वारा किया जाता है। कण अचेतन है, पार्थिव है एक निश्चित स्थान घेरता है। कण के अस्तित्व के संदर्भ में भ्रम नही रहता। तरंग न दिखलाई पडने वाली, अनिश्चित स्थान घेरने वाली चेतना है। अचेतन एवं चेतन अवस्था के बीच में यह संबंध द्रव्य तरंग की तरंगदैर्ध्य $\lambda = h / p$ से निर्धारित किया जाता है जहॉ h प्लाक नियतांक एवं p कण का संवेग है। इस सिद्धांत से भौतिक–विज्ञान की जिस शाखा (क्वाण्टम भौतिकी) ने जन्म लिया उससे पराभौतिक (चेतन) प्रश्नों का समाधान संभव है।

6. **हाइजेनवर्ग अनिश्चितता का सिद्धांत एवं चराचर जगत –** मानव के जीवन में सब कुछ अनिश्चित है। कब क्या होगा, उसके घटित होने की संभावना क्या है, घटित किन प्रभावी कारकों पर निर्भर करता है, हाइजेनवर्ग

* सहायक प्राध्यापक (भौतिक शास्त्र) शासकीय कन्या महाविद्यालय, कटनी(म.प्र.) भारत

अनिश्चितता का सिद्धांत इन्हें ज्ञात करने में मील का पत्थर साबित हो सकता है। इस सिद्धांत के अनुसार एक दूसरे पर निर्भर राशियों के मापन में हमेशा एक त्रुटि रह जाती है, त्रुटि यानि अनिश्चितता की परिकलन संभव है। चेतन कारकों के परिकलन में यह उपयोगी है।

निष्कर्ष – अध्यात्म एवं विज्ञान एक दूसरे के पूरक है। विज्ञान की पराकष्ठा मानव जीवन के समग्र विकास पर निर्भर है। मानसिक शांति अध्यात्म से ही संभव है। आध्यात्मिक प्रश्नों के समाधान में भौतिकशास्त्र के सिद्धांतों का उपयोग किया जा सकता हैं। क्वाण्टम भौतिकी आध्यात्मिक प्रश्नों के समाधान में मील का पत्थर साबित हो सकती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. आजाद डॉ. अब्दुल कलाम: अदम्य साहस 'विज्ञान और अध्यात्य' पृष्ठ 131
2. श्रीवास्तव डॉ. एस. के. : योग संदेश (हिन्दी) – 'विज्ञान की कसौटी पर कर्म' पृष्ठ 37

****

शहरी एवं ग्रामीण किशोरों में जाति के आधार पर चिंता एवं कुंण के मध्य सहसंबंधात्मक अध्ययन

डॉ. नंदिनी रेखड़े * जयश्री बाथम **

शोध सारांश –इस पृथ्वी पर प्रत्येक मनुष्य अपने जीवन की आवश्यकताओं की संतुष्टि चाहता है और इसके लिये उसे सामाजिक समायोजन करना होता है। कभी–कभी जब मनुष्य अपनी इन आवश्यकताओं की पूर्ति के प्रयास में असफल हो जाता है, तो वह निराशा एवं तनाव से ग्रसित हो जाता है। धीरे–धीरे ये निराशा व तनाव की भावनाएँ तीव्र होकर परेशानी का रुप ले लेती है, जो आगे चलकर चिंता में परिवर्तित हो जाती है। प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में कुछ समय के लिए कष्ट, चिंता, उदासी, दु:ख तथा मायूसी देखी जा सकती है, परन्तु किशोरावस्था में चिंता, प्रतिक्रिया उत्पन्न होना बहुत सामान्य है। इसकी आवृति की आशंका भी सबसे अधिक इसी समय होती है। जब व्यक्ति तरूणावस्था से युवावस्था के मध्य संक्रमणकालीन दौर से आगे गुजर रहा होता है।

चिंता का विषय स्वयं व्यक्ति होता है। उसकी व्याकुलता स्वयं उसकी मानसिक स्थितिजन्य होती है। चिंता विषयगत व्याकुलता है, जिसका बाहय पदार्थो से संबंध नहीं होता। चिंता हृदयगत छिपी हुई परेशानी के प्रति मस्तिष्क की प्रतिक्रिया है। अत: चिंता को दूर करने के लिए व्यक्ति की अन्तर्दशाओं का सूक्ष्म अध्ययन और विचार कर लेना चाहिए। जब संवेगात्मक उत्तेजक हमारे सामने होते है। तो हमें भय का अनुभव होता है। ज्ञान, अनुभव एवं कल्पना के विकास के साथ–साथ बालकों में काल्पनिक भय जन्म लेता है। इसी काल्पनिक भय को चिंता कहा गया है। भय से चिंता शरीर के लिए अधिक हानिकारक होती है तथा इसकी सीमा भी अधिक होती है।

प्रस्तावना – किशोरावस्था परिवर्तनों तथा समस्या बाहुल्य की अवस्था है। प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में कुछ समय के लिए कष्ट, चिंताएं, उदासी, दु:ख तथा मायुसी देखी जाती है। परन्तु किशोरावस्था में चिंता प्रतिक्रिया उत्पन्न होना बहुत सामान्य है तथा उसकी आवृत्ति की आशंका भी सबसे अधिक इसी समय होती है। जब व्यक्ति तरूणावस्था से पूर्ण युवावस्था के मध्य होता है।

चिंता उत्तेजना की वह अवस्था जो कि किसी व्यक्ति के हित को खतरा या भय उत्पन्न करती है। चिंता एक संवेगात्मक प्रक्रिया है। संवेगात्मक प्रक्रिया विशेष रुप से जटिल होती है। चिंता एक असंतोषजनक मानसिक स्थिति है और मूलत: ये परेशानी से उत्पन्न होती है। चिंता के लिये कोई निश्चित उद्दीपक नहीं होते है। चिंता की उत्पत्ति वास्तविक अथवा काल्पनिक कष्टो की स्थिति में होती है। जब व्यक्ति ये समझता है कि वह आर्थिक, सामाजिक या धार्मिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये अयोग्य है, तो उसमें चिंता उत्पन्न होने लगती है। चिंता संबंधी व्यवहारों का आरंभ बाल्यावस्था से होता है। इस अवस्था की जो स्थितियां उसे भयभीत बनाती है, युवावस्था में उसके समान उत्पन्न हुई स्थितियाँ भविष्य में उसे चिंतीत कर सकती है।

चिंता शब्द को सर्वप्रथम लाने का श्रेय फ्रायड (1894) को है। चिंता के संबंध में फ्रायड का विचार था, कि शारीरिक यौन तनावों (Somatic Sexual Tensions-Libido) के दमन के परिणाम स्वरुप चिंता की उत्पत्ति होती हैं। **मेलकियर मारिया (2007),** ने न्यूजीलैण्ड के दुनदीन शहर के 972 व्यक्तियों के बीच कार्य स्थल का तनाव, अवसाद व चिंता पर एक अध्ययन किया। उन्होंने पाया कि जिन लोगों में उच्च मनोवैज्ञानिक कार्य की मांग होती है अन्य व्यक्तियों कि अपेक्षा दोहरे रूप से अवसाद व चिंता का खतरा ज्यादा अधिक होता है।

मिरांडा सेन्टस् तथा अन्य (2009) द्वारा प्रस्तुत इस अध्ययन में पारिवारिक विशेषताओं तथा किशोरों में कुंठा के संबंधों का परीक्षण किया गया। इसके अलावा यह भी खोजा गया की पारिवारिक विशेषताओं से किशोरों में उत्पन्न कुंठा असामान्य है अथवा परिस्थितिजन्य है। पारिवारिक विशेषताओं में अति संरक्षण, अस्वीकृति, सामाजिक तथा आर्थिक स्थिति एवं भावनात्मक सौहार्द्र का समावेश किया गया। अध्ययन हेतु 13 से 14 वर्ष आयु के 2149 नव किशोरों का चुनाव किया गया, जिसमें 51.2 प्रतिशत किशोरीयाँ थी।

अध्ययन के उदेश्य –

1. शहरी एवं ग्रामीण किशोरों में चिंता तथा कुंठा के मध्य सहसम्बन्ध ज्ञात करना।
2. शहरी एवं ग्रामीण, सामान्य व आरक्षित जाति के किशोरों में चिंता तथा कुंठा के मध्य सहसम्बन्ध ज्ञात करना।

उपकरण तथा प्रविधि–

1. वर्तमान अध्ययन के लिए खण्डवा शहर के शासकीय एवं अशासकीय विद्यालय के 13 से 16 वर्ष के 150 चिंता एवं 150 कुंण्ठा का चयन दैव–निर्देशन विधि से समान रूप से किया गया।
2. प्रस्तुत शोध हेतु डॉ. ए.के. सिंह एवं डॉ. ए. सेनगुप्ता द्वारा निर्मित चिंता मापनी परीक्षण प्रपत्र तथा डॉ. बी.एम.दीक्षित एवं डॉ. डी.एन. श्रीवास्तव द्वारा निर्मित नैराश्य माप परीक्षण प्रपत्र का उपयोग किया गया–

1) चिंता मापनी (Anxiety Scale)

1. डॉ. ए.के. सिंह एवं डॉ. ए. सेनगुप्ता द्वारा निर्मित चिंता मापनी परीक्षण प्रपत्र की सहायता से प्रदत्तों का संकलन किया गया। चिंता मापनी

* प्राध्यापक, गृहविभाग (बाल विकास) शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, किला भवन, इन्दौर (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी, गृहविभाग (बाल विकास) शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, किला भवन, इन्दौर (म.प्र.) भारत

परीक्षण प्रपत्र में 20 प्रश्न है जो यह दशति है कि किशोर अपने बारे में क्या सोचते है तथा वे जो भी उचित समझते है। उसके आगे चिह्न अंकित कर देता है। उत्तर को दो श्रेणियों में बांटा गया है- हाँ अथवा नहीं।

2) कुंठा मापनी (Frustration Scale)

1. डॉ. बी.एम.दीक्षित एवं डॉ. डी.एन. श्रीवास्तव द्वारा निर्मित कुंठा मापन परीक्षण प्रपत्र का उपयोग कुंठा मापन के लिए किया गया। कुंठा मापन परीक्षण प्रपत्र किशोर की कुंठा को ज्ञात करने हेतु प्रयोग में लाया गया। इस प्रपत्र में 40 प्रश्न है, जो चार विभिन्न आयामों में विभाजित है- प्रतिगमन, स्थिरिकरण, विसर्जन और आक्रमकता। 40 प्रश्नों के उत्तार 6 श्रेणियों में विभक्त है।

परिकल्पनाएँ -

1. शहरी एवं ग्रामीण किशोरों में चिंता तथा कुंठा के मध्य कोई सहसम्बन्ध नहीं है।
2. शहरी एवं ग्रामीण, सामान्य व आरक्षित जाति के किशोरों में चिंता तथा कुंठा के मध्य कोई सहसम्बन्ध नहीं है।

परिणाम तथा विवेचना -

01 - शहरी एवं ग्रामीण किशोरों में चिंता तथा कुंठा के मध्य सहसम्बन्ध -

तालिका - 01 (देखे अगले पृष्ठ पर)

तालिका क्रमांक 01 से स्पष्ट है कि शहरी किशोरों में चिंता तथा कुंठा की स्वतंत्रता कोटि (df) 298 तथा 0.01 सार्थकता स्तर पर सहसम्बन्ध(r) का मान 0.275 है, जबकि सहसम्बन्ध गुणांक(t) का मान 4.77 है जो कि तालिका मान (table value) 2.59 से सार्थक रूप से उच्च है। अत: शून्य परिकल्पना(Ho) शहरी किशोरों में चिंता एवं कुंठा के माध्यों में कोई सार्थक सहसंबंध नहीं है, निरस्त की जाती है। सहसंबंध का मान धनात्मक एवं सार्थक है। अत: स्पष्ट है कि शहरी किशोरों की चिंता एवं कुंठा में सार्थक सहसंबंध पाया गया है। शहरी किशोरों में चिंता व कुंठा के कारण शारीरिक एवं मानसिक असमानताएँ पायी गयी। इन असमनाताओं के कारण किशोरों में जागरूकता की कमी, लक्ष्य प्राप्ति में बाधा, आर्थिक कमी, मानसिक संघर्ष व विफलता आदि कारण परिणाम देखे गये है।

ग्रामीण किशोरों में चिंता तथा कुंठा की स्वतंत्रता कोटि(df) 298 तथा 0.01 सार्थकता स्तर पर सहसम्बन्ध (r) 0.284 है, जबकि सहसम्बन्ध गुणांक का मान(t) 5.33 है जो कि तालिका मान (table value) 2.59 से सार्थक रूप से उच्च है। अत: शून्य परिकल्पना(Ho) ग्रामीण किशोरों में चिंता एवं कुंठा के माध्यों में कोई सार्थक सहसंबंध नहीं है, निरस्त की जाती है। सहसंबंध का मान धनात्मक एवं सार्थक है। अत: स्पष्ट है कि ग्रामीण किशोरों की चिंता एवं कुंठा में सार्थक सहसंबंध पाया गया है। ग्रामीण किशोरों में चिंता व कुंठा के कारण अज्ञानता, अस्वच्छ वातावरण, उचित पोषण न मिल पाना, बुद्धिलब्धि आदि कारण परिणाम देखे गये है।

अत: तुलनात्मक रूप से देखा जाए तो शहरी किशोरों में सामान्य चिंता आगे चलकर कुंठा में परिवर्तित हो जाती है। तालिका से यह भी स्पष्ट होता है कि शहरी किशोरों की चिंता का माध्य 12.08 है जो कि ग्रामीण किशोरों की चिंता के माध्य 13.37 से कम है। अत: इस आधार पर कहा जा सकता है कि ग्रामीण किशोरों में चिंता अधिक पायी गयी। शहरी किशोरों में कुंठा का माध्य 106.68 है जो कि ग्रामीण किशोरो में कुंठा के माध्य 84.15 से अधिक है। अत: इस आधार पर कहा जा सकता है कि शहरी किशोरों में कुंठा अधिक पायी गयी।

02. शहरी एवं ग्रामीण, सामान्य व आरक्षित जाति के किशोरों में चिंता तथा कुंठा के मध्य सहसम्बन्ध

तालिका - 02 (देखे अगले पृष्ठ पर)

तालिका 02 से स्पष्ट है कि शहरी सामान्य जाति के किशोरों में चिंता तथा कुंठा का स्वतंत्रता कोटि (df) 136 तथा 0.01 सार्थकता स्तर पर सहसम्बन्ध का मान (r) 0.301 है, जबकि सहसम्बन्ध गुणांक(t) का मान 3.86 है जो कि तालिका मान (table value) 2.62 से सार्थक रूप से उच्च है। अत: शून्य परिकल्पना (Ho) 'शहरी सामान्य जाति के किशोरो में चिंता एवं कुंठा के माध्यों में कोई सार्थक सहसंबंध नहीं है।' निरस्त की जाती है। अत: स्पष्ट है कि शहरी सामान्य जाति के किशोरों की चिंता एवं कुंठा में सार्थक सहसंबंध पाया गया है। सहसंबंध का मान सार्थक है। शहरी सामान्य जाति के किशोरों में चिंता व कुंठा के कारण, नौकरी, शासकीय सुविधाएँ प्राप्त नहीं हो पाती है। सामान्य जाति की तुलना में आरक्षित जाति को शिक्षा में अधिक लाभ मिलता है।

ग्रामीण सामान्य जाति किशोरों में चिंता तथा कुंठा की स्वतंत्रता कोटि (df) 78 तथा 0.01 सार्थकता स्तर पर पर सहसम्बन्ध (df) 0.287 है, जबकि सहसम्बन्ध गुणांक(t) का मान 2.76 है जो कि तालिका मान(table value) 2.64 से सार्थक रूप से उच्च है। अत: शून्य परिकल्पना (Hc) 'ग्रामीण सामान्य जाति के किशोरों में चिंता एवं कुंठा के माध्यो में कोई सार्थक सहसंबंध नही है।' निरस्त की जाती है। सहसंबंध का मान धनात्मक तथा सार्थक पाया गया। अत: स्पष्ट है कि ग्रामीण सामान्य जाति के किशोरों की चिंता एवं कुंठा में सार्थक सहसंबंध पाया गया है। ग्रामीण सामान्य जाति के किशोरों में चिंता व कुंठा का कारण ग्रामीण वातावरण, नई तकनीकी, नई सुविधाएं प्राप्त न हो पाने पर परिवार की पारंपरिक सोच, आधुनिकता को महत्व न देना, आदि कारण परिणामस्वरूप देखे गये है।

शहरी आरक्षित किशोरों में चिंता तथा कुंठा की स्वतंत्रता कोटि (df) 160 तथा 0.01 सार्थकता स्तर पर सहसम्बन्ध (r) का मान 0.240 है, जबकि सहसम्बन्ध गुणांक(t) का मान 3.22 है जो कि तालिका मान (tabel value) 2.61 से सार्थक रूप से उच्च है। अत: तालिका मान 2.58 से सार्थक रूप से उच्च है। अत: शून्य परिकल्पना (Ho) 'शहरी आरक्षित जाति के किशोरों में चिंता एवं कुंठा के माध्यों में कोई सार्थक सहसंबंध नहीं है।' निरस्त की जाती है। सहसंबंध का मान सार्थक पाया गया। अत: स्पष्ट है कि शहरी आरक्षित जाति के किशोरों की चिंता एवं कुंठा में सार्थक सहसंबंध पाया गया है। शहरी आरक्षित जाति के किशोरों में चिंता व कुंठा का कारण समाज में उनके साथ उचित व्यवहार नहीं किया जाता है, साथ ही भविष्य के प्रति चिंता आदि कारण परिणामस्वरूप देखे गये है।

ग्रामीण आरक्षित जाति किशोरों में चिंता तथा कुंठा की स्वतंत्रता की कोटि (df) 218 तथा 0.01 सार्थकता स्तर पर सहसम्बन्ध (r) का मान 0.268 है, जबकि सहसम्बन्ध गुणांक(t) का मान 4.26 है जो कि तालिका मान (table value) 2.60 से सार्थक रूप से उच्च है। अत: शून्य परिकल्पना (Ho) 'ग्रामीण आरक्षित जाति के किशोरों में चिंता एवं कुंठा के माध्यो में कोई सार्थक सहसंबंध नहीं है।' निरस्त की जाती है। सहसंबंध का मान सार्थक पाया गया। अत: स्पष्ट है कि ग्रामीण आरक्षित जाति के किशोरों की चिंता एवं कुंठा में सार्थक सहसंबंध पाया गया है। ग्रामीण आरक्षित जाति के किशोरों में चिंता व कुंठा का कारण शासकीय योजनाओं का ज्ञान नई तकनीकों की जानकारी नहीं होती है व जागरूकता में कमी आदि कारण परिणाम में देखे गये है।

शहरी सामान्य जाति के किशोरों में चिंता का माध्य 12.08 है, जो कि ग्रामीण सामान्य जाति के चिंता का माध्य 11.97 से उच्च है। शहरी सामान्य जाति के किशोरों में कुंठा का माध्य 106.68 है, जो कि ग्रामीण सामान्य जाति के चिंता का माध्य 76.95 से उच्च है। शहरी आरक्षित जाति के किशोरों में चिंता का माध्य 12.08 है, जो कि ग्रामीण आरक्षित जाति के चिंता का माध्य 11.80 से उच्च है। शहरी आरक्षित जाति के किशोरों में कुंठा का माध्य 106.71 है, जो कि ग्रामीण आरक्षित जाति के चिंता का माध्य 84.56 से उच्च है।

अत: तुलनात्मक रूप से देखा जाए तो शहरी जाति के किशोरों की चिंता व कुंठा ग्रामीण जाति के किशोरों की चिंता व कुंठा की तुलना में उच्च है। शहरी सामान्य जाति एवं शहरी आरक्षित जाति के किशोरों से अधिक चिंता व कुंठा पाई गई है। तेजी से बदलते परिवेष में अपने आप को आगे रखना, परिवार द्वारा अपेक्षाएँ, भविष्य की योजनाएं प्रतियोगिता, अस्वस्थ वातावरण आदि कारण चिंता व कुंठा को उत्पन्न करती है, जबकि ग्रामीण सामान्य जाति एवं ग्रामीण आरक्षित जाति के किशोरों में चिंता व कुंठा कम पाई गई है। क्योंकि ग्रामीण वातावरण, जागरूकता में कमी, माता-पिता का अशिक्षित होना, माता-पिता की पुरानी सोच, धार्मिक एवं पारस्परिक अवधारणा आदि कारण देखे गये है। लेकिन सामान्य चिंता आगे चलकर विकराल रूप का धारण कर लेती है। इसलिए चिंता का भयानक रूप कुंठा है।

निष्कर्ष- जीवन के हर क्षेत्र में स्पर्धा बढ़ती जा रही है और इस स्पर्धा में प्रत्येक व्यक्ति सबसे आगे आना चाहता है। इसलिए किशोरो में तनाव, चिंता, कुंठा आदि समस्याओं देखने को मिलती है। चिंता और कुंठा को किशोरो की जाति भी प्रभावित करती है।

संदर्भ ग्रंथ सूंची :-

1. फ्रायड (1894) के अनुसार
2. हरलॉक (1978) के अनुसार
3. मेलकियर मारिया (2007), के अनुसार
4. मिरांडा सेन्टस् तथा अन्य (2009) के अनुसार
5. डॉ. बी.एम.दीक्षित एवं डॉ. डी.एन. श्रीवास्तव के अनुसार
6. आसुवेल (1954) के अनुसार

01 - शहरी एवं ग्रामीण किशोरों में चिंता तथा कुंठा के मध्य सहसम्बन्ध

तालिका01 - शहरी एवं ग्रामीण किशोरों में चिंता तथा कुंठा के माध्य, मानक विचलन, स्वतंत्रता की कोटि, सहसम्बन्ध एवं सहसम्बन्ध गुणांक

क्र.	क्षेत्र	चर युग्म	न्यादर्श	माध्य	मानक विचलन	स्वतंत्रता की कोटि	सहसम्बन्ध	सहसम्बन्ध गुणांक
01	शहरी	चिंता	150	12.08	2.37	298	+.275	4.77**
		कुंठा	150	106.68	20.51			
02	ग्रामीण	चिंता	150	13.37	13.16	298	+.284	5.33**
		कुंठा	150	84.15	22.36			

**0.01 सार्थकता स्तर पर सार्थक

02. शहरी एवं ग्रामीण, सामान्य व आरक्षित जाति के किशोरों में चिंता तथा कुंठा के मध्य सहसम्बन्ध

तालिका02 - शहरी एवं ग्रामीण, सामान्य व आरक्षित जाति के किशोरों में चिंता तथा कुंठा के माध्य, मानक विचलन, स्वतंत्रता की कोटि, सहसम्बन्ध एवं सहसम्बन्ध गुणांक

क्र. क्षेत्र	चर युग्म	न्यादर्श	माध्य	मानक विचलन	स्वतंत्रता की कोटि	सहसम्बन्ध	सहसम्बन्ध गुणांक
01 शहरी सामान्य जाति	चिंता	69	12.08	02.79	136	.301	3.86**
	कुंठा	69	106.68	20.51			
02 ग्रामीण सामान्य जाति	चिंता	40	11.97	02.39	78	+.287	2.76**
	कुंठा	40	76.95	20.34			
03 शहरी आरक्षित जाति	चिंता	81	12.08	02.65	160	.240	3.22**
	कुंठा	81	106.71	25.75			
04 ग्रामीण आरक्षित जाति	चिंता	110	11.80	02.84	218	.268	4.26**
	कुंठा	110	84.56	23.04			

**0.01 सार्थकता स्तर पर सार्थक

"A Study On The Impact Of Foreign Direct Investment (FDI) In An Indian Economy" With Special Refrence To Retail Sector In M.P.

Antima Shekhawat Bhatia *

Abstract - India is without doubt a 'growth' economy and many consider it an attractive country to invest in, particularly in its rapidly growing and changing retail market. However, Foreign Direct Investment (FDI) is restricted in the retail sector, and despite many years of debate, the regulations are still only changing very slowly and there are still lots of uncertainties. Foreign Investors are watching India, ready for a piece of the action in the retail market, but there are still plenty of uncertainties, restrictions and potential socioeconomic risks.

This division of the retail sector, which has a very heavy weighting towards, unorganized, is just one of the issues contributing to the sensitive debate on FDI in India at the moment. What are the potential risks to the unorganized retail sector, and of course to the wider Indian economy? There are several groups who are strongly opposed to FDI in the Indian retail sector, but are their concerns unfounded?

Thus, retailing can be said to be the interface between the producer and the individual consumer buying for personal consumption. This excludes direct interface between the manufacturer and institutional buyers such as the government and other bulk customers retailing is the last link that connects the individual consumer with the manufacturing and distribution chain. A retailer is involved in the act of selling goods to the individual consumer at a margin of profit.

Keywords - Foreign direct investment, Retail sector and Indian economy.

Objectives of the study are:

1. To evaluate the impact of FDI in an Indian economy
2. To evaluate the different viewpoints on the impact of FDI in the retail sector in India.

Research design and methodology - The research design for the present study was basically based on questionnaire to contain both open and closed ended questions and it is also exploratory in nature.

Hypothesis

1. The key issues concerning FDI policy change in India's retail sector
2. The policy help to reduce the risk of FDI in retail for India and its domestic market

Review of literature

1. According to IISTE journals of economics and sustainable development, Research on Relationship between China and Ghana: Trade and Foreign Direct Investment (FDI) Conclude that China is the second highest country in terms of trade and FDI in Ghana.

2. According to EXCEL International Journal of Multidisciplinary Management Studies research concludes that In order to facilitate the establishment of infrastructure, FDI should be initially permitted and tries to emphasise on more sourcing of products locally and Tier-II Cities of the country.

3. According to Ford and Rowley (1979) opine that the marketing function of small firms seems to be connected with the motivation, belief, attitude and the objectives of the owner-manager, and is also significantly influenced by the constraints of the small business.

FDI and Retailing - Foreign direct investment is the movement of capital across national frontiers in a manner that grants the investor control over the acquired asset. Thus it is distinct from portfolio investment which may cross borders, but does not offer such control.

Retailing: Retailing can be said to be the interface between the producer and the individual consumer buying for personal consumption. This excludes direct interface between the manufacturer and institutional buyers such as the government and other bulk customers retailing is the last link that connects the individual consumer with the manufacturing and distribution chain. A retailer is involved in the act of selling goods to the individual consumer at a margin of profit.

FDI and economic development - FDI has an important impact on country's trade balance, increasing labor standards and skills transfer of technology, skills and the general business climate. FDI also provides an opportunity for technological transfer and up gradation, access to global managerial skills and practices, optimal utilization of human capabilities and natural resources, making industry internationally competitive, opening up export markets, access to international quality goods and services and augmenting employment opportunities.

* **Research Scholar, Bhagwant University, Ajmer (Raj.) INDIA**

India's share in global FDI has increased considerably, but the pace of FDI inflow is slower than CHINA, SINGAPORE, BRAZIL and RUSSIA.

Data Analysis - Below is a summary of the data results from the survey following analysis. There were 243 respondents in total, and 'no response' rates are recorded for those who answered some of the survey questions, but not the specific question that is being analysed.

Number of People aware of current FDI in retail policy in M.P.

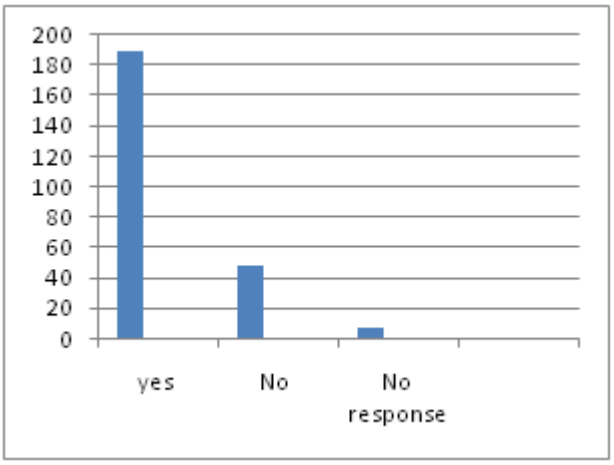

Should the Indian Government opens up FDI restrictions in the Retail Sector?

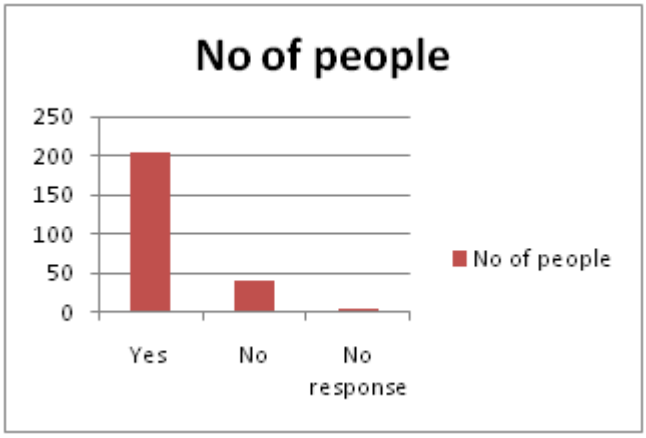

Are you happy with the current FDI Retail policy as it is?

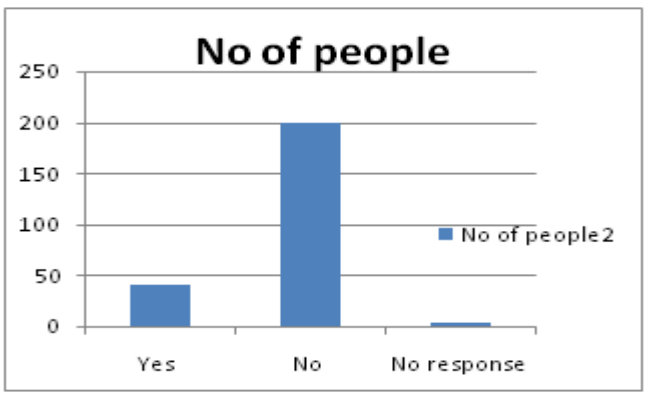

What conditions should be imposed on foreign retailers if policy is changed?

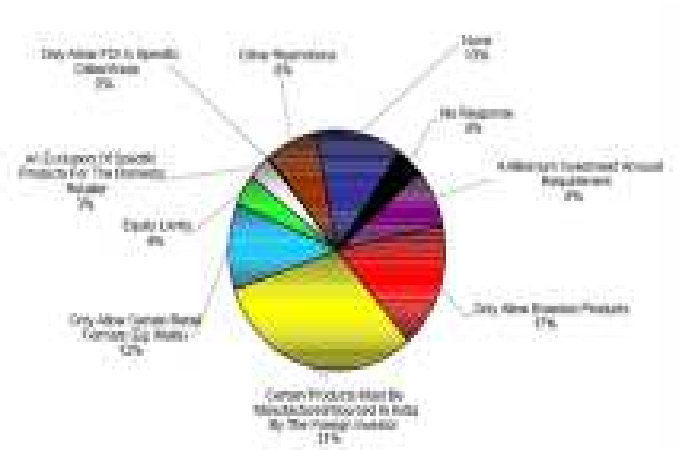

Should Government reforms be made to support domestic retailers?

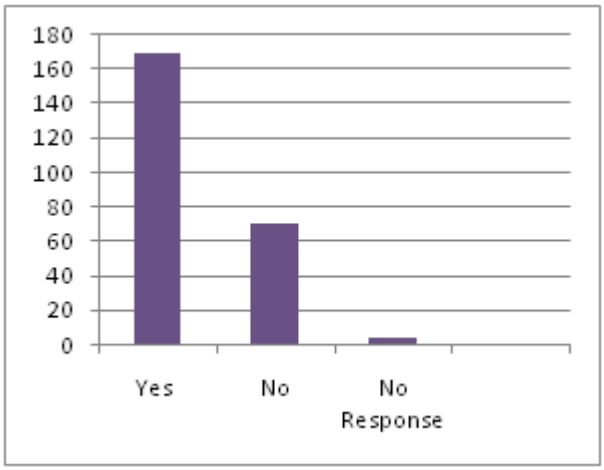

Coded Analysis of Suggested Reforms to Protect Domestic Retailers

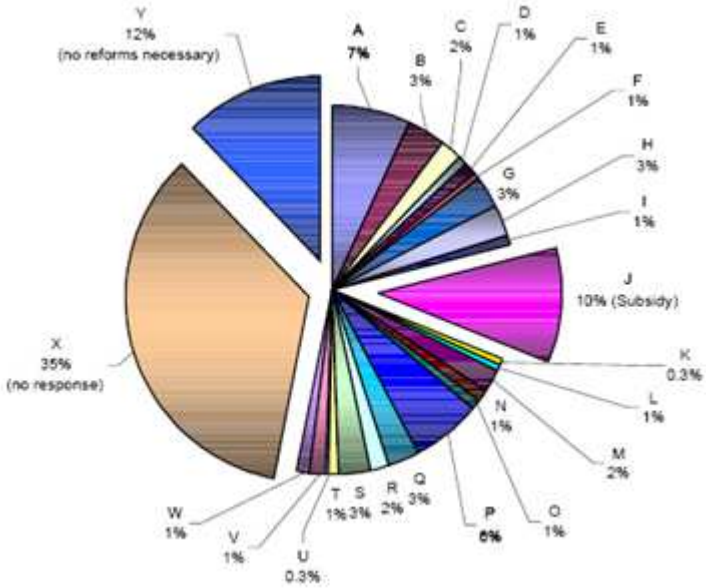

Will lifting restrictions on FDI in retailing allow more investment, technical skills and consumer choice?

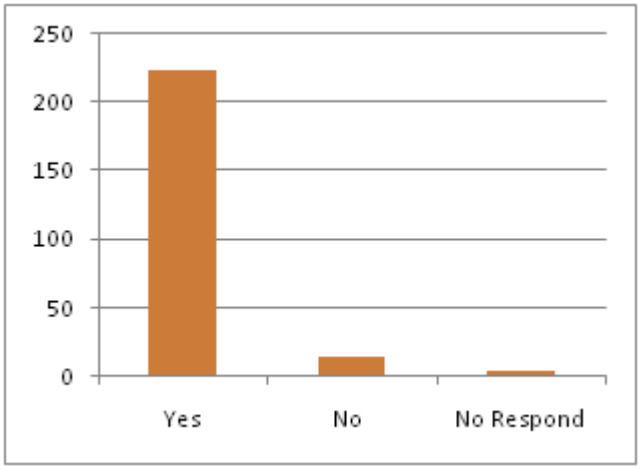

Coded Analysis of Suggested Solutions to potential Labour Displacement problem
Please see Coding Key

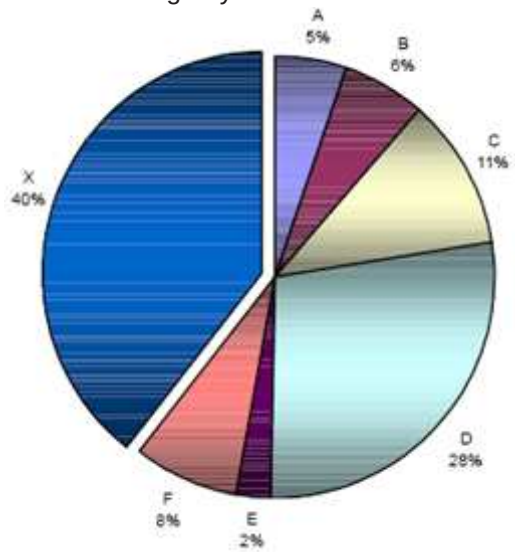

Coded Analysis of the no. of people who believe the argument that "foreign retailers will not 'own a stake' and therefore will make little investment…" (Question 9 Please see Coding Key)

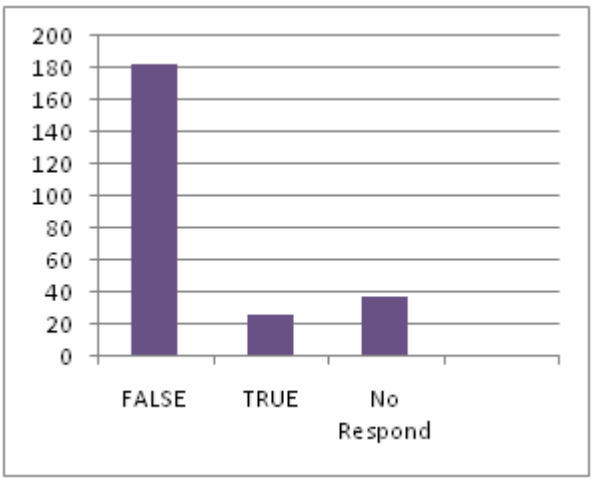

Conclusion - In the view of above discussion, if we try to balance the opportunities and prospects attached to the given economic reforms, it will cause definitely cause good to Indian economy and consequently to the public at large, if once implemented. FDI in retail sector will also have its pros and cons. Like, if we consider its main advantages, we can say that it will bring modern technology, improve rural infrastructure, create a competitive market, enable our farmers to get better prices for their crops, Government will get an additional US$ 25-30 billion by way of taxes, a solution for food inflation as investments in cold storage chain infrastructure would reduce loss of agricultural produce and provide more options to farmers. And some disadvantages could be that we will be competing with such economies whose interest rates are as low as 4% as compared to our 14% to 16%. Also, we engage millions of uneducated and semi-educated people at various stages of retail business but Tesco and Wal-Mart will only engage smart and educated workforce in small strength, comparatively. Hence we can say that if FDI in retail is allowed with certain preconditions, it will help boost the Indian economy in the long run and will project a positive image of India regarding its liberalization policies. It will help growth of exports and employment generation. Therefore it must be allowed and at the same time interests of small retailers be also protected.

References :-

1. Agarwal, J. P. (1980): "Determinants of Foreign Direct Investment: A Survey", Agmon, T. and D. R. Lessard, (1977): "Investor Recognition of Corporate
2. Alam M. s. (2000): "FDI and Economic Growth of India and Bangladesh: A comparative study", [ndial/ Juumal ojEconomics, Vol. lxxx, pp. 1-15.
3. Balasubramanyam, V. N. and M. A. Salisu (1991): "EP, IS and Direct Foreign Investment in LCD's" in Koekkoek, A. and L. B. M. Mennes (eds.):
4. Branson, W. H. (1994): Macroeconomic Theory and Policy, Second ed., Universal Book Stall, New Delhi.
5. Business Policy and Strategy "Concepts and Readings" by Daniel J. McCarthy, Robert J. Minichiello, Joseph R. Curran. 4th edition .1996 Richard. Irwin, Inc;
6. Indian Council for Social Science Research, 'Towards a New Era: Economic, Social & Political Reforms', Har-Anand Publications PVT Ltd, 2001;
7. International Business "Text & Cases" by P.Subba Rao 1st edition 2001 Himalaya Publishing House; International Diversification", Journal of Final/ce. Vol. 32, pp. 112-134.
8. Kotler, P. (1988), Marketing Management: Analysis, Planning, Implementation, and Control, 6th ed., Prentice-Hall, Englewood Cliffs, NJ.
9. Majumdar, S.2002, 'FDI in retailing: India as a supermarket', Business Line Strategy Process Edited by: Bala Chakravarthy, Guenter Mueller-Stewens, Peter Lorange and Christoph Lechner.
10. Marketing Management by Kotler, Philip New Delhi, PHI Pvt. Ltd. 2000;

11. Research Methodology by Kothari, C. R., New Delhi, Wishwa Prakashan, 2000;
12. Retail marketing "policy and regulatory environment "by Mcgoldrick II edition, Tata Mc Graw Hill, Berkshire
13. Retail Marketing Management "International Retailing "II edition ,pearson education, New Delhi,2006
14. Watkins, T. and Blackburn, R. (1986), "The role of marketing in the small firm: evidence from a regional survey", Marketing Intelligence & Planning, Vol. 4 No. 4.

Websites -

1. www.businesstoday.com
2. www.brookings.edu
3. www.economywatch.com
4. www.financialexpress.com
5. www.highbeam.com
6. www.lightreading.com
7. www.market-bridge.com
8. www.researchandmarket.com

****

Human Resource Management And Occupational Health & Safety System In Construction Industry

Vikram Singh * Dr. Kapil Dev Sharma **

Abstract - Human resource management in occupational health and safety system in construction industry is clearly declares intention and commitment of top management and organization to set up a occupational health and safety policy in construction industry to prevent the accident and control the hazards at different levels.HRM to control different elements of occupational health and safety system in construction industry. In this paper, attempts have been made to find out the different terms and elements of safety management and components of occupational health and safety management system in construction industry.

Introduction - It specifies the following.

A) Definition of different safety terms.
B) Elements of an effective health and safety management system.
C) Components of occupational health and safety management.
D) Planning and implementation of occupational health and safety management.
E) Performance review and continual improvement.

HRM in Occupational health and safety system

Health -

1. **A state of well being -** The term health has been defined as a state of well being. It includes well being in a physiological and psychological sense. In occupational terms this would include not suffering from noise included deafness means mental fatigue or stress. There is an element of overlap with the terms 'Safety' and Health.' For example it would be clear that someone who has experience need a fall could sustain a physical injury such as a broken bone. The maintaining health includes attention to the various health hazards in the working environment that can affect the workers and others. For example, chemical and biological agent at construction site.

Safety - "Absence of danger of physical harm" the term safety is considered to be the absence of danger of physical harm to people. The term would extend to other things that could be harmed in workplace such as equipment, structures and materials.

Welfare - "facilities for workplace comfort" the term welfare relates to the provision of workplace facilities that maintain the basic well being and comfort of the workers such as eating, washing toilet facilities and first aid and other general requirements shelter, change room, etc.

Environmental protection - The term environment protection relates to measures that are specifically focused on maintaining the general environment of the world. This government protection of plant life including flora and faunas animals, birds and marine life and the quality of water, land and air, through the protection does not focus on the workers or other people directly by protecting the environment people obtain a benefit.

Hazard - "Something that has the potential to cause harm (lose) the potential to cause harm, including ill health and injury, damage to property, plant, products or the environment, production losses or increased liabilities."The intrinsic property or ability of something like work material, equipment, work methods and with potential to cause harm"

Risk - The likelihood of potential harm from a hazard being realized.

The likelihood that a specified undesired event will occur due to the realization of a hazard by or during work activities or by the products and service created by work activities like the Risk from a substance is the actual circumstances of use and the severity of the harm it will cause danger.

Elements Of An Effective Health And Safety Management System - All management systems tend to have similar elements typically focusing on policy, setting out insertion, carrying out these intentions, monitoring the success and effects of carrying them out, evaluating what has been learned and using it to refine policy and intentions, the element are joined by a feedback loop, providing opportunity to make improvements to the way the system operators.

*** Research Scholar, Pacific University, Udaipur (Raj.) INDIA**

**** H.O.D (Business Management) Govt. J.D.B. Girls P.G. College, Kota (Raj.) INDIA**

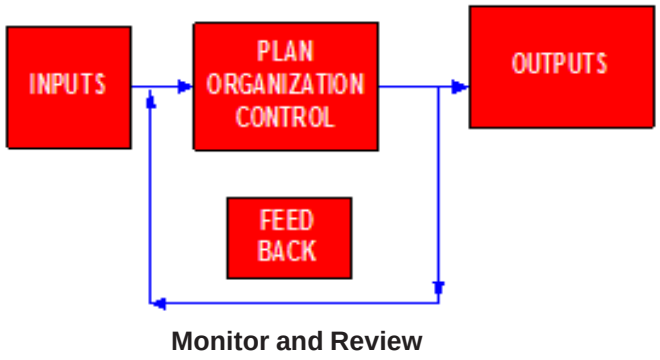

Figure-1 Main Elements of health safety management system

Effective health and safety management system tend to have the following main elements.

1. Management commitments.
2. Policy
3. Organizing
4. Planning and implementation
5. Performance review
6. Audit
7. Continual improvement

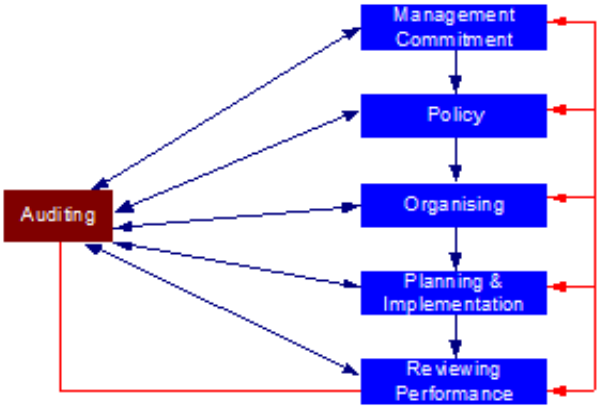

Figure-2 Components of occupational health and safety management

Brief description -

Management commitment - Effective health and safety management starts with an organization committing to it and establishing an organizational aim. It should be an active element of managing in this case managing health and safety and should be visible throughout the line management structure. Visible commitment should be clear to the workers and others, affected by the organization. This can include the level of attention and resources committed to health and safety on a day to day basis.

Policy - Organizations that have successful health and safety management system, have a health and safety policy that contribute to their business performance while meeting their responsibilities to people in a way that fulfils both the spirit and the letter of law obligations in this way they safety the expectations of share holders, workers, customers and society at large their policy is cost effectiveness and aimed at achieving the preservations and development of physical and human resources and reduction in financial losses and liabilities, their health and safety policy influences all their activities and decisions including those to do with the selection of resources and information.

The policy establishes a clear written commitment to health and safety and the maintenance of an effective health and safety management system.

Organizing - Organizations that successfully manage health and safety are structures and operated so as to put their health safety policy into effective practice. This is helped by the creation of a positive culture that secures involvement and participation at all level. It is sustained by effective communications and the promotion of competence that enables all managers and workers to make a responsible and informed contribution to the health and safety effort. It is used to express how the organization is organized by showing an organizational chart.

1. Specific workers to assist with health and safety arrangement, for example, first aide. Fire wardens, risk assesses or worker health and safety responsibilities.
2. Defining the responsibilities of workers and others.
3. Stating worker involvement through representations, briefing systems and communities.

Planning and implementation - The successful health and safety management systems adopt a planned and systematic approach to policy implementation, their aim is to minimize the risks created by work activities products and service. They use risk assessment methods to decide priorities and set objective organizations should translate their overall aims that are set out in the health and safety policy statement into objective that are set for the organizations key parts of the organization and key individuals in line with other business objective.

Establishing an effective health and safety arrangement system requires that appropriate arrangements are made for the effective planning, implementation, operation, checking, corrective action and management review, this will require an amount of health and safety management system documentation to be established.

Observation -

Performance review - Procedures to observation and monitor, measure and record, health and safety performance on a regular basis should be developed. The safety system established and periodically reviewed responsibilities, accountability and authority for monitoring at different levels in the management structure should be allocated. The components and elements of occupational health and safety system are very much effective in construction industry. The result oriented safety system and role of management to implement. The selection of performance indicators should be according to the performance monitoring and measuring should be used to determine the extent to which the

Policy and objectives have been met and risk controlled. Health and safety performance in organizations that manage

health and safety successfully is measured against pre determined standards. These reveal when and where action self monitoring involving a range of techniques.

Learning from all relevant experience and applying the lessons learned are important elements in effectiveness health and safety management. This needs to be done systematically through regular reviews of performance based on data both from monitoring activity and from audits of the whole or part of the health and safety management system.

Audit - Audit is the format process, designed to determine the extent to which the health and safety management system or elements or it is compliant with standards internal audits will confirm compliance with internal standards.

From time to time, it is critical that the whole health and safety management system be audited by an independent organization to determine the extent to which it complies with recognized health and safety management systems and appropriate legislation ,an audit policy and programme should be developed that includes audit for competency, the audit scope frequency of audit methodology and audit reporting system.

Conclusion -

Continual improvement - Human resource management in occupational health and safety management system to prevent the accident in construction industry .The components and elements of safety management system how they are inter connect with each other to prevent the unsafe condition in construction industry. It is critical to take prompt preventive and corrective action related to system non conformities particularly those that result in accident/ incidents corrective action is that action to deal with the issue where it happened and trends to deal with the immediate causes of the issues. This type of action will reduce the likelihood of it re occurring where it happened before and in other place. Arrangement should also be established to aid the continual improvement of health and safety system as a whole taking in to account such areas as the health and safety objectives of the organizations changes in national laws and regulations voluntary programmers and collective agreements and any other new relevant information.

References :-

1. Human resource management in construction
2. Construction management
3. National education board of safety &health.UK
4. National safety council journal
5. Alves Dias, Luis & Coble, R. (Editors) (1999): “Construction Safety Coordination in the European Union”. CIB – W99. Rotterdam. The Netherlands.
6. Alves Dias, Luis (2003): “Coordination of Safety and Health in Construction Work from Designing Stage to Maintenance Stage in European Countries”. Tokio, Japan.
7. Alves Dias, Luis and Fonseca, M. (1996): “Safety and Health Plan in Construction” (Portuguese version). Edited by IST-IDICT. Lisbon, Portugal.

✲✲✲✲✲✲✲✲✲✲✲✲

मध्यप्रदेश के धार जिले में औद्योगीकरण की वर्तमान स्थिति एवं संभावनाएँ (वर्ष 2014 की स्थिति में)

डॉ. सुरेन्द्र कुशवाह * पंकज कुशवाह * *

प्रस्तावना – स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् देश की अवरूद्ध तथा पराश्रित अर्थव्यवस्था का आधुनिकीकरण करने के लिए 1950-60 के दशक के प्रारम्भिक वर्षो में औद्योगीकरण की शुरूआत सुविचारित नीति के तहत की गई। 1951 मे उद्योग व नियम एक्ट बनाया गया, तद्उपरान्त पंचवर्षीय योजनाओं के द्वारा राष्ट्र का सन्तुलित विकास करने का लक्ष्य रखा गया इसके लिए वृहद/मध्यम उद्योगों के साथ-साथ लघु एवं कुटीर उद्योगों के विकास को भी महत्व दिया ताकि आर्थिक शक्ति के केन्द्रीकरण को दूर कर विकेन्द्रीत विकास किया जा सके। देश के सर्वांगिण विकास को दृष्टिगत रखते हुए। औद्योगिक विकास करने के लिए सरकार ने विशेष कदम उठाये उद्यमियों को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से उनके मार्गदर्शन व सहायतार्थ बोर्डो निगमों, वित्तीय संस्थाओं आदि की स्थापना की।

मध्यप्रदेश सरकार ने भी औद्योगीकरण को दृष्टिगत रखते हुए भारत सरकार के पद चिन्हों का अनुसरण किया और नीतिगत तथा योजनाबद्ध तरीके से सन्तुलित विकास का मार्ग अपनाया। इन्हीं प्रयासों के तहत् उद्यमियों को उचित सुविधा एवं सहायताएँ प्रदान करने के उद्देश्य से अपनी उद्योग सवंर्धन नीति 1994 में औद्योगिक विकास के आधार पर जिलो का वर्गीकरण किया इसके अन्तर्गत 04 जिले विकसित, 05 जिले पिछड़े जिलो की 'अ' श्रेणी, 02 जिले पिछले जिलों की 'ब श्रेणी एवं शेष जिले पिछडे जिले की 'स' श्रेणी मे वर्गीकृत किए गए। उद्योग सवंर्धन नीति, 2010 एवं कार्ययोजना के अनुसार उद्यमियों को सहायता एवं सुविधाएँ प्रदान करने के उद्देश्य से प्रदेश के जिलों को अग्रणी जिला तथा पिछड़ा जिला श्रेणी 'अ', 'ब' एवं 'स' में विभक्त किया गया है, चूँकि धार जिला आदिवासी बहुल होकर पिछड़े जिलो की 'स' श्रेणी के परिवेश मे आता हैं अत: यह जानना की मध्यप्रदेश के धार जिले में औद्योगीकरण की वर्तमान स्थिति क्या है और भविष्य में विकास की क्या संभावनाए विद्यमान है ? अध्ययन को आवश्यक एंव महत्वपूर्ण बनाता है।

अध्ययन के उद्देश्य –

1. धार जिले में औद्योगीकरण की वर्तमान स्थिति क्या है ?
2. औद्योगीकरण के परिणामस्वरूप जिले में औद्योगिक क्षेत्र पीथमपुर एवं अन्य क्षेत्र में विकास की क्या स्थिति है, को जानना।
3. उद्यमियों को प्रोत्साहित करने हेतु उन्हें प्रदत्त सहायता एवं सुविधाएँ क्या है?
4. धार जिले में औद्योगिक विकास की भावि संभावनाओं का पता लगाना।

शोध प्रविधि – प्रस्तुत शोध मुख्यत: द्वितीयक समकों पर अधारित है। द्वितीयक समंक संग्रहण हेतु पत्र-पत्रिकाओं, विभागों के प्रतिवेदन तथा वेब साइट से प्राप्त सूचनाओं का प्रयोग किया गया है।

क्षेत्र व सीमाएँ – प्रस्तुत शोध अध्ययन म.प्र. के पिछड़े जिलों की 'स' श्रेणी में सम्मिलित धार जिले के औद्योगिक विकास के अध्ययन पर आधारित है, जो जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र धार एवं पीथमपुर में वर्ष 2014 तक की अवधि में पंजीकृत वृहद/मध्यम एवं लघु उद्योगों के अध्ययन तक सीमित है।

धार जिले में औद्योगीकरण की वर्तमान स्थिति – धार जिले में औद्योगीकरण की वर्तमान स्थिति का पता लगाने हेतु जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र धार तथा जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र पीथमपुर में पंजीकृत उद्योगों, उनमें विनियोजित पूंजी एवं रोजगार से लाभान्वित व्यक्ति की स्थिति को तालिका क्रमांक 1 एवं 2 में प्रदर्शित किया गया है।

तालिका क्रमांक – 1 एवं 2

तालिका क्रमांक 1 का निरीक्षण करने से स्पष्ट होता है कि वर्तमान में धार जिले में कुल 166 वृहद/मध्यम उद्योग कार्यरत है जिनमें से 10 उद्योग जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र धार के क्षेत्राधिकार में पंजीकृत है जबकि 156 उद्योग अति. जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र पीथमपुर (औद्योगिक क्षेत्र) में पंजीकृत है इन उद्योगों में क्रमश: 0.8412 एवं 105.1613 अरब रूपए पूंजी विनियोग किया गया है जिससे क्रमश: 1365 एवं 28013 कुल 29448 कुल 2944 नागरिकों को प्रत्यक्ष रूप से रोजगार प्राप्त हुआ है, वहीं तालिका क्रमांक 2 का निरीक्षण करने से स्पष्ट होता है कि जिले में 707 लघु उद्योग पंजीकृत है जिनमें से 118 लघु उद्योग जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र धार के अंतर्गत शेष अन्य क्षेत्रों में तथा 589 लघु उद्योग अतिरिक्त जिला व्यापार उद्योग केन्द्र पीथमपुर (औद्योगिक क्षेत्र) में स्थापित है, इन उद्योगों में क्रमश: 0.16 एवं 46.89 कुल 47.05 अरब रू. का पूंजी विनियोजन किया गया है। लघु उद्योगों की स्थापना से धार जिले में कुल 18147 नागरिकों को प्रत्यक्ष रूप से रोजगार प्राप्त हुआ है, जिनमें से 754 व्यक्ति धार के अन्य क्षेत्रों में स्थापित उद्योगों में तथा 17393 व्यक्ति पीथमपुर औद्योगिक क्षेत्रों में स्थापित लघु उद्योगों में कार्यरत है वहीं औद्योगिक क्षेत्र का अवलोकन करने से स्पष्ट होता है कि औद्यागीकरण के परिणामस्वरूप स्थानीय युवाओं को अप्रत्यक्ष रूप से स्वरोजगार भी प्राप्त हो रहा है।

इस प्रकार उक्त तालिका एवं विश्लेषण के आधार पर हम कह सकते है कि धार जिले में स्थापित कुल उद्योगों के आधार पर वर्तमान में औद्योगीकरण की वर्तमान स्थिति संतोष जनक है, और इसके फलस्वरूप स्थानीय नागरिकों को प्रत्यक्ष रूप से रोजगार प्राप्त हो रहा है। धार जिले के शेष अन्य क्षेत्रों एवं औद्योगिक क्षेत्र पीथमपुर की तुलना करने पर यह स्पष्ट होता है कि दोनों में औद्योगीकरण का अनुपात वृहद/मध्यम उद्योगों की दशा में 1 : 15.6 एवं

*(वाणिज्य) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (वाणिज्य) देवी अहिल्या विश्व विद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

लघु उद्योगों की दशा में 1 : 4.99 है अर्थात औद्योगिक क्षेत्रों में सरकार द्वारा अधोसंरचना विकास एवं अन्य सुविधाएँ उपलब्ध करवाने के परिणामस्वरूप तेजी से औद्योगीकरण होता है जबकि अन्य क्षेत्रों में औद्योगीकरण की गति काफी धीमी रहती है जो कई समस्यों को जन्म देती है यथा –

1. जिले का चहुमुखी विकास सम्भव नहीं हो पाता।
2. उद्यमी प्रवृत्ति हत्तोत्साहित होती है।
3. जिले के सभी बेंरोजगार नागरिकों को आनुपातिक रोजगार/ स्वरोजगार नहीं मिल पाता है।

उद्यमियों को प्रदत्त सहायता एवं सुविधाएँ – औद्योगीकरण को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से उद्यमियों की सहायतार्थ सरकार ने विभिन्न बोर्डो, निगमों एवं बैंको की स्थापना की है ताकि उद्यमियों को वित्त, विपणन, निर्यात, तकनीक आदि सुविधाएँ एवं सहायताएँ शीघ्र व एक ही छत के नीचे उपलब्ध हो सके, इसके तहत धार जिले में जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र धार एवं अति. जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र पीथमपुर की अनुशंसा पर सरकार के दिशा–निर्देशानुसार पात्र उद्यमियों को नियमानुसार निम्नलिखित सुविधाएँ एवं सहायता प्राप्त हो रही है।

1. राज्य लागत पूंजी अनुदान।
2. टर्म लोन पर ब्याज अनुदान।
3. प्रवेश कर छूट।
4. मूल्य सवंर्धित (तअढ) और केन्द्रीय विक्रयकर (CST) सहायता।
5. विद्युत शुल्क में छूट।
6. वित्तीय सहायता।
7. बीमार उद्योगों को सहायता।
8. अन्य सहायता एवं सुविधाएँ।

धार जिले में औद्योगीकरण की संभावनाएँ – औद्योगिक विकास की दृष्टि से धार जिला पिछड़े जिले की 'स' श्रेणी में आता है। जिले में उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों, उपलब्ध श्रम शक्ति, तकनीक उपलब्धता, विपणन व्यवस्था, परिवहन एवं संचार के साधन, स्थानीय मांगपूर्ति आदि पहलुओं को ध्यान में रखते हुए कृषि, पशुधन, वनोपज, मैकेनिकल, इलेक्ट्रीक तथा अन्य उद्योग स्थापित किये जा सकते हैं साथ ही बेरोजगार युवा सरकार द्वारा संचालित विभिन्न स्वरोजगार योजनाओं का यथोचित लाभ उठाकर उद्योग, सेवा एवं व्यवसाय क्षेत्र से संबंधित इकाई की स्थापना करके स्वरोजगार प्राप्त कर सकते हैं। इस प्रकार जिले में औद्योगीकरण की प्रबल सम्भावनाएँ विद्यमान है।

निष्कर्ष – इस प्रकार निष्कर्ष निकलता है कि औद्योगीकरण को दृष्टिगत रखते हुए सरकार द्वारा उद्यमियों को प्रदत्त सुविधा व सहायता तथा क्षेत्र में उपलब्ध संसाधनों के परिणामस्वरूप जिले में औद्योगीकरण की प्रबल सम्भावनाएँ विद्यमान है जहाँ तक जिले के चहुमुखी विकास एवं औद्योगीकरण के फलस्वरूप स्थानीय नागरिकों को रोजगार प्राप्त होने का प्रश्न हैं, वर्तमान में औद्योगीकरण से स्थानीय नागरिकों को प्रत्यक्ष/अप्रत्यक्ष रूप से रोजगार/ स्वरोजगार प्राप्त हो रहा हैं। मेरे विचार में जिले में कुछ विषेष स्थानों पर केन्द्रित विकास के फलस्वरूप जिले का नाम तो रोषन हो रहा है पर इससे सम्पूर्ण जिले के बेरोजगार युवाओं को आनुपातिक लाभ नहीं मिल पा रहा हैं वरण केवल उस औद्योगिक क्षेत्र के आसपास के क्षेत्रों के युवाओं को ही रोजगार मिल रहा है।

अत: यह कहने में कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी कि देश एवं प्रदेश के चहुमुखी विकास के मद्देनजर सम्पूर्ण जिले के क्षेत्रफल, वहाँ उपलब्ध प्राकृतिक संसाधन एवं श्रम शक्ति के आधार पर कम से कम 03 से 04 औद्योगिक क्षेत्र निर्मित करना चाहिए जो सम्पूर्ण जिले के क्षेत्रफल के साथ ही पड़ोस के अविकसित या उद्योग विहिन जिलों को भी कव्हर करते हों ताकि चहुमुखी औद्योगिक विकास संभव हो सके और जिले में बेरोजगार युवाओं को समुचित रोजगार/स्वरोजगार प्राप्त हो सके।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

1 भारतीय अर्थव्यवस्था।
2. www.mp.govt.in
3. www.mp.industries.in
4. wwww.mp.akvn indore.in
5. जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र – प्रतिवेदन।
6. उद्यमिता विकास पत्रिका।
7. नवीन शोध संसार (अन्तर्राष्ट्रीय शोधपत्रिका) Issn-2320-8767
8. दैनिक भास्कर समाचार पत्र।
9. नई दुनिया समाचार पत्र।

तालिका क्रमांक – 1 – धार जिले में जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र में पंजीकृत वृहद/मध्यम उद्योगों की संख्या, पूंजी विनियोजन एवं रोजगार से लाभान्वित व्यक्ति की स्थिति

क्र.	जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र	पंजीकृत उद्योगों की संख्या	पूंजी विनियोग (राषि अरब रू. में)	रोजगार सें लाभांवित व्यक्ति
1	धार	10	0.8412	1365
2	पीथमपुर	156	105.1613	28083
योग	**सम्पूर्ण धार जिला**	**166**	**106.0025**	**29448**

तालिका क्रमांक – 2 : धार जिले में जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र में पंजीकृत लघु उद्योगों की संख्या, पूंजी विनियोजन एवं रोजगार से लाभान्वित व्यक्ति की स्थिति

क्र.	जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र	पंजीकृत उद्योगों की संख्या	पूंजी विनियोग (राषि अरब रू. में)	रोजगार सें लाभांवित व्यक्ति
1	धार	118	0.16	754
2	पीथमपुर	589	46.89	17.393
योग	**सम्पूर्ण धार जिला**	**707**	**47.05**	**18147**

भारत का विदेशी व्यापार - मूल्य, संरचना एवं दिशा

डॉ. विजय ग्रेवाल *

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध पत्र में स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भारत के विदेशी व्यापार के विभिन्न पहलूओं जैसे निर्यात-आयात का मूल्य, विदेशी व्यापार की संरचना तथा दिशा का अध्ययन किया गया है। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि स्वतंत्रता के बाद नियोजित आर्थिक विकास के अंतर्गत देश के विदेशी व्यापार को बढ़ाने की दिशा में विशेष प्रयास किये गये है, किन्तु अभी भी भारत की विश्व के कुल व्यापार में भागीदारी लगभग एक प्रतिशत है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत के विदेशी व्यापार की मात्रा एवं मूल्य में तीव्र गति से वृद्धि हुई है, किन्तु अर्थव्यवस्था का पिछड़ापन एवं नियोजन की आवश्यकताओं के फलस्वरूप आयातों में वृद्धि हुई है, जबकि निर्यात तुलनात्मक कम बढ़ा है। इससे देश का व्यापार संतुलन लगातार प्रतिकूल बना रहा है। देश का विदेशी व्यापार साल-दर-साल बढ़ा है और यह देश के आर्थिक विकास का आधार बना है।

प्रस्तावना – किसी भी देश की अर्थव्यवस्था में विदेशी व्यापार का महत्वपूर्ण स्थान होता है। विदेशी व्यापार अर्थव्यवस्था में आर्थिक गतिविधियों के स्तर एवं स्वरूप का बोध कराता है। स्वाधीनता के उपरान्त भारत के विदेशी व्यापार की प्रवृत्तियों में कई युगन्तरकारी परिवर्तन हुए है। ये परिवर्तन परिणाम, संरचना और दिशा की दृष्टि से अत्यंत व्यापक रहे है। स्वाधीनता के समय भारत के निर्यात कच्चे माल तक ही सीमित थे, दिशा की दृष्टि से देश का अधिकांश व्यापार औद्योगिक देशों से ही था। लेकिन विश्व व्यापार में अनुपात की दृष्टि से स्वाधीनता के समय कुल अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में भारत का अंश 2 प्रतिशत था। यह अंश घटकर 0.5 प्रतिशत पर पहुँच गया एवं आज भी 0.7 प्रतिशत ही है।

दूसरी चिन्ताजनक प्रवृत्ति बढ़ते व्यापार घाटे की है, जो आज 26 अरब डालर तक पहुँच गया है, लेकिन फिर भी स्वतंत्रता के पश्चात् उद्योगों को विकसित करने की रणनीति के कारण विदेशी व्यापार की स्थितियाँ बदल गई है। अब भारत का विदेशी व्यापार कुछ ही देशों तक सीमित नहीं हैं। वर्तमान में व्यापार के लिए नवोदित हिस्सेदारी में संयुक्त राज्य अमेरिका, रूस, पूर्वी यूरोपीय समाजवादी देश, एशिया के देश मुख्य रूप से जापान और यूरोपीय साझा बाजार के देश है।

अध्ययन के उद्देश्य –

1. विदेशी व्यापार की आधुनिक प्रवृत्तियों का पता लगाना।
2. देश के आर्थिक विकास में विदेशी व्यापार के योगदान का पता लगाना।
3. विदेशी व्यापार के विकास हेतु सुझाव देना।

शोध प्रविधि – प्रस्तुत शोध अध्ययन हेतु द्वितीयक समंकों का प्रयोग कर विश्लेषणात्मक पद्धति का उपयोग किया गया है।

योजनाकाल में निर्यातों व आयातों का मूल्य – पंचवर्षीय योजनाओं के दौरान भारत के निर्यातों एवं आयातों में काफी वृद्धि हुई है। स्वतंत्रता के पश्चात् देश के निर्यात, आयात एवं व्यापार संतुलन के मूल्य का संक्षिप्त विवरण निम्नांकित तालिका में दिया गया है –

तालिका क्रमांक 01

योजनाकाल में निर्यात, आयात तथा व्यापार संतुलन का मूल्य

वर्ष	निर्यात (पुनर्निर्यात सहित)	आयात व्यापार संतुलन	(करोड़ रूपये)
1950-51	606	608	-2
1960-61	642	1122	-480
1970-71	1,535	1,634	-99
1980-81	6,711	12,549	-5,838
1990-91	32,533	43,198	-10,645
2000-01	2,03,571	2,30,873	-27,302
2010-11	11,42,922	16,83,467	-5,40,545
2011-12	14,65,959	23,45,463	-8,79,504
2012-13	16,34,319	26,69,162	-10,34,843
2013-14	18,94,182	27,14,182	-82,000

उपर्युक्त तालिका के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि साल-दर-साल भारत के विदेशी व्यापार में वृद्धि हो रही है। वर्ष 1950-51 में भारत का कुल विदेशी व्यापार 1214 करोड़ रू. था जो कि बढ़कर वर्ष 2012-13 में 43,03,481 करोड़ रू. हो गया। इ

वर्ष 1950-51 में निर्यात (पुनर्निर्यात सहित) 606 करोड़ रू. था जो कि बढकर वर्ष 2012-13 में 16,34,319 करोड़ रू. हो गया।

आयातो में भी तेजी से बढोत्तरी हुई है। वर्ष 1950-51 में आयात 608 करोड़ रू. था जो कि बढ़कर 2012-13 में 26,69,162 करोड़ रू. हो गया।

स्वतंत्रता के बाद से ही भारतीय विदेशी व्यापार की प्रतिकूल व्यापार संतुलन की स्थिति रही है। योजनाकाल में तीव्र आर्थिक विकास की रणनीति के कारण देश में आयातों में तेजी से वृद्धि होती गयी, जिसके फलस्वरूप प्रतिकूल व्यापार संतुलन भी बढता गया। वर्ष 1950-51 में प्रतिकूल व्यापार

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) श्री वैष्णव वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

संतुलन जो कि वर्ष 1950-51 में मात्र 2 करोड़ रू. था वह बढ़कर खर्च 2012-13 में 10,34,849 करोड़ रू. हो गया।

विदेशी व्यापार की संरचना – विदेशी व्यापार की संरचना किसी भी देश के विदशों से संबंधों की सूचक होती है। भारत के विदेशी व्यापार की संरचना में स्वतंत्रता के बाद महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए है जिससे व्यापार का औपनिवेशिक ढाँचा पूर्णत: परिवर्तित हो गया है। विदेशी व्यापार की संरचना से तात्पर्य निर्यात और आयात के स्वरूप से होता है। किसी भी देश के विदेशी व्यापार की संरचना से हमें उसे देश के आर्थिक विकास के स्तर का पता चलता है। भारत में निर्यात संरचना एवं आयात संरचना इस प्रकार है -

निर्यात संरचना – नियोजित अर्थव्यवस्था के फलस्वरूप भारत के निर्यात व्यापार में विविधता आयी है। स्वतंत्रता के पूर्व भारत ब्रिटेन का एक उपनिवेश था और देश से खनिज पदार्थो व कृषि जन्य पदार्थो का काफी मात्रा में निर्यात किया जाता था, किंतु स्वतंत्रता के बाद आर्थिक नियोजन के अन्तर्गत जैसे-जैसे देश में औद्योगीकरण बढ़ा वैसे-वैसे कच्चा माल देश में ही खपने लगा। परिणामस्वरूप विनिर्मित वस्तुओं का अनुपात हमारे निर्यात व्यापार में बढ़ता गया। भारत में मुख्य रूप से खाद्यान्न, कच्चा माल, निर्मित वस्तुएँ एवं पूँजीगत वस्तुओं का निर्यात किया जाता है। वर्ष 2012-13 में भारत के निर्यातों में सर्वाधिक हिस्सेदारी विनिर्मित वस्तुओं की 63.3 प्रतिशत रही। कृषि एवं संबद्ध वस्तुओं की हिस्सेदारी 13.7 प्रतिशत तथा अयस्क एवं खनिजों की कुल निर्यातों में हिस्सेदारी मात्र 1.9 प्रतिशत रही।

आयात संरचना – आर्थिक नियोजन प्रारम्भ होने के समय देश में पूँजीगत वस्तुओं का आयात अधिक नहीं था, परन्तु दूसरी पंचवर्षीय योजना में आधारभूत उद्योगों की स्थापना को प्राथमिकता दी गयी जिसके फलस्वरूप देश में बड़े पैमाने पर पूँजीगत उपकरणों का आयात शुरू हुआ। वर्तमान में भारत में मुख्य रूप से उपभोक्ता वस्तुएँ जैसे खाद्यान्न, औषधियाँ, विद्युत उपकरण, वस्त्र, कागज, पूँजीगत वस्तुएँ जैसे सभी प्रकार की मशीनें, धातुएँ, लौहा और इस्पात, अलौह धातुएँ, परिवहन का सामान, कच्चा माल जैसे खनिज तेल, कपास, जूट, रंग और रसायन पदार्थ आदि का आयात किया जाता है। देश के विकास की दृष्टि से सरकार कच्चे माल एवं पूँजीगत वस्तुओं के आयात को अधिक प्राथमिकता प्रदान करती है। स्वतंत्रता के बाद भारत की आयात संरचना में भारी परिवर्तन दृष्टिगोचर होता है। वर्ष 2012-13 के दौरान भारत के आयातों में खाद्य एवं संबंधित वस्तुओं का हिस्सा 3.4 प्रतिशत, ईंधन का हिस्सा 36.9 प्रतिशत एवं पूँजीगत वस्तुओं का हिस्सा 12.8 प्रतिशत था।

विदेशी व्यापार की दिशा – विदेशी व्यापार की दिशा से अभिप्राय उस विश्लेषण से होता है जिसके अन्तर्गत किसी देश के प्रमुख भागीदारों से किये जाने वाले निर्यात एवं आयात व्यापार का अध्ययन किया जाता है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत के विदेशी व्यापार की दिशा में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए है। वर्तमान में विश्व के लगभग सभी देशों के साथ भारत के व्यापारिक सम्बन्ध है। स्वतंत्रता प्राप्ति के समय भारत के विदेशी व्यापार में ब्रिटेन का सर्वोच्च स्थान था। यह स्थान अब उत्तरी अमेरिका ने ले लिया है। दूसरी तरफ जहाँ रूस एवं जापान का हमारे विदेशी व्यापार में नगण्य भाग था, वह अब काफी बढ़ गया है। आर्थिक उदारीकरण के बाद भारत के निर्यातों के स्त्रोतों में वृद्धि हुई है तथा आयातों के विविध स्त्रोत भी विकसित हुए है। अत: कहा जा सकता है कि भारत विदेशी व्यापार के क्षेत्र में केवल कुछ देशों पर निर्भरता की स्थिति से मुक्त हुआ है और बहुमुखी व्यापार के क्षेत्र में प्रवेश कर गया है, संक्षेप में आर्थिक उदारीकरण के पश्चात् भारत के विदेशी व्यापार की संरचना एवं दिशा में महत्वपूर्ण एवं दूरगामी परिवर्तन हुए है।

विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में भारत का विदेशी व्यापार – स्वतंत्रता के बाद नियोजन काल में भारत के विदेशी व्यापार में निरन्तर वृद्धि हुई है। भारत के आयात एवं निर्यात में लगातार वृद्धि हुई है किन्तु निर्यात की तुलना में आयात में वृद्धि अधिक रही है जिसके कारण व्यापार संतुलन प्रतिकूल रहा।

विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में विदेशी व्यापार प्रथम पंचवर्षीय योजना (1951-56) के मध्य व्यापार घाटा औसतन प्रतिवर्ष 130 करोड़ रूपये रहा क्योंकि स्वतंत्रता के बाद देश के आर्थिक विकास के लिए औद्योगीकरण के कारण भारी मात्रा में पूँजीगत वस्तुओं का आयात करना पड़ा था।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना (1956-61) के मध्य व्यापार घाटा औसतन प्रतिवर्ष बढ़कर 367 करोड़ रूपये हो गया।

तृतीय पंचवर्षीय योजना (1961-66) के मध्य व्यापार घाटा 4,719 करोड़ रूपये रहा।

तीन वार्षिक योजनाओं (1966-69) में भी विदेशी व्यापार में घाटा बना रहा। वर्ष 1968-69 में व्यापार में कमी आई।

चतुर्थ पंचवर्षीय योजना (1969-74) में निर्यात प्रोत्साहन एवं आयात हतोत्साहन की नीति पर बल दिया गया, जिसके कारण निर्यात में वद्धि हुई। वर्ष 1972-73 में प्रथम बार देश का व्यापार अनुकूल रहा। इस वर्ष निर्यात, आयात की तुलना में 104 करोड़ रूपये अधिक रहा किन्तु बाद में पेट्रोल, खाद, इस्पात आदि का आयात ऊँचे मूल्यों पर होने के कारण व्यापार संतुलन प्रतिकूल होने लगा।

पाँचवी पंचवर्षीय योजना (1974-79) में भारत का विदेशी व्यापार पुन: संतोषजनक स्थिति में रहा। योजनावधि के चार वर्षो में कुल आयात 20,878 करोड़ रूपये तथा कुल निर्यात 17,915 करोड़ रूपये था जो 1979-80 में बढ़कर 2,725 करोड़ रूपये हो गया।

2005-06 तथा 2006-07 में क्रमश: 42,069 करोड़ रूपये, 65,741 करोड़ रूपये 1,25,725 करोड़ रूपये, 2,03,991 तथा 2,68,727 करोड़ रूपये तक पहुँच गया।

छठवीं पंचवर्षीय योजना (1980-85) में व्यापार घाटा तेजी से बढ़ा। इस योजना काल में कुल घाटा 28,580 करोड़ रूपये हो गया। घाटे का मुख्य कारण खनिज, तेल, लोहा एवं इस्पात आदि का भारी मात्रा में आयात करना था।

सातवीं पंचवर्षीय योजना (1985-90) में कुल व्यापार घाटा 38,650 करोड़ रूपये रहा, जिसमें औसतन वार्षिक घाटा 7,730 करोड़ रूपये रहा।

आठवीं पंचवर्षीय योजना (1992-97) में वर्ष 1993-94 में सरकार की नीतियों के कारण घाटा कम होकर 3,350 करोड़ रूपये हो गया किन्तु वर्ष 1994-95 में व्यापार घाटा पुन: बढ़कर 7,297 करोड़ रूपये के उच्च स्तर पर पहुँच गया। योजना के अंतिम वर्ष में व्यापार घाटा बढ़कर 20,103 करोड़ रूपये हो गया।

नौवीं पंचवर्षीय योजना (1997-2002) में वर्ष 1999-2000 में व्यापार घाटा 55,675 करोड़ रूपये तक पहुँच गया। वर्ष 2000-01 में सरकारी प्रयत्नों से इस घाटे को कम करके 27,302 करोड़ रूपये तक लाया

गया। वर्ष 2001-02 में व्यापार घाटा बढ़कर पुन: 36,182 करोड़ रूपये हो गया।

दसवीं पंचवर्षीय योजना (2002-07) में व्यापार घाटा प्रति वर्ष तेजी से बढ़ता गया। वर्ष 2002-03, 2003-04, 2004-05 पंचवर्षीय योजनाओं के दौरान भारत के निर्यातों व आयातों में काफी वृद्धि हुई है।

सुझाव – प्रस्तुत शोध अध्ययन से स्पष्ट है कि भारत को विश्व व्यापार में अपनी भागीदारी बढ़ाने के लिए देश में निर्यात प्रोत्साहन एवं आयात प्रतिस्थापन को बढ़ावा देना होगा। निर्यात में वृद्धि महत्वपूर्ण है साथ ही ऐसी वस्तुओं का आयात भी आवश्यक है जो आर्थिक विकास में सहायक हो। नई विदेशी व्यापार नीति में प्रतिबंधों को समाप्त कर निर्यात संवर्द्धन के माध्यम से विदेशी व्यापार को नई दिशा प्रदान की जा सकती है।

निष्कर्ष – उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट होता है कि विदेशी व्यापार देशों को अनेक प्रकार से सहायता एवं सहयोग प्रदान करता है। वर्तमान में अनेक विकसित देश ऐसे है जिन्होंने विदेशी व्यापार के माध्यम से ही अपने विकास के स्तर को ऊँचा उठाया है। इसीलिए विदेशी व्यापार को आर्थिक विकास का इंजन कहा जाता है। विदेशी व्यापार आर्थिक विकास की लालसा उत्पन्न करता है, ज्ञान तथा अनुभव प्रदान करता है जो विकास को सम्भव बनाते है।

संदर्भ ग्रंथ सूंची :-

1. वी.के. पुरी एवं एस.के. मिश्र - भारतीय अर्थव्यवस्था पच्चीसवाँ संस्करण - 2013 हिमालया पब्लिशिंग हाउस, मुम्बई।
2. डॉ. राकेश कुमार कोठारी एवं डॉ. पी.सी. जैन - अंतर्राष्ट्रीय विपणन - 2006 रमेश बुक डिपो, जयुपर।
3. भारतीय विदेशी व्यापार एवं अंतर्राष्ट्रीय संस्थाएँ - डॉ. पी.डी. माहेश्वरी एवं डॉ. शीलचन्द्र गुप्ता - कैलाश पुस्तक सदन, भोपाल 2013
4. आर्थिक समीक्षा - सांख्यिकीय परिशिष्ट 2013-14 भारत सरकार नई दिल्ली।

****

प्राचीन भारतीय ज्ञान में शासन व्यवस्था

डॉ. विम्मी बहल * डॉ. ओ.पी. शर्मा **

शोध सारांश – वेद भारतीय धर्म के मूल है। वैदिक ज्ञान राशि का ही विस्तार, उपनिषद, दर्शन, स्मृति, आयुर्वेद आदि अनेक शाखाओं मे हुआ है। भारतीय इतिहास के उत्तर वैदिक काल में जब निश्चित भू–भाग पर जन समूह स्थायी रूप से निवास करने लगा और धन सम्पत्ति के संग्रह की प्रवृत्ति उत्पन्न हुई, तभी समाज के सुचारू संचालन के लिए सुनिश्चित विधि विद्वानों की आवश्यकता पड़ी। प्राचीन भारतीय इतिहास में (वेदो) में राजनीति, न्याय व्यवस्था, शासन–व्यवस्था और अर्थशास्त्र के सिद्धांतों से संबंधित महत्वपूर्ण संकेत सूत्र प्राप्त होते है। महाकाव्यों में राज्य के विकास, तत्व, प्रकार, मान्यता, संप्रभुता, अधिकार, कर्त्तव्य तथा शासन व्यवस्था आदि से संबंधित विधि–विधान का सुविकसित रूप प्राप्त होता है।

कुंजी शब्द – वैदिक, दर्शन, शासन, संचालन, अधिकार, कर्त्तव्य, राजनीति, अर्थशास्त्र आदि।

प्रस्तावना – शासन–व्यवस्था – मनुस्मृति का स्पष्ट कथन है – 'संसार की रक्षा के लिए प्रभु ने राजा की सृष्टि की।' (मनुस्मृति)

इस राजा का निर्माण अग्नि, इन्द्र, सूर्य, वायु, वरूण, मनु और कुबेर के अंश को लेकर किया गया है। स्मृतिकार यह मानते थे कि समाज की रक्षा और विकास के लिए राजसत्ता का होना अनिवार्य है क्योंकि शान्ति सुरक्षा और व्यवस्था के अभाव से समाज में जीवन स्थिर नहीं रह पाता। शासन व्यवस्था के संचालन के लिए शासन के विविध विभागों की गणना की गई है इनमें सर्वप्रथम –

1. **सभा** मनु का कथन है कि सभा में वेदज्ञ अर्थात् ऋग्वेद, यजुर्वेद तथा सामवेद के ज्ञाता हो। इनकी संख्या तीन होनी चाहिए। राजा की सम्मति से बैठे हुए ये तीनो विद्वान ब्राह्मण तथा राजा जहॉ बैठते है वह 'सभा' कहलाती है।

यस्मिन् देशे निषीदन्ति विप्रा वेदविदस्त्रयः।[1]
राज्ञश्चाधिकृतो विद्वान ब्रह्मणस्तां सभां विदुः॥(मनु.8.11)

बृहस्पति का कथन है कि जब किसी सभा में मुख्य न्यायाधीश के साथ वेद में पारंगत विद्वान् बैठते है तो वह ब्रह्मा की सभा या यज्ञ के समान प्रतीत होती है। बृहस्पति के अनुसार सभा के दस अंग थे। राजा, राजा द्वारा नियुक्त मुख्य न्यायाधीश सभ्य, स्मृति, गणक (एकाउण्टेण्ट), लेखक, सोना, अग्नि, जल तथा स्वपुरूष (साध्यपाल)।

सभासदो के गुण – मनु के मत से राजा को तीन सभासदो की नियुक्ति करनी चाहिए। जो प्रमुख न्यायाधीश को सहयोग दे सके।[2] राजा को सभासदो के साथ सभी धर्मो के जानने वाले ब्राह्मण की नियुक्ति करनी चाहिए।[3] इस प्रकार श्रेष्ठ ब्राह्मण या न्यायाधीशों को विद्या, कुलीन वंशोत्पन्न, वृद्धावस्था, चातुर्य तथा धर्म के प्रति सावधान होना चाहिए। न्यायाधीश को अठारहो विवार पढो में, उसके आठ हजार उपभेदो में, आन्वीक्षिको (तर्क आदि), वेद तथा स्मृतियो का ज्ञानी होना चाहिए। मनु ने न्यायाधीश को 'धर्मप्रवक्ता' के नाम से संबोधित किया है।[4] मनु का विधान है कि अविद्वान ब्राह्मण न्यायाधीश के पद पर नियुक्त हो सकता है, परन्तु शूद्र को किसी भी समय न्यायाधीश के पद पर नियुक्त नहीं करना चाहिए। यदि शूद्र न्यायाधीश के पद पर नियुक्त हो जाएगा तो राज्य उसी प्रकार नष्ट हो जाएगा, जिस प्रकार कीचड़ में फँस कर गाय नष्ट हो जाती है।

यस्य शूद्रस्तु कुरूते राज्ञो धर्मविवेचनम्।
तस्य सीदति तद्राष्ट्र पङ्के गौरिव पश्यतः॥(मनु.8.21,22)[5]

इसके अतिरिक्त जो व्यक्ति देश के आचार–विचारो से अनभिज्ञ होते थे, नास्तिक होते थे, घमण्डी, क्रोधी, लोभी तथा शास्त्रो के ज्ञान से शून्य व दरिद्र होते थे उन्हे सभा का सदस्य नहीं बनाया जाता था। राजा द्वारा नियुक्त सभा के सदस्यो तथा 'धर्मप्रवक्ता' को न्यायालय कहा जाता था

सभा के नियम – मनु का कथन है कि सभा में या तो जाना नहीं चाहिए यदि कोई व्यक्ति वहाँ जाए तो उसे सत्य ही बोलना चाहिए। सभा में जाकर जो व्यक्ति किसी भय या किसी का पक्ष लेकर सत्य को छिपाकर कुछ नहीं कहता या असत्य बोलता है तो वह पाप का भागी होता है।

सभां वा न प्रवेष्टव्यं वक्तव्यं वा समजजसम्।[6]
अब्रुवन्विब्रुवन्वाऽपि नरो भवति किल्विषी॥(मनु.8.13)

जिस सभा में सभा के सदस्य ही सत्य बात को छिपाकर असत्य का प्रकाशन करते है उन सभा के ब्राह्मण अधर्म मे फॅस जाते है। अर्थी–प्रत्यर्थी किसी के असत्य भाषण से कोई व्यक्ति पीड़ित होता है तो उस सभा के सदस्य ही पापो से नष्ट हो जाते है।[7] जिस सभा में अपराधी व्यक्ति ही दण्डित होता है तो वही पाप का भागी भी होता है। अतः सभा के सदस्यो को दोष नहीं लगता है। इसके विपरीत विवादो का उचित निर्णय न होने पर अधर्म का चौथाई भाग अधर्म करने वाले व्यक्ति को, आधा भाग साक्षी को तथा अधर्म का तीन चौथाई न्यायाधीश तथा सभ्यो को मिलता है।[8]

अतः इस संसार में धर्म ही मित्र है, जो मरने पर भी साथ जाता है। अन्य संपूर्ण धन, संपत्ति, स्त्री, पुत्रादि तो यही पर रह जाते है इसलिए नष्ट किया हुआ धर्म ही इष्ट–अनिष्ट के साथ नष्ट करता है तथा पूर्वसंचित धर्म ही रक्षा करता है। अतः असत्यभाषण द्वारा धर्म को नष्ट नहीं करना चाहिए। असत्य बोलने वालो को दण्डित करना चाहिए तथा सत्य द्वारा धर्म की रक्षा करनी चाहिए।

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य एवं प्रबंधन) अटल बिहारी वाजपेयी हिन्दी विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत
** विभागाध्यक्ष (वाणिज्य) शासकीय महाविद्यालय, कालापीपल (म.प्र.) भारत

शासन के विविध विभाग एवं विभागाध्यक्ष – मनुस्मृति में राष्ट्र के सुव्यवस्थित संचालन के लिए शासन–व्यवस्था का विधान किया है। शासन व्यवस्था में राष्ट्र को छोटे तथा विशाल भू–भाग को बाँट कर संघटित करने का प्रयास किया है। मनु ने एक गाँव, दस गाँव, बीस गाँव, सौ तथा सहस्त्र ग्रामो के अलग–अलग करने के लिए विभागाध्यक्षो का निर्माण किया है।

इस प्रकार एक ग्राम के अध्यक्ष को ग्रामिक, दश ग्राम के अधिपति को 'दशाधिपति' कहा गया है। बीस ग्रामो का अध्यक्ष 'विंशति', सौ ग्राम का अध्यक्ष 'शती' तथा हजार ग्रामो का अध्यक्ष 'सहस्त्रधिपति' के नाम से जाना जाता है। नगर का अध्यक्ष 'सर्वार्थचिन्तक' कहलाता है। इसके अतिरिक्त कोशाध्यक्ष, राजदूत, पुरोहित तथा राजमंत्री का उल्लेख भी किया गया है।

ग्रामस्याधिपति कुर्याद दशग्रामपति तथा।
विशतीशं शतीशं च सहस्त्रपतिमेव च।।(मनु7.115) [9]

अध्यक्ष की योग्यता, अधिकार तथा कर्तव्य –

1. **कोशाध्यक्ष** – मनु का कथन है कि शूरवीर, उत्साही, कुलीन् तथा कुलक्रमागत व्यक्ति को ही कोषाध्यक्ष बनाना चाहिए।

तेषामर्थे नियुज्जीत शूरान्दक्षान्कुलोद्गतान् ।। (मनु.7.62)[10]

इन गुणो से युक्त व्यक्ति की कोषाध्यक्ष के पद पर नियुक्त करना चाहिए।

2. **ग्रामपति(ग्रामाध्यक्ष)** – मनु तथा याज्ञवल्वय स्मृति कालीन शासन व्यवस्था पर प्रकाश डालते है। प्राचीन काल से भारत एक कृषि प्रधान देश रहा है एवम् भारत में राष्ट्र की सबसे छोटी इकाई या संस्था ग्राम थी। ग्राम के सुव्यवस्थित शासन के संचालन के लिए एक अधिकारी की नियुक्ति होती है जिसे मनु ने ग्रामिक के नाम से संबोधित किया है। ग्रामिक का कर्तव्य है कि वह अधीनस्थ ग्राम से उत्पन्न हुई भोग की संपूर्ण सामग्री में से संचय कर उसको दश ग्रामो के अधिपति के पास भेजे।[11]

यानि राजप्रदेयानि प्रत्यंह ग्रामवासिभि :।
अन्नपानेन्धनादीनि ग्रामिकस्तान्यवाप्नुयाद् ।। मनु.7.118।।

मनु के अनुसार ग्रामपति की जीविका ग्रामवासियो पर निर्भर थी। ग्रामवासी राजा के लिए जो अन्न, ईधन आदि जो भी राजा को दी जाने वाली वस्तुएँ है वह गांव का रक्षक ग्रामिक लेता था।[12]

3. **दशाधिपति** – मनु ने ग्राम के बाद दस ग्रामों की सामूहिक शांति तथा सुरक्षा की व्यवस्था के लिए दशाधिपति का चयन किया है। मनु ने व्यवस्था दी है कि दशग्रामपति को एक कुल का उपभोग करना चाहिए यही उसका वेतन है। दो मध्यम हर को अर्थात् बारह हलो द्वारा जोतने योग्य भूमि 'कुल' कहलाती है।

4. **विंशती** – बीस ग्रामो के अधिपति को 'विंशति' नाम से संबोधित किया है। यह शासन की तीसरी इकाई है। यह पद आधुनिक तहसीलदार के तुल्य है। मनु के अनुसार विंशती का वेतन पाँच कुल का भोग करना है।

5. **शती (शताध्यक्ष)** – बीस ग्रामो के ऊपर शती नामक अधिकारी होता था। मनु के द्वारा इसे राजा द्वारा एक ग्राम यानि एक गाँव से जितनी आय होती है उस पर उसका अधिकार होता है। इस प्रकार शती की स्थिति एक जागीरदार के रूप मे भी है।

6. **सहस्राधिपति** – हजार ग्रामो की व्यवस्था एवम् संगठन के लिए सहस्राधिपति के नाम से जाना जाता है। मनु के अनुसार सहस्राधिपति राजा से वेतन के रूप में एक पुर या कस्बा प्राप्त करता है।

7. **स्वार्थचिन्तक** – मनु के अनुसार नगर के प्रशासन के लिए एक स्वार्थचिन्तक अधिकारी नियुक्त किया जाता है। इसका मुख्य कार्य सभी अधिकारियो पर निगरानी रखना होता है। स्वार्थचिन्तक शब्द का अर्थ है प्रजा के समस्त अर्थो का चिन्तन करना और उसकी सिद्धि के लिए सदैव प्रयत्न करना।

राजकीय आय के साधन – स्मृतियों से राजकीय आय के साधनो पर राजा को निर्देश दिया है कि वह कोष तथा राज्य को स्वयं देखे। राजकीय आय के लिए नियुक्त व्यक्तियों द्वारा लाए गए स्वर्ण को देखकर भण्डार में रखना चाहिए। स्मृतिकाल में राजकीय आय का मुख्य साधन कर था।

कर व्यवस्था – स्मृतियों में राज्य के कोश को पूर्ण रखने के लिए प्रमुख विधान कर – व्यवस्था है। मनु ने राजा को प्रजा से जोंक, बछड़ा तथा भ्रमर के तुल्य थोडा – थोडा कर वसूलना चाहिए। जिस प्रकार जोक अल्प मात्रा में रक्त पीती है और मनुष्य या पशु को उसका बोध नहीं होता है। जिस प्रकार बछड़ा अपनी माँ गाय का दूध थोडी मात्रा में पीता है तथा भ्रमर पुष्प का रस तथा मधु धीरे–धीरे लेता है और गाय तथा पुष्प को बिल्कुल कष्ट नहीं होता, उसी प्रकार राजा को भी प्रजा से थोडा कर लेना चाहिए जिससे प्रजा को कष्ट न हो।[13]

कर व्यवस्था को पाँच भेदों के अन्तर्गत विभक्त किया है।

1. शुल्क कर 2. भाग कर 3. आयकर
4. अर्थ–दण्ड कर 5. विविध कर 6. पशुकर
7. श्रमजीवी एवं शिल्पियों पर कर

इस प्रकार ये सब राजकोष की आय के महत्वपूर्ण साधन थे। इस सम्पत्ति से राज्य को सुदृढ़ किया जाता था।

मण्डल सिद्धांत – मनु स्मतियों मे विधि राज्यों में पारस्परिक सम्बन्ध स्थापित करने के लिए मण्डल सिद्धान्तों की प्रमुखता दी है। मनु ने राजा को आदेश दिया है कि मंत्रियों के मध्य में बैठकर उनसे नित्य परामर्श ले। याज्ञवल्कय ने राजण्डल की तीन मूल प्रकृतियॉ मानी है शत्रु, मित्र और उदासीन । मनु राजमण्डल की चार प्रकार की मूल प्रकृतियॉ मानते है वे है – शत्रु, विजिगीषु, मध्यम तथा उदासीन [14] मनु ने राजा को शत्रु, मित्र, उदासीन अधिक नहीं बनाने का निर्देश दिया है जिससे यदि शत्रु आदि कार्य करे तो उससे राजा को नुकसान नहीं होने पाए।

विजय के चार उपाय – राजा को अपने अभीष्ट की प्राप्ति के लिए कुछ उपाय करना अत्यन्त आवश्यक है मनुस्मृति ने चार प्रकार के उपाय बताए है– साम, दान, भेद तथा दण्ड। यदि शत्रु साम दान और भेद इन तीन उपायों से भी वश में नहीं आ सके तो उसे चौथे उपाय दण्ड अर्थात् युद्ध द्वारा उसको परास्त करना चाहिए। [15] मनु ने चार उपायों में राष्ट्र की उन्नति के लिए साम और दण्ड की प्रशंसा की है। मनु का कथन है कि जिस प्रकार खेत की निराई करने वाला कृषक धानों की रक्षा करता है और तृणों को उखाड़ फेंकता है उसी प्रकार राजा को चाहिए कि वह धर्मविरूद्ध आचरण करने वालो को दण्ड के द्वारा दमन करे। मनु का मत है कि साम, दान, और भेद तीनो उपायों के निष्फल होने पर ही दण्ड यानि अन्त में युद्ध का आश्रय लेना चाहिए।

षाड्गुण्य – राजा का कर्तव्य है कि वह अपनी विजय और शत्रु के पराजय के लिए छ: गुणों का सर्वदा विचार करे। इन छ: गुणों को ही पाड्गुण्य कहते है ये निम्न है। 1.सन्धि 2.विग्रह 3.यान 4.आसन 5.द्वैधीभाव 6.संश्रय

युद्ध एवं उसके नियम – वर्तमान काल में राष्ट्रीय विवादों का निपटारा करने की दो मुख्य रीतियॉ है – शान्तिपूर्ण और बाध्यकारी। मनुस्मृति में स्पष्ट शब्दों मे कहा गया है कि जहाँ तक सम्भव है। शत्रुओं को साम, दान भेद से जीतने का यत्न करना चाहिए। अनिर्वाय होने पर आत्मरक्षार्य धर्मपूर्वक युद्ध करना चाहिए।

अस्त्र-शस्त्र – युद्ध में प्रयुक्ता होने वाले हथियारों को दो श्रेणियों में विभक्त किया गया है।

1. अस्त्र- जिसे फेंककर प्रहार किया जाता है और शस्त्र- जिसे हाथ में लिए हुए प्रहार किया जाता है तलवार, भाला, आदि।

युद्ध का समय – मनुस्मृति में युद्ध के लिए समय तथा मौसम का भी उल्लेख है। राजा को शुभ माघ, फागुन तथा चैत मास में शत्रु पर आक्रमण करना चाहिए, इसके अतिरिक्त शत्रु पक्ष को व्यसन मे लीन देखे, उस समय शत्रु पर आक्रमण कर देना च[16]

धर्म-युद्ध के नियम – स्मृतियों के जिन नियमों का वर्णन मिलता है।,वह निम्न प्रकार है- युद्ध के लिए सन्नद्ध योद्धा से ही युद्ध करना चाहिए। शस्त्र तथा वाहन से रहित तथा युद्ध करने में असमर्थ व्यक्ति, पर प्रहार करना धर्मयुद्ध के नियमो के विपरीत था। अस्त्र-शस्त्र करना धर्मयुद्ध के नियमों के विपरीत था। अस्त्र - शस्त्र के नियमों के अतिरिक्त कुछ नियम ऐसे है जो मनुष्यों से सम्बन्धित है जैसे -रथहीन व्यक्ति, दोनो हाथ जोडे हुए, जो युद्ध का त्याग कर चुका है, जो व्यक्ति सो रहा हो, कवच से रहित और जो दर्शक हो उस पर प्रहार करना वर्जित था। इस प्रकार तत्कालीन समाज में धर्मपूर्वक युद्ध करने को महत्व दिया जाता था । यतो धर्मस्ततो जय: इस सिद्धान्त के आधार पर जिधर धर्म होगा, उधर विजय होगी। इसी कारण युद्धो को धार्मिक युद्ध कह जाता था।

विविध संघ – स्मृतियों से 'संघ' शीर्षक पर मनु ने दो संघो का वर्णन किया है-प्रथम ग्राम संघ तथा द्वितीय देश संघ है। संघ शब्द समूह का द्योतक है

निष्कर्ष – स्मृतियों के राजशास्त्र की विवेचना धर्मशास्त्र का अंग मान कर की गई है। मनुस्मृति का स्पष्ट कथन है संसार की रक्षा के लिए प्रभु ने राजा की सृष्टि की । शासन व्यवस्था के संचालप के लिए छोटे-छोटे भागों में विभक्त कर शासन चलाना, राष्ट्रीय महत्व के विषयों तथा विधिशास्त्र की उलझी हुई गृत्थियो पर विचार - विर्मश करना। स्मृतियों में वर्णित षड्गुण्य, चार उपाय तथा मण्डल सिद्धांत का प्रत्यक्ष सम्बध राज्य की विदेशी नीति से है। ये छ: गुण है - सन्धि, विग्रह, आसन, यान, संक्षय और द्वैधी मानव सन्धि, विग्रह, और आसन वर्तमान अन्तर्राष्ट्रीय विधि के शान्ति, युद्ध और तथस्थता संबंधी कानून है संश्रय का अर्थ है स्वयं को कमजोर समझकर किसी अन्य शक्तिशाली राजा की सहमता लेना, जो विश्व में अधिक प्रचलित है। अत: हम कह सकते है कि वर्तमान काल में आम सहमति के आधार पर युद्ध सम्बन्धी विधियों का संहिताकरण का प्रयास और उनका व्यावहारिक पालन कर हम युद्ध में धर्म और नैतिकता के साथ-साथ न्याय व्यवस्था का भी संतुलित अनुशीलन किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मनु.8.11
2. मनु. 8.10,11
3. मनु . 8.9.10
4. मनु. 8.20
5. मनु. 8.21,22
6. मनु. 8.13
7. मनु. 8.14
8. मनु. 8.18,19
9. मनु. 7.115
10. मनु. 7.62
11. मनु. 7.118
12. मनु. 7.118
13. मनु. 7.127
14. मनु. 7.155
15. मनु. 7108
16. मनु. 7.183
17. मनु. 7.3

****

भूमण्डलीय व्यापार के अंतर्गत अंतर्राष्ट्रीय सम्प्रेषण - ई - कॉमर्स का बढ़ता महत्व

डॉ. श्रद्धा काबरा *

प्रस्तावना – भूमण्डलीय व्यापार के अंतर्गत अंतर्राष्ट्रीय सम्प्रेषण के अर्थात ई-कॉमर्स के महत्व को जानने से पूर्व सम्प्रेषण का अर्थ जानना आवश्यक है। सम्प्रेषण उन अनगिनत तरीकों को कहा जाता है जिसके माध्यम से भिन्न-भिन्न जीव एक दूसरे को सूचना प्रेषित एवं प्राप्त करते हैं। सम्प्रेषण वह साधन है जिसमें संगठित क्रिया द्वारा तथ्यों, सूचनाओं, विचारों, विकल्पों एवं निर्णयों का दो या अधिक व्यक्तियों के मध्य अथवा व्यावसायिक उपक्रमों के मध्य आदान प्रदान होता है। पुराने समय में मनुष्य अपने विचारों को आवाज से, चिन्हों से या हाव-भाव के माध्यम से अभिव्यक्त करते थे। सभ्यता के विकास के साथ-साथ मानव ने अपनी गुप्त भावनाओं को अभिव्यक्त करने के लिए भिन्न-भिन्न भाषाओं का विकास किया। विभिन्न व्यक्ति अपने विचारों, भावनाओं, संदेशो का आदान प्रदान लिखित, मौखिक अथवा सांकेतिक रूप में अभिव्यक्त कर सकता है। वह अपने संदेशो को विज्ञापन, रेडियो, टेलीविजन, समाचार-पत्र, ई-मेल, पत्राचार आदि के माध्यम से प्रेषित कर सकता है। विज्ञान और तकनीकी ज्ञान में प्रगति होने से मानव ने दूरभाष, फैक्स आदि को सम्प्रेषण के साधनों के रूप में अपनाया। वर्तमान समय में सूचना तकनीकी क्रान्ति के साथ संदेश वाहन हेतु नए-नए साधनों का विकास संभव हुआ है जैसे-इन्टरनेट, मोबाईल, ई-मेल आदि।

सम्प्रेषण के क्षेत्र में वैज्ञानिक प्रगति ने वर्तमान समय को सूचना क्रान्ति के युग की संज्ञा दी है। व्यवसाय, उद्योग वाणिज्य के विकास का सम्प्रेषण से गहरा अंतर्सम्बन्ध है। जैसे-जैसे व्यावसायिक जगत का विकास होता है लोगों की अपेक्षाओं के अनुरूप सम्प्रेषण माध्यमों के नवीन स्वरूपों की खोज एवं उनका विस्तार है। वर्तमान में व्यावसायिक विकास एवं संप्रेषण विकास एवं दूसरे के पूरक है।

अठारहवीं शताब्दी के अंत तक प्रत्यक्ष वार्ता अथवा हस्तलिखित पत्र ही संप्रेषण के पर्याय माने जाते थे। उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में बहुप्रतिलिपिकरण, फोटोकॉपी, रेडियो, टेलीविजन आदि संप्रेषण साधनों का प्रयोग होने लगा, किन्तु उन्नीसवी शताब्दी के उत्तरार्द्ध में संप्रेषण के क्षेत्र में इलेक्ट्रॉनिक डिजिटल एवं अन्य तकनीकों ने एक नवीन युग का प्रारम्भ किया। इलेक्ट्रॉनिक टाइपराइटर, टेलेक्स, वर्ल्ड प्रोसेसर, कम्प्यूटर, आफसेट आदि ने संप्रेषण को काफी शक्तिशाली, तीव्र एवं महत्वपूर्ण बना दिया है। कम्प्यूटर, इन्टरनेट, उपग्रह सम्प्रेषण आदि ने सम्प्रेषण को प्रभावी लोकप्रिय एवं दैनिक जीवन की अनिवार्यता बना दिया है।

सूचना प्रौद्योगिकी के अधिकाधिक प्रयोग एवं इन्टरनेट के तीव्र विस्तार के फलस्वरूप, मानव जीवन की विभिन्न क्षेत्रों की गतिविधियों में क्रान्तिकारी परिवर्तन आए है। इससे समाज, अर्थव्यवस्था व प्रशासनिक व्यवस्था व्यापक रूप से प्रभावित हुए है। व्यापारिक एवं वाणिज्यिक गतिविधियों में इस प्रौद्योगिकी ने एक विशेष स्थान अर्जित कर अर्थव्यवस्था को नई दिशा प्रदान की है। एक नई अर्थव्यवस्था का ई-वाणिज्य या ई-कामर्स के रूप में प्रादुर्भाव हुआ है।

ई-कॉमर्स क्या है ? – ई-कॉमर्स दो शब्दों से मिलकर बना है। ई-कॉमर्स में 'ई' शब्द इलेक्ट्रॉनिक का संक्षिप्त रूप है तथा 'कॉमर्स' से अभिप्राय व्यापारिक लेन देन से है अर्थात् इलेक्ट्रॉनिक माध्यम से व्यापारिक गतिविधियों का संचालन करना है। ई-कॉमर्स कागजों पर आधारित पारम्परिक वाणिज्य पद्धतियों को अत्यन्त सक्षम, तीव्र एवं विश्वसनीय संचार माध्यमों से युक्त, कम्प्यूटर नेटवर्को द्वारा संचालित करने का नवीनतम माध्यम है।

दो या दो से अधिक पार्टियों के बीच वस्तुओं के इलेक्ट्रॉनिक माध्यम से विनिमय ई-कॉमर्स है। ई-कॉमर्स को अंतर्राष्ट्रीय व्यापार की इलेक्ट्रॉनिक प्रणाली भी कहा जाता है। विभिन्न व्यापारिक सहयोगियों, कम्पनियों, ग्राहकों, उपभोक्ताओं आदि के साथ व्यापारिक सूचनाओं का आदान प्रदान, उन्नत सूचना प्रौद्योगिकी व कम्प्यूटर नेटवर्कों की सहायता से इलेक्ट्रानिक माध्यम से करना ई-कॉमर्स कहलाता है।

ई-कॉमर्स की कार्यप्रणाली – ई-कॉमर्स का प्रारम्भ सन् 1970 में हुआ। कुछ कम्पनियों ने अपने निजी कम्प्यूटर नेटवर्को की स्थापना, अपनी कम्प्यूटर आधारित सूचना प्रणालियों हेतु हुआ था। उन्होंने उन नेटवर्को से अपने व्यापारिक सहयोगियों एवं अन्य संबंधित कम्पनियों को भी सूचनाओं के लेन देन हेतु जोड़ा। यह प्रचलन बाद में इलेक्ट्रॉनिक डाटा इन्टरचेंज (ईडीआई) के रूप में विकसित हुआ। ई-कॉमर्स प्रणाली का मुख्य आधार इलेक्ट्रानिक डाटा इन्टरचेन्ज है, जिसके अंतर्गत ऑकड़ों को परिवर्तित करने तथा स्थानान्तरित करने की सुविधा होती है। इस प्रणाली के अंतर्गत ग्राहक जब वेबसाइट पर उपलब्ध सामान को पसन्द करके क्रय करता है, तो उसे भुगतान के लिए कम्प्यूटर पर उपलब्ध एक फार्म भरना होता है। इस फार्म में अपना क्रेडिट नम्बर, देय राशि, पाने वाली फर्म का नाम आदि सूचनाएं अंकित करना होती है। फार्म के भरते ही ग्राहक के खाते से धनराशि निकलकर विक्रेता के खाते में स्थानान्तरित हो जाती है। औद्योगिक क्रांति के फलस्वरूप इलेक्ट्रॉनिक डाटा इन्टरचेन्ज के अंतर्गत वर्तमान में नई प्रणाली का विकास हुआ है। इस प्रणाली के अंतर्गत क्रेता कम्प्यूटर पर डिजिटल हस्ताक्षर द्वारा चेक काट सकता है। इन चेकों को नेट चेक कहा जाता है। किन्तु यह प्रणाली केवल उन्हीं देशों में लागू है जहाँ डिजिटल हस्ताक्षर को कानूनी मान्यता मिली हुई है। हमारे देश में अभी उक्त प्रणाली की शुरूआत नहीं हुई है।

ई-कॉमर्स के लाभ – जिस प्रकार से सम्पूर्ण विश्व की अर्थव्यवस्था का वैश्वीकरण अर्थात् ग्लोबलाइजेशन हो रहा है तथा भौगोलिक सीमाओं से परे, व्यापार की एक नई अवधारणा प्रचलन में आ गई है जिसके फलस्वरूप ई-कॉमर्स का महत्व और बढ़ गया है। ई-कॉमर्स प्रणाली के माध्यम से जहाँ

* अतिथि विद्वान (वाणिज्य) शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

एक और व्यापारिक गतिविधियों के अंतर्गत व्यर्थ कागजी कार्यवाहियों पर रोक लगी है वही विभिन्न व्यापारिक खर्चो में कमी कर व्यापारिक कार्यकुशलता में भी वृद्धि हुई है। आज इलेक्ट्रॉनिक कॉमर्स में इन्टरनेट पर व्यापार करने का पर्याय बन गया है। ई-कॉमर्स से न केवल कम्पनियाँ, विक्रेता या व्यापारी लाभान्वित हो रहे हैं, बल्कि उपभोक्ता को भी अनेक लाभ मिल रहे हैं।

विक्रेता या कम्पनियों को लाभ -

- उत्पादकों, वितरकों व अन्य व्यापारिक सहयोगियों से व्यापारिक सूचनाओं का आदान प्रदान एवं व्यापारिक खर्चो में कमी होती है।
- दस्तावेजों में आंकड़ों की शुद्धता बनी रहती है।
- नए व्यापार की सम्भावनाओं का विकास होता है।
- नए बाजारों व ग्राहकों तक पहुंचने हेतु आसानी होती है।
- नए उत्पादों, वस्तुओं व सेवाओं को सम्मिलित करने में आसानी होती है।
- ग्राहकों से बेहतर सम्बन्धों की स्थापना होती है।

उपयोगिता को लाभ -

- इलेक्ट्रॉनिक भुगतान की सुविधा उपलब्ध होती है।
- वांछित वस्तुओं व सेवाओं के चयन में सुविधा होती है।
- वस्तुओं की खोजबीन हेतु बार-बार बाजार आने जाने में समय व पैसे की बचत होती है।
- अनावश्यक वस्तुओं के संग्रहण की आवश्यकता में कमी आती है।
- किसी भी समय तथा घर बैठे खरीदारी का लाभ प्राप्त होता है।
- वस्तुओं के विभिन्न विकल्प उपलब्ध होते है।
- मध्यवर्ती व्यक्तियों अथवा संस्थाओं की भूमिका का समाप्त होना।

ई-कामर्स प्रणाली के माध्यम से व्यापार एवं वाणिज्य को एक नई दिशा प्रदान हुई है। जहॉ एक और व्यापारिक गतिविधियों के अंतर्गत विभिन्न पक्षकारों को लाभ प्राप्त होता है। वही इस प्रणाली के अंतर्गत बहुत सी बाधाओं का भी सामना करना पड़ता है। ई-कामर्स के विकास में सबसे बड़ी बाधा भुगतान संबंधी है। वर्तमान में विभिन्न प्रकार की भुगतान विधियॉ इलेक्ट्रॉनिक माध्यम पर उपलब्ध है किन्तु धोखा धड़ी व हैंकिग से पूर्ण रूप से मुक्ति नहीं मिली है। ई-कामर्स टेलीफोन लाइनों पर आधारित है। अभी भी अनेक ऐसे क्षेत्र है जहॉ टेलीफोन सुविधा का अभाव है। बहुत से देशों में अभी भी डिजिटल सिग्नेचर व डिजिटल सर्टिफिकटों को मान्यता नहीं मिली है जिसके फलस्वरूप सूचनाओं की सत्यता की जाँच करना कठिन हो जाता है।

सुझाव - भूमण्डलीय व्यापार के विकास के फलस्वरूप अंतर्राष्ट्रीय सम्प्रेषण का महत्व दिन प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है किन्तु इसमें विभिन्न बाधाओं के फलस्वरूप पूर्ण विकास होना सम्भव हो रहा है। इन बाधाओं के संदर्भ में कुछ सुझाव के माध्यम से ई-कॉमर्स के विकास को संभव बनाया जा सकता है।

- इलेक्ट्रॉनिक भुगतान के संबंध में पूर्ण सर्तकता बरती जाए ताकि धोखाधड़ी एवं हैंकिग की सम्भावनाओं पर रोक लगे।
- उचित कानूनी ढांचे का निर्माण किया जाए।
- सभी क्षेत्रों में टेलीफोन सुविधा उपलब्ध कराई जाए ताकि प्रत्येक क्षेत्र में इस सुविधा का पूर्ण उपयोग किया जा सके।
- डिजिटल सिग्नेचर एवं डिजिटल सर्टिफिकटों के संदर्भ में कानूनी मान्यता प्रदान की जाए।
- सभी क्षेत्रों में इन्टरनेट सेवाऍ उपलब्ध कराई जाए क्योंकि यह कारोबार इन्टरनेट के द्वारा किया जाता है।
- ई-कॉमर्स के विकास के संदर्भ में उससे संबंधित विभिन्न पक्षकारो को समय-समय पर शिक्षा प्रदान की जाए।

निष्कर्ष - ई-कॉमर्स ने वाणिज्य एवं व्यापार के क्षेत्र में एक नए व्यावसायिक वातावरण का निर्माण किया है जिसके फलस्वरूप भविष्य में इसके विकास की शत प्रतिशत सम्भावना है। जीवन के विभिन्न क्षेत्रों से संबंधित व्यापारिक गतिविधियों जैसे कि वित्त, स्वास्थ्य, मनोरंजन, पर्यटन शिक्षा आदि में भी ई-कॉमर्स के द्वारा व्यापार का प्रचलन बढ़ता जा रहा है। चूंकि विश्व की लगभग समस्त छोटी बड़ी कम्पनियों को ई-कॉमर्स की क्षमता का एहसास हो गया है। अत: भूमण्डलीय व्यापार के अंतर्गत ई-कॉमर्स का भविष्य उज्जवल है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सक्सेना, डॉ. एस.सी. - व्यावसायिक संगठन एवं सम्प्रेषण, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा।
2. जैन, डॉ. एस.सी., अन्तर्राष्ट्रीय विपणन, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा।
3. जैन, डॉ. एस.सी., अन्तर्राष्ट्रीय विपणन प्रबन्ध, कैलाश पुस्तक सदन, भोपाल।
4. जैन डॉ. एस.सी., व्यावसायिक प्रबन्ध, कैलाश पुस्तक सदन, भोपाल।
5. Growth of E-commerce for Past and Present Potential - Dr. Ashok Narayan Patil, Research link Journal Nov. 2011.
6. Time Magazine's.
7. Magazines Business Today
8. Electronic Commerce : The New Business Platform for the Internet, Debra Cameron.

****

मुद्रा स्फीति तथा मुद्रा अपस्फीति

मनोज कुमार साहू *

प्रस्तावना – आधुनिक अर्थव्यवस्था में मुद्रा स्फीति एक नई समस्या बनी हुई है। विनिमय के लिये पत्र मुद्रा निर्गमन प्रयोग के बाद मुद्रा स्फीति व अपस्फीति की समस्या का जन्म हुआ। 20 वीं सदी में जर्मनी तथा 21 वीं सदी में जिम्बाम्बे की अर्थव्यवस्था में मुद्रा स्फीति का भयंकर रूप प्रदर्शित हुआ। आधुनिक काल में सभी देशों की अर्थव्यवस्था में मुद्रा स्फीति व अपस्फीति का नियंत्रण करते हुए विकास का मार्ग अपनानें पर जोर दिया जाता है।

मुद्रा स्फीति तथा मुद्रा अपस्फीति – मुद्रा के मूल्य में परिवर्तन दोनों दशाओं में हो सकता है जब मुल्य स्तर में वृद्धि होनें लगती है उसे मुद्रा प्रसार या मुद्रा स्फीति कहते है। इस दशा में मुद्रा के मूल्य में कमी आ जाती है जब मुल्य स्तर में कमी आनें लगती है उसे मुद्रा अपस्फीति कहा जाता है इस दशा में मुद्रा के मूल्य में वृद्धि हो जाती है।

अर्थव्यवस्था के मूल्य स्तर में होने वाले परिवर्तनों के दो मुख्य रूप मुद्रा स्फीति तथा मुद्रा अपस्फीति को अधोलिखित रूप से स्पष्ट किया जा रहा है।

मुद्रा स्फीति – अंग्रेजी भाषा का INFLATION फैलाव या वृद्धि को प्रदर्शित करता है। हम मूल्य स्तर के संबंध में इन्फ्लेशन का अर्थ कीमतों में होनें वाली लगातार वृद्धि के संदर्भ में अभिव्यक्त करते है।

मुद्रा स्फीति को बाजार में मुद्रा के फैलाव को नापनें वाली एक गणितीय युक्ति के रूप में जांना जाता है। सन् 2000 में एक वस्तु 10 रू. में आती थी यदि सन् 2015 में वह वस्तु 15 रू. में क्रय होती है तो हम मान सकते है कि मुद्रा स्फीति में 50 प्रतिशत की वृद्धि हुई।

मुद्रा स्फीति को परिभाषित करना कठिन है परन्तु इसे दो प्रकार से अध्ययन किया जा सकता है :

1. मुद्रा परिमाण पर आधारित परिभाषाएं – इसके अंतर्गत क्राउथर हाट्रे, फ्रीडमैंन आदि अर्थशास्त्री आते है। ये अर्थशास्त्री मुद्रा की पूर्ति में वृद्धि होनें के कारण मुद्रा स्फीति को मानते है।

हाट्रे के अनुसार मुद्रा के अत्यधिक निर्गमन होने वाली परिस्थिति मुद्रा स्फीति कहलाती है।

2. मांग के अतिरेक के आधार पर परिभाषाएँ – इसके अंतर्गत कीन्स, वीन्सन आदि अर्थशास्त्री आते है। इन्होनें मुद्रा स्फीति को प्रभावपूर्ण मांग में होने वाली वृद्धि के रूप में मांना है। इसको चालू पूर्ति से पूरा नहीं किया जा सकता है। कीन्स के अनुसार पूर्ण रोजगार की अवस्था में पहुंचनें के बाद पैदा होनें वाली कीमतों में होनें वाली वृद्धि है।

मुद्रा स्फीति के लक्षण – इस प्रकार मुद्रा स्फीति के लक्षणों को समझा जा सकता है –

1. यह एक दीर्घकालीन गतिशील प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया को अल्पकाल में नहीं समझा जा सकता है।
2. मुद्रा स्फीति एक प्रवृत्ति को व्यक्त करता है मुद्रा स्फीति एक अवस्था नहीं होती है।
3. मुद्रा स्फीति का जन्म मौद्रिक प्रसार के कारण होता है। यह एक मौद्रिक घटना होती है।
4. मुद्रा स्फीति एक आर्थिक घटना होती है। एक अर्थव्यवस्था में इसका जन्म होता है। अन्य आर्थिक क्रियाओं से प्रभावित होकर बलशाली हो जाती है।
5. मुद्रा स्फीति मांग में होने वाली वृद्धि के कारण भी हो सकती है या लागत में होने वाली वृद्धि के फलस्वरूप भी हो सकती है।

मुद्रा स्फीति के कारण – मुद्रा स्फीति को उत्पन्न करने के लिये तीन कारक हो सकते है –

1. मांग जन्य
2. लागत जन्य
3. पूर्ति जन्य

(1) मांग जन्य स्फीति – जब विभिन्न कारणों से किसी वस्तु की मांग बढ़ जाती है तो बाजार में वस्तु का मूल्य बढ़ जाता है। मांग जन्य स्फीति को प्रभावित करनें वाले कारण है .

(क) सार्वजनिक व्यय का बढ़ना – सार्वजनिक विकास के लिये सार्वजनिक व्ययों में की गई वृद्धि से लोगों की क्रय सकती बढ़ती है जिससे वस्तुओं की मांग बढ़ जाती है।

(ख) करारोपण में कमी – सरकार द्वारा कम कर लगाये जाने से लोगों की मौद्रिक आय बढ़ने के फलस्वरूप वस्तुओं के मांग में वृद्धि होती है।

(ग) कालाधन – कालेधन के कारण वस्तुओं की मांग बढ़ जाती है।

(घ) जनसंख्या वृद्धि – जनसंख्या वृद्धि के फलस्वरूप वस्तुओं की मांग में वृद्धि होनें व उत्पादन में अपेक्षित वृद्धि न होनें से स्फीति उत्पन्न होती है।

(ड) साख निर्माण – जब देश के बैंक अधिक साख देनें लगते है। इसके कारण लोगों के मौद्रिक आय में बृद्धि होती है।

(2) लागत जन्य या पूर्ति जन्य स्फीति 'लागत में वृद्धि करनें वाले अनेक कारणों को अग्रलिखित रूप से प्रदर्शित किया जा रहा है :'

(क) प्राकृतिक आपदाएँ – अकाल महामारी बाढ़ के कारण उत्पादन में कमी हो जाती है।

(ख) युद्ध जनित कारण – युद्ध कालीन परिस्थतियों में उपभोग्य वस्तुओं का उपयोग युद्ध सामग्री में होनें के कारण इनका उत्पादन कम होनें लगता है।

(ग) सरकार की व्यापार नीति – घरेलू उत्पादन को विदेश में निर्यात करनें की सरकारी नीति से देश में वस्तुओं की कमी हो जांना।

(घ) जमाखोरी की प्रवृति – कीमते बढ़नें की दशा में व्यापारी वस्तुओं का स्टॉक करना शुरू कर देते है। इससे पूर्ति में कमी हो जाती है।

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) महात्मा गाँधी शासकीय महाविद्यालय, खरसिया, जिला–रायगढ़ (छ.ग.) भारत

(ड.)पूर्ति का अभाव – उत्पादन के लिये आवश्यक कच्चा माल, श्रम उपकरण आदि के अभाव से उत्पादन में वृद्धि नहीं हो पाती है।

मुद्रा स्फीति के प्रभाव –

1. उत्पादन में अनिश्चितता के कारण से उत्पादन की मांग अनिश्चित हो जाती है। इससे संसाधनों का वितरण भी असंगत हो जाता है। पूंजी का उपयोग अल्पकालीन प्रयोग में होने लगता है। सांथ ही उत्पादकों के द्वारा गैर जरूरी उत्पादक के निवेश लाभप्रद होने से उनका निर्माण करना शुरू कर दिया जाता है।
2. अर्थव्यवस्था में कई क्षेत्रों में मंदी का असर दिखना शुरू हो जाता है। उत्पादन मूल्य के बढ़ने से उपभोक्ता केवल आवश्यक माल खरीदना शुरू कर देता है अन्य उद्योग बंद हो जाते है।
3. स्थिर आय वाले नौकरी पेषा संकट में पड़ जाते है। मुनाफाखोरों को लाभ मिलना शुरू हो जाता है। कालाबाजारी एवं भ्रष्टाचार बढ़ता है।

मुद्रा स्फीति को नियंत्रित करने के उपाय –

1. मौद्रिक उपाय – इसके अंतर्गत मुद्रा की मात्रा पर नियंत्रण, मुद्रा का विमुद्रीकरण तथा साख नियंत्रण संबंधी उपायों का सहारा लिया जा सकता है।

2. राजकोषीय उपाय – सरकार के द्वारा कुछ वित्तीय उपायों का प्रयोग किया जाता है। उदाहरण स्वरूप करों में वृद्धि करने, सार्वजनिक व्ययों में कमीं करने, बचतों को प्रोत्साहन करने संबंधी उपाय आते है।

3. अन्य उपाय – मुद्रा स्फीति को नियंत्रित करने के लिए औद्योगिक व कृषि उत्पादन में वृद्धि की जा सकती है। सरकार सट्टे बाजी पर प्रतिबंध लगा सकती है। आर्थिक उपायों के रूप में मूल्य नियंत्रण व राशनिंग किया जाता है।

मुद्रा स्फीति का मापन – मुद्रा स्फीति को प्रतिशत से मापा जाता है। किसी वस्तु या सेवा विशेष के मूल्य में एक निर्धारित अवधि में जितने प्रतिशत की वृद्धि होती है वही संबंधित मुद्रा स्फीति की दर है।

भारत की मुद्रा स्फीति को मापने के लिये मूल्य सूचकांकों का प्रयोग किया जाता है। मुद्रा स्फीति को मापने के लिये थोक मूल्य सूचकांक तथा औद्योगिक श्रमिक हेतु उपभोक्ता मूल्य सूचकांक का प्रयोग किया जाता है।

मुद्रा अपस्फीति – यह मुद्रा स्फीति की विपरीत स्थिति है। जब मुद्रा की पूर्ति मांग की अपेक्षा कम हो जाती है इससे वस्तुओं के मूल्य में कमी हो जाती है। क्राउधर ने मुद्रा अपस्फीति को वह अवस्था मांना है जिससे मुद्रा मूल्य बढ़ता है व कीमते गिरती है।

मुद्रा अपस्फीति के लक्षण –

1. वस्तुओं के उत्पादन में वृद्धि होंना जबकि मौद्रिक आय यथावत हो सकती है या मौद्रिक आय घटती हो।
2. वस्तुओं की पूर्ति मांग से अधिक हो जाती है।
3. यह प्रभावपूर्ण मांग में कमी होने के कारण कीमते गिरने की अवस्था होती है।

मुद्रा अपस्फीति के कारण –

1. मुद्रा की मात्रा में कमी– सरकार के द्वारा मुद्रा स्फीति को नियंत्रित करने के लिये चलन में मुद्रा कम करते जाने से मुद्रा की मात्रा मांग की पूर्ति लायक नहीं हो पाती है।

2. भारी करारोपण – सरकार की करारोपण नीति में भारी कर लगाये जाने से लोगों की मौद्रिक आय में कटौती हो जाती है।

3. बैंक द्वारा साख नियंत्रण – केन्द्रीय बैंक द्वारा साख नियंत्रण के लिये बैंक दर को बढ़ा दिये जाने से चलन में मुद्रा की कमी हो जाती है। उसके द्वारा साख नियंत्रण के लिये खुले बाजार की क्रियाओं भी अपनाये जाने से मुद्रा अपस्फीति होती है।

4. उत्पादन में बृद्धि – देश में उत्पादन की मात्रा अधिक बढ़ जाती है जबकि चलन में मुद्रा आनुपातिक रूप से बढ़ाई नहीं जाती है। तब मुद्रा अपस्फीति होती है।

मुद्रा अपस्फीति के प्रभाव –

1. आर्थिक प्रभाव – मुद्रा अपस्फीति के कारण विनियोजकों को अपने प्रतिभूतियों के मूल्यों में कमीं आने से हानि होती है। व्यापारी व उद्योगपति वर्ग को अपने उत्पादकों के लिये अपेक्षित मांग न होने से उत्पादन ठप करना पड़ता है। ऋण दाता वर्ग स्थिर आय के कारण फायदे में रहता है। परन्तु ऋणी को अधिक क्रय शक्ति को त्यागने के कारण नुकसांन होता है। सरकार की आय में कमी, बैंकिग, व्यापार में मंदी आती है।

2. सामाजिक प्रभाव – अपस्फीति काल में उत्पादन ठप होने से कारखाने बंद होते है। छंटनी के कारण पूंजी पति व मजदूरों में संघर्ष शुरू हो जाता है। उद्यमी निराश होते है व बेरोजगारी में वृद्धि हो जाती है।

मुद्रा अपस्फीति को रोकने के उपाय –

1. मुद्रा निर्गमन – सरकार द्वारा चलन में मुद्रा की मात्रा बढ़ाने के लिये अधिक मुद्रा का निर्गमन किया जा सकता है।

2. उदार साख नीति – केन्द्रीय बैंक द्वारा साख की उदार नीति अपनाये जाने से देश में साख सुविधाओं को विस्तार हो जाता है। कम ब्याज दर पर ऋण मिलने से व्यापारी व उपभोक्ता अधिक ऋण ले सकते है।

3. कर में कमी – सरकार द्वारा करों में कमीं करके नागरिकों की मौद्रिक आय बढ़ायी जा सकती है।

4. सरकारी व्ययों में वृद्धि – सार्वजनिक व्ययों में वृद्धि करके जनता को अधिक रोजगार दिया जा सकता है। फलस्वरूप जनता की मौद्रिक आय में वृद्धि हो जायेगी।

5. अतिरिक्त उत्पादन को नष्ट करना – कीमतों में वृद्धि करने के लिये अतिरिक्त उत्पादन नष्ट किया जाता है। अमेरिका द्वारा अपने गेहूं उत्पादों की कीमतों में वृद्धि के लिये समुद्र में डुबा दिया गया था।

मुद्रा स्फीति व मुद्रा अपस्फीति दोनों बुरे होते है – दोनों स्थिति समाज के लिये बुरे होते है। दोनों ही स्थितियों में समाज में आय का कुवितरण होता है जिससे उनका नैतिक स्तर गिरता है।

फिर भी मुद्रा स्फीति अर्थव्यवस्था के विकासशील होने की दशा में अच्छी मानी जाती है। क्योंकि अधिक विकास के लिये सरकार अधिक व्यय करती है। आय की तुलना में व्यय की अधिकता के कारण सरकार अधिक मुद्रा निर्गमित करती है। कम मात्रा में मुद्रा स्फीति विकासशील अवस्था में ठीक है। परंतु अधिक दर से मुद्रा स्फीति के कारण महंगाई बढ़ने से उपभोक्ता ठगे रह जाते है।

मुद्रा अपस्फीति मुद्रा स्फीति से भी बुरा माना जाता है। मुद्रा अपस्फीति काल में उत्पादक वर्ग बैंकिग व्यवसायी व सरकार सभी हानि की स्थिति में रहते है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. अर्थशास्त्र श्री वी.सी. सिन्हा
2. मुद्रा स्फीति विकीपिडिया। (hi.m.wikipedia.org/wiki)
3. प्रतियोगिता दर्पण विशेषांक

कैसा होगा भावी पर्यावरण ?

डॉ. अभय मुंगी *

प्रस्तावना – 'स्वस्थ्य मस्तिष्क, स्वस्थ्य शरीर एवं स्वस्थ्य समाज'

प्रकृति मनुष्य की सहचरी है मानव के साथ उसका प्राचीन काल से ही संबंध रहा है। वह प्रकृति की गोद में खेला व आंगन में पला है। इसलिए प्रकृति की सुंदरता अपने अनेक रूपों में मानव हृदय को उल्लासित करती है झुमते लहराते हरे पत्तों का संगीत, भौंरो की गुनगुन, पंछियों की मीठी तान व हिरणों एवं खरगोशों की लुकाछिपी उसका मन मोहती है। साहित्य, संगीत, कला की त्रिवेणी में गोता लगाता हुआ मनुष्य बड़े सुख चैन की जिंदगी बसर करता आया है।

एक दिन वह काला दिन आया जिस दिन लोगों ने देखा की पंछियों के झुंड के झुंड पंख फड़फडाते दम भर को इधर से उधर पड़े और परकटे पक्षी की तरह गिर गये उनकी चोंच खुली रह गई, झील की मछलियां मर गई सभी प्राणियों की आवाज एक आंर्तनाद में बदल गई। दुंधमुंहे बच्चे अपने माताओं की गोद में ही चिरनिद्रा में सो गये इनका प्रमुख कारण है प्रदूषित पर्यावरण।

सन् 1960-61 में प्रसिद्ध जीव विज्ञानी लेखिका राशेल कार्सन ने अपनी पुस्तक 'सायलेंट स्प्रिंग' में एक काल्पनिक शहर की अकाल मृत्यु का भयावह दृश्य खींचा था। जो आज प्रत्यक्ष रूप से दिखाई दे रहा है। इसी संदर्भ में आज का बढ़ता प्रदूषण, घटते वन, गंदी नदियां, बदबुहार हवा, दूषित अन्न, फैलता रेगिस्तान और लोभ की संस्कृति हमारे विकास की परिभाषा है।

हम 21वीं सदी में विकास के गीत गा रहे है किन्तु इस सदी को प्रारंभ हुवे कुछ ही वर्ष हुवे है और आने वाले वर्षो की आरती उतारने हेतु हमारे पास न तो षुद्ध घी बचा है और न ही महायज्ञ हेतु समिधा !

किसी कवि के षब्दों में –

'जो मंगल उपकरण कहाते है वे मनुजों के पास हुए क्यों,
विस्मय है विज्ञान विचारे पर अभिशाप हुए क्यों,
धरती चीख कराह रही है, दुर्बल शस्त्रों के मारो से
सभ्य जगत की तृप्ति नहीं अब भी जगव्यापी संहारों से।

इस सदी के अंत तक पर्यावरणीय समस्याओं और आवश्यकताओं के राक्षस का आभास ही हमारी चेतनाओं को शुन्य बना रहा है। पर्यावरण सुरक्षा और चिंतन का इतना प्रचार देश में हुआ कि हमें लगने लगा कि 21वीं सदी के प्रारंभ से ही हम स्वर्ग में होगे। किन्तु इस गति से तो नर्क भी नहीं मिलेगा क्योंकि सरंक्षण के लिए उठाये गये कदम नगण्य है। इस उपेक्षा के कारण शायर मजाज़ ने पर्यावरण की ओर से लिखा है –

'रोऐ न अभी अहलेनजर हाल पे मेरे ।।
होना है अभी मुझको खराब और भी ज्यादा ।।'

सन् 2020 की हमारी आवश्यकता कितनी होगी इसे भुलकर सरकार सिर्फ आंकड़ों की ओर ध्यान दे रही है। कम्प्यूटर न तो पेड उगाएगा और ना ही धान उगलेगा। उल्टे यह हमारे कारनामों को अगली, पीढ़ी के लिए सुरक्षित रखेगा। हमारे शैक्षणिक, प्रशासनिक और सामाजिक चिंतन नहीं बदला तो 21वीं सदी के अगले कुछ वर्ष भारत जैसे रामराजी देश के लिए आत्मघाती होगा। आज पशुओं को चारे की कमी है तो मनुष्य को अन्न की कमी का सामना करना पड रहा है। इसके साथ ही ऊर्जा, जलाऊ लकड़ी, डीजल, कोयला, मिट्टी का तेल, गैस, गोबर गैस की कमी हो रही है, जल का तो हाल बहुत ही बुरा है।

भारत में प्रतिवर्ष 400 मीलियन हेक्टेयर मीटर तक पानी गिरता है अर्थात 100 करोड एकड जमीन को एक मीटर तक पानी से भर दो। किन्तु उसमें से 170 एम.एच.एम. समुद्र में चला जाता है, 80 एम.एच.एम. वाष्पीकरण हो जाता है, 110 एम.एच.एम. जमीन सोख लेती है, 40 एम.एच.एम. नदियों, तालाब, झील, कुंओ व भूजल में मिलता है अर्थात 40/400 एम.एच.एम. ही प्रयोग के लिए बचता है। पानी की कमी व बीमारी के कारण प्रत्येक वर्ष विश्व में साठ लाख बच्चे और भारत में 15 लाख बच्चे 5 वर्ष की आयु के पूर्व ही मर जाते है।

इस पानी की कमी की पूर्ति हम जमीन के नीचे का पानी निकालकर करते जा रहे है। इस कारण मेक्सिको सिटी प्रत्येक वर्ष 49 से.मी. नीचे खिसकती जा रही है। क्योंकि नीचे का पानी निकाल लिया गया है, और नीचे काफी जगह खाली हो गई है। इसके लिए जरूरी है अधिक पेड़ों का लगाना, क्योंकि इससे पानी तीन गुना अधिक तेजी से संचय होगा, वाष्पीकरण कम होगा, संचय किये गये पानी का परिमाण, बढ़ेगा और उपयोग के लिए पानी रूकेगा।

इस संबंध में वृक्षों का महत्व समझाते हुवे डॉ.एन.के. नीलोसे पूर्व प्राचार्य होलकर विज्ञान महाविद्यालय ने कहा है कि –

10 कुंओं के बराबर एक बावड़ी
10 बावड़ी के बराबर एक तालाब
10 तालाब के बराबर एक लड़का
10 लड़कों के बराबर एक वृक्ष होता है

इस संबंध में उन्होंने एक बात और कहीं कि Refuse का अर्थ है कचरा यदि इसे आज के संदर्भ में देखे तो इसमें से F हटाकर इसे Reuse अर्थात पुन: प्रयोग करके देखे यानि कचरे को खाद आदि बनाने में पुन: प्रयोग करने से प्रदूषण को कुछ हद तक कम किया जा सकता है।

जब तक जंगलों को आय का मुल साधन माना जायेगा वृक्षों की बेरहमी से कटाई होती रहेगी, तो वह दिन दूर नहीं जब हम पानी के लिए तरस कर सूने आकाश की ओर नजरे लगाए मेघों से प्रार्थना करेंगे। जब मनुष्य का अत्याचार हद से बार हो जायेगा तब प्रकृति व मनुष्य के बीच एक भयानक युद्ध हो सकता है जिसमें निश्चित ही प्रकृति की विजय होगी, यदि ऐसा हुआ तो दूसरा महाभारत होगा।

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय स्नातक महाविद्यालय, बड़वाह (म.प्र.) भारत

पर्यावरण की चर्चा करना जितना आसान है क्रियान्वयन करना उतना ही मुश्किल है। अत: सभी प्रलय की मौन प्रतिक्षा कर रहे है। क्या 15-20 वर्षो बाद भारत का भविष्य पर्यावरणीय समस्याओं के कारण विपदाओं का भंडार होगा यह एक विचारणीय प्रश्न है ?

आज हम अच्छी तरह पहचान गए है कि प्रगति की अंधी दौड़ में यदि हम जापान और अमेरिका की नकल करेगे तो पछताना पडेगा। अत: हमें विकास की उन मंजिलों को चुनना है जो हरी-भरी पग डंडीयों, खुली हवा, नाचते मोर, कुकती कोयलों, ओर कजरी की तानों के साथ चलती हो। हमें तरक्की की उस पट्टी को पढ़ना होगा जिसमें कुदरत का गला दबाने का नहीं बल्कि उसे पुचकार के उसके माथे का पसीना पोछने का गुर बताया गया हो। निराशा के निविड़ अंधकार में हमें आशा की झिलमिलाती किरणों का सदाभरोसा करना चाहिये व हममें आत्मविश्वास होना चाहिए। वह दिन दूर नहीं जब हम अपने ही सपनों को साकार होते देखेंगे।

"Even in the Darkness, the light
Dawn's for those who belive'

हमारा लक्ष्य हर आंख में विकास की चमक होना चाहिए और समय रहते संभल जाना चाहिये वरना वक्त की धूल में कदमों के निशा भी ढुंढना मुश्किल हो जायेंगे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. पर्यावरण अध्ययन - एस.एम. सक्सेना एवं सीमा मोहन।
2. पर्यावरण चेतना, म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी।
3. जन्तु विज्ञान, एस.एम. सक्सेना।
4. पर्यावरण रसायन, श्रीकांत केशव पंडित।
5. विभिन्न वेबसाईड।
6. विभिन्न पत्र-पत्रिकाऐं।

****

नैतिक मूल्य - प्रभाव एक अध्ययन

डॉ. गणेश प्रसाद दावरे *

प्रस्तावना – भारत के भूतपूर्व राष्ट्रपति डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम साहब ने अपने भाषण में यह वेदना व्यक्त की थी कि हमें अपने युवाओं को पढ़ाई के साथ-साथ नैतिक शिक्षा भी दी जानी चाहिए ताकि ये युवा वर्ग अपने परिवार, समाज और राष्ट्र के महत्व को समझ सके। क्योंकि आज का युवा सिर्फ और सिर्फ स्वयं के बारे में ही सोच रहा है। ऐसा क्यों हो रहा है यदि इस बात की गहराई में जायेंगे तो पता लगेगा कि ये संस्कार माता-पिता से ही मिले हैं।

आज के समय में माता-पिता द्वारा दिये जा रहे संस्कार –

1) 2.5 (ढ़ाई) वर्ष से 3 वर्ष तक की आयु के शिशु को प्ले स्कूल में भर्ती करना साथ उसकी ट्यूशन भी शुरू करवा देना।
2) एल.के.जी. से ही अंग्रेजी माध्यम के स्कूल में प्रवेश दिलवाना।
3) प्राथमिक, माध्यमिक एवं हाई स्कूल की शिक्षा के पश्चात् कक्षा 11वीं हेतु विषय चयन में भी माता-पिता अपनी मर्जी के विषय को प्राथमिकता देते हैं। बच्चों पर दबाव बनाते हैं कि केरियर के लिये यही विषय उपयुक्त होगा।
4) कक्षा 12वीं उत्तीर्ण करने के पश्चात् पी.एम.टी./पी.ई.टी./पी.ए.टी./सी.ए./सी.एस. आदि परीक्षा की तैयारी हेतु कोचिंग संस्थाओं का सहारा लेना।
5) कई माता-पिता कक्षा 11वीं से ही पी.एम.टी./पी.ई.टी./पी.ए.टी./सी.ए./सी.एस. आदि परीक्षा की तैयारी हेतु कोचिंग संस्थाओं में प्रवेश दिलवा देते हैं।
6) प्ले स्कूल से पी.एम.टी./पी.ई.टी./पी.ए.टी./सी.ए./सी.एस. आदि परीक्षा की तैयारी में कहीं भी खेल मैदान, सांस्कृतिक गतिविधियाँ, सामाजिक गतिविधियाँ, पारिवारिक मेंलजोल का जिक्र नहीं हुआ। क्योंकि माता-पिता इन सभी गतिविधियों से बच्चों को दूर रखते हैं। कहते हैं बच्चा बिगड़ जायेगा, समय खराब होगा। परिणामत: बच्चा अच्छी शिक्षा प्राप्त कर या तो विदेश चला जाता है या अपने ही देश में रोजगार प्राप्त कर लीव इन रिलेशनशिप को फालो करता है। माता-पिता, परिवार, समाज और राष्ट्र के बारे में उसे संस्कार ही नहीं दिये गये हैं। अत: वह इन सभी के बारे में कोई सकारात्मक सोच भी नहीं रखता है। हम अपने बच्चों को अच्छे जॉब पाने के चक्कर में उसका भविष्य दॉव पर लगा देते हैं और माता-पिता अपनी वृद्धावस्था में बिना पुत्र, पुत्र-वधु के अकेले ही रहते हैं।

नैतिक चरित्र के उत्थान हेतु उठाये जाने वाले कदमों से बच्चों के मन मस्तिष्क पर पड़ने वाले प्रभाव –

1) घर बहुत बड़े संस्कार केन्द्र भी होते हैं। अत: बच्चों को बचपन से ही परिवार के सभी सदस्यों के साथ मधुर व्यवहार, शालीनता का प्रयोग करने की सीख देनी चाहिए जिससे बच्चों में मानवीय सोच का विकास हो सके।
2) घर में दादा-दादी या बुजुर्ग हो तो उनसे दिन में एक बार बच्चे बातचीत करें, उनके स्वास्थ्य के बारे में पूछें एवं उन्हें समय पर खाना देवें जिससे बुजुर्गों के प्रति आदर का गुण विकसित हो।
3) अतिथि सत्कार के महत्व को भी समझायें ताकि यही बच्चे आगे चलकर अतिथियों का सम्मान करेगें तथा संयुक्त परिवार प्रणाली को बढ़ावा देंगे।
4) माता-पिता को बच्चों की उपस्थिति में व्यर्थ का वाद-विवाद एवं झगड़ा नहीं करना चाहिए जिससे इन बच्चों के मन मस्तिष्क पर कुप्रभाव न पड़े और ये बच्चे आगे चलकर प्रेम, करूणा, आदर्श का मार्ग अपनाकर समाज में उदाहरण प्रस्तुत कर सके।
5) लड़कों को समय पर घर आने व जाने की समझाइश देवें तथा लड़कियों से बातचीत करते समय शालीन, मधुर व्यवहार एवं अनुशासन में रहकर बातचीत की सीख देवें ताकि लड़कों में लड़कियों के प्रति सकारात्मक भाव उत्पन्न रहें और आगे बलात्कार जैसी घटनाएँ न हों।
6) घर में सभी त्यौहारों को मनावें। सभी धर्मों की प्रमुख पुस्तकों को पढ़ें एवं बच्चों को पढ़ने हेतु प्रोत्साहित करें। सर्वधर्म समभाव के बारे में बच्चों को संस्कार देवें ताकि सभी धार्मिक पर्वों पर शान्ति बनी रहे, पुलिस बल की जरूरत ही न हो, चारों ओर प्रसन्नता का वातावरण निर्मित हो सके।
7) सामाजिक गतिविधियों, सांस्कृतिक गतिविधियों में बच्चों को हिस्सा लेने हेतु प्रेरित करें जिससे बच्चे निर्भीक होकर आगे इन्हीं गतिविधियों का संचालन कर सके।
8) महापुरूषों की जीवनी को पढ़ें एवं बच्चों को पढ़ने हेतु प्रेरित करे ताकि पूरे विश्व में एक बार पुन: भारत की गौरवशाली परम्परा को पुनर्जीवित किया जा सके।
9) धैर्य, साहस, करूणा, ममता, दया, सहयोग, समभाव, प्रेम, परोपकार, आदर्श आदि से संबंधित कहानियों को सुनावें एवं इसे जीवन में अपनाने हेतु बच्चों को प्रेरित करें ताकि ये सारे सदगुण युवावस्था में क्रियान्वित हो सके।
10) भारत की स्वतंत्रता की जानकारी देवें एवं हम क्यों अंग्रेजों के गुलाम हुवे इसकी सम्पूर्ण जानकारी बच्चों को देवें ताकि हम आपस में लड़ना-झगड़ना बंद कर सहयोगात्मक रूख को अपना सकें।
11) भगवद् गीता जिसको पढ़ने से बच्चों का सर्वांगीण विकास संभव है। इसमें निर्भीकता, मन की पवित्रता, योग ज्ञान में परिपक्वता, देने की

* प्राध्यापक (वाणिज्य) जवाहर लाल नेहरू शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वाह (म.प्र.) भारत

प्रवृत्ति, स्वयं पर नियंत्रण, चुनौतियों का सामना करने शक्ति, घृणारहित, गर्वरहित स्वभाव, शुद्धता, दृढ़ता, ऊर्जावान-क्षमाशील व्यक्तित्व, विनम्रता, सभ्यता, निष्पक्षकता का भाव, सभी के प्रति क्षमा का भाव, छल कपट रहित व्यवहार, शान्ति प्रियता, उत्सर्ग की अभिलाषा, क्रोध का अभाव, सत्यनिष्ठा, स्पष्टवादिता, शास्त्रों का अध्ययन, त्याग आदि के बारे में घटना प्रधान व्याख्या की गई है जिसे युवावर्ग अपने जीवन में उतार एक आदर्श समाज की एवं सशक्त राष्ट्र की स्थापना करने में अपना योगदान दे सकते हैं।

12) घर में माता-पिता द्वारा प्रतिदिन धार्मिक ग्रंथ, वाल्मीकि रामायण, बच्चों को सुनाने पर निम्नलिखित मानवीय मूल्यों का विकास संभव हो सकता है, सद्गुण, सामर्थ्य, धर्म में आस्था, कृतज्ञता का भाव, सत्यवादी, सशक्त समर्पण का भाव, करूणाभाव, योग्य और प्रसन्नचित, स्वयं को पूर्ण रूप से जानना, क्रोध पर काबू पाना, शानदार व्यक्तित्व, जो दूसरों से जलता न हो आदि।

13) ऐसे ही गुरूग्रंथ साहब का नियमित पाठ करना, धार्मिक ग्रंथ बाइबिल को परिवार के सभी सदस्यों के द्वारा न केवल पढ़ना बल्कि उस पर चिंतन और मनन करना, धार्मिक ग्रंथ कुरआन बहुत ही अदब एवं आदर के साथ पढ़ना एवं कुरआन की अच्छी बातों को अपने जीवन में उतारते हुए दूसरों को भी मार्गदर्शन देना।

14) संगठन में शक्ति है इसके अधिक से अधिक उदाहरण देवें।

15) सभी बड़ों के प्रति सम्मान, आदरभाव रखें एवं छोटों को सहयोग प्रदान करें, बच्चों को सिखावें। मर्यादित, सात्विक, अनुशासित जीवन जीयें।

16) खेल मैदान में जावें एवं बच्चों की शारीरिक मजबूती के लिये खेल हेतु प्रेरित करे जिससे सशक्त भारत की परिकल्पना को साकार कर सके।

17) भारत में मनाये जाने वाले सभी धार्मिक त्यौहारों की जानकारी देवें, दीपावली, ईद, मुहर्रम, क्रिसमस, गुरू नानक जयंती, महावीर जयंती, बुद्ध जयंती आदि के बारे में धार्मिक पुस्तकों को रखें एवं बच्चों को अधिक से अधिक जानकारी देवें ताकि साम्प्रदायिक सौहादर्य बना रहे।

18) मातृभूमि से लगाव रखें एवं बच्चों को प्रेरित करे। जिस स्थान पर रहकर हवा, पानी, भोजन, कपड़े ग्रहण किये इसे लौटाना भी है, पर्यावरण को स्वच्छ रखना है, जितना प्राप्त किया है उससे अधिक लौटाना है जैसे भावों को बच्चों में विकसित करे। **'जननी जन्म भूमिश्च: स्वर्गादपि गरियसि'** के गरिमामयी महत्व को बच्चों को समझावें।

यदि उपर्युक्त बातों पर माता-पिता, परिवार अपने बच्चों की परवरिश के समय ध्यान देवें तो बच्चे संस्कारवान बनकर अपने परिवार, समाज एवं मजबूत राष्ट्र की परिकल्पना में सहारात्मक योगदान प्रदान करेंगे और विश्व में **'जियो और जीने दो'** के मन्त्र को प्रभावी बनायेंगे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. नैतिक मूल्य और भाषा, म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी।
2. मनोरमा ईयर बुक, 2011, 2012, 2013, 2014, 2015
3. प्रतियोगिता दर्पण मासिक पत्रिका।
4. दैनिक समाचार पत्र - नईदुनिया, दैनिक भास्कर।

****

The Alternatives To Economic Planning

Dr. R.P. Saharia *

Abstract - With the voices being raised with regard to role of planning commission the author makes a brief review of the role of the planning commission and also looks at the role of the UN. The author looks at the possibilities of alternatives to economic planning. He suggests relative economics as against existing economic planning to enable a broader framework for development. He proposes a frame work with six thrust areas so that the planning for development is holistic and it is able to integrate a much broader framework. He suggests that more variables should be taken up in the planning process.

Introduction - Economic planning is the tool to allocate resources and enable the direction of the development of a country. It is supposed to be the body to enable the country to prepare a clear vision document for a very long period. Economic planning is supposed to prepare plans for raising economic status, well being and overall happiness of the people. There are many bodies involved in the planning process. Some of these bodies include the Planning commission for our country and the United Nations for the world. These bodies are trying to prepare vision, objectives and roadmap for the development.

Economic Planning In India - Recently the Prime Minister of India Mr. Narendra Modi announced a decision to abolish the Planning commission. Economic planning started in India in 1938 when Meghnad Shah prepared an economic plan. Various plans were prepared before independence of India including the Bombay Plan. The Planning commission took its present shape on 23/3/50, when it was set up as a central agency directly reporting to the Prime Minister. The planning commission is an arm of the union government and assists the government in preparing plans for the development of the country. First five year plan was launched in 1951 and subsequently five years plans have been prepared by the planning commission. Due to some unavoidable circumstances, one year plans were prepared between 1966-69 and thus we had three one year plans also in between 3rd and 4th five year plans. The present Prime Minister Mr. Narendra Modi has announced that a more dynamic body will be created, which will help in preparing a better planning system.

Since from the beginning, the planning commission has been undertaking following functions:-

a. Preparing detailed plan based on the assessment of the resources and capabilities of the country and preparing an action plan for achieving the vision of the country.
b. Preparing a comprehensive assessment of the economic progress of the country and preparing a plan along with required schemes for proper review and execution of the plans.
c. To assess the shortcomings in implementation of plans and to prepare action plans for improving the implementation machinery of the country.

Over a period of time, the planning commission has performed its role of preparing economic plans. Different ideologies have shaped the priorities that govern the planning commission. The first prime minister Mr. Jawahar Lal Nehru took this body towards a centralized planning with heavy emphasis on socialistic form of governance. The planning commission tried to curtail the role of the private sector and tried to push the public sector into almost every sphere of activity. The planning commission took reversals of its decisions in 80s and started preparing plans with substantial roles for the private sector. The policy reversals have been compulsions for the planning commission, however, these policy reversals have cost a lot to the nation as a whole. The ideological differences of individuals have created sharp differences between the planning vision and perspectives of different plans prepared by the planning commission. The planning commission kept emphasizing that all its plans are primarily for the development of the poor, however, the real poor people continued to reel under abject poverty and rural India still faces shortage of resources for development. Due to failures of the plans, the planning commission has been repeatedly criticized by researchers and scholars, **primarily for the following reasons:**

a. Inability of the plans to allocate resources as per the priorities,
b. Inability to create proper framework for employment generation, revival .of cottage industries, and revival of local industries.
c. Inability in creating an entrepreneurial work culture,
d. Allocating far more resources towards un-productive sectors.

* **H.O.D (Economics) Govt. J.M.P. College, Takhatpur, Bilaspur (C.G.) INDIA**

e. Allocating far less resources to infrastructure development, basic amenities and fundamental issues.

Over a period of time, the planning commission has lost its role as the body which creates vision and perspective for the nation. However, the planning commission in India neither created a long term vision document, nor made any radical shifts in the planning practices prevailing in the country. There has been repeated demands for a more decentralized system of planning in our country.

Planning For The World - The United Nations is the main international body dealing with planning issues for the world. Its role has changed from peacekeeping measures to developmental issues to climate issues. With the change in roles, its functions and structure have also changed. It was established in 1945 but unlike planning commission, it has undergone many changes over a period of time. A large number of international institutions and bodies have been set up by the UN in order to focus on emerging issues and to prepare detailed planning relating to specific sector. Through these initiatives, the UN has been able to play its role as a planner for the world in spite of changing circumstances and changing objectives. For example, in 1965 UNDP was established, which focused on the developmental issues and later on UNDG was started which grouped all developmental institutions. Many of the initiatives of the UN didn't last due to changing political dynamics. For example, in 1970s Negotiations on International Economic Order was started to promote North-South Dialogue.

There has been a demand to make UN more democratic institution so that it represents the world and not just the few countries, which have been dominating this .institution for almost seven decades. Various smaller bodies have been created like **G77, G4, G20** to promote the interests of groups of the countries. However, Indian Prime Minister Mr. Narendra Modi has called for removal of all such bodies and promotion of a single international body to promote development of the people at large. With the changes in priorities, the international institutions are also changing. There is now a proposal to start UN Parliamentary Assembly and UN Environment Organization. All development organizations including UNDP have now been grouped in United Nations Development Group. In 1988 IPCC was set up, which supports UNFCCC the treaty on climate change. IPCC has produced five assessment reports so far and climate issues are becoming more and more important.

Alternatives To Economic Planning - Economic planning focuses only on economic aspects of planning. Limiting to economic aspects has many negative consequences which include ignoring the traditions, history, culture, prevailing practices and psychological and social aspects of development. Therefore any developmental planning should include not only economic aspects, but other aspects also. There is a need of changing the framework for planning purpose also. These changes will enable emergence of a better planning process, which will enable sustainable development and a more comprehensive approach to development. The author proposes following framework for planning:-

- Inclusion of more variables in the planning process.
- Focus on overall well being and happiness of people.
- Focus on raising capabilities and skills of people.
- Focus on life-style and life skills.
- Focus on preserving traditional knowledge and practices and
- Focus on strengthening existing grass root institutions.

We shall discuss these points below:

Inclusion of more variables in the planning process - Economic planning has given excessive reliance on income related variables like GDP. While there are many other variables, which have been ignored. If we look at variables (for example : student enrollment, student dropout rate), we find that these variables, which are relating to overall development of people, are ignored in the existing planning process. We should broaden the framework of planning and should include other important factors, which indicate the dimensions of development.

Focus on overall well being and happiness of people - All the development activities should ultimately result in bliss and happiness for the people. Enabling people to lead a more pleasurable and satisfying life should be the goal of all policy makers. However, the current planning practices and initiatives ignore the overall happiness and related issues. Therefore many such practices are encouraged which are contrary to overall well being and happiness. There is a need to shift the focus from generating income to generating happiness and good life.

Focus on raising capabilities and skills of people - Development of people will enable us to solve present and emerging problems. Development of people will require shift in the focus towards people's development. The governments are ready to invest money in arms, ammunition, space research or other such issues, however, they are not allocating resources for training and development of people.

Focus on life-style and life skills - The capitalists countries have developed on the basis of raising consumption and raising insatiable appetite of common people and they consider this as the only route for development. They are promoting this as the ideal form of living in developing countries also. However, it has been found that the life style and life skills practiced in developed countries is the responsible factor for most of the present day problems including the climate change issues. There is a need to radically shift the approach and promote a healthier life style and a positive approach to life.

Focus on preserving traditional knowledge and practices - While modern science and technological progress is enabling us to adopt modern products, technologies and modern practices, we are losing our traditional practices, which were very nature friendly and enabled us to live peacefully with the nature. The modern products and practices are harmful to environment and cause damage to the eco-system, but the traditional knowledge

and practices were based on nature and therefore they were very good for both environment andforhuman beings. There is a need to preserve and protect our traditional knowledge and practices. There is a need to create institutions to document and preserve traditional knowledge and practices before they become completely extinct. Along with traditional knowledge and practices, we also have to protect biodiversity, wild life and natural eco-systems.

Focus on strengthening existing grass root institutions - With the development of modern large scale organizations and institutions, the traditional institutions and organizations are finding it difficult to survive. They are giving way to the new institutions. However, the traditional institutions carry a rich treasure of knowledge, practices and systems which will disappear with these institutions also. If we can strengthen these institutions, we can preserve and protect our eco-friendly systems and this will help us in raising ourvoice in protecting and promoting our environment.

On the basis of the above six dimensions, we can promote a broader developmental framework. There is a need to include social and psychological dimensions in developmental planning. Inability to broaden the framework of our planning will result in lopsided development, which will not be sustainable. There are many alternatives to the existing economic planning, like green economy, Gandhian Economics, Vinoba Bhave's Development Model etc. We shall briefly discuss the possibilities of including relative economics as an alternative to existing economic planning.

Relative economics - the planning framework for sustainable development - Relative economics is a planning framework, which includes many variables ignored by the traditional economic planning. These variables will enable us to promote sustainable development and a wholistic approach to development. Broadly speaking the concept of relative economics includes the following variables of development: -

a. Moral and ethical foundations.
b. Protecting biodiversity and ecology.
c. Tolerance for differences of ideas and ideologies.
d. Social harmony and compassion.
e. Integration of life skills for overall balanced development and enlightenment.

Relative economics as against the existing economic planning should help in development of a proper framework for overall planning and development of nations.

Conclusion - The present voices against existing planning bodies should be taken as an indication of need of a more diversified and broad based approach to development. The repeated failures of the planning bodies in raising a clear vision and in preparing *a* blueprint of action plan should force us to re-evaluate our existing framework of planning and should enable us to restructure our developmental path. Collective initiatives by governments will reduce poverty and raise overall well being of the people.

References :-

1. Jain, Trilok Kumar, " Sustainability and Inclusive Growth: the role of social enterprises" Proficient Journal of Management, May 2014, p. 15-27.
2. Jain, Trilok Kumar: "Towards A Sustainable Business model" in the JKLU-COM-2013: Conference on Management. February 22- 23th2013.\
3. Jain T.K. and Sundeep Kumar, "Towards a sustainable Business Model",the Economic Challenger vol. 15(58) January- March. 2013.
4. JainT.K. and Sundeep Kumar, "Development paradigms and Policies on Cross Roads" the Economic Challenger vol. 15(60) July to September 2013.
5. Jain T.K. and Sundeep Kumar, in edited book :Changing paradigms of Rural management "Innovation in Rural marketing" Editor Dr. Ramesh kumarmiryala Zenon Academic Publishin.Vol (I) May 2013.

****

अनुसूचित जातियों के आर्थिक उत्थान में स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना की भूमिका (बिलासपुर जिले के कोटा विकास खण्ड के विशेष संदर्भ में)

मोहन लाल पटेल *

Abstract - Swarnajayanti Grameen Swarojgari Yojana (SGSY) scheme is partially effective in reducing poverty of the rural households. Here, a few expansions in the National Rural Employment Guarantee scheme play the supportive role. Taking the help of Natural Experiment, it is also proved that the microfinance program is also able to reduce the vulnerability of the rural participating households. This is done through constructing vulnerability index. The social factor, i.e., enhancement of empowerment of the participating Self-Help Group (SHG) members, all of whom are women, under SGSY scheme between the concerned time period and size of microcredit taken for income generating activities, plays a significant role in reducing the vulnerability of the participating households under this microfinance program.

Keywords- Swarnajayanti Gram Swarojgar Yojana (SGSY), Self Help Group SHG), Microfinance, Regional Rural Bank (RRB), Poverty.

प्रस्तावना – भारत में स्वतंत्रता के बाद 6 दशक उपरान्त अभी भी करोड़ों व्यक्ति निर्धनता रेखा से नीचे जीवन यापन करते हैं। योजना आयोग के अनुसार वर्ष 1909–2010 में 37.2% जनसंख्या निर्धनता रेखा के नीचे रह रही थी। वर्ष 2011–12 में यह अनुपात घटकर 29.8% हो गया, फिर भी ग्रामीण क्षेत्र में गरीबी रेखा के नीचे जीवन–यापन करने वालों की संख्या 22.09 करोड़ थी। इसमें अधिकांशत: कृषि मजदूर, लघु एवं सीमांत कृषक तथा गैर कृषि गतिविधियों में कार्यरत दिहाड़ी कामगार हैं जोकि सामाजिक और वित्तीय बहिष्करण से पीड़ित हैं। तदानुसार सरकार की नीतियाँ इन वर्गों के आर्थिक और सामाजिक उत्थान की ओर लगाई गई हैं ताकि प्रत्येक को उत्थान के लाभ लेने में समर्थ बनाया जा सके और समाज के हासिए पर बैठे वर्गों को मुख्यधारा में लाया जा सके।

अध्ययन के उद्देश्य – प्रस्तुत शोध का मुख्य उद्देश्य अनुसूचित जातियों के आर्थिक उत्थान में स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना के भूमिका का अध्ययन करना है।

परिकल्पना – प्रस्तुत अध्ययन हेतु निम्न शून्य परिकल्पनाओं की जांच की जाएगी –

1. स्वर्ण जयंती ग्रामस्वरोजगार योजना का अनुसूचित जातियों के आर्थिक प्रगति में योगदान नहीं के बराबर है।
2. स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना के अंतर्गत अनुसूचित जातियों के समुदाय को विशेष प्राथमिकता नहीं प्राप्त हो रही है।
3. इस योजना के अंतर्गत वर्तमान प्रशासनिक व्यवस्था, कार्य कुशलता एवं बैंकों का सहयोग अपर्याप्त है।

शोध प्रविधि – बिलासपुर जिले के कोटा विकास खण्ड के अंतर्गत कुल 81 ग्राम पंचायतों में से 25 ग्राम पंचायतों (आमागोहन, भैंसाझार, बिल्लीबंद, चपोरा, छतौना, झाडबछाली, धनरास, धूमा, जोगीपुर, कलारतराई, कलमीटार, करगीकला, करगीखुर्द, करहीकछार, करका, केन्दा, खोंगसरा, लिटिया, लूफा, नागचुंआ, पटैता, शिवतराई सिलपहरी, तेन्दुआ और उपका) का चयन दैव निदर्शन पद्धति से किया गया तथा चयनित ग्राम पंचायतों के योजना द्धारा लाभान्वित अनुसूचित जातियों के 45 हितग्राहियों (स्वरोजगारियों) एवं 45 गैर–हितग्राही परिवारों को अध्ययन में सम्मिलित किया गया है।

अध्ययन की सीमाएं – प्रस्तुत अध्ययन में बिलासपुर जिले के कोटा विकास खण्ड के विभिन्न ग्राम पंचायतों में अनुसूचित जातियों के जनसंख्या को ध्यान में रखकर कोटा विकास खण्ड का चयन किया गया है। शोध प्रबंध को अनुसूचित जाति समुदाय पर केन्द्रित किया गया है। अध्ययन हेतु 2007–08 से 2011–12 के आंकड़ों तथा जानकारियों का प्रयोग किया गया है।

विश्लेषण एवं व्याख्या –

1. योजना का अनुसूचित जातियों पर प्रभाव पर स्पष्ट होता है कि स्वर्ण जयन्ती ग्राम स्वरोजगार योजना के अन्तर्गत अनुसूचित जातियों के 0–6 हजार आय स्तर के 12 हितग्राही (26.67%), 6–11 हजार आय स्तर के 28 हितग्राही (62.22%), 11–15 हजार आय स्तर के 3 हितग्राही (06.67%), 21–40 हजार आय स्तर के 02 हितग्राही (04.44%) लाभांवित हुए हैं। योजना से लाभ लेने के पश्चात् 0–6 हजार आय स्तर के 12 हितग्राहियों के आय स्तर में वृद्धि पाया गया, जिनमें से 04 हितग्राही 15–21 हजार आय स्तर पर और 8 हितग्राही 21–40 हजार आय स्तर पर पहुँच गये। इसी प्रकार 6–11 हजार आय स्तर के 28 हितग्राहियों में से 21–40 आय स्तर पर 26 हितग्राही पहुँच गये वहीं 2 हितग्राहियों के आय स्तर में कोई परिवर्तन नहीं पाया गया। 11–15 हजार आय स्तर के सभी 03 हितग्राही 21–40 हजार आय स्तर पर प्रतिस्थापित हो गये। 21–40 हजार आय स्तर के 01 हितग्राही आय स्तर में वृद्धि पाया गया तथा 01 हितग्राही का आय स्तर अपरिवर्तनीय रहा। इस प्रकार कुल 93.33% योजना के फलस्वरूप हितग्राहियों के आय स्तर में वृद्धि पाया गया।

* शोधार्थी, डॉ. सी. वी. रमन विश्वविद्यालय, कार्गी रोड़, कोटा, बिलासपुर (छ.ग) भारत

वहीं जिसने स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना का लाभ नहीं लिया (गैर-हितग्राही) अनुसूचित जाति परिवारों के आय स्तर में वृद्धि दर्ज की गयी, 0-6000 आय स्तर के 14 गैर हितग्राहियों (31.11%) के आय स्तर में वृद्धि पायी गयी जिसमें से 7 गैर हितग्राही 6-11 हजार आय स्तर पर, 4 गैर हितग्राही 11-15 हजार आय स्तर पर, 03 गैर हितग्राही 15-21 हजार आय स्तर पर पहुँच गये और 6-11 हजार आय स्तर के 27 गैर हितग्राहियों (60.00%) के आय स्तर में वृद्धि पायी गयी जिसमें से 08 गैर हितग्राहियो के 11-15 हजार आय स्तर, 11 गैर हितग्राहियों 15-12 हजार आय स्तर पर 02 गैर हितग्राही 21-40 हजार आय स्तर पर पहुंच गये। वही 6 गैर हितग्राहियों की आय स्तर में कोई वृद्धि नहीं हुई।

इसी प्रकार 11-15 हजार आय स्तर के 04 गैर हितग्राहियों के (8.89%) के आय स्तर में वृद्धि पायी गयी है जिसमें से 01 गैर हितग्राही 15-21 हजार आय स्तर, 01 गैर हितग्राही 21-40 हजार आय स्तर पर पहुंच गये। वहीं 02 गैर हितग्राही के आय स्तर में कोई परिवर्तन नहीं पायी गई। इस प्रकार कुल 82.22% आय स्तर में वृद्धि पाई गई। जाकि हितग्राहियों में वृद्धि की तुलना में 11.11% कम है।

2. योजना से लाभांवित अनुसूचति जाति परिवारों के आय स्रोत कृषि क्षेत्र 15 परिवार (33.33%), पशुपालन 06 परिवार (13.33%) कृषि मजदूरी 18 परिवार (40%), गैर कृषि मजदूरी 04 परिवार (08.89%) एवं ग्रामीण उद्योग व्यवसाय 02 परिवार (04.45%) था। जिनमें से योजना से लाभान्वित होने के पश्चात् कृषि क्षेत्र के 10 परिवार अपने आय स्रोत में परिवर्तन कर पशुपालन क्षेत्र में प्रतिस्थापित हो गये। कृषि मजदूरी क्षेत्र के 06 परिवार पशुपालन क्षेत्र एवं 08 परिवार ग्रामीण उद्योग व्यवसाय में प्रतिस्थापित हो गये। गैर कृषि मजदूरी क्षेत्र के सभी 04 परिवार अपने आय स्रोत में परिवर्तन कर पशुपालन एवं ग्रामीण उद्योग व्यवसाय में प्रतिस्थापित हो गये। वहीं अनुसूचित जाति वर्ग के गैर-हितग्राहियों के आय स्रोत में भी परिवर्तन हुआ है। कृषि क्षेत्र के 18 में से 03 परिवार एवं कृषि मजदूरी 17 में से 4 परिवार अपने आय के स्रोत में परिवर्तन कर सभी गैर कृषि मजदूरी क्षेत्र में प्रतिस्थापित हुए हैं।

इससे स्पष्ट है कि योजना अनुसूचित जातियों के 62.22% हितग्राहियों के आय में परिवर्तन करने में सफल हुई है वहीं केवल 15.56% गैर-हितग्राही अपने आय में परिवर्तन करने में सफल हुए हैं जोकि लाभान्वित हितग्राहियों से बहुत कम है।

स्वर्ण जयन्ती ग्राम स्वरोजगार योजना के फलस्वरूप अनुसूचित जातियों के आय स्रोत में परिवर्तन से कृषि क्षेत्र में निर्भरता कम हुआ है एवं हितग्राहियों का रूझान गैर-कृषि मजदूरी वं ग्रामीण उद्योग व्यवसाय की ओर बढा है।

3. चयनित अनुसूचित जाति के 35 (77.78%) अशासकीय ऋण से ग्रस्त थे, जोकि स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना से सहायित होने के पश्चात् अशासकीय ऋण से मुक्त हो गए।

इससे स्पष्ट है कि स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना से सहायित होने के पश्चात् शासकीय ऋण में वृद्धि हुई और अशासकीय ऋण लगभग शून्य हो गयी, जिससे हितग्राहियों को साहूकार, महाजन के शोषण से मुक्ति मिली है।

4. सर्वेक्षित क्षेत्रों में हितग्राहियों को स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना द्वारा प्रशिक्षित नहीं किया गया है। चयनित अनुसूचित जातियों के सर्वाधिक हितग्राही व्यक्तिगत स्वरोजगारी है। व्यक्तिगत स्वरोजगारी के लिए ग्रेडिंग आवश्यक नहीं है, परन्तु स्व-सहायता समूहों को ग्रेडिंग प्रक्रिया से गुजरना होता है। अनुसूचित जाति के 45 में 13(28.88 प्रतिशत) हितग्राही स्व-सहायता समूह से जुड़े हुए है, जिनका नाम मात्र ग्रेंडिग किया गया। जिसके कारण क्षेत्र में सामाजिक सशक्तिकरण का उद्देश्य आपैचारिक मात्र रह गया है।

5. अनुसूचित जातियों के सर्वाधिक हितग्राही सीमांत कृषकों और सबसे कम लघु कृषकों ने योजना का लाभ लिया है। योजना में गरीबों में सबसे गरीब को पहले प्राथमिकता देना सुनिश्चित है, परन्तु अनुसूचित जाति के 45 हितग्राहियों में मात्र 11 (24.44:) भूमिहीन को योजना का लाभ दिया गया है।

6. बिलासपुर जिला एवं कोटा विकास खण्ड शत-प्रतिशत उपलब्धि को प्राप्त करने में असफल रहा है, जिलें में सर्वाधिक व्यय वर्ष 2011-12 में 1638.02 लाख रूपया व्यय किया गया जो वित्तीय लक्ष्य 1592.32 लाख रूपया का 97.21% है, और वर्ष 2008-09 में 738.40 लाख रूपया व्यय किया गया जो वित्तीय लक्ष्य 776.31 लाख रूपये का 95.12 % है। चयनित विकास खण्ड कोटा में सर्वाधिक व वर्ष 2011-12 में 145.57 लाख रूपया किया गया जो वित्तीय लक्ष्य 170.80 लाख रूपये का 85.23 प्रतिशत है और सबसे कम व्यय वर्ष 2008-09 में 60.09 लाख रूपया व्यय किया गया जो वित्तीय लक्ष्य 78.56 लाख रूपये का 76.49% है।

इसी प्रकार भारत एवं छत्तीसगढ़ राज्य में भी वित्तीय लक्ष्यों की शत-प्रतिशत उपलब्धि अध्ययन वर्ष में प्राप्त नहीं किया जाना अत्यंत गंभीर समस्या है। स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना में स्पष्ट उल्लेख है कि पूर्व वर्ष के व्यय आधार पर राशि उपलब्ध कराई जायेगी, योजना के सफलता हेतु आवश्यक है कि उपलब्ध राशि का पूर्णत: उपयोग किया जाये जिससे लोग गरीबी रेखा के ऊपर उठकर अच्छा जीवन जी सकें।

7. स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना द्वारा प्रदत्त अनुसूचित जनजाति के लिए लक्ष्य समूह में 50 प्रतिशत आरक्षण का लाभ बिलासपुर जिला एवं कोटा विकास खण्ड में शत्-प्रतिशत नहीं मिला है। बिलासपुर जिले में अनुसूचित जातियों के स्व-सहायता समूह हितग्राहियों की लाभान्वित संख्या वर्ष 2011-12 में अनुसूचित जाति 874 हितग्राही (19.88:) है तथा एकल स्वरोजगारियों की लाभान्वित अजा की संख्या 339 (28.73:) है। वर्ष 2008-09 में अनुसूचित जातियों के स्व-सहायता समूह हितग्राहियों की लाभान्वित संख्या अनुसूचित जाति की संख्या 1024 (24.00:) थी एवं एकल स्वरोजगारियों की लाभान्वित संख्या 164 (28.77:) थी। इस प्रकार लाभांवितों की संख्या में 02.10: वृद्धि दर्ज की गई है।

वहीं कोटा विकास खण्ड में अनुसूचित जाति के वर्ष 2011-12 में 78 (4.40:) हितग्राही लाभान्वित हुए है। वर्ष 2008-09 में हितग्राहियों की संख्या 09 (01.26:) थी। इस प्रकार हितग्राहियों की संख्या में प्रतिशत 03.14 वृद्धि हुई है।

निष्कर्ष - अत: स्पष्ट है कि जिले में प्राथमिक क्षेत्र में हितग्राहियों की संख्या में वृद्धि हुई है और अन्य तृतीय क्षेत्र के हितग्राहियों की संख्या में कमी आई है। स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना के माध्यम से परम्परागत प्राथमिक क्षेत्र में ही रोजगार के अवसर में वृद्धि हुई है। लोगों ने अपने परम्परागत क्षेत्र में ही रोजगार की संभावनाएँ तलाश की है।

सुझाव -

1. स्वर्ण जयन्ती ग्राम स्वरोजगार योजना के सफल व्यावसायिक क्रियान्वयन के लिए ग्रामीण निर्धन वर्ग में जागरूकता पैदा करना नितांत आवश्यक है। क्योंकि जब तक गांव का निर्धन व्यक्ति स्वयं अपनी समस्याओं के प्रति जागरूक नहीं होगा तब तक वर्तमान व्यवस्था में उसे योजना का पूर्ण

लाभ मिलना असंभव है।

2. योजना सफल कियान्वयन के लिए योजना एवं ग्रामीण विकास विशेषज्ञ की नियुक्ति करना अति आवश्यक है ताकि इनके द्वारा स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना की निगरानी, मूल्यांकन तथा नवीनतम तकनीक ज्ञान के प्रचार-प्रसार और योजना का लाभ हितग्राहियों को अधिकाधिक मिल सके।

3. प्रशासन को चाहिए कि हितग्राहियों द्वारा निर्मित सामग्रियों का समुचित बाजार व्यवस्था करे निर्मित सामग्रियों की खपत हो सके और उन्हें अपने सामग्रियों का उचित मूल्य प्राप्त हो सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. पालीवाल, चन्द्रमोहन (1986), *आदिवासी हरिजन विकास,* नार्दन बुक सेंटर नई दिल्ली।
2. सिंह, आर.जी. (1986), *भारतीय दलितों की समस्याएँ एवं उनका समाधान* (प्रथम संस्करण), हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल (म.प्र.)।
3. सिंह, एस.डी. (1988), *वैज्ञानिक सामाजिक अनुसंधान एवं सर्वेक्षण के मूल तत्व,* संस्करण कमल प्रकाशन इन्दौर।
4. सिसोदिया (1988), *भारतीय ग्रामीण समाज शास्त्र,* कमल प्रकाशन इन्दौर।
5. सिन्हा, बी.सी. एवं द्विवेदी, आर.एस. (1989), *जनांकिकीय सिद्धांत* द्वितीय संस्करण, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली।
6. रूद्रदत्त एवं सुन्दरम, के.पी.एम. (1990), *भारतीय अर्थव्यवस्था,* 20वां संस्करण, एस.चन्द्र एण्ड कम्पनी, नई दिल्ली।
7. वशिष्ठ, वी.के. एवं भिण्डा, पी.सी.(1991), *विकास एवं नियोजन का अर्थशास्त्र,* रमेश बुक डिपों, जयपुर (राजस्थान)।

वेबसाइट-

5. ywww.rural.nic.in
6. ywww.planningcommission.gov.in
7. ywww.woridbank.org
8. ywww.cag.gov.in
9. ywww.indiastat.com

****

उद्यमिता विकास में वित्तीय संस्थानों की भूमिका - एक अध्ययन (खण्डवा जिले के संदर्भ में)

मनु श्रॉफ *

प्रस्तावना – जनसंख्या की निरन्तर वृद्धि से बेरोजगारी की मात्रा में भी वृद्धि हो रही है। बेरोजगार व्यक्ति को रोजगार के अवसर उपलब्ध कराने के साथ-साथ देश का आर्थिक विकास करना चुनौतीपूर्ण कार्य होता है। देश में बेरोजगारी की मात्रा में कमी लाने व आर्थिक विकास को बढ़ाने के लिये उद्यमिता विकास पर जोर दिया जा रहा है।

देश में उद्यमिता विकास के लिये कई शासकीय एवं अशासकीय कार्यक्रम चलाये जा रहे हैं। उद्यमिता विकास कार्यक्रमों से अनेक युवा अपने स्वयं का उद्योग स्थापित करने के लिये आकर्षित होते जा रहे हैं। शासन द्वारा कई संस्थाएँ एवं योजनाएँ स्थापित की गई है, जो युवाओं को मनोवैज्ञानिक रूप से अपना उद्योग स्थापित करने के लिये प्रेरित करती हैं।

उद्यमिता विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत इच्छुक उद्यमी को इकाई स्थापना से पूर्व की प्रक्रिया तथा इकाई के संचालन में किये जाने वाले कार्य आदि के संबंध में न केवल प्रशिक्षण दिया जाता है, वरन् इकाई स्थापना हेतु सहायता भी दी जाती है। मध्यप्रदेश का खण्डवा जिला औद्योगिक दृष्टि से बहुत पिछड़ा हुआ है तथा रोजगार की कमी के कारण प्रति व्यक्ति आय बहुत कम है। स्वरोजगार की स्थापना एवं उद्यमिता विकास हेतु खण्डवा जिले में भी उद्यमिता विकास कार्यक्रम संचालित किये जा रहे हैं।

वित्तीय संस्थाओं का योगदान – उद्यमिता विकास हेतु वित्तीय साधनों पर विशेष ध्यान देने की जरूरत होती है। पर्याप्त वित्तीय सुविधा प्राप्त होने पर ही उद्योग का सफलता पूर्वक संचालन किया जा सकता है। वित्त की आवश्यकता कच्चे माल का क्रय, दैनंदिन रख रखाव, कार्यालयीन व्यय, उत्पादन के व्यय तथा अन्य व्ययों के लिये वित्त की आवश्यकता होती है। खण्डवा जिले की विभिन्न वित्तीय संस्थाओं जैसे - राष्ट्रीयकृत बैंको, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंको की शाखाओं एवं सहकारी संस्थाओं ने उद्यमिता विकास हेतु शासन द्वारा चलायी जा रही विभिन्न योजनाओं में वित्तीय सुविधा प्रदान की है। प्रमुख योजनाओं में जिले में प्रदत्त ऋण की जानकारी निम्नलिखित है -

1. रानी दुर्गावती अनुसूचित जाति अनुसूचित जनजाति स्वरोजगार योजना में जिले में प्रदत्त साख – इस योजना के अन्तर्गत खण्डवा जिले के ऐसे व्यक्तियों को जिनकी आयु 18 से 50 वर्ष के बीच होती है तथा जो 5 वीं कक्षा उत्तीर्ण हो एवं जिसकी पारिवारिक वार्षिक आय 3 लाख रूपये से कम होती है, को स्वरोजगार स्थापित करने हेतु वित्तीय सहायता प्रदान की जा रही है। जिले में विगत वर्षो में इस योजना के तहत वित्तीय संस्थाओं द्वारा प्रदत्त वित्त की स्थिति को निम्नलिखित तालिका में दर्शाया गया है -

तालिका क्रमांक 1.1 - रानी दुर्गावती योजना के अंतर्गत प्रदत्त वित्त

क्र.	वर्ष	व्यक्तियों की संख्या			राशि (लाख रू.में)		
		अजा	अजजा	योग	अजा	अजजा	योग
1	2003-04	20	24	44	101.22	104.21	205.43
2	2004-05	24	25	49	105.26	113.34	218.60
3	2005-06	18	22	40	106.23	109.82	216.05
4	2006-07	24	31	55	118.36	123.02	241.38
5	2007-08	26	41	67	135.37	124.16	259.53
6	2008-09	39	44	83	241.06	264.30	505.36
7	2009-10	70	53	123	256.18	240.87	497.05
8	2010-11	72	72	144	266.15	326.33	592.48
9	2011-12	68	70	138	311.54	375.44	686.98
10	2012-13	36	42	78	258.59	319.51	578.10
	योग	397	424	821	1899.96	2101.00	4000.96

स्त्रोत - जिला अग्रणी बैंक खण्डवा, जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक एवं क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक

समीक्षा अवधि में स्वरोजगारियों की संख्या एवं राशि दोनों में वृद्धि हुई है। विगत 10 वर्षो में कुल 821 व्यक्तियों को रोजगार स्थापना हेतु वित्तीय संस्थाओं ने इस योजनान्तर्गत कुल 400096 लाख रूपये का ऋण स्वीकृत किया है।

2 प्रधानमंत्री रोजगार योजना – इस योजना के अन्तर्गत जिले के पात्र व्यक्ति निर्माण कार्य हेतु 25 लाख रूपये तथा सेवा क्षेत्र में रोजगार की स्थापना हेतु 10 लाख रूपये की ऋण सीमा तक वित्तीय सहायता प्राप्त कर सकते है। खण्डवा जिले में इस योजना में प्रदत्त कुल ऋण की स्थिति निम्नानुसार है -

तालिका क्रमांक 1.2 प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत प्रदत्त वित्त

क्र.	वर्ष	व्यक्तियों की संख्या	राशि (लाख रू.में)
1	2003-04	18	22.40
2	2004-05	22	29.15
3	2005-06	29	4570
4	2006-07	27	51.42
5	2007-08	31	92.47
6	2008-09	38	142.47
7	2009-10	33	161.33
8	2010-11	27	145.42
9	2011-12	44	153.58
10	2012-13	45	168.39
	योग	314	1012.33

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय कन्या महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.) भारत

स्त्रोत- जिला अग्रणी बैंक खण्डवा, जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक एवं क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक खण्डवा

उपरोक्त तालिका के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि खण्डवा जिले में उद्यमिता विकास के लिये प्रधानमंत्री स्वरोजगार योजना के अंतर्गत व्यक्तियों को रोजगार उपलब्ध कराकर उद्यमी बनाया जा रहा है। वर्ष 2003-04 में इस योजना के अन्तर्गत 18 व्यक्ति लाभान्वित हुए जिन्हें स्वरोजगार की स्थापना हेतु 22.40 लाख रूपये की वित्तीय सहायता प्रदान की गई। इस योजना में स्वरोजगारियों की संख्या निरंतर बढ़ती जा रही है। वर्ष 2003-04 की तुलना में वर्ष 2012-13 में लाभान्वितों की संख्या बढ़कर 45 तथा स्वीकृत ऋण की राशि 168.39 लाख रूपये हो गई। अध्ययन अवधि में इस योजना में 314 व्यक्तियों का उद्यमिता विकास हेतु 1012.33 लाख रूपये की ऋण राशि स्वीकृत की गई।

3. दीनदयाल रोजगार योजना - खण्डवा जिले में स्वरोजगार की स्थापना एवं नये-नये व्यक्तियों को उद्यमिता से जोड़ने हेतु दीनदयाल योजना भी चलायी जा रही है। इस योजना में पात्र व्यक्तियों को उद्योग, सेवा एवं व्यवसाय के क्षेत्र में केवल नवीन इकाईयों के माध्यम से स्वरोजगार (स्थापना) को प्रोत्साहन देने हेतु बैंको के माध्यम से लक्ष्य निश्चित कर ऋण उपलब्ध कराया जा रहा है। जिले में इस योजना की प्रगति निम्नानुसार है -

तालिका क्रमांक 1.3

दीनदयाल रोजगार योजना के अंतर्गत प्रदत्त वित्त

क्र.	वर्ष	व्यक्तियों की संख्या	राशि (लाख रूमें)
1	2003-04	-	-
2	2004-05	37	11.05
3	2005-06	42	13.22
4	2006-07	53	20.43
5	2007-08	61	26.15
6	2008-09	64	25.29
7	2009-10	69	27.68
8	2010-11	78	30.37
9	2011-12	59	20.18
10	2012-13	38	11.25
	योग	501	185.62

स्त्रोत - जिला अग्रणी बैंक खण्डवा, जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक एवं क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक खण्डवा

उपरोक्त तालिका के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि यह योजना वर्ष 2004 से लागू होने से वर्ष 2003-04 में कोई प्रकरण स्वीकृत नहीं हुआ। इस योजना में विगत 9 वर्षो में 501 व्यक्तियों ने रोजगार की स्थापना की।

4. स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना - भारत सरकार द्वारा इस योजना में शासन द्वारा योग्य व्यक्तियों को बैंकों के माध्यम से वित्तीय सहायता उपलब्ध कराकर इन्हें रोजगार उपलब्ध कराया जा रहा है। खण्डवा जिले में इस योजना की स्थिति का वर्णन निम्नलिखित तालिका में किया गया है -

तालिका क्रमांक 6.4

स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना में जिले में प्रदत्त वित्त (राशि लाख में)

क्र.	वर्ष	स्व सहायता समूह		व्यक्तिगत	
		संख्या	राशि	संख्या	राशि
1	2003-04	79	290.89	96	43.93
2	2004-05	85	274.83	52	24.60
3	2005-06	75	254.09	85	38.75
4	2006-07	130	398.98	119	55.22
5	2007-08	71	300.34	130	62.05
6	2008-09	108	324.62	192	85.65
7	2009-10	181	622.59	182	89.19
8	2010-11	467	665.00	198	93.32
9	2011-12	489	723.06	201	90.83
10	2012-13	523	751.35	178	88.28
	योग	2208	4605.75	1433	671.28

स्त्रोत - जिला अग्रणी बैंक खण्डवा, जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक एवं क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक खण्डवा

स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना में व्यक्तियों के साथ-साथ स्व सहायता समूहों के सदस्यों को भी समूह के माध्यम से स्वरोजगार स्थापना हेतु ऋण उपलब्ध कराया जाता है।

5. स्वर्ण जयंती शहरी स्वरोजगार योजना - स्वर्ण जयंती शहरी रोजगार योजना में केन्द्र एवं राज्य 75:25 के अनुपात में राशि मिलाकर गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले शहरी व्यक्तियों को वित्तीय सहायता प्रदान कर स्वरोजगार स्थापना के प्रयास कर रही है। विगत वर्षो में इस योजना से कई शहरी व्यक्ति लाभान्वित हुए हैं। इस योजना की जिले में स्थिति निम्नानुसार है -

तालिका क्रमांक 1.5

स्वर्ण जयंती स्वरोजगार योजना के अंतर्गत प्रदत्त वित्त

क्र.	वर्ष	व्यक्तियों की संख्या	राशि (लाख रू.में)
1	2003-04	07	6.03
2	2004-05	13	12.52
3	2005-06	09	08.72
4	2006-07	12	10.30
5	2007-08	15	14.82
6	2008-09	22	18.11
7	2009-10	27	24.72
8	2010-11	20	18.43
9	2011-12	24	22.85
10	2012-13	29	24.25
	योग	178	160.75

स्त्रोत - जिला अग्रणी बैंक खण्डवा, जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक एवं क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक खण्डवा।

इस योजना में विगत 10 वर्षो में 178 व्यक्तियों को 16075 लाख रूपये की राशि का ऋण स्वीकृत किया गया।

6. मुख्यमंत्री पिछड़ा वर्ग स्वरोजगार योजना – मध्यम वर्गीय परिवार के ऐसे व्यक्ति जिन्हें अन्य योजनाओं में स्वरोजगार की स्थापना हेतु ऋण प्राप्त नहीं होता उन्हें इस योजना में स्वरोजगार की स्थापना हेतु ऋण सुविधा उपलब्ध करायी जाती है। जिले में मुख्यमंत्री पिछड़ा वर्ग योजना में नवीन इकाईयों की स्थापना हेतु प्रदत्त साख एवं लाभान्वित व्यक्तियों की स्थिति इस प्रकार है –

तालिका क्रमांक 1.6

खण्डवा जिले में मुख्यमंत्री पिछड़ा वर्ग स्वरोजगार योजना में प्रदत्त वित्त

क्र.	वर्ष	संख्या	राशि (लाख रू.में)
1	2008-09	41	25.03
2	2009-10	26	20.44
3	2010-11	33	40.83
4	2011-12	47	49.52
5	2012-13	49	46.43
	योग	196	182.25

स्त्रोत – जिला अग्रणी बैंक खण्डवा, जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक एवं क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक खण्डवा।

उपरोक्त तालिका के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि खण्डवा जिले में मुख्यमंत्री पिछड़ा वर्ग स्वरोजगार योजना भी कार्यान्वित हो रही है। इस योजना में 2008-09 से 2012-13 तक 196 पिछड़े वर्ग के व्यक्तियों को स्वरोजगार की स्थापना हेतु 18225 लाख रूपये का ऋण दिया गया।

7. मुख्यमंत्री अल्संख्यक स्वरोजगार योजना – मध्यप्रदेश के खण्डवा जिले में अल्पसंख्यक समुदाय के सदस्यों को स्वरोजगार की स्थापना हेतु इस योजना का लाभ दिया जाता है। जिले में इस योजना की प्रगति निम्नानुसार है –

तालिका क्रमांक 1.7

मुख्यमंत्री अल्पसंख्यक स्वरोजगार योजना में जिले में प्रदत्त वित्त

क्र	वर्ष	संख्या	राशि (लाख रू.में)
1	2008-09	10	09.01
2	2009-10	12	11.90
3	2010-11	13	10.85
4	2011-12	15	14.32
5	2012-13	18	15.86
	योग	68	61.94

स्त्रोत – जिला अग्रणी बैंक खण्डवा, जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक एवं क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक खण्डवा

उपरोक्त तालिका के अध्ययन से स्पष्ट है कि खण्डवा जिले में निवासरत मुस्लिम, जैन, सिक्ख, ईसाई अल्पसंख्यक समुदाय के व्यक्ति इस योजना का लाभ लेकर स्वरोजगार की स्थापना कर रहे है। विगत 5 वर्षो में अल्पसंख्यक समुदाय के कूल 68 व्यक्तियों को 61.94 लाख रूपये की ऋण सीमा तक वित्तीय सहायता प्रदान की गई।

8. विभिन्न निगमों एवं वित्तीय संस्थाओं द्वारा प्रदत्त वित्त – आर्थिक रूप से पिछड़े एवं उद्यमिता में रूचि रखने वाले व्यक्तियों को जिले में विभिन्न वित्तीय निगमों एवं बैंकों ने योजनागत एवं गैर योजनागत ऋण प्रदान किया है। गैर योजनाओं में कृषि एवं सम्बन्धित क्षेत्र की डेयरी, फल, सब्जी, होटल, ढाबा, किराना दुकान, तकनीकी, सेवा संबंधी क्षेत्र, ऑटो मरम्मत, मोटर वाईडिंग, प्रिटिंग प्रेस, कार वर्कशॉप आदि के लिये स्वरोजगार स्थापना हेतु ऋण प्रदान किया जा रहा है। विगत वर्षो में खण्डवा जिले में स्वरोजगार की स्थापना हेतु प्रदत्त ऋण की स्थिति को निम्नलिखित तालिका में दर्शाया गया है –

तालिका क्रमांक 1.8

जिले में विभिन्न निगमों एवं वित्तीय संस्थाओं द्वारा प्रदत्त

क्र.	वर्ष	संख्या	राशि (लाख रू.में)
1	2003-04	1005	1065.72
2	2004-05	1263	1102.48
3	2005-06	1370	1205.06
4	2006-07	1440	1260.31
5	2007-08	1560	1391.67
6	2008-09	1687	1408.22
7	2009-10	1704	1480.03
8	2010-11	1789	1545.45
9	2011-12	1822	1669.86
10	2012-13	2056	1891.86
	योग	15696	14020.66

स्त्रोत – जिला अग्रणी बैंक खण्डवा, जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक एवं क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक खण्डवा

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि खण्डवा जिले में वर्ष 2003-04 में 1005 व्यक्तियों को स्वरोजगार की स्थापना के लिये 1065.72 लाख रूपये का ऋण प्रदान किया गया जो वर्ष 2012-13 में बढ़कर 2056 व्यक्तियों के लिये 1891.86 लाख रूपये हो गया। जिले में वर्ष 2003-04 से 2012-13 तक 15696 व्यक्तियों को स्वरोजगार की स्थापना हेतु कुल 14020.66 लाख रूपये की वित्तीय सहायता प्रदान की गई।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. रूद्रदत्त, सुन्दरम केपी, भारतीय अर्थ व्यवस्था (2011), एस.चांद एंड कंपनी, नई दिल्ली।
2. मिश्र एवं पूरी, भारतीय अर्थव्यवस्था (2012) हिमालया पब्लिकेशन हाउस, मुंबई।
3. उद्यम मार्गदर्शिका 2010 उद्यमिता विकास केन्द्र मध्यप्रदेश भोपाल।
4. उद्यमिता एवं व्यक्तित्व विकास 2011 – उद्यमिता विकास केन्द्र मध्यप्रदेश, भोपाल।
5. मध्यप्रदेश के प्रमुख आंकडे 2013, आर्थिक एवं सांख्यिकी संचालनालय मध्यपद्रेश, भोपाल।
6. मध्यप्रदेश का सांख्यिकी संक्षेप 2013 आर्थिक एवं सांख्यिकी संचालनालय मध्यपद्रेश, भोपाल।
7. K.K. Shanna (2003) Enterpreneureship and small business – Deep Publication New Delhi.
8. Micro, Small and Medium Enterprised Development Act – Background Paper. Jessica Wade Small Enterprises Finance Center IFMR.
9. Annual Reports. District Trade and Industry Centre. Khandwa.
10. Annual Reports Distric Statistical office Khandwa.

****

मध्यप्रदेश का निर्यात व्यापार - एक अध्ययन

डॉ. दीपाली बेहेरे *

प्रस्तावना – उद्योग एवं व्यापार देश की अर्थव्यवस्था की रीढ़ होते हैं जो देश की मिश्रित अर्थव्यवस्था में गैर सरकारी क्षेत्रों के अलावा प्रत्यक्ष विदेशी निवेश को बढ़ावा देकर औद्योगिक विकास में एक नया आयाम स्थापित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। म.प्र.भौगोलिक दृष्टि से देश का दूसरे नम्बर का सबसे बड़ा राज्य है प्रदेश की जनसंख्या 73 करोड़ है यहाँ की मुख्य सम्पदा जंगल खनिज और जमीन है। वैश्विक आर्थिक मंदी के बावजूद मध्यप्रदेश में तेजी से औद्योगीकरण व निर्यात व्यापार देखा गया। उद्योग विभाग के आँकड़ों के अनुसार विगत 10 वर्षों में प्रदेश में 172 मध्यम एवं वृहद् औद्योगिक इकाईयों में 57,453 करोड़ रुपये का पूंजी निवेश कर संबंधित इकाईयों द्वारा उत्पादन प्रारंभ कर दिया गया है इसके अतिरिक्त लगभग 79,853 करोड़ रुपये की लागत से 164 वृहद् मध्यम परियोजनांए निर्माणाधीन हैं। प्रदेश में 12वीं पंचवर्षीय योजना में 27 स्थानों पर 7675 हैक्टेयर भूमि पर 3000 करोड़ रुपये की लागत से सर्वसुविधायुक्त नवीन औद्योगिक क्षेत्र विकसित करने की योजना को मंजूर किया गया है इसके अन्तर्गत वर्तमान में 920 हैक्टेयर भूमि पर 373 करोड़ रुपये से 11 नवीन औद्योगिक क्षेत्रों की स्थापना का कार्य प्रारम्भ किया जा चुका है।

म.प्र.की औद्योगिक स्थिति - मध्यप्रदेश के प्रमुख औद्योगिक क्षेत्र मण्डीदीप, पीथमपुर, देवास, मालनपुर, पीलूखेड़ी आदि हैं इस बिजनेस एरिया से अनुमानित 5673.91 करोड़ रुपये का निर्यात वर्ष 2008-09 में किया गया। वर्तमान में केन्द्र सरकार द्वारा एप्रूव्ड स्पेशल एकॉनामिक जोन 22 हैं। भारत का प्रथम ग्रीन फील्ड सेज इन्दौर में स्थापित है। अभी तक 46 इकाईयों को औद्योगिक भूमि इन्दौर में स्पेशल इकानॉमिक जोन का आवंटन किया जा चुका है जिसमें 1300 करोड़ रुपये का निवेश हो चुका है और 28 इकाईयां स्थापित हो चुकी हैं अनुमानित 7500 व्यक्तियों को इन इकाईयों में रोजगार मिला है 9 इकाईयों में 650 करोड़ रुपये का निर्माण सेज़ कर रहा है और अनुमानित 1300 करोड़ रुपये का निर्यात हो रहा है।

म.प्र.का निर्यात में योगदान – म.प्र.का सबसे पुराने औद्योगिक क्षेत्र मण्डीदीप देश के मध्य में स्थित होने के कारण मण्डीदीप से पिछले चार सालों से निर्यात बढ़ रहा है। मध्यप्रदेश में भोपाल के समीप मण्डीदीप और इन्दौर के पास स्थित पीथमपुर दो प्रमुख औद्योगिक क्षेत्र हैं इन दोनों स्थानों से निर्यात लगातार तेजी से बढ़ रहा है। वर्ष 2013-14 वित्त वर्ष के दौरान 3418 करोड़ रुपये का हुआ था। पीथमपुर सेज से भी निर्यात लगातार बढ़ रहा है। वित्त वर्ष 2011-12 में पीथमपुर से निर्यात 1637 करोड़ रुपये का था जो पिछले वित्त वर्ष में बढ़कर 1927 करोड़ रुपये हो गया।

मण्डीदीप से सबसे ज्यादा निर्यात एच.ई.जी. लिमिटेड द्वारा किया गया है पिछले वित्त वर्ष में करीब 1300 करोड़ रुपये का निर्यात किया गया इसके बाद ल्यूपिन लिमिटेड का स्थान है जहाँ से 1100 करोड़ रुपये का निर्यात हुआ। इस दौरान सबसे ज्यादा बढ़ोतरी पी.एण्ड पी.लिमिटेड के निर्यात में हुई है। कम्पनी निर्यात पिछले वर्ष के दौरान कई गुणा बढ़कर 337 करोड़ रुपये हो गया है।

मण्डीदीप से सबसे ज्यादा निर्यात इलेक्ट्रिकल, टेक्सटाइल, फार्मा, इंजीनियरिंग और आटोमोबाइल कंपोनेट का होता है वर्तमान में मण्डीदीप के साथ छह अन्य औद्योगिक क्षेत्र गोविन्दपुरा, पीथमपुर, पोलोग्राउण्ड सांवेर रोड और सिद्धगवां, महाराजपुर में 351 करोड़ 57 लाख की राशि से 444189 हैक्टेयर भूमि पर उन्नयन कार्य प्रारम्भ किया जा चुका है इस पर अब तक 140 करोड़ रुपये व्यय किये जा चुके हैं।

अन्य 6 औद्योगिक क्षेत्र मालनपुर, मनेरी, रिछयाई, सतना, मुरैना व देवास में प्रस्तावित कार्यों में 214 हैक्टेयर क्षेत्रफल पर अधोसंरचना विकास कार्य के लिये 129 करोड़ रुपये के काम शुरू हो रहे हैं। प्रदेश में औद्योगिक अधोसंरचना विकास कार्य इन्दौर, ग्वालियर, भोपाल, जबलपुर और रीवा स्थित औद्योगिक केन्द्र विकास निगम द्वारा किया जाता है।

आज मध्यप्रदेश एक हजार करोड़ रुपये से अधिक के बासमती चावल का उत्पादन एवं प्रदेश से निर्यात कर रहा है। किसी भी प्रदेश के लिये पिछले 7 साल में जमीन से उत्पादन कर विश्व में प्रदायकर्ता की सूची में आना अपने आप में दूरदृष्टि और दृढ़निश्चय का सबसे बड़ा उदाहरण है।

म.प्र.के लहसुन, प्याज, जीरा, धनिया की अन्तर्राष्ट्रीय मांग बढ़ती जा रही है। म.प्र.के डालर चने की विश्व में अपनी ख्याति है।

मण्डीदीप औद्योगिक क्षेत्र का आकार 600 एकड़ से शुरू होकर आज 2000 एकड़ तक पहुंच गया है। विश्व की बड़ी कम्पनियों में शुमार एचईज़ी. लिमिटेड ने अपनी शुरुआत ग्रेफाइट इलेक्ट्रोड से की थी। यहाँ पर एचईज़ी के अलावा वर्धमान समूह, नाहर स्पिनिंग मिल, हर्शे इण्डिया, टैफे मोटर्स ल्यूपिन, पी.एण्ड जी.आदि कम्पनियों के प्लांट यहाँ हैं आज यहाँ करीब 650 इकाईयाँ काम कर रही हैं। यहाँ से केन्द्र व राज्य सरकार को करीब 2500 करोड़ रुपये का सालाना राजस्व प्राप्त होता है।

डब्ल्यू.एच.ओ.विश्व रिपोर्ट के अनुसार 2009 तक विश्व वस्तुओं के कुल विदेशी व्यापार में भारत का 2% हो गया। सन 2011-12 में 1155% तथा 2013-14 में 1397% विश्व व्यापार में भागीदारी की है तथा भारत विश्व व्यापार में 31वाँ निर्यातक देश है।

मण्डीदीप औद्योगिक क्षेत्र से निर्यात

वर्ष	राशि (करोड़ रुपये)
2010-11	3325
2011-12	3418
2012-13	4119
2013-14	4500 (अनुमानित)

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) कैरियर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

म.प्र.निर्यात वृद्धि के कारण – म.प्र.की भौगोलिक स्थिति उसकी सबसे बड़ी खासियत है म.प्र.देश के मध्य में स्थित होने के बावजूद बंदरगाहों से इसका सम्पर्क बेहतर है इसका सीधा फायदा निर्यात में मिलता है कम्पनियां यहाँ से लगातार अपना निर्यात बढ़ा रही हैं अन्तर्राष्ट्रीय उड़ानों की शुरूआत के बाद तो इसमें और तेजी से इजाफा रहा है।

म.प्र.निर्यात निगम – म.प्र.के व्यापार अन्तर्राष्ट्रीय पहचान दिलाने के उद्देश्य से फरवरी 1977 में कम्पनी अधिनियम 1956 के तहत एक शासकीय उपक्रम के रूप में म.प्र.निर्यात निगम की स्थापना की हुई थी। वर्तमान में निगम की अधिकृत अंशपूंजी प्रदत्त अंशपूंजी क्रमश: रुपये 200 लाख व 8025 लाख है। निगम का प्रमुख उद्देश्य है कि प्रदेश में निर्यात व्यापार को बढ़ावा देना ऐसी वस्तुओं एवं सामग्री का अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार करना जिसके बारे में राज्य शासन अथवा संचालनालय मण्डल निर्णय दे। आयात निर्यात उत्पाद एवं आंतरिक व्यापार की ऐसी व्यवस्थाओं का क्रियान्वयन करना जिसके बारे में राज्य शासन लोकहित में निर्देश दे।

सरकार द्वारा नियंत्रित संस्थाएं भी विदेशी व्यापार तथा निर्यात करने लगी हैं संस्थाएं निम्न है –भारतीय राज्य व्यापार निगम, हस्तकला एवं हथकरघा निर्यात निगम, भारतीय चलचित्र निर्यात निगम, भारतीय खनिज एवं धातु निगम सरकार कम्पनियों एवं संस्थाओं का भी निर्यात का प्रतिशत बराबर बढ़ रहा है।

निष्कर्ष – वर्तमान समय में म.प्र.का निर्यात व्यापार दुनिया के सभी देशों से है। म.प्र.के निर्यात व्यापार में उदारीकरण की नीति एवं वैश्वीकरण के कारण बहुत वृद्धि हुई है, म.प्र.से विश्व के कई देशों में निर्यात होने के कारण सभी प्रमुख क्षेत्र प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर व्यापार से जुड़ गए हैं। वर्ष 2010–11 में भारत का कुल निर्यात 251136 मिलियन अमेरिकी डालर का रहा। मण्डीदीप से 4219 करोड़ का निर्यात 2012–13 में हुआ था।

वह दिन दूर नहीं जब भारत के निर्यात और व्यापार में म.प्र.एक दैदीव्यमान सितारे की भांति चमकेगा तथा निर्यात के कीर्तिमानों को स्थापित कर राष्ट्र को आर्थिक शक्ति बनाने में अपना अभूतपूर्व योगदान प्रदान करेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भारतीय अर्थव्यवस्था (अरिहन्त पब्लिकेशन)।
2. इंडिया टुडे एवं तथ्य भारती (जनवरी 2014)।
3. भारतीय व्यापार एवं अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाएँ (डॉ.पी.डी. माहेश्वरी एवं डॉ.चन्द्र गुप्ता)।
4. मध्यप्रदेश विकास वार्षिकी–2013 रामभुवन सिंह कुशवाह।
5. मध्यप्रदेश संदेश – अक्टूबर 2014
6. दैनिक भास्कर समाचार पत्र।
7. इकोनॉमिक्स टाईम्स।
8. योजना पत्रिका।
9. म.प्र.औद्योगिक केन्द्र विकास निगम (भोपाल)।

****

जनसंख्या, गरीबी एवं पर्यावरण संकट

रावेन्द्र सिंह पटेल *

प्रस्तावना – जनसंख्या, गरीबी एवं पर्यावरण संकट का निकट संबंध है। जनसंख्या वृद्धि के कारणों में गरीबी भी एक है। प्राय: गरीबों के बच्चे अधिक होते हैं और उनके परिवार का आकार बड़ा होता है। गरीबों में बच्चे परिवार की आय में वृद्धि के साधन बनते हैं, अत: उनका परिवार पर भार महसूस नहीं किया जाता। सभी देशों में निधनों का एक बड़ा हिस्सा ग्रामीण क्षेत्रों में रहता है जिनका मुख्य कृषि होता है, वे अदृश्य बेरोजगारी के शिकार रहते हैं। कृषि एवं सम्बद्ध क्रियाकलापों में श्रम की आवश्यकता तथा संयुक्त परिवार प्रथा का प्रचलन इन्हें जनसंख्या वृद्धि को नियंत्रित करने की प्रेरणा नहीं देता। इस तरह गरीबी में जनसंख्या वृद्धि के समस्त सामाजिक एवं आर्थिक कारक विद्यमान रहते हैं।

बढ़ती जनसंख्या पर्यावरण की गुणवत्ता पर नकारात्मक प्रभाव डालती है। जनसंख्या वृद्धि विस्तृत खेती को बढ़ावा देती है। इससे वन विनाश को बढ़ावा मिलता है। परती भूमि यहाँ तक कि जल संग्रहण के क्षेत्रों को भी कृषि के कार्य में लाया जाता है। ग्रामीण गरीब अपना 44 प्रतिशत समय पशुओं को चारा एकत्र करने, जानवरों की देखभाल करने तथा उन्हें चराने में व्यतीत करते है तथा पर्यावरण के संरक्षण में ध्यान नहीं देते हैं। ग्रामीण जनघनत्व पर्यावरण घनत्व को व्यापक क्षति पहुँचाता है। पर्यावरण पर मानव का प्रभाव, प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग के द्वारा पड़ता है। यही नहीं, वस्तुओं और सेवाओं के उत्पाद और उपभोग की प्रक्रिया से उत्पन्न प्रदूषकों के पर्यावरण में उत्सर्जन से भी यह प्रदूषित होता है। साथ–ही साथ जनसंख्या का आकार और उसमें निरन्तर वृद्धि का भी पर्यावरण पर दुष्प्रभाव पड़ता है। पर्यावरण की गुणवत्ता उपभोग किये गये संसाधनों की मात्रा तथा उत्पादन की प्रति इकाई के अनुसार प्रदूषण की उत्पत्ति, प्रतिव्यक्ति उत्पादन और उपभोग तथा जनसंख्या का आकार का परिणाम है। इन तत्वों के पर्यावरण पर प्रभाव के विश्लेषण के लिए निम्नलिखित सूत्र को बनाया गया है –

E = PAT

E = पर्यावरणीय प्रभारी जनसंख्या (घनत्व और वृद्धि)

A = प्रचुरता (प्रतिव्यक्ति आय और जीवन शैली पर आश्रित प्रति व्यक्ति उपभोग।

T = उत्पादन में प्रयुक्त हानिकारक प्रौद्योगिकी

इसमें जनसंख्या घनत्व और वृद्धि को पर्यावरण प्रदूषण का प्रमुख कारक माना जाता है। इससे संसाधनों पर दबाव पड़ता है जिसके परिणामस्वरूप वे समाप्त हो जाते है और पर्यावरण का हास होता है। प्रौद्योगिकी अन्य तीसरा प्रमुख कारक है जो पर्यावरण को अत्यधिक प्रभावित करता है।

प्रौद्योगिकी का सबसे अधिक हानिकारक प्रभाव विकसित देशों में है, जबकि जनसंख्या वृद्धि और जनसंख्या घनत्व जैसे कारकों का सबसे अधिक प्रभाव अल्पविकसित तथा विकासशील देशों में है। इस प्रकार विकसित देशों की अत्यधिक उपभोग की प्रवृत्ति एवं विकासशील देशों की गरीबी में पर्यावरणीय संकट के बीज छिपे हुए हैं।

विश्व के विकसित देश औद्योगिक देश है अर्थात आर्थिक विकास का आधार औद्योगीकरण है। आर्थिक प्रगति के लिए औद्योगिक विस्तार और औद्योगीकरण आवश्यक है, किन्तु औद्योगिक इकाइयों की स्थापना के लिए विस्तृत भूखण्ड की प्राप्ति के लिए पहले वन विनाश करना पड़ता है। उत्पादन इकाइयों से वांछित उत्पादन के लिए अतिरिक्त हानिकार अवशिष्ट पदार्थ प्रदूषित जल, जहरीली गैस, रासायनिक अवशेष आदि भी निकलते हैं। आज के विश्व में आर्थिक सामाजिक व्यवस्था को नया आयाम देने के लिए तीव्र औद्योगिक विकास पर जोर दिया जा रहा है। विगत डेढ़ सौ वर्षो से औद्योगिक देशों में बढ़ता उत्पादन विश्व के लिए प्रलोभन बन गया है। अत: सभी देश सोचते हैं कि औद्योगिक उन्नति से ही आर्थिक–सामाजिक विकास संभव है। औद्योगिक क्रांति के पश्चात पहले यूरोप में तथा बाद में विश्व के अन्य भागों में उद्योगों की स्थापना बड़े पैमाने पर हुई। उद्योगों को कच्चे माल की आपूर्ति के लिए प्राकृतिक संसाधनों का तीव्र गति से दोहन होने लगा। तीव्र औद्योगीकरण से लोगों का जीवन–स्तर तो बढ़ा, किन्तु पर्यावरण की अत्यधिक हानि हुई। औद्योगीकरण से वनों का विनाश उद्योगों से निकलने वाले हानिकारक पदार्थो से प्रदूषण, जल संकट, अति नगरीकरण आदि समस्याएं उत्पन्न हुई।

मानव की प्रगति एवं विकास का आधार उसके द्वारा प्रकृति अथवा पर्यावरण का उपयोग है। मानव विकास की प्रारम्भिक अवस्था में सीमित जनसंख्या तथा सीमित आवश्यकताओं के कारण प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग के उपरान्त भी उसका पर्यावरण से सामंजस्य बना रहा, किन्तु बढ़ती जनसंख्या तथा तकनीकी प्रकृति के साथ–साथ प्रकृति के शोषण की दर में वृद्धि होती गई। आर्थिक विकास की दौड़ में पर्यावरण पर दबाव बढ़ता गया। पर्यावरण पर शत्रुतापूर्ण व्यवहार करके किया गया विकास स्वयं मानव के लिए आत्मघाती सिद्ध हुआ। निरन्तर विकास मानव की स्वाभाविक प्रकृति है तथा पर्यावरण हमारे जीवन का आधार है। पर्यावरणीय समस्याओं के कारण विकास को रोका नहीं जा सकता है, तो पर्यावरण ह्रास के कारण समस्त जीव जगत पर बढ़ते संकट की उपेक्षा भी नहीं की जा सकती है। अत: पर्यावरण को बचाते हुए सतत विकास की अवधारणा विकसित हुई। विकास में परिस्थितिकी दृष्टिकोण सम्मिलित करके प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय सतना (म.प्र.) भारत

भी किया जा सकता है तथा परिस्थितिकी संकट से भी बचा जा सकता है। संतुलित विकास, समन्वित विकास तथा सतत विकास इसके विभिन्न पक्ष हैं। सतत विकास से अभिप्राय ऐसे विकास से है, जो पर्यावरण को हानि पहुंचाए बिना जीवन की गुणवत्ता जारी रख सके। विकास को मात्र आर्थिक उत्पादन से न जोड़कर उसके सामाजिक, आर्थिक एवं परिस्थितिकीय पक्षों पर भी ध्यान देना चाहिए। परिस्थितिक तंत्र के अनुरूप विकास हेतु पर्यावरण को कम से कम हानि पहुंचाने वाली प्रौद्योगिकी का विकास जनसंख्या वृद्धि पर नियंत्रण, भविष्य की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए संसाधनों का नियोजित व नियमित उपभोग, संसाधन संरक्षण आदि उपायों पर अमल करना होगा। चूँकि हमारा अस्तित्व पर्यावरण के साथ जुड़ा है। अत: पर्यावरण को बचाते हुए सतत् विकास की अवधारणा को विकसित करना समयानुकूल होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. वि कुमार एवं डॉ. शिवनारायण गुप्त 'जनांकिकी' एसबीपीडी पब्लिशिंग हाउस आगरा (उ.प्र.), 2012, पृष्ठ क्र. 379-392
2. डॉ. जे.पी. मिश्रा, 'जनसंख्या विकास एवं पर्यावरण प्रदूषण की चुनौतियाँ' साहित्य संस्थान गाजियाबाद (उ.प्र.) 2014 पृष्ठ क्र. 20
3. डॉ. निशा मिश्रा, ' जनसंख्या वृद्धि का पर्यावरण पर प्रभाव' आलेख, पुस्तक- जनसंख्या, विकास एवं पर्यावरण प्रदूषण की चुनौतियाँ संपादक-डॉ. जे.पी. मिश्रा, साहित्य संस्थान गाजियाबाद (उ.प्र.) 2014, पृष्ठ क्र. 374
4. डॉ. नरेन्द्र मोहर अवस्थी, 'पर्यावरण भूगोल' म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल 2010, पृष्ठ क्र. 72
5. डॉ. आशा खन्ना एवं आर. के. श्रीवास्तव 'प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन एवं पर्यावरण प्रदूषण' म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी 2008, पृष्ठ क्र. 69
6. डॉ. हरिशचन्द्र व्याज, 'जनसंख्या, प्रदूषण और पर्यावरण' विद्या प्रकाशक नई दिल्ली, 2006 पृष्ठ क्र. 89
7. चन्द्रभाव यादव, 'पर्यावरण संरक्षण का हो सामूहिक प्रयास' आलेख, कुरूक्षेत्र जून 2012, पृष्ठ क्र. 03
8. ललित खुराना, 'संपादकीय: कुरूक्षेत्र', जून 2012 पृष्ठ क्र. 02
9. डी.डी. शर्मा 'अर्थशास्त्र यूजीसी नेट', साहित्य भवन पब्लिकेशन्स आगरा, 2010, पृष्ठ क्र. 467
10. CSE Report 2010.

****

स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना का अनुसूचित जनजाति अर्थव्यवस्था पर प्रभाव (बिलासपुर जिले के कोटा विकास खण्ड के विशेष संदर्भ में)

मोहन लाल पटेल *

Abstract - The Swarnajayanthi Gram Swarozgar Yojana (SGSY) is a holistic programme which looms towards poverty eradication in rural India through creation of self-employment opportunities to the rural people. The scheme aims to bring every assisted poor family above the poverty line by ensuring appreciably sustainable levels of income over a period of time. This objective is to be achieved by organizing the rural poor in to Self Help Groups through the process of social mobilization, their training and capacity building, and provision of income generating assets.

Keywords - Yojana, Integrated Rural Development Programme (IRDP) Poverty Alleviation, Self-Employment, Self Help Groups, Below Poverty Line.

प्रस्तावना – बिलासपुर जिले का कोटा विकास खण्ड अनुसूचित जाति एवं जनजाति बाहुल्य, वनाच्छादित, अल्प विकसित अर्थव्यवस्था की विशेषताओं एवं समस्याओं से परिपूर्ण है, जहां औद्योगिक विकास नगण्य, साथ ही स्वास्थ्य, आवास एवं रहन–सहन का स्तर भी निम्न है। यहां आय का मुख्य स्त्रोत वनोपज संग्रहण, कृषि एवं कृषि मजदूरी है। जिससे पर्याप्त आय प्राप्त नहीं हो पाती है ऐसी परिस्थिति में रोजगार (स्वरोजगार) की महती आवश्यकता में स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना का महत्व स्वत: स्थापित हो जाता है।

अध्ययन के उद्देश्य – प्रस्तुत शोध का मुख्य उद्देश्य अनुसूचित जनजातियों के आर्थिक उत्थान में स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना के भूमिका का अध्ययन करना है।

परिकल्पना – प्रस्तुत अध्ययन हेतु निम्न शून्य परिकल्पनाओं की जांच की जाएगी–

1. स्वर्ण जयंती ग्रामस्वरोजगार योजना का अनुसूचित जनजाति की आर्थिक प्रगति में योगदान नहीं के बराबर है।
2. स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना के अंतर्गत अनुसूचित जनजाति के समुदाय को विशेष प्राथमिकता नहीं प्राप्त हो रही है।
3. इस योजना के अंतर्गत वर्तमान प्रशासनिक व्यवस्था, कार्य कुशलता एवं बैंकों का सहयोग अपर्याप्त है।

शोध प्रविधि – बिलासपुर जिले के कोटा विकास खण्ड के अंतर्गत कुल 81 ग्राम पंचायतों में से 25 ग्राम पंचायतों (आमागोहन, भैंसाझार, बिल्लीबंद, चपोरा, छतौना, झाडबछाली, धनरास, धूमा, जोगीपुर, कलारतराई, कलमीटार, करगीकला, करगीखुर्द, करहीकछार, करका, केन्दा, खोंगसरा, लिटिया, लूफा, नागचुंआ, पटैता, शिवतराई सिलपहरी, तेन्दुआ और उपका) का चयन दैव निदर्शन पद्धति से किया गया तथा चयनित ग्राम पंचायतों के योजना द्धारा लाभान्वित अनुसूचित जाति के जनजाति के 175 हितग्राहियों एवं 175 गैर–हितग्राही परिवारों को अध्ययन में सम्मिलित किया गया है।

अध्ययन की सीमाएं – अध्ययन में 2007–08 से 2011–12 के आंकड़ों तथा जानकारियों का प्रयोग किया गया है।

विश्लेषण एवं व्याख्या –

1. कुल हितग्राहियों में से पुरूष हितग्राहियों की संख्या 104 पाई गई जो 60.80: है तथा महिला हितग्राहियों की संख्या 70 पाई गई जो 40: है। स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना में महिलाओं के लिए 40: भागीदारी सुनिश्चित की गयी है। अत: स्पष्ट है कि सर्वेक्षित क्षेत्र में महिला भागीदारी के आरक्षण को प्राप्त करने में यह योजना लगभग सफल रही है।
2. सर्वेक्षित क्षेत्र में समस्त अध्ययन अवधि में स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजागर योजना के अंतर्गत अनुसूचित जनजाति के कुल हितग्राहियों में से 0–6000 से कम आय स्तर के 11 हितग्राहियों (6.29:), 6–11 हजार आय स्तर के 114 हितग्राही (65.14:), 11–15 हजार आय स्तर के 32 हितग्राही (18.29:) 15–21 हजार आय स्तर के 15 हितग्राही (8.57:), एवं 21–40 हजार आय स्तर के 03 हितग्राही (01.71:) लाभान्वित हुए । स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना का लाभ लेने के पश्चात् 0–6000 आय स्तर के 11 हितग्राहियों के आय स्तर में वृद्धि पायी गयी जिसमें से 03 हितग्राही 11–15 हजार आय स्तर पर , 6 हितग्राही 15–21 हजार आय स्तर पर व 02 हितग्राही 21–40 हजार आय स्तर पहुंच गये। इसी प्रकार 6–11 हजार आय स्तर के अधिकतम 114 हितग्राहियों के आय स्तर में वृद्धि पायी गयी जिसमें से 10 हितग्राही 11–15 हजार आय स्तर, 48 हितग्राही 15–21 हजार आय स्तर, 52 हितग्राही 21–40 हजार आय स्तर एवं 02 हितग्राही 40 हजार से ऊपर आय स्तर पर पहुंच गये। 02 हितग्राहियों के आय में कोई परिवर्तन नहीं देखा गया। 11–15 हजार आय स्तर के 32 हितग्राहियों के आय स्तर में वृद्धि पायी गयी, जिसमें से 15–21 हजार आय स्तर पर 4 हितग्राही, 21–40 हजार आय स्तर पर 24 हितग्राही एवं 40 हजार से ऊपर आय स्तर पर 04 हितग्राही पहुंच गये।

15–21 हजार आय सतर के 15 हितग्राहियों के आय स्तर में भी वृद्धि

* शोधार्थी, डॉ. सी. वी. रमन विश्वविद्यालय, कार्गी रोड़, कोटा, बिलासपुर (छ.ग) भारत

पायी गयी, जिसमें से 21–40 हजार आय स्तर पर 13 हितग्राही व 40 हजार से ऊपर आय स्तर पर 02 हितग्राही पहुंच गये। इसी प्रकार 21–40 हजार आय स्तर के 03 हितग्राहियों के आय स्तर में भी वृद्धि देखी गयी, जो 40 हजार से ऊपर आय स्तर पर प्रतिस्थापित हो गये।

वहीं जिसने स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना का लाभ नहीं लिया (गैर हितग्राही) अनुसूचित जनजाति के परिवारों के भी आय स्तर में वृद्धि दर्ज की गयी, 0–6000 आय स्तर के 39 गैर हितग्राहियों; (21.14%) के आय स्तर में वृद्धि पायी गयी जिसमें से 21 गैर हितग्राही 6–11 हजार आय स्तर पर, 16 गैर हितग्राही 11–15 हजार आय स्तर पर, 02 गैर हितग्राही 15–21 हजार आय स्तर पर पहुॅच गये और 6–11 हजार आय स्तर के 122 गैर हितग्राहियों (50.85%) के आय स्तर में वृद्धि पायी गयी जिसमें से 61 गैर हितग्राहियो के 11–15 हजार आय स्तर, 27 गैर हितग्राहियों 15–12 हजार आय स्तर पर 02 गैर हितग्राही 21–40 हजार आय स्तर पर पहुंच गये। वही 32 गैर हितग्राहियों की आय स्तर में कोई वृद्धि नहीं हुई।

इसी प्रकार 11–15 हजार आय स्तर के 12 गैर हितग्राहियों के (8.57%) के आय स्तर में वृद्धि पायी गयी है जिसमें से 05 गैर हितग्राही 15–21 हजार आय स्तर, 04 गैर हितग्राही 21–40 हजार आय स्तर पर पहुंच गये। वहीं 03 गैर हितग्राही के आय स्तर में कोई वृद्धि नहीं पायी गयी। यही 15–21 हजार आय स्तर के हितग्राही की आय में वृद्धि पायी गयी जो 21–40 हजार आय स्तर के 01 गैर हितग्राही के आय स्तर में वृद्धि पायी गयी वह 40 हजार के ऊपर आय स्तर पर पहुंच गया और 01 हितग्राही ने अपने आय स्तर को यथा स्थिर बनाये रखा।

इससे स्पष्ट है कि स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना के फलस्वरूप प्रत्येक आय स्तर के हितग्राही आय के उच्च वर्ग में प्रतिस्थापित हुए है। जो कुल हितग्राहियों का 98ण्86: है वहीं गैर हितग्राहियों की आय में भी वृद्धि 79.43: पायी गयी है। जो हितग्राहियों की आय स्तर वृद्धि की तुलना में बहुत कम है।

3. योजना से पूर्व अनुसूचित जनजाति परिवारों का आय स्त्रोत कृषि क्षेत्र 76 परिवारों (43.43 प्रतिशत), पशुपालन क्षेत्र 07 परिवार (4 प्रतिशत), कृषि मजदूरी 84 परिवारों (48 प्रतिशत), गैर–कृषि मजदूरी 06 परिवार (3.42 प्रतिशत) एवं ग्रामीण उद्योग व्यवसाय 02 परिवार (1.14 प्रतिशत) था। योजना से लाभ लेने उपरान्त कृषि क्षेत्र के 65 हितग्राही परिवार (37.14 प्रतिशत), पशुपालन क्षेत्र में 13 परिवार (7.42 प्रतिशत), कृषि मजदूरी क्षेत्र के 60 (34.29 प्रतिशत), गैर कृषि मजदूरी क्षेत्र में 13 परिवार (7.42 प्रतिशत) एवं ग्रामीण उद्योग व्यापार क्षेत्र में 24 परिवार (13.71 प्रतिशत) स्थापित हो गये।

अनुसूचित जनजाति के गैर–हितग्राहियों के आय स्त्रोत में भी परिवर्तन हुआ है, कृषि क्षेत्र से 01 गैर–हितग्राही और कृषि मजदूरी से 42 गैर हितग्राहियों ने अपने आय स्त्रोत में परिवर्तन करने में सफलता हासिल की जो कुल गैर हितग्राहियों का 42.58 : होता है सभी ने अन्य रोजगार कार्यक्रम को आय स्त्रोत बना लिया, जिससे कृषि क्षेत्र की निर्भरता में कुछ कमी हुई है। इससे स्पष्ट है कि योजना अनुसूचित जनजाति के 35 हितग्राहियों (20:) के आय स्त्रोत परिवर्तन करने में सफल हुई और 140 हितग्राहियों (80:) ने अपने आय स्त्रोत को नहीं बढला उसे और विकसित किया है। वही 43 गैर हितग्राही (24.58:) आय स्त्रोत परिवर्तन करने में सफल हुए है। अत: योजना गरीबी कम करने में सफल रही, आय स्त्रोत परिवर्तन करने में आशानुकूल सफल नहीं हो पायी।

योजना से लाभांवित अनुसूचित जाति परिवारों का आय स्रोत कृषि क्षेत्र 15 परिवार (33.33%), पशुपालन 06 परिवार (13.33%) कृषि मजदूरी 18 परिवार (40%), गैर कृषि मजदूरी 04 परिवार (08.89%) एवं ग्रामीण उद्योग व्यवसाय 02 परिवार (04.45%) था। जिनमें से योजना से लाभान्वित होने के पश्चात् कृषि क्षेत्र के 10 परिवार अपने आय स्रोत में परिवर्तन कर पशुपालन क्षेत्र में प्रतिस्थापित हो गये। कृषि मजदूरी क्षेत्र के 06 परिवार पशुपालन क्षेत्र एवं 08 परिवार ग्रामीण उद्योग व्यवसाय में प्रतिस्थापित हो गये। गैर कृषि मजदूरी क्षेत्र के सभी 04 परिवार अपने आय स्रोत में परिवर्तन कर पशुपालन एवं ग्रामीण उद्योग व्यवसाय में प्रतिस्थापित हो गये। वहीं अनुसूचित जाति वर्ग के गैर–हितग्राहियों के आय स्रोत में भी परिवर्तन हुआ है। कृषि क्षेत्र के 18 में से 03 परिवार एवं कृषि मजदूरी 17 में से 4 परिवार अपने आय के स्रोत में परिवर्तन कर सभी गैर कृषि मजदूरी क्षेत्र में प्रतिस्थापित हुए हैं।

इससे स्पष्ट है कि योजना अनुसूचित जाति के 62.22% हितग्राहियों के आय में परिवर्तन करने में सफल हुई है वहीं केवल 15.56% गैर–हितग्राही अपने आय में परिवर्तन करने में सफल हुए हैं जोकि लाभान्वित हितग्राहियों से बहुत कम है।

स्वर्ण जयन्ती ग्राम स्वरोजगार योजना अनुसूचित जातियों की अपेक्षा अनुसूचित जनजाति के हितग्राहियों की आय स्रोत में अधिक परिवर्तन करने में सफल रहा है। आय स्रोत में परिवर्तन से कृषि क्षेत्र में निर्भरता कम हुआ है वहीं हितग्राहियों का रूझान गैर–कृषि मजदूरी वं ग्रामीण उद्योग व्यवसाय की ओर बढा है।

4. स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना द्वारा प्रदत्त व्यवसाय अनुसूचित जनजातियों के 156 हितग्राहियों (89.14%) एवं अनुसूचित जाति के 32 (71.11%) हितग्राहियों का व्यवसाय विद्यमान है। व्यवसाय की विद्यमानता का तात्पर्य है कि वर्तमान व्यवसाय में हितग्राहियों की आय में वृद्धि हो रही है।

5. क्षेत्र में योजना द्वारा प्रदत्त ऋण वापसी में अनुसूचित जनजातियों के सर्वाधिक 103 हितग्राही (58.89%) ऋण वापस कर रहे हैं और अनुसूचित जनजाति के 47 हितग्राही (26.86%) योजना द्वारा प्रदत्त ऋण का भुगतान कर चुके हैं। वहीं अनुसूचित जनजाति के 25 हितग्राही (14.29%) ने ऋण भुगतान बंद कर दिया है।

इससे स्पष्ट है कि जिन हितग्राहियों ने भुगतान पूर्ण कर लिया है पूर्णत: योजना के सफल स्वरोजगारी बन गये हैं। जिन हितग्राहियों ने ऋण का भुगतान करना बंद कर दिया, असफल हो गये है और कुछ ऋण माफी घोषणा का इंतजार कर रहे हैं।

6. चयनित अनुसूचित जनजातियों के सर्वाधिक 143 हितग्राही (81.71%) अशासकीय ऋण से ग्रस्त थे, स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना से सहायित होने के पश्चात् अनुसूचित जनजाति के केवल 01 हितग्राही का अशासकीय ऋण पाया गया।

इससे स्पष्ट है कि स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना से सहायित होने के पश्चात् शासकीय ऋण में वृद्धि हुई और अशासकीय ऋण लगभग शून्य हो गयी, जिससे हितग्राहियों को साहूकार, महाजन के शोषण से मुक्ति मिली है।

निष्कर्ष – उपरोक्त व्याख्या एवं विश्लेषण से स्पष्ट है कि जिले में प्राथमिक क्षेत्र में हितग्राहियों की संख्या में वृद्धि हुई है और अन्य तृतीय क्षेत्र के हितग्राहियों की संख्या में कमी आई है। स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना के माध्यम से परम्परागत प्राथमिक क्षेत्र में ही रोजगार के अवसर में वृद्धि हुई है। लोगों ने

अपने परम्परागत क्षेत्र में ही रोजगार की संभावनाएँ तलाश की है।

सुझाव –

1. स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना के सफल क्रियान्वन के लिए निर्धारित मानिटरिंग प्रक्रिया में कसावट अत्यावश्यक है।
2. गरीबी रेखा के नीचे रहने वाले लोगों का सुक्ष्म परीक्षण एवं सत्यापन आवश्यक है, ताकि पात्र लोगों को ही इसका लाभ मिले ।
3. शिविरों में ऋण वितरण पर पूरी रोक लगाई जाये, क्योंकि शिविरों में बिना परीक्षण के लक्ष्य पूर्ति हेतु ऋण वितरण किया जाता है।
4. सहायता प्रदान करने के पहले प्रशिक्षण को अनिवार्य कर दिया जाये। रस्म अदायगी न हो।
5. परिवार के एक से अधिक सदस्य योजना का लाभ उठाये जाने पर दण्ड का प्रावधान हो।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. राजा, मुनीस एण्ड प्रेमी कुसुम (1983), *रिजर्वेशन इन हायर एजूकेशन फार शेड्यूल्ड कास्ट्स एण्ड शेड्यूल्स ट्राइब्स : ए पॉलिसी फ्रेम वर्क* N.I.P.A. नई दिल्ली।
2. सक्सेना, आर.सी. (1987-88), *श्रम समस्याएँ एवं समाज कल्याण,* 8वां संस्करण के. नाथ एण्ड कंपनी, मेरठ।
3. सिंह, एस.डी. (1988), *वैज्ञानिक सामाजिक अनुसंधान एवं सर्वेक्षण के मूल तत्व,* संस्करण कमल प्रकाशन इन्दौर।
4. पन्त, जे.सी.(1989-90), *जनांकिकी*, 5वां संशोधित संस्करण, गोयल पब्लिशिंग हाऊस सुभाष, मेरठ – 2।
5. विशेष रिपोर्ट, राष्ट्रीय अनुसूचित जाति एवं अनूसूचित जनजाति आयोग, भारत सरकार।
6. आर्थिक समीक्षा 2007-08, वित्त विभाग, भारत सरकार।
7. आर्थिक सर्वे 2007-08 वित्त विभाग, भारत सरकार।
8. वार्षिक योजना 2011-12, योजना आयोग, भारत सरकार।
9. वार्षिक रिपोर्ट 2011-12, ग्रामीण विकास मंत्रालय, भारत सरकार।

वेबसाइट-

1. ywww.planningcommission.gov.in
2. ywww.woridbank.org
3. ywww.cag.gov.in
4. ywww.indiastat.com

****

शहरी सहकारी बैंकों में उत्कृष्ट ग्राहक सेवाएँ - एक आवश्कता

डॉ. सोनी व्यास*

प्रस्तावना – बैंकिंग उद्योग में ग्राहक सेवा एक अत्यंत महत्वपूर्ण तथ्य है जिसपर बैंकिंग उद्योग स्थापित है। ग्राहक सन्तुष्टि बैंकों द्वारा प्रदान की जाने वाली सेवाओं पर निर्भर करती हैं यदि हम बैंकों द्वारा प्रदान किये जाने वाले कार्यो का अध्ययन करें तो इसमें से सबसे प्रमुख है ग्राहको को उनकी जरूरत की सेवाये प्रदान करना। इसमें दो बाते प्रमुख है, ग्राहको को समय पर एवं उनकी सुविधानुसार विभिन्न सेवाऐं प्रदान करना। इसमें अति आवश्यक यह कि ये सेवाएँ कितनी तत्परता एवं विश्सनीयता से प्रदान की जाती है। किसी भी बैंक में उसके निर्देशक मण्डल ग्राहक सेवाओं से सम्बन्धित नीतिगत निर्णय लेते है एवं शाखा प्रबन्धक वह प्रमुख व्यक्ति होता है जिसे इन निर्णयों को क्रियान्वित करना होता है परन्तु काउन्टर स्टाफ जिनका प्रत्यक्ष रूप से ग्राहक के साथ संबंध होता है बिना सहयोग से इस कार्य को नहीं कर सकता है। ग्राहक सन्तुष्टि मूलत: प्रदान की जाने वाली सेवाओं की गुणवत्ता एवं ग्राहक के मनोविज्ञान एवं उसकी प्रकृति पर निर्भर करती है।

शहरी सहकारी बैंक जो कि भारतीय रिजर्व बैंक एवं पंजीयक सहकारी समितियों के नियंत्रण में कार्य करती हैं उनकी ग्राहक सेवाएँ प्रदान करने के संबध में अपनी सीमाएं है। परन्तु आज प्रतिस्पर्धा के युग में इन शहरी बैंको में पास अनुसूचित व्यावसायिक बैंकों, निजी क्षेत्र के बैंकों एवं विदेशी बैंकों से मुकाबला करने के लिए केवल एक अस्त्र है वह है उत्कृष्ट ग्राहक सेवाएँ।

शहरी बैंकों द्वारा प्रदान की गई सेवाओं में ग्राहकों की सन्तुष्टि दर के कम होने के निम्नलिखित कारण पाये गये हैं –

- ग्राहकों की नजर में बैंक स्टाफ सहयोग एवं मित्रतापूर्ण व्यवहार वाला नहीं है।
- ग्राहक काउन्टर पर बैंक स्टाफ के रवैये से खुश नहीं है।
- शहरी बैंकों द्वारा प्रदान की जाने वाली सेवाये क्योंकि सीमित होती हैं इसलिए भी ग्राहक सन्तुष्ट नहीं है।
- शहरी बैंको के कार्यो में तत्परता व निपुणता की कमी है ऐसा ग्राहक मानते है।
- शहरी बैंको में व्यावसायिक बैंको की भाँति 'क्या मै आपकी सेवा कर सकता हूँ' का कोई प्रावधान नहीं है।

प्राय: ग्राहक की शिकायते निम्नलिखित होती है।

- चैको, ड्राफ्टो के संग्रहण मे देरी।
- खातों को खोलने एवं परिचालन में देरी।
- खातो के अन्तरण में देरी।
- विभिन्न खातो में दिये जाने वाले ब्याज की गणना एवं ब्याज लगाने में देरी।
- ऐसे जमाकर्ता जिनकी मृत्यु हो चुकी है उनके खातो को निपटाने में देरी।
- स्थायी आदेशों का पालन न किया जाना।
- छोटे नोट एवं फटे पुराने नोटो को अस्वीकारना।
- स्टाफ द्वारा असहयोगपूर्ण व्यवहार करना।
- पासबुक पूरी करने में असहयोग।
- हर कार्य के लिए लम्बी कार्यविधियाँ।

यदि हम उपरोक्त कारणों का अध्ययन करे तो प्रतीत होता है कि शहरी बैंकों में निजी क्षेत्र के बैंकों की अपेक्षा सन्तुष्टि दर कम है। इसमें से कुछ ऐसे कारण है जिन पर नियन्त्रण किया जा सकता है, कुछ पर नहीं।

1991 से शुरू हूई उदारीकरण की नीति के दृष्टिगत, नरसिंहम कमेटी ने भी अपनी सिफारिशों में कहा है कि वित्तीय बाजार में केवल उसी का अस्तित्व रह सकता है जिसने परिचालन में प्रतिस्पर्धात्मक दक्षता हो। इस कमेटी ने इस बात पर जोर दिया कि बैंकों को नई उच्चतम प्रौद्योगिकी एवं सुविकसित बैंकिंग सेवाओं को अपने परिचालन में लाना चाहिए।

निजी एवं विदेशी बैंक अपनी शाखाओं को कम्प्यूटरीकरण एवं आधुनिक स्वत: चालित प्रणालियों को अपनाकर ग्राहकों को उत्कृष्ट सेवाएं प्रदान कर रहे हैं। इसमें सूचना प्रौद्योगिकी की सेवाऐं प्रदान करने में विदेशी बैंक अग्रणीय है। इसमें ए.टी.एम. सेवाऐं 24 घंटे बैंकिंग, टैली बैंकिंग इत्यादि कुछ प्रमुख सेवाऐं है। इन सेवाओं के विस्तार ने ग्राहक की बैंक के प्रति आकांक्षाओं को और भी अधिक बढ़ा दिया है। शहरी सहकारी बैंको को इन सुविधाओं को अभी अपनाया जाना है। कुछ अनुसूचित शहरी सहकारी बैंको ने ए.टी.एम. बैंकिंग की शुरूआत की है।

ग्राहकों की असन्तुष्टियों को कम करने की रणनीतियाँ – सभी शहरी सहकारी बैंको को ग्राहकों को सन्तुष्ट करने के लिए ग्राहक सेवाओं का विस्तार करना होगा एवं निजी व विदेशी बैंकों की भांति ग्राहकों को सुविधाऐं प्रदान करनी होंगी। कुछ वृहद आकार वाले अनुसूचित शहरी बैंको ने इस दिशा में शुरूआत भी की है। शहरी सहकारी बैंको को ग्राहकों की सुविधाओं का अध्ययन करना होगा एवं अपने कार्यो में तत्परता लाने के लिए शाखाओं को कम्प्यूटरीकृत करना होगा एवं अपने प्रचलन में आधुनिकतम प्रणालियों का प्रसार करना होगा। शहरी बैंकों को ए.टी.एम. सुविधा एवं अन्य आधुनिक सूचना पद्धतियों को भी अपनाना होगा। इसमें एक प्रमुख बात इसके विपणन की हैं शहरी बैंको को सभी माध्यमों से अपनी सेवाओं का विपणन करना होगा जिससे कि ग्राहक शहरी बैंकों की ओर आकर्षित हो सके।

प्राय: यह देखने में आता है कि शहरी बैंकों में चैकों के संग्रहण में देरी होती है जबकि अन्य बैंकों निजी एवं विदेशी बैंकों में यह सुविधा बहुत तत्परता से की जाती है।

सभी बैंक कर्मचारियों को सहकारिता सिद्धान्तों व मूल्यों, उनकी भाषा, आचरण एवं अनुशासन के संबंध में विशेष प्रशिक्षण देना चाहिए। सभी

* सहायक प्राध्यापक, भारतीय महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

कर्मचारियों का उच्च मनोबल बना रहना चाहिए। कर्मचारियों के सेवा नियम होने चाहिए जो पूर्णरूप से स्पष्ट हो जिससे कोई रोष की स्थिती उत्पन्न न हो सके। कर्मचारियों को अपने बैंक की कमियों इत्यादि का बखान कभी भी ग्राहको के समक्ष नहीं करना चाहिए इससे उनके मस्तिष्क पर बैंक की छवि के प्रति प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है।

सभी शहरी बैंकों को व्यावसायिक बैंकों की भांति 'ग्राहक सेवा सप्ताह' पखवाड़ो का आयोजन करना चाहिए। इस पखवाड़े में ग्राहकों की शिकायतों एवं सुझावों पर विशेष ध्यान देना चाहिए। इसके अतिरिक्त उनकी समस्याओं के समाधान के लिए एक स्थाई समिति का गठन करना चाहिए जिसमें बैंकों के अधिकारी सहित कुछ वरिष्ठ गणमान्य ग्राहकों को सम्मिलित किया जाना चाहिए।

उपरोक्त सुझावो को ध्यान में रख कर शहरी सहकारी बैंक जनसाधारण का विश्वास जीत सकते है एवं सशक्तता से ये निजी एवं विदेशी बैंकों का मुकाबला कर सकते है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सालोदिया अजय कुमार, - ग्रामीण विकास एवं बैंकिंग वित्त प्रबंध, बोहरा प्रकाशन, जयपुर।
2. चतुर्वेदी निलमेघ, - सहकारिता विचार और विश्लेषण, अजय प्रकाशन सिरपुर, धार।
3. भार्गव चन्द्रेश, - बैंकिंग प्रणाली, यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन नई दिल्ली।
4. डॉ. शर्मा विवेक, - बैंकिंग प्रबंध, अर्जुन पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली।

पत्र-पत्रिकाएं -

1. कुरूक्षेत्र पत्रिका - संपादक - कुरूक्षेत्र ग्रामीण क्षेत्र और रोजगार मंत्रालय कृषि भवन, नई दिल्ली।
2. योजना पत्रिका - 538 योजना भवन संसद मार्ग नई दिल्ली।
3. प्रतियोगिता दर्पण
4. सहकार संदर्भ

समाचार पत्र - दैनिक भास्कर, बिजनेस स्टेन्डर्ड, बिजनेस भास्कर।

1. वेबसाईट एवं ब्लॉग्स - www.24duniya.com
   www.nayaindiya.com
2. D33P जागरण junction (आपकी आवाज, आपका ब्लॉग) प्रदीपचन्द्र निगम ब्लॉग।

****

आदिवासी समाज की आर्थिक - समस्या एवं समाधान

रावेन्द्र सिंह पटेल *

प्रस्तावना – स्वतंत्रता के 65 वर्षो के बाद भी आज जनजातियों को प्राय: उन्हीं समस्याओं से ग्रसित माना जाता है जिससे वह स्वतंत्रता के समय या उसके पूर्व ग्रसित थे। 65 वर्ष का समय इतना कम नहीं है कि आदिवासियों की मूल समस्याओं में परिवर्तन न हुआ हो। नि:संदेह परिवर्तन हुआ है। आज आदिवासियों की स्थिति 'त्रिशंकु' के समान है वे न तो पूर्णत: दूसरी संस्कृति के साथ समावेशित हो सके हैं और न ही अपनी संस्कृति को छोड़ सकते हैं। बीच की यह स्थिति असमंजस की है। एक वर्ग जीवन के प्रत्येक पक्ष में परिवर्तन और सुधारों का पक्षधर है तो दूसरा वर्ग पुरानी परम्पराओं से ही चिपका रहना चाहता है। समस्या यह है कि आदिवासियों का निर्देशन इस प्रकार से कैसे किया जाए कि वे उपयोगी नवीन परिवर्तनों को अपना ले और अनुपयोगी पुरातन व्यवस्थाओं और परम्पराओं को त्याग दें।[1] जनजातियों की प्रमुख समस्याएँ निम्नलिखित है –

आदिवासी अर्थव्यवस्था कृषि आधारित अर्थव्यवस्था है। आदिवासी छोटे-छोटे भू-भाग पर कृषि करके अपना जीविकोपार्जन करते हैं। इनके कृषि भूमि की उपज बहुत ही कम है क्योंकि इस अंचल में अपेक्षाकृत कम वर्षा होती है और यहाँ की भूगर्भीय संरचना भी ऐसी है जिससे धरती के नीचे अधिक पानी जमा नहीं हो पाता।[2]

वनोपज संग्रहण जिसमें हर्री, बहेरा, लाख, तेदूपत्ता, आंवला आदि प्रमुख हैं, जनजातियों की जीविका के प्रमुख साधन हैं, किन्तु स्वतंत्रता के बाद सरकार द्वारा वनों को अपने संरक्षण में लेने की नीति के कारण अब जनजातियाँ अधिक मात्रा में वनोपज संग्रहण नहीं कर सकती ह। जो कुछ वनोपज संग्रहण करते हैं उन्हें अज्ञानता के कारण उसका सही मूल्य नहीं प्राप्त हो पाता है। वनोपज की बिक्री से प्राप्त होने वाला अधिकांश लाभ या तो निजी ठेकेदार के हिस्से में या मध्यस्थ सरकारी अधिकारियों के हिस्से में चला जाता है।

अधिकतर आदिवासी ऋणग्रस्तता के भंवर जाल में फंसे हुए है। इनमें ऋणग्रस्तता के प्रमुख कारण निम्नलिखित हैं –

1. जीवन की अनिवार्य आवश्यकताओं की पूर्ति करने के साधनों की अनुपलब्धता।
2. आधुनिक सभ्यता के संपर्क में आने के कारण अधिकाधिक भौतिक सुख सुविधाएँ प्राप्त करने की इच्छा।
3. संचयी प्रवृत्ति का न होना।

गोविन्द वल्लभ पंत ने अपने अध्ययन में पाया की कर्ज आदिवासियों की सबसे बड़ी समस्या है। इससे पता चलता है कि आदिवासी क्षेत्र में सबसे गरीब परिवार पर भी 500.00 रू. का कर्ज तो है ही। इतना कर्ज ही इनकी कमर तोड़ने के लिए काफी है क्योंकि इनके पास संपत्ति तो इससे भी कम है। जनजातीय संवर्ग के खेतिहार, मजदूर, दस्तकार, गरीब किसान बचत के अभाव में अपनी पारिवारिक सम्पत्ति में कुछ जोड़ नहीं पाते है। ये मामूली घरेलू जरूरतों के लिये सूदखोरों एवं जमीन हड़पने वालों के चंगुल में फंस जाते हैं।[3] आदिवासी न केवल गैर आदिवासी वर्ग द्वारा शोषित है बल्कि आदिवासी वर्ग भी इनका शोषण कर रहा है। जैसे कि केदार प्रसाद मीना ने अपने शोध के माध्यम से बताया कि इनका लगभग अस्सी फीसदी तबका निम्नवर्गीय और गरीब है। वह या तो अपने ही 20 फीसदी सम्पन्न वर्ग द्वारा पीडित है या इनकी चुप्पी के चलते गैर आदिवासी शोषकों-महाजनों व अन्य दबंग जातियों द्वारा पीड़ित है। ये कर्ज में डूबे हुए हैं और आत्महत्या के कगार पर हैं।[4]

आदिवासियों में आय की असामनता दिनों दिन बढ़ती जा रही है। जैसा कि शर्मा, मूर्ति और सिंह[5] ने अपने शोध में पाया कि आदिवासी क्षेत्र में उच्च असमानता है। सम्पन्न लोग अत्यधिक सम्पन्न हैं और निर्धन अत्यधिक निर्धन हैं। केन्द्र और राज्य सरकारों के अथक प्रयासों के बावजूद विकास के लाभांश का असमान वितरण हुआ है। राव[6] ने भी अपने अध्ययन में पाया कि आदिवासी समाज में निर्धनता व पिछड़ेपन के कारण विकास की विभिन्न योजनाएं असफल हो जाती हैं। जनजातीय अर्थव्यवस्था मुख्यत: जीविकोन्मुख अर्थव्यवस्था है।

आदिवासियों के बाहरी संस्कृति के संपर्क में आने के कारण दो भाषावाद की समस्या उत्पन्न हुई है। जनजाति लोग अपनी भाषा के साथ बाहरी भाषा भी बोलने लगे हैं। और कभी-कभी तो वे अपनी भाषा की ओर इतना अधिक उदासीन हो जाते हैं कि कुछ समय के पश्चात अपनी भाषा की ओर इतना अधिक उदासीन हो जाते हैं कि कुद समय के पश्चात अपनी भाषा को ही भूल जाते हैं। इससे एक जनजाति के लोगों में आपस में सांस्कृतिक आदान-प्रदान में अत्यधिक बाधा उत्पन्न होती है। इससे न केवल सामुदायिक भावना का हास होता है, बल्कि सांस्कृतिक मूल्यों और आदर्शो का भी पतन होने लगता है।[7] इनके संबंध में डॉ. ललिता प्रसाद विद्यार्थी ने कहा कि इन संपर्को का परिणाम यह हुआ कि अपने सांस्कृतिक तत्वों से उनका विश्वास घट गया है। साथ ही वे दूसरे समुदायों के सांस्कृतिक तत्वों को भी ग्रहण कर रहे हैं। संपर्क के कारण बाहरी लोगों द्वारा सरल स्वभाव वाले जनजातीय लोगों के शोध की प्रक्रिया भी जारी है।[8]

आदिवासी बच्चों में ड्राप आउट रेट भी बहुत ज्यादा है। 'हम उन्हें उनकी अपनी भाषा में नहीं पढ़ाते है फलत: वह स्कूल से ड्राप आउट हो जाता है। क्यों नहीं स्कूल कालेजों में उनकी मातृभाषा में शिक्षा दी जाए ताकि ड्राप आउट रेट कम हो।'[9] एक समस्या यह भी है कि 'आदिवासी क्षेत्र में गैर आदिवासी

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.) भारत

शिक्षक का होना, शिक्षक हिन्दी में बात-चीत करते हैं, जबकि यहाँ के आदिवासी अपनी मातृभाषा बोलते व समझते हैं। जागेश्वर दयाल शर्मा[11] ने भी कहा है कि आदिवासी बन्धुओं की भलाई के कार्य करने वालों को पहले उन्हें भली-भांति समक्ष लेना चाहिए। जब तक उनकी बोली, रहन-सहन, आचार-विचार और परम्पराओं को भली-भांति न समझ लिया जाये तब तक उनके लिए किये गये कल्याण कार्य सफल नहीं हो सकते।

समस्या समाधान के उपाय -

1. आदिवासियों के प्रति जन सामान्य में लगाव उत्पन्न किया जाना चाहिए ताकि आदिवासीजन सबसे घुलमल सके एवं उसे गैर आदिवासियों से मिलने में अटपटा न लगे।
2. आदिवासी क्षेत्र में नियुक्त अधिकारियों और कर्मचारियों को अतिरिक्त भत्ते, बच्चों की शिक्षा व्यवस्था, प्रोमोशन में लाभ आदि की व्यवस्था की जानी चाहिए।
3. संघ लोक सेवा आयोग, राज्य सेवा आयोग तथा स्कूल, कालेजों के पाठ्यक्रमों में आदिवासियों से संबंधित भी पाठ्यक्रम होना चाहिए।
4. आदिवासी क्षेत्र में नियुक्ति के पूर्व प्रत्येक अधिकारी और कर्मचारी को आदिवासियों से संबंधित एक विशिष्ट प्रशिक्षण कार्यक्रम को पूरा करना अनिवार्य कर दिया जाना चाहिए।
5. आदिवासियों से संबंधित शोधों और अध्ययनों को बढ़ावा दिया जाए जिससे कि नीति निर्माता उनकी वास्तविक परिस्थितियों तथा समस्याओं से परिचित हो सके।
6. आदिवासी क्षेत्र में शिक्षा का विस्तार किया जाए और इसके लिए आवश्यक है कि आदिवासियों की भाषा की लिपि बनायी जाय, फिर उनकी भाषा में उनसे बात की जाय।
7. सरकार द्वारा कोई भी नीति आदवासियों पर थोपी न जाय और नीति के निर्धारणके समय आदिवासियों की भागीदारी अनिवार्य की जाय।
8. आदिवासी क्षेत्र में शोषण को रोकने के लिए विशेष जांच दल का गठन किया जाय और त्वरित न्याय के लिए विशेष न्यायालय की स्थापना की जाय।[12]

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सक्सेना अनुपमा 'जनजाति समस्याओं का वास्तविक स्वरूप' नीतिमार्ग, अप्रैल 2000,पृ.सं.-03
2. शर्मा ब्रह्मदेव, 'आदिवासी विकास-एक सैद्धान्तिक विवेचना' मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल, संस्करण-1999, पृ. सं. 183
3. पं. गोविन्द वल्लभ, 'बुलेटिन ऑफ ट्राईबल रिसर्च एण्ड डेवलपमेन्ट', भोपाल, तश्रि-12, 1984 पृ. सं. 08
4. मीणा केदार प्रसाद मीणा आदिवासी समाज और संस्कृति आलेख, 104-105, कथाक्रम तश्रि-50, 2011
5. Sharma, H.R. Moorth, R.V. and K Singh, 1988 Extent of Income, Inequality and Poverty in the Tribal arias of Himanchal Pradesh', Journal of Rural Development, Vol. 7, No.-3, P-323
6. Rao, D.L. 1971, `Sahukar and Tribal Society', The Tribe Vol.-8, No.-3 & 4, P-14
7. सिंह शिवलाल, जनजातीय समस्याएं एवं उनका समाधान, आलेख, पुस्तक-आदिवासी विमर्श 2012 संपादक-वीरेन्द्र सिंह यादव, रावेन्द्र साहू, पृ.-463
8. विद्यार्थी ललिता प्रसाद भारतीय आदिवासी, उनकी संस्कृति और सामाजिक पृष्ठ भूमि पृ. सं.-235
9. सागर शैलेन्द्र 'कथाक्रम' अक्टूबर-दिसम्बर 2011, साक्षात्कार-रमणिका गुप्ता पृष्ठ संख्या -19
10. मिश्र सुनील- आदिवासी समाज और शिक्षा आलेख, कथाक्रम-अक्टूबर-दिसम्बर 2011, पृ. 96
11. वर्मा जागेश्वर दयाल 'आदिवासियों के आर्थिक विकास की बाधाएँ', आलेख, नीति मार्ग 722-28 अप्रैल 2000, पृ.सं. 27
12. साहू रावेन्द्र कुमार 'आदिवासी विमर्श' स्थापनाएं और प्रस्थापनाए आलेख,पुस्तक-'आदिवासी विमर्श', संपादक-वीरेन्द्र सिंह यादव, पृ. सं.-70

****

बैंकिंग क्षेत्र की नवीन चुनौतियाँ

डॉ. सोनी व्यास *

प्रस्तावना – भारतीय अर्थव्यवस्था विश्व की सबसे तेजी से बढ़ रही अर्थव्यवस्थाओं में से एक है बावजूद इसके कि दुनियाभर में आर्थिक हवा अनुकूल दिशा में नहीं बह रही है। वैश्विक आर्थिक संकट के झटके से उबरने में भारतीय अर्थव्यवस्था को ज्यादा देर नहीं लगी। आशा के विपरीत उसने तेजी से वापस पटरी पर आना शुरू कर दिया।

वित्तीय क्षेत्र के अवसर और चुनौतियां– वित्तीय क्षेत्र में बड़ी तेजी से बदलाव आया है। प्रतिस्पर्धी और नियमों के बंधन से मुक्त करने वाली शक्तियों के कारण ग्राहकों की अपेक्षाओं में आया बदलाव स्पष्ट दिखाई दे रहा है। आईसीटी (सूचना और संचार प्रौद्योगिकी) की प्रगति के कारण ग्राहक अब सरल, तेज, कुशल और सुरक्षित वित्तीय सेवाओं की अपेक्षा करने लगे है और वह भी उचित कीमत पर एक ही खिड़की से। इस बदले हुए परिदृश्य में ग्राहक उपलब्ध विकल्पों का बखूबी उपयोग करना चाहते है। यदि संबंधों को नये सिरे से बनाने की कोशिश नहीं की जाएगी तो वफादारी की पारंपरिक धारणा को मिटते देर नहीं लगती। प्रतिस्पर्धा में बने रहने और ग्राहको की बढ़ती अपेक्षाओ को पूरा करने के लिए बैंक अब केवल पैसे जमा करने और उधार देने की पारंपरिक भूमिका में सीमित न रहते हुए उससे आगे जाकर व्यापक वित्तीय सेवा प्रदाता की भूमिका अदा कर रहे है। बैंक अब ग्राहको की आकांक्षाओं और बढ़ती आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए अनेक प्रकार के वित्तीय उत्पाद (योजनाएँ) लेकर आ रहे है। इस विकास का प्रत्यक्ष लाभार्थी ग्राहक ही है। इस प्रक्रिया में सेवा के दायरे का विस्तार करते हुए बैंक अब कारोबार की लागत में कमी करने का प्रयास कर रहे है।

प्रौद्योगिकी में वित्तीय व्यापार की प्रणालियो को पुनर्परिभाषित करने में नि:संदेह सबसे महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है और निभा रहा है। वित्तीय मध्यस्थों ने बडे पैमाने पर प्रौद्योगिकी को अपनाया है। बैंकिंग में आमूलचूल परिवर्तन किया है। ग्राहक अब उपभोक्ता के अनुकूल और गुणात्मक वित्तीय समाधान चाहता है। बैंक भी एटीएम, टेलीबैंकिंग, इंटरनेट बैंकिंग, मोबाईल बैंकिंग आदि जैसी सुविधाएँ देकर सेवा के वैकल्पिक माध्यम अपना रहे है। अधिकांश बैंक सही अर्थो में 'कभी भी कंही भी' बैंकिंग सेवा प्रदान करने के लिए अपने सभी कार्यालयों (शाखाओं) में कोर बैंकिंग साल्यूशन (सीबीएस) प्रणाली लागू कर चुके है। प्रौद्योगिकी ऐसी होनी चाहिए जो कोर बैंकिंग सुविधा से भी आगे बढकर विभिन्न प्रकार के मूल्य संबंधित उत्पाद और सेवा प्रदान करने के काम आ सके और उन्हें बेहतर बनाया जा सके।

भविष्य में बैंको के समक्ष आने वाली संभावित परिस्थितियों और उनसे निपटने के लिए जो रास्ते अपनाए जा सकते है उनकी रूपरेखा इस प्रकार है–

1. बैंक नियमो के बंधन से मुक्त होकर उदारीकरण और तकनीकी तरक्की का लाभ उठाते हुए सार्वभौमिक बैंकिंग की ओर रूख कर सकते है।
2. आकार का महत्व बढ़ जाएगा क्योंकि बैंको को अब विश्व के बडे–बडे बैंको से मुकाबला करना होगा । बैंक प्रतिस्पर्धा में बने रहने के लिए परस्पर रणनीतिक गठबंधन बनाने के बारे में सोच सकते है ।
3. प्रतिस्पर्धा के स्थान पर गठबंधन पर ध्यान दिया जा सकता है। भारतीय बैंको में अच्छी साझेदारी के साथ विदेशी बैंक सामने आ सकते है।
4. कौर बैंकिंग की स्वचालित प्रक्रिया के चालू के हो जाने के बाद अब शाखा नेटवर्क परिदृश्य में युक्तिसंगत बदलाव की आवश्यकता पड़ सकती है।
5. प्रतिस्पर्धी सेवाएं देने के लिए कितनी शाखाओं की आवश्यकता वास्तव में पड़ेगी इस तथ्य के आकलन के आधार पर युक्तिकरण करना होगा ।
6. एटीएम, कियोस्क, व्यवसाय, मोबाईल बैंकिंग, नेट बैंकिंग आदि जैसी सुविधाओं की बैंक शाखाओं द्वारा जरूरतो को पूरा करने के बाद अब भारी तकनीकी निवेश पर हुए खर्च और उस पर होने वाले आवर्ती व्यय के बदले में लाभ कमाने के इरादे से शीर्घ ही मार्ग बदल सकते है।
7. प्रतिस्पर्धा वातावरण में काम करने के लिए बैंको को बाजार की चाल के अनुसार चलने के लिए अपने आप को ढालना होगा। व्यवसाय प्रादर्शो को नये सिरे से तैयार करना होगा, कार्यकुशलता और उत्पादकता बढ़ानी होगी।

उपर्युक्त तथ्यों के प्रकाश में यह कहा जा सकता है कि प्रतिस्पर्धा में बने रहने के लिए वित्तीय क्षेत्र को जैविक के साथ–साथ अजैविक विकास और मूल्य श्रृंखला के भीतर संभावना और स्तर में वृद्धि और कार्यकुशलता को बडाने के लिए उपयुक्त व्यवस्थाओं और अन्य संरचनाओं पर ध्यान देना होगा। इसके साथ ही उपर्युक्त वर्णित चुनौतियों का सामना करने के रास्ते पर बैंकों के लिए नेतृत्व और प्रबंधन की चुनौतिया भी होगी क्योंकि संस्कृतियों की खाई पाटने में कठिनाईया और दुविधाएं सामने आ सकती है संभावित विलय और अधिग्रहण के कारण उत्पन्न अंतर्निहित सम्मिश्रित ऊर्जा का व्यवस्थित ढंग से उपयोग करना होगा।

वित्तीय सेवा क्षेत्र को मौजूदा ग्राहकों के साथ संबंध बनाये रखने, उनमें विस्तार करने तथा सभांवित ग्राहको के साथ नये सम्पर्को के विकास और मीडिया के माध्यम से ग्राहको को जानकारी देने के तरीके के बारे में निर्णय लेने में भारी चुनौतिया मिलना जारी रहेगी। बैंकों और अन्य वित्तीय संस्थाओं को सतर्क रहना होगा और अपने उत्पादो में लगातार सुधार और विचार की आक्रामक पद्धतियों को अपनाने की आवश्यकता होगी। एक ठोस एवं विश्वसनीय ब्रांड के रूप में अपनी मार्केटिंग करना भी कोई कम चुनौतीपूर्ण कार्य नहीं होगा वही बैंक बचेगें और तरक्की करगें जो अपने ग्राहको, शेयरधारकों और कर्मचारियों को ध्यान में रख कर और जिनके पास तमाम

* सहायक प्राध्यापक, भारतीय महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

कठिनाईयों एवं विपरित परिस्थितियों के बावजूद इन सब को सभंव बनाने की परिकल्पना धैर्य और संकल्प होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. सवलिया बिहारी वर्मा, डॉ. पाठक एस. वी., डॉ. पाण्डे पी. पी. - ग्रामीण बैंको की भूमिका, यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन नई दिल्ली।
2. भार्गव चन्द्रेश, - बैंकिंग प्रणाली, यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन नई दिल्ली।
3. डॉ. शर्मा विवेक, - बैंकिंग प्रबंध, अर्जुन पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली।

पत्र-पत्रिकाएं -

1. कुरूक्षेत्र पत्रिका - संपादक - कुरूक्षेत्र ग्रामीण क्षेत्र और रोजगार मंत्रालय कृषि भवन, नई दिल्ली।
2. योजना पत्रिका - 538 योजना भवन संसद मार्ग नई दिल्ली।
3. प्रतियोगिता दर्पण

समाचार पत्र - दैनिक भास्कर, बिजनेस स्टेन्डर्ड, बिजनेस भास्कर।

1. वेबसाईट एवं ब्लॉग्स - www.24duniya.com
   www.nayaindiya.com
2. D33P जागरण junction (आपकी आवाज, आपका ब्लॉग) प्रदीपचन्द्र निगम ब्लॉग।

****

भारत में महिला हिंसा एवं विधिक प्रावधान

डॉ. ज्योति मार्टिन *

प्रस्तावना – मानव अधिकार वह अधिकार है जो सभी व्यक्तियों को बिना किसी भेदभाव के प्राप्त होते है। यह अधिकार व्यक्ति को जन्म से ही प्राप्त होते है। यह व्यक्तित्व विकास के लिये आवश्यक होते है। महिलायें भारतीय संस्कृति, समाज और परिवार की एक महत्वपूर्ण कडी ही नहीं वरन सामाजीकरण की प्रक्रिया के विकास का सशक्त माध्यम है। इसलिये किसी भी राष्ट्र की बहुमुखी विकास उस राष्ट्र की महिलाओं की स्वतंत्रता एवं अधिकारों के साथ गुणात्मक संबंध रखता है। संयुक्त राष्ट्र संध के चार्टर की प्रस्तावना में कहा गया है कि हम संयुक्त राष्ट्र के लोग मूलभूत मानव अधिकारों में आस्था व्यक्त करते है। मानव अधिकारों के सार्वभौमिक घोषणा पत्र 1948 को सभी सदस्य राष्ट्रों द्वारा इसका सम्मान करने के लिये बाध्य किया गया है। इस घोषणापत्र के अनुच्छेद 2, 16(1), 23(2), 26(1) में महिलाओं के अधिकारों का उल्लेख किया गया है। महिलाओं के विकास और उत्थान के प्रति चेतना जाग्रत करने के लिये संयुक्त राष्ट्र संघ ने 1975 को अंतरराष्ट्रीय महिला वर्ष घोषित किया। 1993 को संयुक्त राष्ट्र संघ ने महिलाओं के विरूद्ध हिंसा के विलोपन की घोषणा को अंगीकार किया।

भारत में स्वतंत्रता के बाद महिलाओं की सामाजिक राजनैतिक और आर्थिक रूप से विकास के समान अवसर प्रदान के लिये संविधान में कुछ विशेष व्यवस्थायें प्रदान की गई है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 14 में महिलाओं को पुरूषों के समान कानून के समक्ष समानता तथा कानून का समान संरक्षण प्राप्त है। अनुच्छेद 16 में बिना भेदभाव के अवसर की समानता है। अनुच्छेद 51 क (इ) में कहा गया है कि प्रत्येक नागरिक का कर्त्तव्य होगा कि वह ऐसी प्रथाओं का त्याग करें जो स्त्रियों के सम्मान के विरूद्ध है। 73वें 74वें संशोधनों के बाद महिलाओं के लिये स्थानीय निकायों में 33.3% आरक्षण के बाद महिला अधिकारों की स्थिति में गुणात्मक परिवर्तन की शुरूआत की गई। 26 नवम्बर 2009 मे संविधान के 110वॉ संशोधन कर पंचायती राज संस्थाओं तथा स्थानीय नगर निकायों के प्रत्येक स्तर के 50% महिलाओं के लिये आरक्षित किये गये। संवैधानिक प्रावधानों के अतिरिक्त संविधान द्वारा प्रदत्त विधियों द्वारा भी महिला अधिकार को संरक्षण प्रदान किया गया है।

1. सती निवारण अधिनियम 1987
2. अनैतिक व्यापार निवारण अधिनियम 1956
3. दहेज निषेध अधिनियम 1961
4. विशेष विवाह अधिनियम 1954
5. प्रसूति सुविधा अधिनियम 1961
6. बाल विवाह अपराध अधिनियम 1929 संशोधन 1978
7. कुटुम्ब न्यायालय अधिनियम 1984
8. स्त्री अशिष्ट रूपण अधिनियम 1986
9. राष्ट्रीय महिला आयोग अधिनियम 1990
10 प्रसव पूर्व निदान तकनीक अधिनियम 1994
11. घरेलू हिंसा से महिला संरक्षण अधिनियम 2005
12. आपराधिक कानून (संशोधन) अधिनियम 2013

वर्ष 1975 में अन्तर्राष्ट्रीय महिला वर्ष एवं दशक के अर्न्तगत अन्तर्राष्ट्रीय एवं भारतीय महिला आंदोलन की पुन: सक्रियता के फलस्वरूप महिला स्थिति सुधार के लिए अनेक नीतिगत निर्णय लिये गये थे। नारी अधिकारों के लिये वैधानिक प्रयासों की श्रृंखला में भारत सरकार की महिला सशक्तिकरण नीति 2000 एक उल्लेखनीय कदम है। महिलाओं के लिये भारत सरकार द्वारा अनेक विकास कार्यक्रम योजना, जैसे–डवाकरा योजना, नोराड प्रशिक्षण योजना 1989, महिला समृद्धि योजना 1993, इंदिरा गांधी योजना 1995, ग्रामीण महिला विकास योजना 1996, महिला स्त्री शक्ति योजना 1998 आदि योजनाऐं शुरू की गई है। सरकार द्वारा महिलाओं के सशक्तिकरण हेतु महिला सशक्तिकरण नीति 2001 बनाई गई है जो महिलाओं के बहुमुखी विकास का मार्ग प्रशस्त करती है। सरकार द्वारा महिलाओं के अधिकार के लिये इनकी व्यवस्था करने के बाद भी महिलाओं के अधिकार सुरक्षित नहीं है। प्राचीन काल से ही महिला विरूद्ध हिंसा निरन्तर बढ़तें हुए सर्वाधिक चर्चित एवं गंभीर समस्या बनी हुई है। 16वीं शताब्दी की सामंती सोच पुरूषों में आज भी कायम है। स्त्री–पुरूष समानता तो है लेकिन वास्तविक धरातल पर देखें तो महिलाओं की पुरूषों के समकक्ष स्थिति पूर्ण दिखाई नही देती है। समानता की चर्चाए होती है परन्तु तस्वीर इतनी उजली नहीं है। महिलाएं एक अर्से से यातना, अवमानना एवं शोषण से ग्रस्त है। रोजमर्रा महिलाओं को थप्पड मारा एवं पीटा जाता है। प्रताड़ित महिलाऐं सामाजिक दबावों और रीतिरिवाजों के कारण अपनी तकलीफ, कष्ट, यातना और सरोकारों को आवाज नहीं दे पाती। महिलाओं के विरूद्ध हिंसा से जुडे आंकड़े पानी में बिछी विशाल चट्टान का दृष्टिगत एक कौना भर है। संयुक्त राष्ट्र संघ ने यह खुलासा किया है कि महिला विरूद्ध हिंसा सिर्फ परिवार और समुदाय के बीच होने वाली शारीरिक यौन तथा मनोवैज्ञानिक कार्यवाहियों तक सीमित नहीं है बल्कि इनके अंतर्गत यौन उत्पीड़न, दहेज, हिंसा, वैवाहिक बलात्कार, छेडछाड़, डराना, धमकाना, भावनात्मक दुरूपयोग, महिलाओं को खरीदना, बेचना, भ्रूण हत्या, सामाजिक हिंसा के सभी मामले,देह व्यापार में की जाने वाली हिंसा सब शामिल है।

संयुक्त राष्ट्र महासभा ने सन् 1995 में महिलाओं पर होने वाली हिंसा को महिला विरूद्ध हिंसा घोषित किया। संयुक्त राष्ट्र संघ ने इसे ऐसी हिंसा कहा जो समाज में महिला– पुरूष में भेदभाव के कारण की जाती है। उनके

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय महाविद्यालय, ढ़ाना, सागर (म.प्र.) भारत

अनुसार जब कोई ऐसी जोर जबरन वाली हरकत या यातना जिससे महिलाओं के निजी या सामाजिक जीवन की आजादी का हनन हो। इसे स्पष्ट करते हुए कहा कि ऐसी हरकतें जिसमें महिलाओं को शारीरिक, आर्थिक यौनिक या मानसिक चोट पंहुचे या चोट पंहुचाने की संभावाना हो उसे महिला हिंसा की संज्ञा दी जाती है।

शोध के मुताबिक भारत को महिलाओं के प्रति अपराधों के लिये दुनिया का चौथा सबसे खतरनाक देश माना है। फेसबुक जैसे सोशल मीडिया साइट्स की भी महिला को अपमानित करने और वस्तु रूप में रूपान्तरित करने में बड़ी भूमिका है। ये केवल शरीर पर नहीं बल्कि विचारों पर भी हमला बोलते है। नेशनल क्राइम इन इंडिया की रिर्पोट के अनुसार भारत में वर्ष 2009 में 2,03,804 मामले दर्ज हुए जो बढ़कर वर्ष 2013 में 3,09,546 मामले दर्ज किये गये क्रमश: वर्ष 2010 में कुल अपराध 2,13,585, वर्ष 2011 में 2,28,649 तथा 2012 में 2,44,270 अपराध दर्ज किये गये निम्न तालिका से महिला हिंसा क्रम प्रदर्शित होता है।

तालिका क्र. -1 (नीचे देखे)

महिलायें समाज व राज्य की विभिन्न गतिविधियों में अपनी सहभागितायें दे रही है। वहीं पर महिलायें शारीरिक, मानसिक, आर्थिक व यौन हिंसा का शिकार भी हो रही है। ये अपराध राष्ट्रीय स्तर पर होते है। वर्ष 2013 में राज्यों से प्राप्त आंकडे एवं प्रतिशत में महिला हिंसा के संदर्भ में आंध्रप्रदेश एवं उत्तर प्रदेश सबसे आगे है जहां क्रमश: कुल आपराधिक मामले 32,809 एवं 32,546 है। पश्चिम बंगाल में 29,826 मामले, महाराष्ट्र में 24,895 मामले एवं मध्यप्रदेश में 22,061 मामले दर्ज हुए है।

तालिका क्र. -2 (पीछे देखे)

जैसा कि तालिकाओं से स्पष्ट है। निर्विवाद रूप से यह कहा जा सकता है कि महिला हिंसा की यह प्रक्रिया घर की देहरी से लांघ कर सम्पूर्ण समाज को अपनी मुठ्ठी में कसती चली जा रही हौ हिंसा से बचने के लिये पुरूष को आज अपनी परम्परावादी मानसिकता को बदलना होगा। प्रत्येक सभ्य समाज का दायित्व है कि वह अपने परिवार और अपने इर्द गिंद हिंसा न हो जागरूकता कायम करें। भारत में घरेलू हिंसा के विरूद्ध कानून अवश्य बना है किन्तु इस कानून के अनुसार कोई विशेष स्थिति में परिवर्तन दिखाई नहीं दिया है केवल सामाजिक और व्यक्तिगत चेतना से ही इसे कम किया जा सकता है। जब प्रत्येक परिवार में महिला की प्रत्येक स्तर पर पुरूषों के समान अधिकार दिया जायेगा तथा उन्हें अपने अधिकारों को प्राप्त करने में सहयोग दिया जाएगा ऐसा तभी संभव है जब पुरूषो के दृष्टिकोण में बदलाव आयेगा तथा महिलाओं को सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक व राजनैतिक क्षेत्र में विकास करने तथा निर्णय लेने का अवसर दिया जाएगा। मनोवैज्ञानिकों, समाज शास्त्रियों और अणवेशिकों से उम्मीद की जाती है कि वे अपने-अपने स्तर पर नये -नये सुझाव सरकार को देते रहें ताकि महिला हिंसा पर रोक लगाई जा सके। तभी भारतीय संस्कृति के रक्षार्थ महिलाओं को सम्मान, प्रतिष्ठा और प्रगति में अपनी अहम भूमिका निभाते हुए गौरव प्राप्त हो सकेगा।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. एम.ए. अंसारी - महिला एवं मानव अधिकार 2003
2. राजकिशोर - मानव अधिकारों का संघर्ष।
3. सुधा अवस्थी - घरेलू हिंसा में महिला संरक्षण विधि।
4. डॉ बसंतीलाल बाबेल - मानव अधिकार संरक्षण अधिनियम।
5. डॉ राधेश्याम द्विवेदी - महिलाओं का उत्पीडन और विधिक उपचार।
6. हनुमान प्रसाद गुप्त - नारी उत्पीडन एवं जागरूकता ।
7. प्रतियोगिता दर्पण - जून 2012
8. http://ncrb.gov.in/CD-CII2013/Chapters/5-Crime%20against%20Women.pdf
9. http://ncrb.gov.in/CD-CII2013/CII13-TABLES/Table%205.1.pdf .

महिलाओं के विरूद्ध अपराध की घटनाओं का तुलनात्मक चार्ट वर्ष 2009 से 2013 तक

क्र.	अपराध	वर्ष					तुलनात्मक प्रतिशत 2013 एवं 2012
		2009	2010	2011	2012	2013	
1	बलात्कार (धारा376 IPC)	21,397	22,172	24,206	24,923	33,707	35.2%
2	व्यपहरण / अपहरण(363 से 373 IPC)	25,741	29,795	35,565	38,262	51,881	35.6%
3	दहेज मृत्यु(302 से 304 IPC)	8,383	8,391	8,618	8,233	8,083	-1.8%
4	पति व ससुराल द्वारा प्रताडना (498 ए IPC)	89,546	94,041	99,135	1,06,527	1,18,866	11.6%
5	लज्जा भंग करने के आशय से किसी महिला पर हमला (354 IPC)	38,711	40,613	42,968	45,351	70,739	56.0%
6	महिलाओं की इज्जत का अनादर करना (509IPC)	11,009	9,961	8,570	9,173	12,589	27.2%
7	महिलाओं का विदशों से आयात करना(366 बी IPC)	48	36	80	59	31	-47.4%
अ	महिलाओं पर घटित IPC के कुल अपराध	**1,94,832**	**2,05,009**	**2,19,142**	**2,32,528**	**2,95,896**	**27.3%**
8	सती प्रथा अपराध रोकथाम अधिनियम का आयोग 1987	0	0	0	0	0	0
9	अनैतिक देह व्यापार अधिनियम 1956	2,474	2,499	2,435	2,569	2,579	0.6%
10		845	895	453	141	362	156.7%
11	दहेज प्रथा अधिनियम 1961	5,650	5,182	6,619	9,038	10,709	17.9%
B	महिलाओं के विरूद्ध कुल अपराध	**8,969**	**8,576**	**9,507**	**11,742**	**13,650**	**16.2%**
	कुल अपराध (A+B)	**2,03,804**	**2,13,585**	**2,28,649**	**2,44,270**	**3,09,546**	**26.7%**

Incidence & Rate of crime committed against women in states,UTs and cities during 2013

S.	State/UT	incidence	Percentage contribution Toall india total	Female popul-ation(in lakh)	Rate of total cognizable Crimes(col.5)
1	ANDHRA PRADESH	32809	10.60	430.29	76.25
2	ARUNACHAL PRADESH	288	0.09	6.04	47.68
3	ASSAM	17449	5.64	153.15	113.93
4	BIHAR	13609	4.40	485.99	28.00
5	CHHATTISGARH	7012	2.27	124.60	56.28
6	GOA	440	0.14	8.89	49.49
7	GUJARAT	12283	3.97	288.12	42.63
8	HARYANA	9089	2.94	121.12	75.04
9	HIMACHAL PRADESH	1478	0.48	33.89	43.61
10	JAMMU&KASHMIR	3509	1.13	57.53	60.99
11	JHARKHAND	6506	2.10	157.69	41.26
12	KARNATAKA	12027	3.89	299.84	40.11
13	KERALA	11216	3.62	179.67	62.43
14	MADHYA PRADESH	22061	7.13	357.89	61.64
15	MAHARASHTRA	24895	8.04	554.49	44.90
16	MANIPUR	285	0.09	12.48	22.84
17	MEGHALAYA	343	0.11	13.32	25.75
18	MIZORAM	177	0.06	5.00	35.40
19	NAGALAND	67	0.02	10.99	6.10
20	ODISHA	14173	4.58	205.70	68.90
21	PUNJAB	4994	1.61	130.88	38.16
22	RAJASTHAN	27933	9.02	336.01	83.13
23	SIKKIM	93	0.03	2.95	31.53
24	TAMIL NADU	7475	2.41	340.86	21.93
25	TRIPURA	1628	0.53	18.14	89.75
26	UTTAR PRADESH	32546	10.51	988.31	32.93
27	UTTARAKHAND	1719	0.56	50.29	34.18
28	WEST BENGAL	29826	9.64	444.25	67.14
	TOTAL STATES	**295930**	**95.60**	**5818.38**	**50.86**
UNION TERRITORIES					
29	A & N ISLANDS	106	0.03	2.53	41.90
30	CHANDIGARH	488	0.16	6.68	73.05
31	D & N HAVELI	21	0.01	1.82	11.54
32	DAMAN & DIU	24	0.01	1.00	24.00
33	DELHI	12888	4.16	87.80	146.79
34	LAKSHADWEEP	3	0.00	0.39	7.69
35	PUDUCHERRY	86	0.03	7.08	12.15
	TOTAL (UTS)	**13616**	**4.40**	**107.30**	**126.90**
	TOTAL (ALL -INDIA)	**309546**	**100.00**	**5925.68**	**52.24**

****

संवैधानिक प्रावधान तथा बाल विकास व संरक्षण

डॉ. विनिता भालसे * अंजू बाला ठाकरे **

प्रस्तावना – प्राचीन काल से ही धर्म- भावना के वषीभूत होकर असहायक एवं साधनहींन बालकों को दान के रुप में सहायता दी जाती थी। अब एक नवीन विचारधारा ने जन्म लिया है कि सभी बालकों को सहायता की आवश्यकता है, चाहे वे असहाय हो साधनहींन हो या सामान्य। इस प्रकार बाल विकास व संरक्षण अब विस्तृत अर्थो में प्रयुक्त होने लगा है इसके अन्तर्गत सरकारी,गैर सरकारी व अन्तर्राष्ट्रीय संस्था द्वारा आर्थिक और बाल विकास व संरक्षण संबंधी कार्यक्रमों का समावेश किया गया है। जिसके द्वारा सभी बालकों के शारीरिक, मानसिक और भावनात्मक विकास को सहायता प्रदान की जाती है।

बाल विकास कार्यक्रम बालक परिवार और समाज तीनों के लिए महत्वपूर्ण है। बालक के लिए इसका महत्व इसलिए है कि उसका मानसिक शारीरिक और भावनात्मक विकास अच्छी तरह हो जाता है, वह अपने कर्त्तव्यों का पालन सरलता से कर सकेगा। बच्चें परिवार का एक महत्वपूर्ण अंग होते हैं और इसलिए बाल विकास का महत्व समाज के लिए कम नहीं है। बालक समाज का विकास का बहुत ही महत्वपूर्ण अंग है इसलिए बाल विकास व संरक्षण का महत्व राष्ट्रीय दृष्टिकोण में भी कम नहीं है बाल विकास ही राष्ट्र की वास्तविक शक्ति होते है। इसलिए इनके भविष्य का निर्माण ठीक और अच्छी दिशा में होना चाहिए, इस बात को ध्यान में रखते हुए राष्ट्रीय स्तर पर व अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर बाल विकास व संरक्षण के लिए संवैधानिक अधिकारों की व्यवस्था की गई।

अनुचछेद 21 (क) शिक्षा का अधिकार राज्य छः वर्ष से चौदह वर्ष तक की आयु वाले सभी बालकों के लिए नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा देने की ऐसी रीति में, राज्य विधि द्वारा, अवधारित करे, उपलब्ध करेगा। संविधान (छियालीसवॉ संसोधन) अधिनियन, 2002 की धारा 2 द्वारा (1-4-2010 से) अन्त: स्थापित।

अनुच्छेद 24 में कारखनों आदि में बालको के नियोजन का प्रतिषेध चौदह वर्ष से कम आयु के किसी बालक को कारखानों या खान अन्य परिसंकटमय नियोजन ,में नहीं लगाया जाएगा।

नीति निदेशक तत्व अनुच्छेद 45 छः वर्ष से कम आयु बच्चों के लिए प्रांरभिक बाल्यवस्था देख रेख और शिक्षा का उपबंध राज्य सभी बालको के लिए छह वर्ष की आयु पूरी करने तक प्रारंभिक बाल्यावस्था देख रेख और शिक्षा देने के लिए उपबंध करने का प्रयास करेगा।

अनुच्छेद 47 पोषाहार स्तर और जीवन स्तर को ऊँचा करने तथा लोक स्वास्थ्य का सुधार करने का राज्य का कर्तव्य पहले। मूल कर्तव्य अनुच्छेद 51 क. (ट) यदि माता-पिता या संरक्षक है, तो छह वर्ष से चौदह वर्ष तक की आयु वाले अपने, यथास्थिति, बालक या प्रतिपाल्य के लिए शिक्षा के अवसर प्रदान करें।

समन्वित बाल विकास सेवा सन् 1974 में राष्ट्रीय बाल विकास नीति स्वीकार किये जाने के बाद 1975 में 33 समन्वित बाल विकास सेवा बालकों परियोजनाओं के जरिये इस कार्यक्रम की शुरूआत हुई।

बच्चों के अधिकारों के बारे में संयुक्त राष्ट्र की घोषणा 20 नवम्बर 1989 को संयुक्त राष्ट्र महासभा ने बच्चों के अधिकारों के बारे में एक घोषणा को मंजुरी दी। इसमें दुनिया के किसी भी स्थान पर रहने वाले बच्चों को शोषण, उपेक्षा और उत्पीड़न से बचाने की बात की गई है। इसके कई प्रावधान बच्चों के बारे में 1990 में हुए विश्व शिखर सम्मेलन में सन् 2000 तक के लिए निर्धारित लक्ष्यो से स्पष्ट हो जाते हैं। घोषणा में प्रत्येक बच्चों के नागरिक, राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक अधिकारो की और ध्यान आकृष्ट किया गया है। भारत सरकार ने 2दिसम्बर 1992 में घोषणा पर हस्ताक्षर किए।

यूनीसेफ- महिला व बाल विकास विभाग द्वारा, यूनीसेफ से संबधित मामलों में तालमेंल रखने वाले केन्द्रीय संगठन की भूमिका निभाता है। भारत में 1949 से ही यूनिसेफ की गतिविधियाँ जुटा रहा है।

बाल विकास के लिए राष्ट्रीय स्तर व अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर जितने भी प्रयास किये गऐ हैं। वह प्रशंसनीय है, क्योंकी इन अधिकारों से बच्चों के जीवन, संरक्षण और विकास को एक नई दशा व दिशा मिली है। फिर भी वर्तमान समय में कुछ समस्याऐं है। जो बाल विकास को बाधित कर रही है। जैसे **कुपोषण, बालश्रम , बाल तस्करी व बाल शिक्षा**

कुपोषण – हमारे देश की सबसे बड़ी समस्या कुपोषण की है। भारत 29.5% बच्चे कुपोषित है। ग्रामिण क्षेत्र में 30.9% और शहरी क्षेत्र में 26.4% बच्चो कुपोषण का शिकार है। अत: जिन्हें पौष्टिक भोजन नहीं मिल रहा है। जिसके परिणामस्वरूप बच्चों का शारीरिक व मानसिक विकास नहीं हो रहा है। कुपोषण के कारण हैं।

शिक्षा का निम्न स्तर भारत में 2011 के आंकडे अनुसार 74% साक्षरता दर है। यह केवल कागजो पर है, जब व्यवहारिक रूप से देखेगें तो साक्षरता दर 50% होगी। इसलिए माता-पिता की अज्ञानता के कारण बच्चों का विकास नहीं हो पा रहा है। निर्धनता भारत में 2011-12 के आंकडे 29.8 फीसदी गरीबी रेखा के नीचे जीवन व्यापन कर रहे। अत: उनकी मुलभूत आवश्यकताओ की पूर्ति भी नहीं हो पाती।

* अतिथि विद्वान (राजनीति विज्ञान) शासकीय महाविद्यालय, निवाली, जिला-बड़वानी (म.प्र.) भारत
** अतिथि विद्वान (क्रीड़ा) शासकीय महाविद्यालय, निवाली, जिला-बड़वानी (म.प्र.) भारत

पुरूष प्रधान समाज भी कुपोषण का कारण है पुत्र की लालसा में बच्चों की संख्या में वृध्दि हो जाती है। जिसके परिणाम स्वरुप बच्चों के विकास में बाधाए उत्पन्न होती है।

रूढ़ीवादिता भारत गांवो का देश है। इसलिए गांवो में आज भी रूढ़ीवादी परम्पराऐं है। जैसे जन्म के तुरन्त बाद पॉच दिनो तक मॉ के द्वारा स्तनपान न कराया जाना, गर्भवती व धात्री महिला के खान पान में परहेज जिसका परिणाम यह होता है, कि बच्चा जन्म से ही कुपोषण का शिकार रहता है ।

विवाह की कम उम्र कानुनी तौर पर जो उम्र निर्धारित की गई है। उसके अन्तर्गत गॉवो में विवाह नहीं हो रहे है। अर्थात् 18 से कम उम्र में लड़कियों का विवाह हो रहा है, जिससे उनका शरीर परिपक्व नहीं रहता है। अत: वह अस्वस्थ्य संतान को जन्म देती है।

बालश्रम – भारत के सामने बालश्रम एक गंभीर चुनौती हैं।बाल मजदुर का नाम सुनते ही नन्हें नन्हें बच्चो का ध्यान आ जाता हैं ।जिनकें हाथों में बेग की जगह धोने के गिलास , खिलौनों की जगह गेती फॅावडा देखने को मिलता हैं। यह कैसी विडंबना है,कि देश के भावी नागरिक अपनें बचपन व शिक्षा के अधिकार से कोसो दुर है।

बाल मजदुर – आर्थिक रुप से कमजोर परिवार के बच्चे घरेलु कामों में मदद करने के अलावा मजदुरी करने को मजबुर होते है।सरकारी आकड़ो के अनुसार देश में करीब 2 करोड बाल मजदुर है, लेकिन गैर सरकारी संगठनो के मुताबिक यह आंकड़ा छ: करोड़ से ज्यादा है।

बाल तस्करी – बाल तस्करी भारत सहित विश्व में विकराल रुप धारण किये हुए है बाल तस्करी के कारण करोड़ो बच्चे बेसहारा व शिक्षा से वंचित है, यमन, इराक,नाईजीरिया सहीत कई देशों में हजारों लडकियो को आतंकी अपहरण कर उनके साथ ज्यादती कर रहे हैं।

हमारे मध्यप्रदेश के कैलाश सत्यार्थी ने अपना पुरा जीवन बचपन बचाओं आंदोलन को समर्पित कर दिया और इस आंदोलन के अंतर्गत हजारों बच्चों को शिक्षा से जोडकर उनका भविष्य बनाने के लिये प्रतिबद्ध हो गए।

बाल शिक्षा – भारत में अनिर्वाय व नि:शुल्क शिक्षा व्यवस्था लागु होने के बावजुद भी स्थिति ठीक नहीं है, क्योंकि एसौचेंम की ताजा रिपोर्ट के अनुसार पिछले दस सालों में देश प्राथमिक स्कूलो की संख्या में सालाना 3.2फीसदी वृध्दि हुई है। मतलब देश में इनकी कुल संख्या करीब 2लाख 40हजार हैं हालांकि, इसके बावजुद भी करीब 14लाख बच्चे अब भी स्कूल से बाहर है। वर्ष 2000से 2011 के बीच करीब 1करोड़60लाख बच्चों ने स्कूल जाना शुरु किया,लेकिन करीब 29फीसदी बच्चे प्राथमिक शिक्षा पूरी करने से पहले ही छोड़ देते है।

कुछ कारण इस प्रकार है – एक चौथाई स्कूलो में पानी नहीं,करीब 35 फीसदी स्कूलो में इस्तेमाल लायक टॉयलेट नहीं है। करीब 25 फीसदी स्कूलो में अब भी पीने का पानी नहीं है और करीब 35 फीसदी स्कूलो में खेल के मैदान नहीं है। शिक्षको की कमी पुरे देश में करीब 17 फीसदी स्कूलो में केवल 1 शिक्षक ही है।

मॉनीटरिंग का अभाव स्कूलो में मॉनीटरिंग की व्यवस्था कमजोर है। बच्चों को दी जा रही शिक्षा की गुणवत्ता का आकलन नहीं होता। न ही स्कूल छोड़ने वाले बच्चों के बारे में जानकारी होती है।

सुझाव –

1. महिला तथा बाल विकास कार्यक्रम(DWcRA)योजना को अनौपचारिक रुप से क्रियान्वित किया जाना चाहिए ।
2. युनिसेफ रिवाल्विंग कोष में अब केन्द्र तथा राज्यों में यह अनुपात 50:50 है। इसे बढाया जाना चाहिए।
3. समाज के प्रत्येक व्यक्ति को रुढ़िवादी परंपरा का त्याग करना चाहिए।
4. बाल मजदुरी व बाल तस्करी के जिम्मेंदार लोगो के लिए कठोर कानुन की आवश्यकता है।
5. सर्व शिक्षा को अधिक प्रभावी बनाना चाहिए।
6. बचपन बचाओं आंदोलन को बढ़ाने व जन-जन तक पहुंचाने के लिए युवा आगे आए।

निष्कर्ष – बच्चों के जीवन संरक्षण और विकास के लिए नीति निर्धारकों ने जो योजनाऍ व नीतियॉ बनाई तथा विश्व स्तर पर जो घोषणाऍ की है, वह संतोषजनक है। फिर भी जो चुनौतियॉ सामने है,उसके लिए भारत सरकार प्रयासरत् है । साथ ही भारत के प्रत्येक व्यक्ति को इस कार्य के लिये आगे आना चाहिए तब यह संकल्प पूर्ण हो पाएगा ।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. उपाध्याय ए. बाल विकास तथा मनोविज्ञान 2013 ।
2. कौर एच. भारत में निर्धनता एवं बाल मजदुरी 2014 ।
3. डॉ.गोस्वामी एस.बी. भारत का संविधान 2014 ।
4. पाल एस. अन्तर्राष्ट्रीय सम्बंध 2012 ।
5. दैनिक भास्कर 20-2-2015 अंक ।

****

भारत में महिला सशक्तिकरण एवं विधिक प्रावधान

डॉ. अनिल कुमार जैन *

प्रस्तावना – नेपोलियन बोनापार्ट ने नारी की महत्ता के संदर्भ में कहा था कि ' मुझे एक योग्य माता दो, मैं तुमको एक राष्ट्र दूंगा।' हमारे भारत में भी नारी के संबंध में कहा गया है ' यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता।''

अतीत से वर्तमान तक नारी विषयक अनेक जुमले उछलते रहे है। देवी व शक्ति स्वरूपा से लगाकर आँचल में दूध आँख में पानी, अबला जीवन की करूण कहानी के कई स्वर, तान, आलाप के बाद भी उसका संगीत आज तक 'सम' पर नहीं आ पाया है।

लंबी भूमिका और वैचारिक वाद-विवाद के मन्तव्यों में सच सिर्फ इतना है कि हमारे कृषि प्रधान देश में भी खेती के उत्पादन की धूरी के केन्द्र में, नारी के आसीन होने पर भी भारत में 'किसान कृषक'' शब्द का स्त्रीलिंग शब्द नहीं है। यह नारी की महत्ता की स्वीकृति को नकारना ही तो है।

सच्चाई सिर्फ इतनी है कि हमारा देश आदर्शवादी है, इसलिये सैद्धांतिक रूप में सिर्फ जननी माता होने के गौरव पूर्ण स्थान की अधिकारिणी स्त्री को अनन्त गुणों की आधार कहा गया है। पृथ्वी की सी सहनशीलता, सूर्य जैसा तेज, समुद्र की गंभीरता, पुष्पों जैसा मोहक सौन्दर्य तथा कोमलता, चन्द्रमा जैसी शीतलता महिला में स्वीकार की गई है। नारी को दया, करूणा, ममता, सहिष्णुता और प्रेम की पवित्र मूर्ति के रूप में उसके अपने त्याग और बलिदान के कारण इसको भारतीय संस्कृति की अमूल्य निधि स्वीकार किया गया है। यथार्थ में यह सब खुशामद है। प्रवंचना है।

आश्चर्य यह है कि कथनी और करनी में, नारी जाति के प्रति समाज के चिन्तन तथा आचरण और व्यवहार में आकाश पाताल का अंतर स्पष्ट है। महिलाऐं सदैव शोषण, तिरस्कार, अन्याय तथा समाज में विद्यमान अनेक प्रथाओं की शिकार रही है। इसका सबसे क्रूरतम प्रत्यक्ष उदाहरण सती प्रथा है। भारतीय समाज में प्रचलित असंख्य कुरीतियाँ आज भी यथावत विद्यमान है जैसे पर्दा प्रथा, बाल विवाह, भ्रूण व कन्या वध, विधवा विवाह तथा अन्तर्जातीय विवाह का प्रतिशोध-ऑनर किलिंग आदि।

महिलाओं के प्रति बाल्यावस्था या उससे पहले से ही परिवार तथा समाज द्वारा अत्याचार प्रारंभ हो जाते हैं। भारतीय लड़की के प्रति नामकरण, पहनावा, खानपान, स्वास्थ्य व शिक्षा में परिवार एवं समाज भेद भाव करता है। इसका प्रारंभ गर्भावस्था में ही भ्रूण का लिंग ज्ञात कर, गर्भपात कराने की प्रवृत्ति से हो जाता है। भारत में 40 लाख मादा भ्रूण हत्या प्रतिवर्ष होती है। साथ ही बालिका वध की क्रूर परम्परा, कन्या व्यापार, छेड़छाड़, मानव तस्करी जैसी घटनाऐं, संचार माध्यमों के लिये सदैव लोकप्रिय विषय रहे है। नारी को पत्नि रूप में उत्पीड़न से मुक्ति नहीं मिलती है। दहेज-हत्या, क्रूरता, शारीरिक और मानसिक पीड़ा और परिवार में नौकरानी से भी बदत्तर श्रम तथा विविध उत्तरदायित्व पूर्ण कर्तव्यों के निर्वाह के पश्चात् उसका अपना कोई वजूद ही दोष नहीं रह पाता है। माता के रूप में भी गर्भावस्था के कष्ट तथा कन्या जन्म होने पर, सारे परिवार की प्रताड़ना में भी स्वयं को ही दोषी मानना उसकी नियति रही है।

पिता रक्षन्ति कौमारे, पति रक्षित यौ वने
रक्षन्ति स्थावरे पुत्रा न स्त्री स्वातंत्र महेति।

अर्थात् स्त्रियाँ कभी स्वतंत्र रहने योग्य नहीं है। यदि हम वर्तमान स्थिति भी देखे तो आज भी आम भारतीय के लिये लड़की अनचाही संतान होती है। अनेकों कानूनों, सुविधाओं और प्रोत्साहन के बाद भी आज लिंगानुपात निरन्तर बदलता ही रहा है। इतनी जागरूकता के बाद भी राष्ट्रीय महिला आयोग तथा महिला और बाल विकास विभाग के आंकड़े यह हकीकत बयान कर रहे है।

1. प्रति 24 मिनिट में एक यौन शोषण, प्रति 23 मिनिट में अपहरण हो रहे है।
2. भारत में 102 मिनिट के अंतराल में एक महिला दहेज उत्पीड़न की शिकार हो रही है।
3. प्रतिवर्ष जितनी लड़कियाँ जन्म लेती है, उनमें 30 प्रतिशत ही अपना 15 वाँ जन्मदिन मना पाती है।
4. गर्भपात के 99 प्रतिशत मामले में प्राय: भ्रूण का लड़की होना हैं।
5. महिलाओं के प्रति किये अपराधों में 54 प्रतिशत मामलों में, घर का व्यक्ति या रिश्तेदार या परिचित होता है।

खैर, सभी समस्याओं का प्रभावी समाधान भी सिर्फ नियम और कानून ही होते हैं। इनका निर्माण भी सामाजिक न्याय और नैतिक आदर्श के आधार पर ही संभव है। सच है, स्वाधीनता प्राप्त होने के पश्चात् हमारे यहां महिला सुरक्षा, महिला कल्याण तथा महिला सशक्तिकरण के लिए अनेक महत्वपूर्ण एवं प्रभावी प्रयास किये गये है। इनमें सर्वाधिक महत्वपूर्ण संविधान प्रदत्त संवैधानिक अधिकार है। संविधान द्वारा भारत के प्रत्येक नागरिकों को बिना किसी भेदभाव के बराबरी के अधिकार दिये है। स्वत: महिलाओं को भी सहज ही पुरूषों के बराबरी के सभी अधिकार प्राप्त हो गये है। विशिष्ट अधिकारों में महिला सुरक्षा तथा कल्याण से जुड़े निम्न प्रावधान उल्लेखनीय है।

संविधान का अनुच्छेद 14 व 15 (1) (2), विधि के समक्ष सभी नागरिकों को समता व समान संरक्षण का अधिकार देता है। विधि किसी भी नागरिक के प्रति लिंग, जाति, धर्म, वेश व जन्म स्थान के आधार पर भेदभाव नहीं करेगी। इसके साथ-साथ यह भी प्रतिपादित किया गया है कि अनुच्छेद 15 (3) के अंतर्गत राज्य स्त्री व बच्चों के हित के लिए विशेष विधि भी बना सकेगा। अनुच्छेद 16 में लोक सेवाओं में सभी नागरिकों को समान अवसर देने की व्यवस्था है। अनुच्छेद 23 मानव के दुर्व्यवहार व बलात् श्रम पर रोक लगाता है। नीति निर्देशक तत्वों के अनुच्छेद 39 के द्वारा, राज्यों को स्त्री विषयक अधिकारों यथा उनके स्वास्थ्य व प्रसूति तथा मानवोचित दशा और समान कार्य के लिए समान वेतन आदि के संबंध में पृथक से कानूनी प्रावधाना हेतु निर्देश दिए गए है। अनुच्छेद 51 (ए) में ऐसी प्रथाओं को त्यागने का निर्देश है, जो स्त्रियों के सम्मान के विरूद्ध है। इन महिला अधिकारों के संरक्षण हेतु समय-समय पर कुछ और विधेयक भी सन् 2001, 2005,

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

2006, 2007, 2008 में संसद में पारित किए गये।

स्त्री सशक्तिकरण हेतु वैधानिक व्यवस्थाओं के अंतर्गत भारतीय संसद में सन् 1948 में ' हिन्दू कोड बिल ' भी प्रस्तुत हुआ था। जिसमें से बाद में स्त्री पुरूष समान अधिकारी अधिनियम (1950), हिन्दू विवाह अधिनियम (1955) एवं विवाह विच्छेद अधिनियम 1969, हिन्दू उत्तराधिकारी अधिनियम (1955), हिन्दू नाबालिग एवं संरक्षता अधिनियम (1950), हिन्दू दत्तक ग्रहण व संरक्षण व भरण पोषण अधिनियम (1956) आदि कानून के रूप भारत में महिला अधिकारों की सुरक्षा के प्रयास रूप में पारित हुए है।

'विशेष विवाह अधिनियम 1961' के अंतर्गत किसी भी धर्म की स्त्री या पुरूष अदालत में पंजीकरण द्वारा विवाह कर सकते है। 'हिन्दू विवाह अधिनियम 1955' के अंतर्गत एक पत्नि के जीवित रहते पुरूष दूसरा विवाह नहीं कर सकता। 'अनैतिक व्यापार (निवारण) अधिनियम' देह व्यापार से संबंधित था, जिसे 1986 में संशोधित कर कानून की दृष्टि से यौन शोषण को संज्ञेय अपराध बनाया गया है। इसी से संबंधित 'द इम्मोरल ट्रैफिक प्रीवेन्शन एक्ट' सन् 1978 को ही संशोधन करके 1986 में पारित किया गया। इसके अंतर्गत धंधे से पकड़ी गई वैश्याओं के साथ भी नरमी का व्यवहार करने, तथा उनके पुनर्वास की व्यवस्था का प्रावधान है। 'नारी अशिष्ट चित्रण (प्रतिबंध) अधिनियम' सन् 1986 द्वारा नारी के अश्लील चित्रण को अपराध घोषित किया गया।

इसके अतिरिक्त भारतीय दण्ड संहिता सन् 1860 में नारियों के प्रति अत्याचार व शोषण के विरूद्ध विविध धाराओं में सजा देने की व्यवस्था विद्यमान है। जिसमें विशेष रूप से महिला संबंधी छेड़छाड़, लज्जाभंग, बलात्कार, यौन शोषण तथा दहेज आदि अपराधों के लिये दण्ड की व्यवस्था है। इसी प्रकार भारतीय साक्ष्य अधिनियम 1972 महिलाओं से संबंधित प्रावधानों के अंतर्गत धाराओं 112, 113 (क) (ख) तथा 114 (क) आदि में विशेष उपबंध है। यहां तक की दीवानी प्रक्रिया संहिता 1908 में भी महिलाओं के प्रति गिरफ्तारी व कुर्की से संबंधित विशेष स्थिति को ध्यान में रख विशेष उपबंध किये गये है। भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम 1925 महिला को सर्वप्रथम उत्तराधिकार संबंधी अधिकार प्रदान करने के लिए विशेष रूप से उल्लेखनीय है। गर्भपात करना और करवाना दोनों ही भारतीय दण्ड संहिता 1860 के अनुच्छेद 312, 316 के अंतर्गत अपराध थे। लेकिन स्वास्थ्य व प्राण रक्षा के लिये गर्भपात को अपराध नहीं, मानकर 'गर्भावस्था समापन चिकित्सा अधिनियम 1971' पारित किया गया है।

भारत में महिलाओं के प्रति घरेलू हिंसा व्यापक रूप में ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में विद्यमान है। आपराधिक कानून तथा दीवानी कानून दोनों ही इसकी रोकथाम में असफल रहे है। ऐसी स्थिति में घरेलू हिंसा से पीड़ित महिलाओं के लिए व्यापक सम्मिलित अपराधिक एवं दीवानी विधि पारित करना आवश्यक होने से भारत सरकार ने अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर हुए निर्णयों एवं अनुदेशों के आधार पर 'घरेलू हिंसा से महिलाओं का संरक्षण अधिनियम 2005' पारित किया। सन् 2012 के दिल्ली में घटित निर्भया प्रकरण ने नारी सुरक्षा से जुड़े सभी कानूनों को पीछे छोड़ यौन उत्पीड़न के विरूद्ध मृत्यु दण्ड तक की सजा का प्रावधान किया गया है।

यह उल्लेख यहां अप्रसांगिक नहीं होगा कि अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भी नारी उत्पीड़न निवारण के प्रयास संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा किये जा रहे है। इनमें मोटे रूप में –

(i) संयुक्त राष्ट्र चार्टर 1945 के अनु. 1 (3) तथा 55 द्वारा, लिंग भेद असमानता समाप्त करना है।

(ii) मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा, 1948 में सभी मनुष्य स्त्री पुरूष के लिए समान मानव अधिकारों की मान्यता।

(iii) तेहरान घोषणा 1968 द्वारा दुनिया में हो रहे महिलाओं के प्रति भेदभाव तथा घरेलू हिंसा को समाप्त करने के सभी राष्ट्रों को निर्देश जारी करना।

(iv) अंतर्राष्ट्रीय महिला वर्ष की घोषणा 1975 द्वारा प्रतिवर्ष 08 मार्च को महिला दिवस घोषित किया गया तथा सभी राष्ट्रों से महिला भेदभाव समाप्त करने उनको उत्पीड़न से मुक्ति देने तथा उनकी दुर्दशा को सुधारने के लिये विधि बनाने का आव्हान।

इसी संदर्भ में भारत ने भी संयुक्त राष्ट्र संघ के निर्देशों के पालन में सन् 1985 में मानव संसाधन विकास मंत्रालय के अंतर्गत महिला बाल विकास विभाग निर्मित किया तथा सन् 1992 में राष्ट्रीय महिला आयोग का गठन किया। साथ ही सन् 2001 को महिला सशक्तिकरण वर्ष के रूप में मनाया गया है। इन सबके अतिरिक्त कई ओर अधिनियम और नियम महिलाओं की सुरक्षा और सशक्तिकरण के लिये भारत में बनाये गये है।

सच तो यह है कि कानून, देश की कानून सम्मत न्याय प्रणाली को सिर्फ आधार देते हैं। परिवर्तन तो मनुष्य के विवेक व मानसिकता से ही लाया जा सकता है। नारी सशक्तिकरण के लिये समाज की सकारात्मक भूमिका अपेक्षित है। इसके लिये अनुकूल जनमत निर्माण पहली शर्त है। दूसरे कानूनों के क्रियान्वयन के लिये, कार्यपालिका में ईमानदार सक्रियता भी आवश्यक है। 'बिना मरे स्वर्ग नहीं मिलता' के अनुसार महिलाओं को भी पुरूष हित चिन्तकों की बैसाखियों के सहारे को छोड़कर अपने पैरों पर खड़े होने का साहस प्रदर्शित करना होगा। याचना से भीख में अधिकार कभी नहीं मिलते तथा अधिकारों पर सशक्तशाली का ही अधिकार होता है। दुर्बल का तो अपने स्वयं पर ही अधिकार नहीं होता है। यह कड़वा सच है। इसके अतिरिक्त दूरदर्शन, इंटरनेट, सिनेमा आदि संचार माध्यमों पर प्रभावी अंकुश लगाये जाने पर भी विचार होना चाहिये। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के नाम पर महिलाओं के अभद्र व अश्लील प्रदर्शन पर मीडिया खुद निर्णय करें। अश्लीलता के प्रश्न पर सिर्फ बौद्धिक चिंतन तथा वाद विवाद से किसी भी रूप में, यौन अपराधों पर रोक नहीं लग सकती है।

स्वामी विवेकानंद ने कहा है 'स्त्रियों की स्थिति में सुधार बिना विश्व का कल्याण संभव नहीं है।' नियमों व कानून से दण्ड देकर अपराध कम अवश्य किये जा सकते है, परन्तु समाप्त नहीं। सिर्फ अधिनियमों से सामाजिक मानसिकता को नहीं बदला जा सकता। नारी सशक्तिकरण के लिये परम्परागत सोच व मानसिकता में आमूल–चूल परिवर्तन लाना अति आवश्यक है। कानूनों से बालश्रम, भ्रूण हत्या, बाल विवाह, भ्रष्टाचार, पीत पत्रकारिता, भिक्षावृत्ति तथा यौन अपराधों आदि पर किंचित भी अकुंश लगाने में हमें क्या सफलता मिली है ? कानून प्रबुद्ध नागरिकों के लिये होते है। अपराधियों व दंबगों के लिये तो ये बुद्धीजीवियों की अपने चिंतन की किताबी अभिव्यक्ति मात्र होते है। चुनाव कानून, आर्थिक कानून तथासामाजिक समस्याओं से जुड़े अनेक कानून आज भी शोधार्थियों की डिग्री के लिये उपयोगी सामग्री मात्र है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. पाण्डेय जयनारायण – भारत का संविधान।
2. भारतीय दण्ड संहिता 1860
3. गौड़ संजय – आधुनिक महिलाऐं और समाज उत्पीड़न।
4. लुड्स डॉ. जयप्रकाश – घरेलू हिंसा विरूद्ध मुहिम एक दस्तावेज।
5. सिंह वंदना – नारी सशक्तिकरण दशा और दिशा।
6. माहेश्वरी सरस्वती – राष्ट्र निर्माण में महिलाओं का योगदान – प्रतियोगिता दर्पण जुलाई 2006
7. कौशिक आशा – नारी सशक्तिकरण का विमर्श एवं यथार्थ।

महात्मा गांधी का जन आन्दोलन एवं नारी की भूमिका

डॉ. आभा तिवारी *

प्रस्तावना – महात्मा गाँधी मूल रूप से एक आध्यात्मिक सन्त थे। गाँधीजी का मानना था कि सत्याग्रही अपने विरोधी के सम्मुख अपना आध्यात्मिक व्यक्तित्व स्थापित करता है और हृदय में यह भावना जगा देता है कि अपने व्यक्तित्व को हानि पहुँचाए बिना उसे हानि न पहुँच सकें। गुलाम भारत की जनता को सत्याग्रह के माध्यम से जाग्रत करने का श्रेय महात्मा गाँधी को है।

जन आन्दोलन की राजनीति के सूत्रपात का श्रेय महात्मा गाँधी को दिया जा सकता है। गुलाम भारत की जनता को सत्याग्रह के माध्यम से जाग्रत करने का कार्य महात्मा गाँधी ने किया। दुनिया की सबसे बड़ी जनक्रांति हमारी आजादी की लड़ाई थी। गांधी जी ने जन आंदोलन के माध्यम से हमारे देश की जनता को जागरूक करने का प्रयास किया। उनके मन मस्तिष्क में अपने अधिकारों के लिए लड़ने की आवाज जगाई।

जनता में आन्दोलन के माध्यम से एक नई दिशा, एक नई क्रांति का सूत्रपात करने का श्रेय महात्मा गाँधी को दिया जाता है। जन आन्दोलन में महात्मा गाँधी की भूमिका एक भटके राहगीर को सही राह दिखाने के समान थी। क्योंकि हमारे भारतीय माता–बहनों के पास आवाज तो थी पर उस आवाज को एक स्वर व एक लय में पिरोने का कार्य गाँधीजी ने किया। जिससे हमारे जन आन्दोलन को एक सही दिशा मिल पाई और हम सफलता की सीढ़ी पर पहुँच सके।

जन आंदोलन में गाँधीजी का मार्गदर्शन उस दीये की भाँति था जिसमें तेल और बत्ती तो थी पर दिये को जलाया कैसे जाय। सही तरीके से, सही योजनाओं को ध्यान में रखते हुए गाँधीजी के नेतृत्व में जन आन्दोलन प्रभावी हो पाया। जन आन्दोलन के साथ–साथ गाँधी जी मानते थे कि सत्याग्रह एक मात्र अस्त्र है जिससे बुराई और अन्याय का प्रतिरोध सम्भव है। यह एक साफ–सुथरा अहानिकारक और फिर भी अत्यधिक प्रभावशाली अस्त्र है। यह न केवल अन्याय और बुराई के प्रतिकार का अस्त्र है बल्कि एक जीवन पद्धति भी है। सामाजिक कुरीतियों को दूर करने में में सत्याग्रह जनआन्दोलन सर्वाधिक प्रभावशाली अस्त्र है। जनआंदोलन अत्याचारियों के विरुद्ध खुलकर आवाज उठाये जाने का एक सर्वोच्च तरीका है। जिसमें सत्यता है, क्योंकि एक मत एक आवाज का समावेश है। साथ ही यह एक प्रभावी आन्दोलन होना चाहिए। इससे जनता को अपनी एक नेतृत्व क्षमता का आभास होता है। योग्यता, उच्च आदर्श, मानवीय मूल्यों को बारीकि से जानने–समझने का अवसर मिलता है। जनआन्दोलन के माध्यम से एक जुटता में वृद्धि होती है। नवीन योजनाओं का क्रियान्वयन होता है और ये सब गाँधीजी के जन आंदोलन के माध्यम से हुआ। गाँधी जी के जनआंदोलन में नारी की भूमिका महत्वपूर्ण थी। उन्होंने भारत में चलाये असहयोग आन्दोलन में वृद्ध, स्त्री–पुरुष सभी को सहयोग करने का आव्हान किया था। उन्होंने महिलाओं को पुरुषों के समान स्तर पर रखते हुए सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक क्षेत्र में पुरुषों के समान आगे बढ़ने को कहा। उनके द्वारा चलाये गये सत्याग्रह आन्दोलन में विदेशी वस्त्रों तथा वस्तुओं के बहिष्कार में महिलाओं ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। विदेशी वस्तुओं की दुकानों पर धरना देने का काम महिलाओं ने पूर्ण तत्परता से निभाया। सैकड़ों महिलाओं ने महात्मा गांधी के कार्यक्रम में अपने परिवार की चिन्ता किये बिना जेलों की यात्रा की और असहनीय कष्ट सहे। महात्मा गांधी भारतीय महिलाओं के इस योगदान से अत्यधिक द्रवित और प्रभावित हुए। उन्होंने अपने आश्रमों में महिलाओं को पुरुषों के बराबर सम्मान प्रदान कर उनको सामाजिक दृष्टि से अन्याय और शोषण के विरुद्ध जाग्रत किया तथा इस प्रकार का राजनीतिक प्रशिक्षण दिया कि जिससे महिलाएँ शारीरिक दृष्टि से पुरुषों से कमजोर होते हुए भी अपनी बौद्धिक क्षमता का विकास कर सबल बन सके। महात्मा गांधी की यह मान्यता थी कि जिस प्रकार से वैदिक युग में महिलाओं को पुरुषों के बराबर अधिकार प्राप्त थे उसी प्रकार आज भी महिलाओं को समाज में पुरुषों के समान अधिकार मिलने चाहिए। महात्मा गांधी ने मनुस्मृति के उस नियम को अमान्य ठहराया जिसमें महिलाओं को पुरुषों के अधीन मानकर उनको सीमित स्वतंत्रता देने की व्यवस्था थी। उनके अनुसार भारत के प्राचीन साहित्य में महिलाओं के लिए जिन सम्माननीय शब्दों जैसे अर्द्धांगिंनी, सहधर्मिणी आदि का उल्लेख मिलता है, वह इस बात का सूचक है कि मनु के सिद्धान्तों के विपरीत प्राचीन भारत में महिलाओं को सम्मानजनक स्थान प्राप्त था किन्तु बाद के समय में महिलाओं को पुरुषों से हेय देखा जाने लगा और उनको सभी सुविधाओं और अधिकारों से वंचित कर दिया गया। परन्तु महात्मा गांधी ने महिलाओं को पुन: उनका प्राचीन सम्मानजनक स्थान दिलाने का भरसक प्रयास किया और अपने आन्दोलन के माध्यम से जनमत तैयार किया। महात्मा गाँधी बाल–विवाह के घोर विरोधी थे। उन्होंने विधवा विवाह का समर्थन किया। विशेष रूप से बाल–विधवाओं के विवाह का। महात्मा गांधी कहा करते थे कि हम गोरक्षा की बात करते हे और उसके लिए धर्म की दुहाई देते है किन्तु बाल–विवाह के रूप में साक्षात् मानवीय गौ को तिरस्कृत करने में संकोच नहीं करते। धर्म के बल–प्रयोग का विरोध करते हुए भी हम धर्म के नाम पर जोर–जबरदस्ती विधवा प्रथा को प्रोत्साहन देते है। महात्मा गाँधी ने विधवा–विवाह के रास्ते में आने वाली सामाजिक तथा धार्मिक बाधाओं को दूर करने का प्रयास किया। महात्मा गांधी उन शास्त्रों और सामाजिक रीति–रिवाजों के विरुद्ध थे जो समाज में महिलाओं की दासता की स्थिति में बनाये रखने की बात का समर्थन करते थे। गांधीजी ने पर्दा–प्रथा का विरोध कर महिलाओं की स्थिति सुधारने का नवीन कार्य किया। पर्दाप्रथा महिलाओं के विकास तथा उनके द्वारा उपयोगी सामाजिक कार्य को करने से उन्हें वंचित करता था।

अत: महात्मा गांधी महिला उत्थान के महान उन्नायकों में माने जाते है। गांधीजी के प्रयासों से भारत में महिलाओं को पुरुषों के समान अधिकार प्राप्त करने के लिए अधिक संघर्ष नहीं करना पड़ा। भारत में एक महिला ने सर्वप्रथम प्रधानमंत्री का पद ग्रहण किया और उसे गरिमापूर्ण ढंग से निभाया। गांधीजी

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय कला, वाणिज्य एवं विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

ने महिलाओं को भारत की स्वतंत्रता के आंदोलन से प्रेरित कर एक मूक सामाजिक क्रांति का सूत्रपात किया था। उनके मार्गदर्शन में सरोजनी नायडू, कमला नेहरू, अमृतकौर, प्रभावती अनुसुर्यो बेन व मीरा बेन आदि महिला समाज को गौरवान्वित कर आजादी की मशाल को पुरुषों के समान प्रज्जवलित रखा। आज भारत में महिलाओं को सम्मानजनक स्थान प्राप्त है। आज भारत ही नहीं विदेशों में भी कई उच्च प्रतिष्ठित पदों पर भारतीय महिलाएँ आसीन है।

जन आन्दोलन की राजनीति के सूत्रपात का श्रेय महात्मा गांधी को दिया जा सकता है। गुलाम भारत की जनता को सत्याग्रह के माध्यम से जाग्रत करने का कार्य महात्मा गांधी ने किया। दुनिया की सबसे बड़ी जनक्रांति हमारी आजादी की लड़ाई ही थी, जिसमें महात्मा गांधी के नेतृत्व में लाखों लोग अहिंसात्मक आंदोलन में उतरे उनकी एक आवाज पर लोग सड़कों पर आ जाते थे। वे अनशन पर बैठते थे तो पूरा देश चिंता में पड़ जाता और उनके अच्छे स्वास्थ्य के लिये सभी धर्मों के लोग ईश्वर से प्रार्थना करते। ऐसे अद्भुत चमत्कारिक व्यक्तित्व वाले महात्मा गांधी जिन्होंने अहिंसात्मक अनशन व आंदोलन से एक ऐसे साम्राज्य जिनके साम्राज्य का सूर्य अस्त नहीं होता था उसका सूर्य भारत में अस्त कर देश को आजादी दिलवाई। इस तरह जन आंदोलन के माध्यम से विश्व इतिहास में एक नए युग की शुरुआत की। आज भी गांधी जी के अहिंसावादी सिद्धान्तों का पालन किया जाता है।

भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन में 1919 से 1947 के बीच का कालखण्ड गांधी युग के नाम से जाना जाता है। दक्षिण अफ्रीका से लौट कर गांधी जी ने राष्ट्रीय आन्दोलन को नई दिशा दी। देश के विभिन्न भागों के विभिन्न वर्गों एवं जातियों के स्त्री-पुरुषों को एकता के सूत्र में आबद्ध कर विशाल आन्दोलन चलाया। सत्याग्रह की परिभाषा करते हुए गांधीजी ने कहा था कि 'सत्याग्रह का सर्वप्रथम प्रयोग बिहार के चम्पारन जिले तथा गुजरात में किया सत्याग्रह द्वारा लोगों को संगठित किया जिससे राष्ट्रीय आंदोलन जन आंदोलन बन गया। गांधी जी का ध्यान नारी की असीम क्षमता पर तब गया जब वे दक्षिण अफ्रीका में थे, उन्होंने यह महसूस किया कि उनके राजनैतिक विचारों का नारियों द्वारा व्यापक समर्थन किया गया। गांधीजी के नेतृत्व में वे जेल गई, सजा पाई, फिर भी चुप रही, कोई शिकायत नही की।

गांधी जी के सत्याग्रह की अवधारणा के विकास के दो प्रमुख आयाम थे - पहला तो उनकी पत्नी कस्तुरबा और दूसरा अफ्रीका की थायी महिलायें। गांधीजी के अनुसार कस्तुरबा एक दृढ़ इच्छाशक्ति वाली महिला थी, जिसे मैंने अपने प्रारम्भिक दिनों में महत्व न देकर भूल की थी लेकिन उसकी उसी दृढ़ ईच्छा शक्ति ने अनजाने ही उन्हें असहयोग आंदोलन की कला का मेरा गुरु बना दिया। इसकी शुरुआत मेरे अपने परिवार से हुई जब मैंने सन् 1906 में इसे राजनीतिक क्षेत्र में शुरु किया तो यह सत्याग्रह के वृहद् नाम से जाना गया।

गांधीजी ने नारियों की असीम सहनशक्ति का प्रयोग आने वाले वर्षों में सिद्धान्त के रूप में प्रतिपादित किया जो कि नैतिक सिद्धान्तों के आधार पर अहिंसक युद्ध के लिये सर्वाधिक उपयुक्त था। गांधीजी नारियों को अहिंसा का अवतार मानते थे। अहिंसा का शाब्दिक अर्थ है 'न मारना ..... अहिंसा का वास्तव में अर्थ है, आप किसी का मन न दुखाये, जो अपने को आपका शत्रु मानता है, उसके बारे में कोई अनुदार विचार मन में न रखें।' नारियों के सम्बन्ध में अहिंसा का अर्थ है - अपरिचित प्यार, जिसका दूसरा अर्थ है - पीड़ा सहने की असीम क्षमता। उन्होंने कहा कि इस क्षमता का प्रदर्शन वह नौ महिने तक शिशु को गर्भ में रखकर करती है, आइए हम उसके प्यार को सम्पूर्ण मानवता की ओर स्थानांतरित कर दे।

महिला सेनानियों में सबसे पहला नाम ऐनी बेसेन्ट का आता है। ये थी तो आयरिश महिला किन्तु ये भारत को ही अपना देश समझती थी और यहीं आकर बस गई थी और भारत को स्वतंत्र देखना चाहती थी।

भारतीय महिलाओं में श्रीमती सरोजिनी नायडू का एक गौरवपूर्ण स्थान है, जिन्होंने स्वाधीनता आंदोलन में बढ़ चढ़ कर हिस्सा लिया, ये स्वाधीनता आंदोलन के दौरान कई बार जेल गई। ये डांडी यात्रा में गांधीजी के साथ पैदल चली और इन्होंने नमक कानून तोड़ने में भाग लिया। गांधीजी के नेतृत्व में महिलाओं ने अपनी शक्ति को पहचाना और तन-मन से स्वाधीनता के लिये संघर्ष करने में जुट गई। रुढ़ियों और परम्पराओं की दीवारें राष्ट्र प्रेम की शक्ति के आगे चरमरा उठी, उसी के साथ भारतीय महिलायें घरों से बाहर निकल पड़ी और राष्ट्रीय फलक पर एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करने लगी।

स्वाधीनता आंदोलन में राधा देवी, पार्वती देवी, लक्ष्मी देवी, लाडोरानी, खुरसी और मनमोहिनी सहगल पंजाब की ग्रामीण महिलाओं की अग्रणी नेता थी। मद्रास की रूक्मणी लक्ष्मीपति पहली महिला थी, जिन्हें नमक सत्याग्रह में गिरफ्तार किया।

महाराष्ट्र की महिलाओं ने भी स्वाधीनता आन्दोलन के बढ़ चढ़कर हिस्सा लिया। पंडित रमाबाई रानडे ने भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। पद्मावती होलकर तथा सत्यभामा कवालका, जानकी बाई आपटे, प्रेमाबाई वर्तक अन्नपूर्णा देशमुख ने स्वाधीनता आंदोलन में भाग लिया।

1940 में गांधीजी ने जब भारत छोड़ो आंदोलन का आव्हान किया तब सुचेता कृपलानी सहित हजारों महिलाएँ सच्चाई और साहस के रास्ते पर निकल पड़ी। उषा मेहता और उनके साथियों ने बम्बई में भूमिगत रेडियो केन्द्र की स्थापना की और उसके द्वारा आंदोलन की खबरें तथा नेताओं के संदेशों का प्रसारण किया।

असहयोग आंदोलन में जहाँ महिलाओं की सहभागिता कम थी वहीं सविनय अवज्ञा आंदोलन में भारी संख्या में महिलाओं ने सहभागिता की। सभी जाति वर्ग और क्षेत्रों की भारतीय महिलाओं ने स्वाधीनता संघर्ष में जमकर हिस्सा लिया था। गांधीजी ने कहा था कि - 'सत्याग्रह आंदोलन में भारतीय महिलाओं ने जो भूमिका निभाई है उसे स्वर्ण अक्षरों में लिखा जायेगा।'

भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन में महिलाओं ने प्रत्यक्षत: भागीदारी की वे तो अपना इतिहास रच चुकी किन्तु वे महिलायें भी कम नहीं थी जिन्होंने अपने पति, पुत्र, भाई को स्वाधीनता आंदोलन में भाग लेने के लिये प्रेरित किया और आन्दोलन के परिणामों की चिंता न करते हुए भारत को स्वतंत्र करवाने में अप्रत्यक्ष रूप से योगदान दिया और अहिंसा के बल पर भारत को स्वतंत्र करवाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी।

संक्षेप में हम यह कहना चाहेंगे कि गाँधीजी को जो महिलाओं की दयनीय स्थिति को सुदृढ़ करने का था, वो वर्तमान परिप्रेक्ष्य में सफल हो रहा है। आज महिलाएँ समान कार्य, समान वेतन, समान पद प्रतिष्ठा का जीवन व्यतीत कर रही है। आज जमीन से लेकर आकाश तक की हर ऊँचाईयों को छूने में सफलता प्राप्त की है। आज महिलाओं की स्थिति, उनकी योजना व नीतियों व कार्यपद्धतियों का आकलन करे तो आज हम गर्व से कह सकते है कि महात्मा गांधी ने जो सपने देखे थे वे आज महिलाओं ने साकार कर दिखाये है। अपनी योग्यता के माध्यम से आज कोई क्षेत्र ऐसा नहीं है जहाँ महिलाएँ पुरुषों से पीछे हो। हर क्षेत्र में महिलाओं को स्थान एवं पद प्राप्त है। यही प्रयास गाँधीजी का था कि महिलाओं को सम्मान व हर कार्य क्षेत्र में अवसर मिलना चाहिए।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. गांधीजी का दर्शन - डॉ. जी. पी. नेमा एवं प्रतापसिंह।
2. गांधी एम. के. - नॉन वायलेंस इन पीस एण्ड वार, वाल्यूम-2.
3. रोमा रोलों - महात्मा गांधी।

सोवियत साम्यवाद के संदर्भ में पं. जवाहर लाल नेहरू का राजनैतिक विचार

डॉ. श्री नाथ त्रिपाठी *

शोध सारांश – पंडित नेहरू की जितनी आस्था लोकतन्त्र के प्रति थी उतनी ही आस्था उनकी समाजवाद के प्रति भी थी। 1917 की बोल्शेविक क्रांति के उपलब्धियों और नवम्बर 1927 की सोवियत संघ कि अपनी यात्रा के बाद नेहरू के मन में यह पक्का विश्वास हो गया कि विश्व को जिन समस्याओं का सामाना करना पड रहा है उसका एक मात्र समाधान है समाजवाद। लेकिन सोवियत संघ की साम्यवादी व्यवस्था को नेहरू लम्बे समय तक नहीं ढो पाए कारण था कि नेहरू लोकतान्त्रिक सामाजवाद में विश्वास करते थे जबकि मार्क्सवादी साम्यवाद हिंसा, बलप्रयोग एवं वर्ग संघर्ष पर आधारित होने के साथ साथ लोकतंत्र विरोधी था जबकि नेहरू व्यवस्था परिवर्तन हेतु हिंसात्मक पद्धति अपनाने के वजाय शांतिपूर्ण, मैत्रीपूर्ण और रचनात्मक पद्धति को अधिक उपयुक्त मानते थे। फलत: द्धितीय विश्व युद्ध के बाद नेहरू के जीवन में मार्क्सवाद का प्रभाव कम होता गया और उन्होंने अपने जीवन में लोकतान्त्रिक समाजवाद को ही प्राथमिकता दी।

प्रस्तावना – भारत में साम्यवादी आंदोलन का जन्म 1917 कि बोल्शेविक क्रांति के बाद हुआ।[1] संम्पूर्ण जगत मे इस आंदोलन का यह प्रभाव हुआ कि दलित और शोषित वर्ग मास्को को नया स्वर्ग और लेनिन को मसीहा मान बैठा। सनयात सेन, मानवेन्द्र नाथ राय, होची मिन्ह, माओत्से तुंग, चाऊ एन लाई और पंडित नेहरू जैसे महत्वपूर्ण नेताओं को रूस से प्रेरणा मिली। मानवेन्द्र नाथ राय भरतीय समाजवाद के संस्थापकों में से थे। अंबानी मुखर्जी नलिनी गुप्ता, वीरेन्द चटोपाध्याय, भूपेन्द्रदत्त, संतोष सिंह, रतन सिंह व गुरूमुख सिंह आदि प्रमुख व्यक्तित्व साम्यवादी आंदोलन से जुड़े। इनका प्रभाव भी एक बोल्शेविक के रूप में काफी बढ़ा। बोल्शेविको के प्रभाव को रेखांकित करते हुए गणेश शंकर विद्यार्थी ने लिखा कि 'बोल्शेविज्म साधारण भावोद्रेक नहीं है। संसार के इतिहास में उसका स्थान रहेगा और संसार के अनेक देश उसके भावीप्रभाव से किसी प्रकार भी नहीं बच सकेगे।'[2] इस बोल्शेविज्म से अछूते ना रहने वाले नहरू सोवियत संघ कि यात्रा के दौरान स्वंय अपनी आखों से उस देश की उन महान उपलब्धियो को देखा जो उसने शिक्षा, स्त्री उद्धार तथा किसानों कि दषा के सुधार के क्षेत्र में प्राप्त कि थी।[3] पंडित नेहरू ने विष्व कि तमाम समस्याओं कि समाधान हेतू रूस के उदाहरण से सहायता लेने कि बात सोचने लगे।

1936 के कांग्रेस के लखनऊ अधिवेशन में उन्होंने साफ कहा कि मै इस नतीजे पर पहुँच गया हूँ कि दुनिया की समस्याओं और भारत की समस्याओं का समाधान समाजवाद में ही निहित है।[4] उन्होंने समाजबाद को आर्थिक सिद्धांत से बढ़कर जीवन दर्शन माल लिया। उन्होंने कहा कि हमें अपने राजनीतिक व सामाजिक ढॉचे में बहुत बड़े परिवर्तन करने होंगे। उन्होने कहा कि मुनाफे खड़े करने की मौजूदा व्यवस्था की जगह, सहकारी सेवा के उच्चतर आदेश को स्थापित करना होगा।

नेहरू ने उपनी आत्मकथा में स्वीकार किया कि साम्यवादी जीवन दर्शन ने उन्हें आशा और सांत्वना दी थी। साम्यवाद अतीत की व्याख्या करने का प्रयत्न करता है और भविष्य के लिए आशा प्रदान करता है।[5] अब प्रश्न उठता है कि साम्यवाद से प्रभावित नेहरू मार्क्सके विषय में उसके सिद्धांत और प्रकिया से कहॉ तक सहमत या असहमत थे ? समाजवाद में अडिग आस्थावान और आर्थिक समाजवाद के पक्षधर नेहरू को मार्क्सवादी दर्शन के वैज्ञानिक, धार्मिक कर्म काण्ड विरोधी तथा अंधविश्वास विरोधी दृष्टिकोण ने विशेष रूप से प्रभावित किया था विशेषतया ऐतिहासिक व्यवस्था का मार्क्सवादी सिद्धांत तथा विकास संबंधी दृष्टिकोण नेहरू को पसंद आया। इस प्रकार नेहरू की विचार धारा पर कार्ल मार्क्स का प्रभाव था और इसी संदर्भ में आचार्य नरेन्द्र देव ने उन्हे मार्क्स से प्रभावित समाजवादी माना है।[6] इस प्रकार नेहरू पर मार्क्स और लेनिन का प्रभाव पडा। नेहरू के अनुसार 'मार्क्स और लेनिन की रचनाओं ने इतिहास और तत्कालीन विश्व मामलों को एक नई रोशनी में देखने में सहायता पहुँचाई'।[7] सोवियत रूस की शानदार सफलताओं के प्रति नेहरू की दिलचस्पी थी लेकिन वहॉ की महान उपलब्धियों के वे अन्ध समर्थक नहीं थे। उन्होने लिखा कि कुछ बातें वहॉ ऐसी दिखाई पड़ी जिन्हे मै पसंद नहीं करता अथवा समझ नहीं पाता। मुझे यह पता है कि देश काल और परिस्थिति से फायदा उठाने अथवा शक्ति के आधार पर उद्देश्य प्राप्त करने के प्रयास से इसका संबंध है।[8]

समय के अंतराल में नेहरू का मार्क्सवाद–साम्यवाद के प्रति आकर्षण और रूझान दोनों कम हो गया स्वाधीनता के बाद नेहरू ने वर्ग संघर्ष की मार्क्सवादी अवधारणा में विश्वास करना छोड़ दिया। 1950 में सिंगापुर में अपने एक भाषणद में उन्होने कहा साम्यवादी आंदोलन राष्ट्रवाद का शत्रु है।[9] 1952 में नेहरू ने यह घोषणा की कि दर्शन, विज्ञान और आर्थिक चिंतन के क्षेत्रो में पिछले 100 वर्षो कि प्रगति ने मार्क्सवाद को पुराना सिद्ध कर दिया। साम्यवाद के प्रति नेहरू का आकर्षण कम होने के कई कारण थे– साम्यवाद लोकतंत्र का विरोध करता है जबकि नेहरू का मानस लोकतंत्र और लोकतांत्रिक पद्धति को ही कुबूल करता था। मार्क्सवादी चिंतन के अनुसार व्यवस्था में परिवर्तन हिंसा और बल प्रयोग के आधार पर ही संभव है जबकि नेहरू गांधी के पवित्र साध्य हेतु पवित्र साधन के पक्षधर थे। मार्क्स साधन सम्पन्न वर्ग के अस्तित्व को समाप्त करना चाहता था लेकिन नेहरू कभी भी इसे आवश्यक नहीं समझे। नहेरू का मानना था की समाजवाद लोकतांत्रिक

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) छत्रशाल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय ,पन्ना (म.प्र.) भारत

तरीके से ही लाया जा सकता है।

यद्यपि मार्क्सवादी दर्शन के विभिन्न तत्वों से नेहरू काफी प्रभावित थे लेकिन यह दर्शन उनके सभी प्रश्नो का उत्तर नहीं दे सका। इसीलिए नेहरू ने लिखा कि 'अन्य लोगो की भाँति साम्यवादियों के व्यवहार तथा इनके आधारभूत सिद्धांतो के बीच सामान्यतया जो अन्तर देखने को मिलता है वह मुझे पसन्द नहीं है'।[10] नेहरू ने मार्क्स के वर्ग संघर्ष सिद्धांत की पैरवी कर यह साबित करने की कोशिश की कि मार्क्सवाद एक वैज्ञानिक दृष्टिकोण है जो समाज मे घटने वाली हलचल का सही मूल्यांकन करता है।[11] जो लोग यह आरोप लगाते है कि मार्क्सवाद वर्ग संघर्ष को बढावा देता है उसका उत्तर देते हुए नेहरू ने कहा 'मार्क्स ने वर्ग संघर्ष का विचार नहीं किया बल्कि उसने यह साबित किया कि वर्ग संघर्ष तो पहले से ही मौजूद है और किसी न किसी रूप में सदा चलता आ रहा है। अपनी लिखी हुई पुस्तक पूंजी' में मार्क्स ने स्पष्ट किया है कि प्रभुसत्ताधारी वर्ग हमेशा अपने असली रूप को छिपाने कि कोशिश करता है लकिन जब यह व्यवस्था खतरे में पड जाती है तो यह वर्ग सारे दिखावे छोड देता है और उसका असली रूप जाहिर हो जाता है और फिर वर्गो के बीच खुला युद्ध होने लगता है'।[12] लेकिन साम्यवादी रूस मे सामाजवाद के नाम पर हिंसा का जो नग्म प्रदर्शन हुआ उससे नेहरू का मानवतावादी व लोकतांत्रिक हृदय सहन नहीं कर सका। फलत: नहरू साम्यवाद के पूर्ववर्ती प्रभाव से मुक्त होते चले गए। रूस कि महान उपलब्धियो का उन्होंने सम्मान तो किया लेकिन साम्यवादियो कि मदान्धता हिंसात्मकता और क्रांतिप्रियता उन्हें कभी नहीं भाई। पूंजीवाद के प्रति भी उनके मार्क्सवादी दृष्टिकोण मे भी महत्वपूर्ण परिवर्तन आया और उन्हें यह देख कर बहुत बड़ा संतोष हुआ कि पूंजीवाद अधिकाधिक सभ्य बनता जा रहा है। और उसकी शोषण की प्रवृत्ति संयत हो गई है तथा यद्भाव्यम पर आधारित पूंजीवाद मर रहा है।[13]

नेहरू ने यह भी कहा कि आज के युग मे मार्क्स के अनेक आर्थिक विचार अपना महत्व खो बैठे है मार्क्स के अनेक आर्थिक सिद्धांत ऐसे है जो भारत जैसे अर्द्धविकसित देशो की समस्या सामाधान मे सहायक नहीं हो सकते। नेहरू ने मार्क्स के इस तर्क से भी असहमति प्रकट की कि साम्यवाद द्वन्द्ववादी प्रकिया का तार्किक परिणाम है और आर्थिक शक्तियों कि उपज है, इसलिए अनिवार्य है नेहरू ने कहा कि साम्यवाद जनसंधारण के कष्टो और धनिको द्वारा सामान्य जनता के शोषण कि उपज है। इसके प्रतिरोध का उपाय उन कष्टो का निवारण करना है जिन्होंने इसे जन्म दिया है। शस्त्र कि शक्ति से इसे कुचला नहीं जा सकता।

निष्कर्षत: यह कहा जा सकता है द्वितीय महायुद्ध तक नेहरू के चिंतर पर मार्क्सवादी साम्यवादी प्रभाव अत्याधिक था लेकिन बाद के समय में यह प्रभाव बहुत कम हो गया। अपनी धर्मनिरपेक्षता के बावजूद मानव जीवन के नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों के महत्व में उनका विश्वास बढ़ता ही गया जबकि साम्यवाद में इन मूल्यों का काई महत्व नहीं है। अपने मानवतावादी दृष्टिकोण के फलस्वरूप और जीवन में नैतिक और आध्यात्मिक आकांक्षाओं को महत्व देने के कारण नेहरू गांधीवाद के अत्यधिक निकट आते गए और मार्क्सवाद तथा साम्यवाद के प्रभाव से दूर हटते गए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. पुष्पेश पंत, अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति , पृष्ठ 45
2. गणेश शंकर विद्यार्थी, बोल्शेविज्म की लहर, क्रांति का उद्घोस, पृष्ठ 569
3. जवाहर लाल नेहरू , Soviet Russia , पृष्ठ 62
4. Jawahar Lal Nehru, India and the world , page, 82-83
5. Jawahar Lal Nehru, Autobography, page ,362-64
6. P.D. Tandan- Nehru- Neighbour the soeielist, page,18
7. Jawahar Lal Nehru - The Diseovery of India page,29
8. Jawahar Lal Nehru - The Diseovery of India page,29
9. डॉ.वी.पी. वर्मा, आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिंतन, पृष्ठ365
10. जवाहर लाल नेहरू, भारत की खोज, पृष्ठ 13-14
11. जवाहर लाल नेहरू, विश्व इतिहास की झलक, पृष्ठ 767
12. शशिभूषण, नेहरू और मार्क्सवाद, पृष्ठ 42
13. शशिभूषण, नेहरू और मार्क्सवाद, पृष्ठ 42

****

विकसित एवं विकासशील देशों में राजनीतिक चुनौतियाँ, समस्या एवं समाधान

डॉ. ममता शर्मा *

प्रस्तावना – आज आर्थिक एवं राजनीतिक क्षेत्र में दुनिया दो भागों में बंटी हुई है – उत्तर और दक्षिण। 'उत्तर' अमीर देशों का प्रतीक है और 'दक्षिण' में गरीब अर्थात विकासशील देश आते हैं।

'दक्षिण–दक्षिण संवाद' से तात्पर्य है दक्षिण–दक्षिण अर्थात विकासशील देशों के मध्य आर्थिक सहयोग के लिए विचार–विमर्श अथवा आपसी सहयोग के आधार की खोज। 'नई अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था' की स्थापना के लिये 'उत्तर–दक्षिण सहयोग' के प्रयत्न किये गये थे किन्तु धनी विकसित देशों की हठधर्मिता एवं अड़ियल रूख के कारण कोई उत्साहजनक परिणाम नहीं निकले और विकासशील देशों की निर्धनता बढ़ गई, ऋणभार बढ़ता गया, बजट घाटा बढ़ता गया और व्यापार में असंतुलन बना रहा। उत्तर–दक्षिण सहयोग की मृगमरीचिका के पीछे भागने के बजाय दक्षिण गोलार्द्ध के विकासशील राष्ट्रों ने अपने त्वरित आर्थिक विकास के लिये 'दक्षिण–दक्षिण आपसी सहयोग' पर जोर देना प्रारंभ कर दिया। 'दक्षिण–दक्षिण सहयोग' यह इंगित करता है कि विकासशील राष्ट्रों को उत्तरी गोलार्द्ध के विकसित राष्ट्रों पर अपने आर्थिक विकास के लिये निर्भर न होकर विकासशील राष्ट्रों में ही आर्थिक सहयोग के ऐसे प्रयत्न करने चाहिये जिससे वे आत्मनिर्भरता की तरफ बढ़े।

दक्षिण गोलार्द्ध के विकासशील निर्धन राष्ट्रों में निरंतर बनी रहने मंदी की स्थिति, उत्तर–दक्षिण वार्ताओं में गतिरोध की स्थिति एवं विश्वस्तर की आर्थिक संस्थाओं की अकर्मण्यता ने विकासशील राष्ट्रों के लिये 'दक्षिण–दक्षिण सहयोग' का नारा बुलंद करना अनिवार्य सा बना दिया।

दक्षिण–दक्षिण सहयोग (संवाद) का वास्तवित सूत्रपात सत्र 1968 में नई दिल्ली में आयोजित द्वितीय अंकराड के सम्मेलन में विकाससील राष्ट्रों में आपसी सहयोग की आवश्यकता पर बल देने के साथ हुआ था। इसके बाद दक्षिण–दक्षिण सहयोग की आवश्यकता पर सन् 1970 के लुसाका सम्मेलन में विचार विमर्श हुआ। सन् 1974 में संयुक्त राष्ट संघ की महासभा ने जब 'नई अंतर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था (NIEO) का आह्वान किया था। तत्पश्चात 1975 के लीमा में हुये विदेश मंत्रियों के सम्मेलन एवं कोलंबो में सन् 1976 में हुये निर्गुट सम्मेलन तथा चौथे अंकराड सम्मेलन 1976 में इस प्रकार के सहयोग की अवधारणा की अभिपूष्टि की गई। 'ग्रुप–77' की सन् 1979 की बैठक में भी विकासशील राष्ट्रों के मध्य आपसी व्यापार की वृद्धि की आवश्यकता एवं सामूहिक आत्मनिर्भरता की आवश्यकता पर बल दिया गया। मई 1981 में कराकास में विकासशील राष्ट्रों के मध्य आर्थिक सहयोग पर हुई उच्च स्तरीय बैठक में इस विषय को एक नया आयाम प्रदान किया गया एवं विकासशील राष्ट्रों के मध्य प्रशुल्क अधिमानों की विश्वव्यापी प्रणाली की मांग की गई ताकि व्यापार संवर्द्ध उत्पादन व रोजगार में वृद्धि हो सके।

नई दिल्ली में 22–24 फरवरी 1981 की अवधि में 44 देशों का सम्मेलन हुआ जिसका उद्घाटन श्रीमती इंदिरा गाँधी ने किया। इस सम्मेलन ने दक्षिण–दक्षिण सहयोग के पुख्ता दिशा संकेत खोजे। 'उत्तर' (धनी पश्चिमी देश) पर निर्भरता कम करने की दृष्टि से ही और दक्षिण–दक्षिण में परस्पर सहयोग स्थापित करने के लिये यह सम्मेलन बुलाया गया था। सम्मेलन में सऊदी अरब, कुवैत, संयुक्त अरब अमीरात जैसे अमीर देश भी आमंत्रित थे। उनसे यह आशा की गयी कि वे अपने गरीब भाइयों की मदद के लिये आगे आयेगें। यदि तेल संपन्न देश अपने धन को विकासशील देशो में लगाना स्वीकार कर ले तो बेशक 'दक्षिण' (निर्धन विकासशील देशों का) आर्थिक चेहरा बदल सकता है।

अक्टूबर 1982 में 'ग्रुप–77' के मंत्रियों ने न्यूयार्क में एक घोषणा स्वीकार कर विकासशील राष्ट्रों के मध्य प्रशुल्क अधिमानों की स्थापना कर वार्ताएं प्रारंभ की। इस कार्यक्रम का उद्देश्य विकासशील राष्ट्रों के मध्य आपसी व्यापार अधिमानों व दीर्घकालीन समझौतों जैसे प्रत्यक्ष उपाय अपनाकर उनके आपसी व्यापार में वृद्धि करना था।

गुट निरपेक्ष देशों के हरारे शिखर सम्मेलन 1986 में 'उत्तर–दक्षिण संवाद' के स्थान पर 'दक्षिण–दक्षिण संवाद' की आवश्यकता स्पष्ट रूप से प्रतिपादित की। रॉबर्ट मुगाबे ने तो स्पष्ट कहा कि 'दक्षिण–दक्षिण सहयोग और सामूहिक आत्म–निर्भरता को अपनाये बिना अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक संबंधों में सुधार लाना संभव नहीं। दक्षिण–दक्षिण सहयोग को बढ़ावा देने के लिये उत्तरी कोरिया में विकासशील देशों में वित्त मंत्रियों की बैठक का निर्णय लिया गया। यह बैठक उत्तरी कोरिया की राजधानी प्योंगयांग में 9 जून 1987 को शुरू हुई। प्योंगयांग घोषणा में दक्षिण–दक्षिण सहयोग और सामूहिक आत्मनिर्भरता पर बल दिया गया। 1987 में ही 'दक्षिण आयोग' का निमार्ण किया गया, जिसका मकसद विकासशील राष्ट्रों के आपसी सहयोग को नई दिशा देना एवं समन्वय स्थापित करना था। दिसम्बर 1991 में आयोजित जी –15 राष्ट्रों के काराकास सम्मेलन ने विकासशील देशों के नेताओं में उनकी आपसी समस्याओं के प्रति जागरूकता उजागर की। काराकास सम्मेलन में भारत के प्रधानमंत्री जी पी.बी. नरसिंह राव ने ठीक ही कहा कि 'निर्धन देशों के आपसी सहयोग को चुहुमुखी विकास का प्रभाव माध्यम बनाया जाना चाहिये।'

अंकराड अथवा संयुक्त राष्ट्र संघ के व्यापार एवं आर्थिक विकास पर हुये अधिवेशन सये पूर्व विदेशी व्यापार तथा सहायता संबंधी समस्याओं पर प्रशुल्क दरों एवं व्यापार पर हुये सामान्य समझौते (GATT) के अंतर्गत

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति शास्त्र) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.) भारत

विचार किया जाता था। उक्त 'सामान्य समझौते' का अल्पविकसित देशों को आशानुरूप रूप लाभ नहीं मिल सका। इसी कारण अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक सहयोग हेतु एक नवीन कार्यक्रम प्रारंभ किया गया जिसका प्रयोजन अल्पविकसित देशों के विद्यमान अंतर में कमी करना था। इसी कार्यक्रम को अंकराड की संज्ञा दी गयी। अंकराड की स्थापना संयुक्त राष्ट्र संघ की महासभा के एक स्थायी अंग के रूप में 30 दिसम्बर 1964 को हुई। यह अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में एक नया मोड़ बिन्दु है और इसने विश्व व्यापार के विकास को एक नई दिशा प्रदान करने का प्रयत्न किया क्योंकि विकासशील देशों के विशेष संदर्भ में यह अंतर्राष्ट्रीय संबंधों के अध्ययन का प्रथम बड़ा प्रयास है।

ग्रुप 77 में ऐसे देश है जो दक्षिण गोलार्द्ध से संबंधित है। ये देश न केवल निर्धन है अपितू एशिया, अफ्रीका तथा लेटिन अमेरिका महाद्वीपों से जुड़े हुये हैं। 'ग्रुप-77' विकासशील देशों की एकता का परिचायक है। ये संगठित होकर सौदेबाजी करना चाहते हैं तथा समुद्र से संबंधित विधि, शस्त्र नियंत्रण, आणविक ऊर्जा अंतर्राष्ट्रीय व्यापार जैसे मुद्दों पर लिये जाने वाले निर्णयों को विकासशील देशों के हितों के अनुकूल मोड़ना चाहते हैं।

इन चुनौतियों के संदर्भ में यह आवश्यक हो गया कि दक्षिण गोलार्द्ध के विकासशील देश एकजुट हो और शीत युद्ध की समाप्ति के बाद के युग में धनी (खासतौर से जी-7 के धनी देशों) देशों की बढ़ती आर्थिक और राजनैतिक प्रभुता के खिलाफ खड़े हों। इसीलिये दक्षिण आयोग, जी-15 देशों के संगठन बनाये गये हैं जिनका उद्देश्य विकासशील देशों में सहयोग को प्रोत्साहन देकर उन्हें आत्मनिर्भरता की ओर उन्मुख करना है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. The world Bank Annual Report, 1992
2. भारत सरकार विदेश मंत्रालय, वार्षिक रिपोर्ट, 1993-94
3. डॉ. वेद प्रताप वैदिक, भारतीय विदेश नीति, नये दिशा संकेत, 1980, नई दिल्ली।
4. जवाहरलाल नेहरू, इंडियाज, फॉरेन पॉलिसी।

****

Sexism : A dark Shade of the Indian Society

Dr. Anita Sonwal *

Introduction - ***"No, I'm the human here. I'm the life at stake. I'm the one with fingernails, who feels pain."***

-Alicen Grey

Sixty Eight years of independence and still the society's perception towards women is the same. In the present article "Sexism" i.e. "gender based discrimination" my focus relating to the issue is based on the female sector of the society because this is the sector which is most vulnerable, this is the sector which still has to achieve the fundamental right to equality in various fields. Therefore sexism in the present article will pertain to women of the Indian Society who are considered as the weaker section and are meant to live at home.

Nature has divided human beings into two halves and both are given responsibilities which suit them, along with assigning the responsibilities, nature has very clearly stated the rights of both on each other. Gender discrimination is a practice which we faced when both the genders show the desire of substituting their duties without giving and due credit to each other. In such scenario the powerful became aggressor and other the victim of aggression. Gender discrimination can also be define as the thinking of men which convince them in their head that women are lesser then them and it's their right to either not gives them their rights or misuse them. Basically when we think that women (may be because of their fragile outlook) are not equal to men and are not capable of doing anything good then gender discrimination comes into play.

A Parliamentary panel has expressed concern over the slow progress of government programmes for eliminating gender discrimination and has suggested a slew of measures including introduction of co-educational system in schools from elementary level.

"The most painful devaluation of women is the physical and psychological violence that stalks them from cradle to grave." Starting from the age of birth, women are discriminated in areas like access to nutrition, childcare, education and work, it said and emphasized that to achieve the objective of gender sensitization, the government should work out modalities to introduce a pragmatic and result-oriented teachers' training module as well as need-based refresher course.

Mentioning the efforts taken to counter the challenges of gender discrimination, the HRD Ministry said enrollment of girls in schools, both in rural and urban areas, has shown a steady increase over the years.

The gross enrollment ratio (GER) at primary and upper-primary level was 73.8 per cent and 49.3 per cent in 1992-93 respectively which has increased to 116.7 per cent and 83.1 per cent at primary and upper primary level in 2011 respectively.

Female literacy rate, which was 39.29 per cent according to the 1991 Census, increased to 64.6 per cent in 2011. At the national level the gender parity index is 0.94 at the primary level and 0.95 at the upper primary level as per District Information System for Education 2011-12.

Progress has been made towards reducing the gender gap. At the national level the gender gap at primary level; has reduced from 4.8 per cent in 2003-4 to 3.30 per cent in 2011-12 and at the upper primary level it has reduced from 8.8 per cent to 2.74 per cent, the ministry said.

The ministry said it has initiated various steps at micro level like issue of curriculum, syllabus and textbooks, teacher training modules, classroom environment, school management committee aimed at gender sensitization.

Laws to check gender discrimination and son preference in the country are often ineffective and sometimes may advance discriminatory practices, a UN study said, advocating that the policies should be guided by a more explicit anti-discrimination legal framework.

The report, "Laws and Son Preference in India", recommends the need for a new, anti-discrimination legal framework to guide laws and policies for women and girls.

The UNFPA study, reviews key laws relating to women including dowry, inheritance, child marriage, sex-selection, and sexual assault. It finds that the laws themselves, and their interpretation, non-implementation or absence, may directly or indirectly propagate son preference.

A deeply entrenched preference for sons exists for various reasons including that a son inherits property, whereas a daughter is perceived as more of a burden due to factors such as dowry - a practice that continues to prevail despite being illegal. Laws and their implementation are the backbone of social change. They hold the potential to change mind sets and stem generations of gender discrimination.

* **Asst. Professor (Sociology) Government Madhav Arts, Commerce College, Ujjain (M.P.) INDIA**

Laws and policies for girls and women should be guided by a more explicit anti-discrimination legal framework that spells out substantive and procedural rights for women in different fields of work and in greater detail, and applies to state and private actors, it said.

This suggestion for a more comprehensive framework is in line with the Bill of Rights in the Verma Committee Report that details the grounds on which women cannot be discriminated against.

The study, authored by Kirti Singh, found that some legal provisions are not just inadequate in checking son preference, but also promote the practice and end up being discriminatory for women. It gave an example of Goa Law on Polygamy that permits a second marriage for the husband when there is no son from the first marriage.

The study strongly recommends removing such blatantly discriminatory provisions. The study also unpacks judgments related to different gender laws that tend to at times uphold son preference than address it.

Priority must be given to reform inheritance laws, reform land and tenancy laws, so that women as widows and daughters inherit equally as sons and male members of the family.

In order to effectively overcome the issue of gender discrimination the parliament of India has formulated various enactments. Some of these enactments include:

In our society girls are socialized from their tender age to be dependent on males. Her existence is always subject to men. In her childhood she is under the protection of her father, after marriage under the protection of her husband and in old age at the mercy of her sons. The patriarchal system in India made women to live at the mercy of men, who exercise unlimited power over them. In order to ameliorate the condition of women in India Legislature enacted the large volume of enactments and many of these legislations were enacted in colonial period. Which are as follows:

1. 1829, Abolition of Sati;
2. 1856 Widow Remarriage made legal;
3. 1870 Female infanticide banned;
4. 1872 inter caste, intercommunity marriages made legal;
5. 1891 age of consent raised to 12 years for girls;
6. 1921 women get rights to vote in Madras province:
7. 1929 Child Marriage Restraint Act was passed;
8. 1937 women get special rights to property;
9. 1954 Special Marriage Act was passed;
10. 1955 Hindu Marriage Act was passed;
11. 1956 Suppression of Immoral Traffic in Women and Girls Act was passed;
12. 1961 Dowry Prohibition Act was passed;
13. 1981 Criminal Law Amendment Act was Passed;
14. 1986 The Indecent Representation of Women (Prohibition) Act was Passed;
15. 1987 Commission of Sati (Prevention) Act was passed.

Apart from these above mentioned laws there are some enactments pertaining to industry which contain special provisions for women such as: The Workmen Compensation Act, 1921; Payment of Wages Act, 1936; Factories Act, 1948; Maternity Benefit Act, 1961; Minimum Wages Act, 1948: Employees State Insurance Act 1948 and Pensions Act ,1987.In addition to this, the Constitution of India which is regarded as the supreme law of the land too gives special protection to women.

Deep-rooted gender inequalities continue to undermine India's potential to translate economic growth into inclusive development, according to a government report which highlighted the inequality found in the education system. It says gender is the most pervasive form of inequality that operatesin India across all classes, castes and communities, posing a big challenge despite the progressive education policy. The Report on the 'Implementation of Beijing Declaration and Platform for Action' says that issues of gender have been one of the most challenging in the progress made towards the goals of universalisation, inclusion, equity and quality in education.

The education system still reflects the inequality found in the society outside the classroom. Continuous and sustained efforts are still required to bring the status of the girls at par with boys. It mentioned the setbacks or reversals in progress towards gender equality and empowerment of women that have been experienced since the adoption of the Beijing Declaration.

The gender-based inequalities for instance, in education, income and employment limit the ability to protect their health. This lack of power of women in most cultural settings also impacts nutritional intake and health status of women and girls.

Thus, according to government, along with the policy initiatives and enactment of legislations, a lot needs to be done to realize the policy measures on ground so that effective implementation takes place.

Certain critical areas of concern like tackling burden of poverty, unequal access to primary health care, under nutrition, high rates of illiteracy, lack of access to and control over assets and resources, inequalities in sharing of power and decision making, lack of access to information, violence against women, adolescents and girl child and persisting discrimination against the girl child, require immediate attention in order to ensure equality and practical realization of rights for women.

A multi-pronged strategy to tackle the issues has been adopted to address traditional and cultural practices, socio-cultural barriers, socio-economic conditions of women, lack of adequate legal awareness and issues relating to the inadequate implementation of various Policy measures and mechanisms.

The government said that gender budget has shown a continuous increase in the National Budget. During 2014-2015 the total budget for the Ministry of WCD was Rs 203,500 million.

Women constitute half the population of the society and it is presumed that best creation belong to the women.

But it is a harsh reality that women have been ill-treated in every society for ages and India is no exception. From tribal to agricultural to industrial societies to organised states, the division of labor has primarily stemmed from physiological differences between the sexes, leading to the power resting with the men, resulting in the established gender hierarchies. We have been gifted with a history of discrimination, subjugation and suppression.

Women are deprived of economic resources and are dependent on men for their living. Women works are often confined to domestic sphere, she had to do all house hold works, which are not recognized and unpaid. In modern times many women are coming out to work but have to shoulder the double responsibility. Moreover, she is last to be considered and first to be fired as she is considered to be less productive than her counterpart. Her general status in the family and in the society has been low and unrecognized. From the cradle to grave, females are under the clutches of numerous evils such as discriminations, oppressions, violence, within the family, at the work places and in the society.

Gender injustice is a problem that is seen all over the world. But unless there are certain attitudinal changes, women will continue to get a raw deal.

Enacting gender just laws will not mean an end to the exploitation of and discrimination against women. Using law and the legal system can only be one of the many remedies to be used to change the unequal status of women.

It is said that the law without the public opinion is nothing but a bundle of papers. The gap between the men and women cannot be bridged by just enacting laws without any public support as social engineering laws are different from penal laws which are just related to punishment and are deterrent in nature but social engineering laws enacted to uplift the norms of the society are progressive in nature and therefore it should be backed by the will of the people for whom it is enacted. It must be remembered that guaranteeing a right in law does not ensure the ability to access the right in reality.

"***Just as a bird could not fly with one wing only, a nation would not march forward if the women are left behind.***"

- Swami Vivekananda

Gender equity emphasizes that all human beings be it men or women are free to develop their personal abilities and make choices without the limitations set by stereotypes, rigid gender roles, political and other prejudices. Their different aspirations should be valued equally and they would be treated fairly according to their respective needs. But the law alone cannot do much. All sections of society have to work for this transformation and this is where NGOs, the media and the people's representatives have to play a major role. Gender justice is genuine equality among human beings where neither man is superior nor is a woman inferior.

****

जनजातियों के सामाजिक एवं आर्थिक विकास में पंचायती राज की भूमिका

डॉ. आर. सी. पान्टेल *

प्रस्तावना – परतंत्रता की अवस्था से ही यह प्रमाणित कथन हैं कि भारत ग्रामों का देश हैं तथा ग्रामीण समुदाय के संरचना में प्राचीनकाल से ही तीन महत्वपूर्ण आधार रहे हैं–जाति प्रथा, संयुक्त परिवार और ग्रामीण पंचायत। भारत में तीनों आधारो में स्वशासन की इकाई के रूप में ग्रामीण पंचायतों का महत्व अधिक रहा हैं।

महात्मा गांधी की मान्यता थी –'भारतीय ग्रामीण जीवन का पुनर्निर्माण ग्राम पंचायतों की पुन: स्थापना से ही संभव हैं। ग्रामीण पंचायत ग्रामीण क्षेत्रों में शासन प्रबंध और सुरक्षा की एक मात्र संस्था रही हैं।'

उपरोक्त कथन का समर्थन करते हुए भारत में समाजशास्त्र के जनक डॉ. राधाकमल मुखर्जी के पंचायतों के महत्व के संबंध में कहा हैं कि ग्राम पंचायते प्रजातंत्र की देवता हैं, समस्त जनता की सामान्य सभा के रूप मेंअपने सदस्यों के समान अधिकारों, स्वतंत्रताओं के लिये निर्मित होती हैं ताकि सब में समानता, स्वतंत्रता तथा बंधुत्व का विचार दृढ़ रहे।

भारत में पंचायतों की प्राचीनता के प्रमाण ऋग्वेद एवं अर्थवेद में मिलते हैं पंचायती राज व्यवस्था को आरंभ करने का श्रेय राजा प्रभु को हैं। वैदिक काल में एक महत्वपूर्ण इकाई के रूप में माना गया हैं तथा साथ ही साथ उत्तर वैदिक काल में भी एक सामूहिक राजनैतिक इकाई के रूप में महत्व माना हैं। हिन्दू, मुस्लिम तथा पेशवा शासन काल में भी ग्राम पंचायतों का विशेष महत्व रहा हैं।

अंग्रेजो के आगमन के पश्चात ईस्ट इंडिया कंपनी की स्थापना के समय तक पंचायते ग्रामीण प्रशासन की एक महत्वपूर्ण इकाई के रूप में कार्य करती रही है। अंग्रेजी शासन काल के दौरान सामूहिकता के स्थान पर व्यक्तिवादिता को विशेष प्रोत्साहन प्रदान किया जाना, जिसमें सामूहिक ग्रामीण आकर्षण का महत्व कम होने लगा। इस प्रकार कहा जा सकता हैं कि अतिप्राचीन समय से चली आ रही ग्राम पंचायतों का पतन ओर उनकी आत्मनिर्भरता समाप्त होने लगी।

पंचायती राज का आशय – पंचायती राज की अवधारणा एक स्थानीय स्वशासन हैं और मौलिक अर्थ में यही स्थानीय स्वशासन लोकतंत्र का मूल आधार हैं। सामान्य तौर पर स्थानीय स्वशासन के दो क्षेत्र होते हैं प्रथम ग्रामीण स्वशासन तथा द्वितीय नगरीय स्वशासन।

ग्राम तथा जनजातियों की वास्तविक प्रगति हेतु ग्रामीण पुनर्निर्माण अतिआवश्यक होता हैं, इस कथन को ध्यान में रखते हुए भारतीय संविधान में यह निर्देश दिया गया हैं कि राज्य ग्राम पंचायतों के निर्माण के लिये कदम उठाएगा तथा उन्हें इतनी शक्ति तथा अधिकार प्रदान करेंगा कि जिससे वे (पंचायत) स्वशासन के रूप में कार्य कर सके।

उपरोक्त कथन पर ही भारतीय लोकतंत्र की प्रमुख धारणा आधारित हैं। सामान्यत: आजादी के बाद से ही पंचायतों की स्थापना की ओर विशेष ध्यान दिया गया।

महात्मा गांधी का मत था कि 'भारत में स्वतंत्रता का प्रारंभ धरातल से ही होना चाहिए, प्रत्येक ग्राम एक छोटा गणराज्य हो जो पूर्णत: आत्मनिर्भर हो तथा उसे किसी भी आवश्यकता को पूरा करने के लिये दूसरो पर निर्भर न रहना पड़ें।'

गांधी जी के इसी विचार को क्रियान्वित करने के लिये भारतीय संविधान की धारा–50 में यह व्यवस्था की गई कि 'राज्य पंचायतों का संगठन करेगा और उनको समस्त अधिकार प्रदान करेगा, जिससे वे स्वायत शासन की इकाई के रूप में कार्य करने के योग्य हो जाए।'

वर्तमान में देश में सभी राज्यों में पंचायतों की स्थापना हेतु अधिनियम पारित किये जा चुके हैं तथा सभी राज्यों में पंचायतों का गठन किया गया।

सामुदायिक विकास कार्यक्रम को जनता का कार्यक्रम बनाने तथा आवश्यक जनसहयोग प्राप्त करने के लिये बलवंतराय मेहता कमेटी की स्थापना सन् 1957 में अपने प्रतिवेदन में सुझाव दिया कि स्थानीय जनता की रूचि तथा सहभागिता में वृद्धि की जाए। इस कमेटी की सर्वाधिक महत्ता, पंचायती राज की योजना का प्रस्तुतीकरण हैं जिसे सामान्यत: प्रजातांत्रिक विकेन्द्रीकरण कहा जाता हैं जिसे 1958 में राष्ट्रीय विकास परिषद ने स्वीकार कर लिया। सामुदायिक विकास मंत्रालय द्वारा प्रत्येक राज्यों को कहा गया कि वे अपने–अपने क्षेत्रों की विशेषताओं का ध्यान रखते हुए पंचायती राज व्यवस्था को लागू करें। इसी तारतम्य में 1959 से पंचायत व्यवस्था लागू की गई।

'पंचायती राज योजना के माध्यम से राजनीतिक सत्ता को निचले स्तरो तक हस्तांतरित किया गया।'

प्रजातांत्रिक विकेन्द्रीकरण – सामान्यत: पंचायती राज की अवधारणा का विकास कार्यक्रमों को गति प्रदान करने के लिये ही हुआ। बलवंतराय मेहता कमेटी ने सामुदायिक विकास को प्रमुख लक्ष्य माना तथा पंचायती राज लक्ष्यपूर्ति का एक महत्वपूर्ण साधन।

सामुदायिक कार्यक्रम के व्यवस्थित संचालन की दृष्टी से पंचायती राज के अन्तर्गत तीन स्तरीय व्यवस्था की स्थापना का सुझाव दिया तथा कमेटी के सुझावों को स्वीकार कर लिया तथा प्रशासन के विभिन्न स्तरो पर पंचायती राज की स्थापना की गई।

अनुसूचित जनजाति की आवधारणा – भारत एक विशाल देश हैं जहां कई प्रकार की विविधताएं विद्यमान हैं। प्राचीनकाल से ही यह विभिन्न धर्मो, समुदायो, संस्कृतियों, जातियों तथा जनजातियों की कर्मभूमि हैं। उपरोक्त सभी तथ्यों ने भारत को सामाजिक व्यवस्था तथा संगठन निर्माण भारत की

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, धामनोद (म.प्र.) भारत

संपूर्ण जनसंख्या का लगभग 8 प्रतिशत् भाग आदिम जातियों या जनजातियों द्वारा निर्मित हैं एवं इसके प्रतिशत् में प्रत्येक दशक में वृद्धि ओर दिखाई देती हैं। जैसे 1981 में 5.16 करोड़ तथा 1991 में 6.78 करोड़ और 2001 में 6.43 करोड़ दुनिया के अधिकांश देश प्रगति के मार्ग पर प्रतिदिन अग्रसर हो रहे हैं भारतीय जनजातिया आज भी ऐसे भौगोलिक क्षेत्रों में निवास कर रही हैं जहां सभ्यता का प्रकाश बहुत कम पहुंच पाया हैं जैसे म.प्र. की सीमा में लगा 'अबुझमाड़' जो वर्तमान में छत्तीसगढ़ राज्य के अन्तर्गत आता हैं 200 एकड़ क्षेत्र में जनजातियों की स्वतंत्र सत्ता हैं तथा राज्य की ओर जनसाधरण हेतु प्रतिबंधित क्षेत्र घोषित कर दिया हैं।

आज भी दुर्गम क्षेत्रों में मानव समूह पाये जाते हैं जो पिछले सेकड़ो वर्षो से सभ्यता से परे होकर अपनी सामाजिक तथा सांस्कृतिक पहचान बनाये हुए हैं इनका निवास सामान्यत: जंगल, मरूस्थल, ऊचें पर्वत है जहां वर्तमान भौतिक साधनों का नितान्त अभाव हैं। 1960 में प्रथम बार विधिवत चुनाव कराकर ग्राम स्तर ग्राम पंचायत, खण्ड स्तर पर, जनपद पंचायत एवं जिला स्तर पर जिला परिषद नाम से त्रि-स्तरीय स्वायत संस्थाए स्थापित की गयी।

म.प्र. में पंचायती राज व्यवस्था (1994) – भारतीय संविधान के 73 वें संशोधन अधिनियम 1993 के प्रावधानों के अनुसार म.प्र. पंचायती राज अधिनियम 1994 में प्रभावशाली कर त्रि-स्तरीय पंचायती राज व्यवस्था स्थापित की गई। म.प्र. राज्य सामान्यत: जनजातियों का घोसला माना जाता हैं। इस राज्य के अधिकांश जिले झाबुआ, अलिराजपुर, धार, बड़वानी, खण्डवा, छिंदवाड़ा, बालाघाट, डिंडोरी, सिवनी, शहडोल आदि में जनजातियों की बहुलता पायी जाती हैं। इन क्षेत्रों में पंचायती राज की भूमिका अत्याधिक रही हैं।

पंचायत व्यवस्था का गठन

↓

जिला पंचायत ⟶ जिला स्तर

↓

जनपद पंचायत ⟶ खण्ड स्तर

↓

ग्राम पंचायत ⟶ ग्राम स्तर

वर्ष	ग्राम पंचायत	जनपद पंचायत	जिला पंचायत
2005	23476	6097	537
2011	235780	6097	537
2014	235780	6097	539

जनजातिय क्षेत्रों में पंचायत राज संबंधित विभिन्न योजनाएं क्रियान्वित की गयी परन्तु जनजातिय सदस्यो को इसका पर्याप्त लाभ न मिलते हुए अन्य सभ्य जातियों एवं नौकरशाही को मिल रहा हैं। योजना का लक्ष्य क्या हैं? जनजाति सदस्य अनभिज्ञ होते हैं ऐसी स्थिति में पंचायती राज योजनाओं का सही लाभ प्राप्त नहीं हुआ हैं।

म.प्र.में जनपद तथा ग्राम पंचायत

वर्ष	जनपद पंचायत	ग्राम पंचायत
1960-61	165	20014
1979-80	459	16229
1994-95	459	31138
2004-05	313	22029
2006-07	313	22029
2010-11	310	22029

म.प्र. की प्रमुख जनजातियां- म.प्र. के जनजातिय क्षेत्रों को चार भागों में विभाजीत किया गया हैं - मध्य क्षेत्र, पूर्वी क्षेत्र, पश्चिमी क्षेत्र, दक्षिणी क्षेत्र। इन क्षेत्रों में धार, बड़वानी, झाबुआ, अलिराजपुर, खरगोन आदि जिलों में जनजातियों की बहुलता हैं। गौड़, भील, बेगा, कोरकु, कोरवा, उर्रा, भारिया, हल्वा, कोल, माड़िया, सहारिया, केवर, कमार आदि मुख्य जनजातियाँ जो आज भी आंशिक सुधार के बाद प्रगति के मार्ग पर नहीं हैं।

जनजातिय विकास में पंचायती राज की भूमिका – पंचायती राज की स्थापना के स्वरूप पूर्व की भांति वर्तमान में सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक विकास अवश्यक ही हुआ हैं परन्तु देश के शुभचिंतको का जो सुधार लक्ष्य था वह प्राप्त नहीं हुआ हैं। आरक्षण व्यवस्था के तहत इनके स्थान सुरक्षित किये गये हैं परन्तु शिक्षा व राजनीति जागरूकता के अभाव में जनजाति सदस्य अपने अधिकारों का वास्तविक उपयोग नहीं कर पा रहे हैं जिससे विकास की गतियों में विशेष अंतर नहीं आया हैं इनके सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक ढ़ाचे में विकास के दृष्टीकोण से विशेष परिवर्तन नहीं हुआ हैं तथा कुछ जनजातियाँ आज भी अपने प्रारंभिक स्तर से कुछ ही ऊपर हैं।

अत: एक अच्छे सोच एवं परिवर्तन की लालसा की आवश्यकता हैं इसके बिना किसी भी क्षेत्र में उनका समुचित विकास करना असंभव हैं।

जनजातिय क्षेत्रों में पंचायती राज की असफलता के कारण - जनजातिय विकास में कोई एक कारण मूल न होते हुए असफलता के कई कारण हैं जिस पर शासन और समाज का कड़ा शिकंजा नहीं हैं कई योजनाएं कागज के पन्नो पर क्रियाशील हैं ऐसे में विकास की कल्पना नहीं कि जा सकती हैं। तनाव एवं संघर्ष, दलबंदी, जातिवाद, भ्रष्टाचार, प्रजातांत्रिक भावना का भाव, राजनीतिक दल-दल, पैशेवर नेता, अशिक्षा, निर्धनता, राजनीतिक चैतना की कमी आदि ऐसे कारण हैं जिससे जनजातिय सभ्य जातियों के समान विकास की मंजिल से योजनाओं के बावजुद कौसो दूर हैं।

शोध समस्या का चयन – वर्तमान समय में केन्द्र तथा राज्य सरकारे विकास के आयाम में सबसे नीचे खड़े व्यक्ति की ओर ध्यान दे रही हैं इसी तारत्म्य में प्रदेश सरकार ने 73 वें संविधान संशोधन के अन्तर्गत 1994 में नवीन पंचायतीराज को क्रियान्वित किया हैं। इस नवीन क्रियान्वयन में जनजातिय क्षेत्रों में पंचायतीराज योजनाऐं किस प्रकार अपने लक्ष्यों में सफल हो रही हैं। क्या पंचायतीराज अनुसूचित जनजातिय क्षेत्रों के विकास में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा हैं। क्या पंचायतीराज में विभिन्न योजनाओं से जनजातियों के जीवन में बदलाव हो रहा हैं ? कई सभ्य जातियों का हस्तक्षेप तो नहीं हैं? अधिकारियों तथा कर्मचारियों का जनजातिय समूहों के साथ सही संबंध हैं ? क्या पूर्व की अपेक्षा वर्तमान में जनजातिय समूहो में जागरूकता उत्पन्न हो रही हैं? आदि प्रश्नो की जिज्ञासा शोधार्थी द्वारा अनुसूचित जनजातिय क्षेत्रों में पंचायतीराज की भूमिका विषय का चयन किया गया।

अध्ययन का उद्देश्य – किसी भी विषय के अन्तर्गत शोध उद्देश्यहीन नहीं होता शोध वही हैं जिसका निर्धारित लक्ष्य हो तथा प्रयास के माध्यम से जिसे कठिनाईयों के बावजूद प्राप्त किया जा सके और उसमे विद्यमान समस्याओं का निराकरण करके कल्याण भाव को स्थापित किया जा सके।

शोध के विषय एवं उद्देश्य को लेकर एल्विन का मत हैं- शोध विषय एवं उद्देश्य का चयन जहाज की भांति हैं जिसे गंतव्य तक जाने के लिये दिशा का निर्धारण करना अनिवार्य हैं यदि दिशा को निर्धारित नहीं किया गया तो जहाज के भटक जाने की पूर्ण संभावना होती हैं चाहे वह जहाज कितनी भी अच्छी इमारती लकड़ी का बना हो तथा उसका चालक कितना भी अच्छा कप्तान क्यो नहीं हों।

प्रस्तुत शोध निम्नांकित उद्देश्यो को सामने रखकर करने का प्रयास किया गया हैं –

1. ग्राम पंचायतों में अनुसूचित जनजातियों की भागीदारी तथा उनकी जागरूकता।
2. किसी सभ्य जातियों के हस्तक्षेप के अभाव में स्वयं का नेतृत्व।
3. शासकीय योजनाओं के क्रियान्वयन का अध्ययन।
4. शासकीय योजनाओं की प्रगति का अध्ययन।
5. शासकीय योजनाओं तथा जनजातिय समूहों के दृष्टिकोण में परिवर्तन का अध्ययन।

अध्ययन क्षेत्र – म.प्र. के धार जिले की धरमपुरी तहसील की 10 ग्राम पंचायतों को उद्देयपूर्ण विधि द्वारा चयन किया गया जिनका नाम क्रमश: ग्राम पंचायत बिखरोन, रामपुरा, भवान्याबुजुर्ग, निम्बोला, साला, लुन्हेरा, पगारा, पिपल्याकामीन, खलघाट, हतनावर, एकलराबुजुर्ग आदि हैं। चयनिम ग्राम पंचायतों से प्रत्येक पंचायत से 10 उत्तरदाताओं का चयन किया गया। इस प्रकार 100 सूचनादाताओं से साक्षात्कार अनुसूची की पूर्ति की गयी।

तथ्यों का विश्लेषण एवं अध्ययन से प्राप्त निष्कर्ष –

1. 60 प्रतिशत उत्तरदाताओं पंचायतों के विकास में सहायक मानते हैं तथा 40 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने सामाजिक विकास के लिये पंचायतों की भूमिका को नकारा हैं।

2. 71.2 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने माना कि नवीन पंचायतीराज की योजनाओं से महिलाओं के सामाजिक एवं परम्परागत जीवन में बदलाव होकर शैक्षणिक स्थिति में सुधार हुआ हैं जबकि 28.2 प्रतिशत् उत्तरदाताओं महिलाओं की स्थिति में बदलाव को स्वीकार नहीं किया हैं।

3. 57.8 प्रतिशत् सूचनादाताओं ने माना कि स्थानीय समस्याओं के निराकरण में पंचायतीराज की महत्वपूर्ण भूमिका रही हैं। जबकि 42.2 प्रतिशत् उत्तरदाताओं का मत हैं कि स्थानीय समस्याओं के निराकरण में पंचायतीराज की भूमिका सराहनीय रही हैं।

4. 55.3 प्रतिशत् उत्तरदाताओं के पास कृषि भूमि उपलब्ध हैं परन्तु सिंचाई के साधन न होने से उत्पादन की सीमा बहुत कम हैं 64 प्रतिशत सूचनादाताओं के पास सिचाई के साधन उपलब्ध नहीं हैं तथा पंचायतीराज में सिंचाई की सुविधाओं में वृद्धि हेतु पर्याप्त आवंटन नहीं हैं। बिना सिंचाई के उत्पादन की राशि का 50 प्रतिशत् भाग में व्यय होता हैं।

सुझाव –

1. ग्रामीण एवं अनुसूचित जनजातिय क्षेत्रों में मात्र आर्थिक विकास ही नहीं बल्कि सामाजिक न्याय कि आवश्यकता हैं।
2. लोकतांत्रिक प्रक्रिया में भागीदारी के अवसर मिलना चाहिए। जनजातिय क्षेत्रों में लघू एवं कुटीर उद्योगों के बड़े पैमाने पर स्थापना करना चाहिए।
3. अनुसूचित जनजातिय क्षेत्रों में कारखानो एवं फैक्ट्रीयों की स्थापना हो ताकि श्रमिक के रूप में रोजगार के अवसर सुलभ हो सके।
4. अधिकारी एवं कर्मचारियों तथा अनुसूचित जनजातिय समूहों के मध्य सहयोग, सदभावना एवं समन्वय निर्मित करने हेतु पहल करना चाहिए।
5. ऐसी योजना बनाना चाहिए जिसमें जनजातिय समूह के सदस्य महाजनो के कर्ज चंगुल से मुक्त हो सके।

संदर्भ ग्रंथ सूंची :–

1. शशि करणावत– पंचायती राज व्यवस्था।
2. अर्जुन पब्लिशिंग हाऊस नई दिल्ली।
3. डॉ.पूरणमल – पंचायती राज एवं दलीत नैतृत्व (अविष्कार पब्लिशर्स जयपुर)
4. डॉ. गुप्ता शर्मा– यूनिफाईड समाजशास्त्र (साहित्य भवन आगरा)
5. गुप्ता एवं शर्मा – जनजातिय समाज (साहित्य भवन आगरा)
6. डॉ. डी.एस. बघेल– जनजातिय समाजशास्त्र (अर्जुन पब्लिशिंग हाऊस नई दिल्ली)
7. जिला पंचायत कार्यालय, खरगोन, बड़वानी (योजना गजट)

****

सामाजिक विकास में बैंकों का योगदान

धनीराम प्रजापति *

शोध सारांश – बैंक देश के सामाजिक आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। विकसित बैंकिंग प्रणाली अमीर, गरीब, गाँव, शहर में संतुलित विकास करने के लिए देश को सक्षम बनाता है। भारत गाँवों का देश है और कृषि के रूप में जाना जाता है। इससे संबद्ध गतिविधियाँ देश के आर्थिक विकास के लिए रीढ़ है। बैंक रहित क्षेत्रों के सेटेलाइट शाखाएँ खोलने के लिए वाणिज्यिक बैंकों के लिए सामान्य अनुमति दी गई है। गांव में एक या दो स्टाफ के सदस्यों के माध्यम से बैंकिंग सुविधाओं के विस्तार की परिकल्पना है। यह नकद निकासी, जमा, बिक्री, सेवा सहित ग्राहकों को पूर्व लेन देन की सुविधा प्रदान करता है। ग्रामीण क्षेत्रों में एटीएम की कम उपस्थिति है, बैंक उच्च निवेश और कम लेन देन की मात्रा के कारण ग्रामीण/अर्द्ध शहरी केन्द्रों पर एटीएम स्थापित करने के लिए उत्सुक नहीं। साक्षरता कार्यक्रमों का आयोजन करके वित्तीय जागरूकता के प्रसार के माध्यम से संभव है, ग्राहक व बैंकों के मध्य विश्वास स्तर को बढ़ाना। वर्तमान गतिशील माहौल में प्रतिस्पर्धी बने रहने के लिए व्यापार मॉडल का लाभ प्रौद्योगिकी और मानव पूंजी बैंक   कम मार्जिन उच्च मात्रा   अपनाने की जरूरत है, समावेशी विकास के रास्ते को प्रशस्त करने का माध्यम बैंक ही है।

प्रस्तावना – खुदरा बैंकिंग एक ऐसी बैंकिंग सेवा होती है जो मूलत: वैधानिक उपभोक्ताओं के लिए निर्मित होती है। खुदरा बैंकिंग आम तौर पर वाणिज्यक बैंकों और उनके साथ-साथ अपेक्षाकृत छोटे सामुदायिक बैंकों द्वारा उपलब्ध कराई जाती है। थोक बैंकिंग के विपरीत खुदरा बैंकिंग में मुख्यत: उपभोक्ता बाजारों पर ध्यान केन्द्रित किया जाता है। बैंकिंग कम्पनियां बचत की सुवधिा प्रदान करने और खातों की जांच करने, बिल का भुगतान करने की सेवाएं तथा उनके साथ-साथ क्रेडिट कार्डो सहित व्यक्तिक बैंकिंग सेवाओं की एक व्यापक श्रखंला उपलब्ध करती है। खुदरा बैंकिंग के माध्यम से उपभोक्ता बंधक और व्यक्तिक ऋण भी प्राप्त कर सकते हैं। यदपि अधिकांश रूप में बैंकिंग स्थूल बाजार प्रेरित होती है तथापि कई एक खुदरा बैंकिंग उत्पाद छोटे और मध्यम आकार वाले कारोबारों तक भी विस्तारित किया जा सकते हैं आज खुदरा बैंकिंग का अधिकांश हिस्सा स्वचालित टेलर मशीन के द्वारा अथवा ऑन लाईन बैंकिंग के नाम से ज्ञात आभासी खुदरा बैंकिंग के माध्यम से इलेक्ट्रानिक रूप से सुव्यवस्थित हैं। 'व्यक्तिक ग्राहकों को प्रदान की जाने वाली बचत खातों व्यक्ति ऋणों विशेषण सेवा आदि जैसी सेवाऐं '।

विशेषता/लाभ –

1. व्यक्तिक ग्राहकों को लक्षयांकित बैंकिंग सुविधाएं । 2. व्यक्तियों की विशाल संख्या का समावेश करते हुए स्थूल बाजार खण्ड के प्रति सकेन्द्रित। 3. ग्राहक आधार बड़ा और जोखिम सम्पूर्ण ग्राहक आधार तक फैल जाता है। 4. ग्राहक निष्ठा सुद्दढ होगी तथा ग्राहक ज्यादातर एक बैंक से किसी अन्य बैंक की और जाने हेतु नहीं प्रवृत होंगे। 5. आकर्षक ब्याज अंतर क्योंकि अंतर व्यापक हो जाते हैं, क्योंकि ग्राहक प्रभावी ढंग से सौदेबाजी करने की द्दष्टि से अत्यधिक विखंण्डित होते हैं। ऋण जोखिम सुविशाखकृत हो जाता है क्योंकि ऋण की रकमें अपेक्षाकृत छोटी होती है।

बाधाएँ–

1. काफी बड़ी संख्या में ग्राहकों का प्रबंध करने में विशेषता सूचना प्रौद्योगिकी प्रणाली के सुद्दढ न होने की स्थिति में समस्याएं। 2. उत्पादों के तेजी से विकास से सूचना प्रौद्योगिकी से संबंधित जटिलताऐं पैदा हो सकती हैं। 3. शाखा के नेटवर्को के रखरखाव तथा भारी संख्या में कम मूल्य वाले लेन-देन को संचालित करने की लागते अपेक्षकृति अधिक हो जाती हैं इसी कारण लेन-देन ग्राहकों को ए.टी.एम. टेलीफोन ईन्टरनेट व अपेक्षाकृत सस्ते वितरण चेनल का उपयोग करना और शाखाओं को अपेक्षाकृत अधिक मूल्योजित लेन-देनों के लिए आरक्षित करने हेतु प्रोत्साहित कर रहे हैं।

ग्राहकों से संबंधित मान्यताऐं –

1. ग्राहक भिन्न-भिन्न होते हैं। 2. ग्राहकों की आवश्यकताऐं भिन्न-भिन्न होती हैं। 3. प्रत्येक ग्राहक की वित्तीय सेवाओं से संबंधित आवश्यकता संबंधी अपेक्षा अनूठी होगी। 4. प्रत्येक ग्राहक की वित्तीय सेवा का समूच्चय भिन्न-भिन्न होगा। 5. ग्राहकों को उनकी आवश्यकता से पिरामिड के आधार पर मोटे तौर पर एकसाथ सामूहिक किया जा सकता है। 6. ग्राहकों को उनकी आय,भूगोल, व्यवसाय, रोजगार, पैसा, लिंग एवं परिवार से आकार के आधार पर एक साथ सामूहित किया जा सकता है। 7. उत्पादों और सेवाओं को संयुक्त में से किसी एक या सम्मिलित तत्वों की अधिकांश आवश्यकता पूरी करने के लिए विकसित किया जा सकता है। 8. उत्पादों एवं सेवाओं को उपर्युकत में से एक या किसी भी तत्व के भीतर कर्मठता के आधार पर संरचित किया जा सकता है।

ग्राहक बैंक के उत्पादों एवं सेवाओं को मूलत: अपनी आवश्यकता पूरी करने के लिये खरीदते हैं तथा यदि उनकी आवश्यकताओं एवं बैंक के उत्पादों में सुमेल होता है तो सम्पूर्ण सम्कालिकता की स्थिति निर्मित हो जाती है तथा बैंक द्वारा ग्राहक से वायदा किये गये लाभ प्रदान कर दिए जाने पर ग्राहक की ओर से सम्पूर्ण संतुष्टि की भावना प्रदर्शित होगी सामान्यरूप से ग्राहकों की अपेक्षाओं को अब्राहम मेसलो के आवश्यक सिद्धांत से जोड़ा

स्वंय को साबित करना
आत्मसम्मान की आवयश्कता
सामाजिक आवश्यकता
सुरक्षात्मक आवश्यकता
मनोवैज्ञानिक आवश्यकता
अब्राहम मेसलो का आवश्यकता का स्तर

* शोधार्थी (समाजशास्त्र) शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

1. मनोवैज्ञानिक आवश्यकता– मुख्य बचत खाते, व्यक्ति दुर्धटना सुरक्षा, आवास ऋण, ।

2. सुरक्षात्मक आवश्यकताऐं– आवृति, मियादी जमा उत्पाद, जीवन बीमा उत्पाद, अधिक परिपक्वता रकमों सहित बन्दोबस्ती उत्पाद, कर योजना बैंकिंग, बीमा एवं पारस्परिक निधि उत्पाद।

3. सामाजिक आवश्यकताऐं, उपभोक्ता ऋण , व्यक्तिक ऋण, गृह ऋण, कार ऋण, डॉ.इन्जीनियर, वकील, लेखाकार, प्रबंध परमार्श दाता, वास्तूकारों आदि को व्यवसायिक विकास हेतु ऋण , उपर्युक्त ऋणों से जुड़ी बीमा सुरक्षा, खुदार सोने के सिक्के, स्वयं अपने और परिवार के लिए स्वास्थ्य पालिसी, पारस्परिक निधि योजना, युनिट संबध बीमा उत्पाद, पारस्परिक निधियों की व्यवस्थित निवेश योजना।

4. आत्मसम्मान परक आवश्यकताऐं– विशेष सावधी जमा उत्पाद , सावधी बीम उत्पाद, दूसरा आवास ऋण, गृह सुधार, गृह सजा ऋण, स्वयं को साबित करने वाली आवश्यकताऐं – पेन्शन भोगी ऋण, बैंकिंग में सेवानिवृति समाधान और बीमें में पेन्शन योजनाऐं , वरिष्ठ नागरिकों के सावधी जमा उत्पाद।

ग्रहाकों की अपेक्षाऐं और उनकी संतुष्टि के स्तर –

1. ग्राहक की अपेक्षाओं की पूर्ति केवल ग्राहकों के संतुष्टि के स्तर से मापा जा सकता है। यह संतुष्टि विभिन्न बैंकों द्वारा उपलब्ध कराए जाने वाले उत्पादों एवं सेवाओं के बारे में ग्राहकों के अनुभवों से उदरित होती है।
2. अध्ययन में बैंकों की सभी महानगरी,शहरी, कसबाई,ग्रामीण शाखाओं के बचत खाते रखने वाले लगभग 20 हजार ग्राहकों लभगभ 4 हजार ऐसे ग्राहकों जिन्होंने गृह ऋण ले रखा है तथा लगभग 3500 ऐसे ग्राहकों जिन्होने क्रेडिट कार्ड प्राप्त कर रखे है का समावेश था।
3. अध्ययन का उद्देश्य सेवा की गुणवता के संबंध में प्रमुख कार्य निष्पादक संकेतकों को सृजन करते हुए बैंकों की ग्राहक सेवा की गुणवता को मापना तथा उस क्षेत्र खण्ड के प्रमुख कार्य निष्पादन संकेतकों के न्यूनतम मूल्य पर आधारित गुणवत्ता को मापना था।
4. संतुष्टि का मापन 3 मूलभूत मापदण्डों तथा समग्र संतुष्टि पक्ष पोषण और निष्ठा पर निर्मित था।
5. रेटिग में उद्योग द्वारा किये गये समग्ररूप से अच्छे कार्य निष्पादन का पता चलता है सभी 3 उत्पाद खण्डों के मामलों में कुल 3 मापों से संबंधित रेटिग 80 प्रतिशत से अधिक है।
6. यह पूछे जाने पर पिछले एक दो वर्षों में उनके बैंकों के संबंध में उनके अनुभव कैसे बदल गये दो तिहाई ग्राहकों ने बताया कि उनमें बहुत सुधार हुआ है।
7. 10 में से लगभग 9 बजत खेते और ग्रह ऋण से ग्राहकों को संबंधित बैंको के प्रस्तावों में उत्कृष्ठि मूल्य मौजूद लगते हैं। क्रिडिट कार्डो के संबंध में यह अंक महत्वपूर्णरूप से कम हैं।
8. बैंकों के साथ ग्राहकों के सभी सम्पर्क बिन्दूओं में से शाखा की अन्योन क्रियाऐं और सम्प्रेषण संतुष्टि सूचकांक के प्रमुख प्रेरक तत्व माने गये हैं।

सेवा गुणवत्ता बढ़ाने के उपाय–

1. शाखा में लेन देन का समय बढाए जाने की आवश्यकता है।
2. जनता से जुड़े प्रत्येक तत्वों के समग्र ग्राहक संतुष्टि को प्रेरित करते हुए देखे जाने के परिप्रेक्ष में शाखा में पढ्रान की जाने वाली सुविधाओं पर प्रदत्त सेवा की श्रृंखला की दृष्टि से विचार करने की आवश्यकता है।
3. ग्राहक द्वारा उनकी आवश्कताओं को पूरा किये जाने के लिए प्रयाप्त चेनलों का अभाव महसूस किया जाता है। वर्तमान चेनलों तथा उन चेनलों तक ग्राहक की पहुँच उपयोग से संबंधित सहूलियत पर पुन:र्विचार किये जाने की आवश्यकता है।
4. बैंको को सभी मापदण्डों पर कार्य निष्पादन को सुदृढ बनाने की आवश्यकता है।
5. बैंक को कई एक उत्पादों की विशेषताओं पर विशेष ध्यान देना होगा।
6. शाखा नेटवर्क पर ग्राहको अनुकूलन मोडयूल, नये उत्पाद सेवाओं का विकास किया जाना है।
7. कर्मचारियों को सेवाओं के समय पर केन्द्रित प्रषिक्षिण एवं समीक्षा के माध्यम से ग्राहक अनुभूति के इस प्रमुख पहलू के प्रति पुन:भिमुख किये जाने की आवश्कता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया, ऑप्रेशन एण्ड पफमिन्स ऑफ कार्मशियल बैंक 2007.
2. कैफ जेमिनी कन्सलटिग, वलर्ड रिटेल बैंकिंग रिपोर्ट 2006.
3. बैंकिंग इन्डस्ट्री , वीजन 2010, द इण्डियन बैंकर , जनवरी 2007.
4. मोबाईल बैंकिंग, यूनिय बैंक ऑफ इण्डिया, ब्रोशर ऑन मोबाईल बैंकिंग.
5. इंन्टरनेट बैंकिंग, आर.बी.आई.रिपोर्ट.

****

शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र के कमजोर वर्ग के विकास में बैंक की भूमिका

डॉ. अजेन्द्र नाथ प्रजापति *

शोध सारांश – बैंक एक ऐसी संस्था है, जो जनता से जमा राशि स्वीकार करती है और उन व्यक्तियों को जिन्हें इनकी आवश्यकता होती है, मुद्रा उधार देती है। भारत में शहरी व ग्रामीण दोनों क्षेत्र हैं। इन क्षेत्रों के कमजोर वर्गों के लिए बैंकों की भूमिका महत्वपूर्ण है। ग्रामीण क्षेत्रों में विकासात्मक गतिविधियों को तेज करने के लिए ग्रामीण वित्तीय प्रणाली एक शक्तिशाली साधन है। संगठित क्षेत्रों में संस्थाओं की तीन धाराएँ हैं, सहकारी, वाणिज्यिक, क्षेत्रीय बैंक। कृषि के लिए संस्थागत ऋण वाणिज्यिक 46%, क्षेत्रीय 48%, सहकारी बैंक की 6%, हिस्सेदारी है। सहकारी बैंक ग्रामीण कमजोर वर्गों को अल्पकालिक, मध्यावधि, दीर्घावधि, ऋण उपलब्ध कराते हैं। आज सहकारी बैंक प्रणाली भारतीय वित्त प्रणाली का अभिन्न हिस्सा है। वाणिज्यिक बैंक सीधे किसानों को ऋण व उधार प्रक्रिया को उदार बना रहे हैं। बैंक द्वारा किसानों को ऋण की समयबद्धता और पर्याप्तता सुनिश्चित करने का सामना सबसे गंभीर चुनौती है। शहरी क्षेत्र में बैंक द्वारा शहरी विकास नीति को मंजूरी दी गई थी, जिससे निवेश, विकेन्द्रीकरण, RMCs क्षमता, शहरी गरीबों के रहने की स्थिति में सुधार किया गया। इसी तरह गाँवों में सेटेलाइट शाखाऐं, मोबाईल, इंटरनेट बैंकिंग, इत्यादि सेवाऐं प्रदान कर मुद्रा संचय, उपयोगिता, वितरण को आवश्यक वर्गों तक पहुंचा रहे हैं।

प्रस्तावना – बैंक एक ऐसी आर्थिक संस्था है जो रूपयों के लेन देन का कार्य करती है। बचत को उत्पादक रूप से सुरक्षित रखने का यह सर्वाधिक पुराना साधन है। इसी कारण से अन्य साधनों की तुलना में इसका ज्यादा प्रचलन है क्योंकि इसकी साख सर्वाधिक है। बैंक में जमा धन की एक साख विशेषता यह है कि इनकी सरलता अन्य साधनों की अपेक्षा ज्यादा होती है। बैंक की योजनाओं में साधारण पढ़ा लिखा व्यक्ति भी बैंक में रूपयें जमा कर सकता है। आवश्यकतानुसार निकाल भी सकता है । राष्ट्रीयकृत एवं अंतर्राष्ट्रीयकृत सभी प्रकार के विभिन्न व्यापारिक बैंकों में ब्याज की दर समान होती है परन्तु अलग–अलग प्रकार की योजनाओं व खातों में ब्याज की दर अलग–अलग होती है। बैंक में बचत की नई धन राषि को निम्न प्रकार के खातों में जमा किया जा सकता है। 1. चालू खाता 2. बचत खाता 3. सावधिक निक्षेप खाता 4. ग्रह बचत खाता 5. संचय सावधिक बचत खाता। इसमें ब्याज का दर अलग अलग समय के अनुसार होता है।

परिणाम एवं विवेचना – प्रत्येक परिवार के आय तथा व्यय दो अत्यंत ही महत्वपूर्ण आर्थिक घटक होते हैं पारिवारिक व्यवस्थाऐं आय व्यय का संतुलन करते हुए धन का प्रयोग करने से सुख एवं समृद्धि में वृद्धि होती है। वास्तविक जगत में वही परिवार सुखी समृद्धि होता है जो अपनी आय के अनुसार व्यय करता है। आय एवं व्यय का संतुलन ग्रहणी की कार्यकुशलता, सूझबूझ तथा संचालन शक्ति पर निर्भर करता है। आय के समुचित नियोजन के लिये यह आवश्यक है कि ग्रहणी को आय एवं व्यय के सभी पक्षों का समूचित ज्ञात हो। पारिवारिक आय में मुख्य रूप से परिवार के प्रधान सदस्य को प्राप्त होने वाला धन आता है। परन्तु इसके अतिरिक्त किसी अन्य सदस्य को किसी साधन से धन की प्राप्ति होती है तो उसे पारिवारिक आय से सम्मिलित कर लिया जाता है। आय तीन प्रकार की होती है। पहली मौद्रिक आय दूसरी वास्तविक आय, तीसरी मासिक आय। पारिवारिक एवं व्यय में समूचित संतुलन अत्यंत आवश्यक है। यदि आय को ध्यान में रखकर व्यय का नियंत्रित नहीं किया जायेगा तो पारिविारिक आर्थिक अवस्था का संतुलन बिगड़ जायेगा। विनियोग का उद्देश्य केवल वास्तविक पूंजी परिसंपत्ति की वृद्धि करना ही नहीं होता बल्कि माल के स्टॉक में वृद्धि करना भी होता है। विनयोग निजी भी होते है और सार्वजनिक भी । प्रत्येक व्यक्ति अपनी आय में से की गई बचत को उत्पादक कार्यों में लगाकर उसे लाभ प्राप्त करना चाहता है तो उसे अपनी धन राशि वापस तुरन्त हो जाए। बैंक ऐसी आर्थिक संस्था है जो रूपयों का लेन देन का कार्य करती है। बचत को उत्पादकरूप से सुरक्षित रखने का यह सर्वाधिक पुराना साधन है इसी कारण से अन्य साधनों की तुलना में इसका विशेष स्थान है। जनता में अन्य साधनों की तुलना में इसका ज्यादा प्रचलन हैं। प्रत्येक परिवार के कुछ लक्ष्य होते हैं जिन्हें सूझबूझ तथा अपने सीमित साधनों को ध्यान में रखकर निर्धारित किया जाता है।

आय को प्रभावित करने वाले तत्व–परिवार की आय तथा सुविधा परिवार के रहन सहन के स्तर को प्रभावित करती है परन्तु इसके अतिरिक्त 1. घर की कुल आय– इसके परिवार के प्रधान एवं अन्य सदस्य जो कि धन अर्जित करते हैं चाहे वह वेतन के रूप में हो या व्यवसाय के रूप में सम्मिलित की जाती हैं

2. परिवार का स्वरूप– संयुक्त परिवार की आय अधिक होती है क्योंकि इसमें परिवार के अन्य सदस्यों की आमदनी, परिवार की स्थाई सम्पत्ति से प्राप्त होने वाले लाभ, ब्याज, उपज आदि भी सम्मिलित रहते हैं।

बचत के साधन– प्रत्येक व्यक्ति अपनी आय में से की गई बचत को उत्पादक कार्यों में लगाकर उसे लाभ प्राप्त करना चाहता है साथ ही वह यह भी चाहता हैं उसे जब भी पैसे की आवश्यकता हो तो उसे अपनी धन राशि वापस प्राप्त हो जाए। वर्तमान युग में बचत को विनियोजित करने हेतु कई प्रकार के साधन उपलब्ध है उनमें से निवेश अपनी इच्छा अनुसार किसी का भी चयन करके

* शोधार्थी (समाजशास्त्र) शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

अपनी बचत का निवेश करके लाभ प्राप्त कर सकता है। सर्वाधिक प्रचलित साधन बैंक है जिसमें धन सुरक्षित रहता है एवं ब्याज भी प्राप्त होता है इसके अतिरिक्त जब आवश्यकता होती तब अपनी धन राशि को शीघ्र वापस प्राप्त किया जा सकता है।

वर्तमानकाल में भारत में प्रमुख विनियोग करने हेतु साधन हैं–

1 बैंक 2. डॉक घर बचत बैंक 3. संचयी सावधी बचत योजना 4. डॉक घर आवर्ती जमा योजना। 5 राष्ट्रीय बचत पत्र। 6. यूनिट। 7. उपहार कूपन। 8. प्रीमियम बॉण्ड.। 9 लॉटरी चिटफण्ड। 10. अंश या हिस्सा। 11 ऋण पत्र.। 12. बीमा.। 13 सरकारी ऋण संस्थाऐं।

विकसित बैंकिंग प्रणाली अमीर, गरीब, गाँव, शहर में संतुलित विकास करने के लिए देश को सक्षम बनाता है। भारत गाँवों का देश है और कृषि के रूप में जाना जाता है। इससे संबद्ध गतिविधियाँ देश के आर्थिक विकास के लिए रीढ़ है। बैंक रहित क्षेत्रों के सेटेलाइट शाखाएँ खोलने के लिए वाणिज्यिक बैंकों के लिए सामान्य अनुमति दी गई है। गांव में एक या दो स्टाफ के सदस्यों के माध्यम से बैंकिंग सुविधाओं के विस्तार की परिकल्पना है। यह नकद निकासी, जमा, बिक्री, सेवा सहित ग्राहकों को पूर्व लेन देन की सुविधा प्रदान करता है। ग्रामीण क्षेत्रों में एटीएम की कम उपस्थिति है, बैंक उच्च निवेश और कम लेन देन की मात्रा के कारण ग्रामीण/अर्द्ध शहरी केन्द्रों पर एटीएम स्थापित करने के लिए उत्सुक नहीं। साक्षरता कार्यक्रमों का आयोजन करके वित्तिय जागरूकता के प्रसार के माध्यम से संभव है, ग्राहक व बैंकों मध्य विश्वास स्तर को बढ़ाना।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. कुमारी एस.नामा एण्ड वी.एस.रामस्वामी. मार्केटिंग मेनेजमेन्ट।
2. रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया, ऑप्रेशन एण्ड पफमिन्स ऑफ कामर्शियल बैंक 2007
3. कैफ जेमिनी कन्सलटिंग, वलर्ड रिटेल बैंकिंग रिपोर्ट 2006
4. बैंकिंग इन्डस्ट्री , वीजन 2010, द इण्डियन बैंकर , जनवरी 2007
5. मोबाईल बैंकिंग, यूनिय बैंक ऑफ इण्डिया, ब्रोषर ऑन मोबाईल बैंकिंग।
6. बैंकिंग कोड एण्ड स्टेण्डर्ड बोर्ड ऑफ इण्डिया वेबसाईट।

****

मध्यकालीन संत लल्लेश्वरी का धार्मिक , सामाजिक, कला एवं साहित्य के क्षेत्र में योगदान

डॉ. जितेन्द्र चावरे *

प्रस्तावना – संत लल्लद्यद, लल्लेश्वरी, लल्ला, लल्लायोगेश्वरी तथा माता लल्ला के नाम से कश्मीरी जनता में प्रसिद्ध है। लल्लेश्वरी का जन्म कब हुआ था इस पर विद्धानों के भिन्न –भिन्न मत हैं और इनकी जन्म तथा मरण–तिथि पर भी अत्यधिक विवाद प्रचलित है। सर जार्ज ग्रियर्सन[1] और सर आर.सी. ट्यमपल[2] लल्लद्यद का जन्मकाल 14 वीं शताब्दी मानते है तथा उनको सैयद अली हमदानी की कश्मीरी यात्रा के समय विद्यमान मानते हैं।

डॉ. जी.एम.डी. सूफी के अनुसार लल्लद्यद का जन्म सन् 1335 में उदयन देव के समय हुआ था।[3]

पं. जियालाल कौल जलाली के अनुसार लल्ल्द्यद का जन्म 14 वीं शताब्दी के द्वितीय चरण में भाद्रपद की पूर्णिमा को संयमपोर गांव में हुआ तथा पांपोर गाँव में विवाह सम्पन्न हुआ था। जीवन की यात्रा समाप्त करके यह तेल अष्टमी (कश्मीर में हिन्दुओं द्वारा मनाया जाने वाला फाल्गुन शुक्ल अष्टमी के दिवस का पर्व) के दिन मृत्यु हुई।[4] श्री.पी.एन. कौल बामजई के अनुसार लल्लद्यद का जन्म 14 वीं शताब्दी का मध्यकाल था।[5] अमीर कबीर सैयद अली हमदानी की समकालीन होने के साथ ही सन् 1376–80 ई. से सन् 1385–86 ई. में कश्मीर यात्रा करने के समय ही लल्लेश्वरी उनके संपर्क में आकर सूफी–सिद्धांतो से प्रभावित हुई थी।

ऐतिहासिक आधार पर महत्वपूर्ण इस शताब्दी में कश्मीर में इस्लाम के प्रादुर्भाव के साथ–साथ उसका प्रसार भी होने लगा था। कश्मीरी भाषा विचारों की अभिव्यक्ति का साधन बन गई थी अत: उस में साहित्य रचना होने लगी थी। इस कारण इस साहित्य के प्रवर्तकों में लल्लद्यद का नाम सर्वप्रथम लिया जाता है।[6]

संत लालदेद एक ढेढ़ना मेहतर जाति की स्त्री थी। जो सामाजिक दृष्टि से निम्न स्तर वाले परिवार की होकर भी बहुत उच्च विचार रखती थी। इनका जन्म सं. 1392 में हुआ।[7] देवेन्द्र कुमार बसन्ती के अनुसार उनकी चार जन्म तिथियाँ बतायी गयी है– 1301, 1317–20, 1334–5 तथा 1346–7 यानी सभी चौदहवीं सदी के पूर्वार्द्ध में। उनके जन्म के बारे में भी मतभेद हैं कुछ लोग सैम्पोर और कुछ पान्ड्रेनथान को उनका जन्म स्थान बताते है।[8] डॉ. राजदेव सिंह ने भी कश्मीर की महिला संत लालदेद या लल्ला को ढेढ़वा मेहतर नामक अति हीन जाति का माना है।[9] त्रिलोकी नारायण दीक्षित ने भी संत लालदेद को मेहतर जाति का तथा ईसा की चौदहवी शताब्दी का बताया है।[10] रामलाल के अनुसार संत लालदेद का जन्म कश्मीर के पामपुर ग्राम में सम्वत् 1400 वि. के लगभग हुआ था।[11] मोहनदास नैमिशराय ने भी महिला संत लालदेद को चौदहवी सदी का माना है।[12] ऐसा भी कहा जाता है कि संत–कवयित्री की भेंट कई बार शेख नूर–उद्–दीन (जो चरार शरीफ में निवास करते थे) से भी हुई थी। सैयद अली हमदानी ने जब प्रथम बार सन् 1372 ई. में कश्मीर की यात्रा की उस समय यहाँ सुल्तान शहाब–उद्–दीन (सन् 1354 ई. सन् 1373 ई.) का शासन था। इस आधार पर लल्लद्यद का चौदहवी शताब्दी में होना निश्चित रूप से सिद्ध होता है जिसने अमीर कबीर सैयद अली हमदानी के साथ दूसरी बार कश्मीर आने पर भेंट की थी।[13] अनुमानत: लल्लेश्वरी का परलोकवास सन् 1384 ई. से सन् 1400 ई. तक ही निश्चित करना उपयुक्त है।

इनके विषय में प्रसिद्ध है कि यह शैव सम्प्रदाय का अनुसरण करने वाली एक भ्रमणशील भंगिन थी, किन्तु धार्मिक मतभेदों से बहुत दूर रहा करती थी और इसके सिद्धान्त अत्यन्त सरल एवं समन्वयात्मक थे।

'लल्ला योगिनी' 'ललदेह' 'लल्ला' या लल्लेश्वरी यह सब नाम उन्हें कश्मीर की जनता ने प्यार से दिए थे। 'ललदेह' का पारिवारिक जीवन अत्यन्त मार्मिक था। इनकी छोटी अवस्था में ही इनका विवाह 'पांपर' नामक गाँव में कर दिया गया। वह अपनी ससुराल में निरन्तर उत्पीड़ित रहती थी। उन्हें परिवार में तरह–तरह की यातनाएँ दी जाती थी। इसी यातनाग्रह ने उनके मन में भक्ति और सद्भाव के कपाट खोल दिये। हालांकि काफी वर्षों तक वह अपने ससुराल में यातनाएँ सहती रही।[14]

अंत में उन्हें अपना ससुराल त्यागना पड़ा ललदेह को दी जाने वाली यातनाओं और उन किस्सों पर बनी कहावतें आज भी कश्मीर में सुनी जा सकती है। संत ललदेह के जीवन के अनेक किस्से कहानियाँ जनता में सुनी जा सकती है। एक बार संत ललदेह की सहेलियों ने कहा कि ललदेह आज तुम्हारे घर की ससुराल में कोई पारिवारिक भोज था सहेलियों से संत ललदेह ने कहा कि आज तो तुम्हारे घर में खूब तरह–तरह का स्वादिष्ट खाना बनेगा। परन्तु ललदेह का उत्तर था घर में चाहे बकरा कटे या भेड़ ललदेह की किस्मत में तो पत्थर लिखे हैं। ललदेह को ससुराल में अनगिनत कष्ट मिलते थे। ललदेह का पति व सास ललदेह से जी भरकर काम करने के साथ उसको मारते–पीटते भी थे। एक बार जब ललदेह पानी से भरा मटका ला रही थी तब पति ने उसका मटका लाठी से तोड़ दिया। बाद में इस घटना पर एक किंवदती प्रचलन में आ गई कि वह पानी वही आधे टूट घड़े में और उसके कंधो पर ही ठहर गया। ललदेह ने भर ठंड में उस पानी से बर्तन मांजे और उसे एक तरफ फेंक दिया उस पानी ने तालाब का रूप ले लिया। बाद में जिसका नाम ललतडाम पड़ा। संभवत: उनके अनुयाईयों ने उसी स्थान पर तालाब बना दिया और उस कथा को उससे जोड़ दिया। भारत में अनेक महापुरूषों के साथ ऐसे ही किवदंतियों को जोड़ने की परंम्परा आम है।[15] अंतत: इन्होंने अपने परिवार का त्याग करके अवंतीपुर के निवासी शैव–सिद्ध वेय अथवा बाबा श्री कंठ से दीक्षा ग्रहण कर ली तथा प्रसिद्ध त्रिक सिद्धांतों द्वारा प्रभावित साधना में लीन हो गई। कुछ दिनों पश्चात इनका सैयद अली हमदानी (सं. 1371–1443) के प्रभाव में आना भी कहा जाता है। इसी कारण इन्हें 'आरिफ' कहने की परंपरा चली आ रही है।[16] संत लल्लेश्वरी का प्रसिद्ध सूफीसंत शाह हमदानी से भी

* इतिहास विभाग, 12 दानीगेट, पावरहाऊस के पास, उज्जैन (म.प्र.) भारत

कुछ दिनों तक सम्पर्क रहा, वे कश्मीर में इस्लामी प्रेम साधना का प्रचार करने आये थे। योगिनी लल्लेश्वरी की दृष्टि में कोई पुरूष नहीं था वे सबको शिव की उपासिका के रूप में देखती थी।[17] सिद्ध बायू (श्री कण्ठनाथ) नाम का एक विशिष्ट शैव-संत लल्लेश्वरी का गुरू अथवा आध्यात्मिक पथ-प्रदर्शक था। उसने कश्मीर के उसी प्रसिद्ध संत सिद्ध श्री कण्ठ से कश्मीर शैव-धर्म की दीक्षा ली।

गुरुवचन ही उसके लिये सर्वस्व था।
ग्वरअन वोननम कुनुय वचुन,
न्यबरअह द्वोपनम अन्दर अचुन,
सु गव ललि में वाख तअ वचुन,
तवआय ह्यतुम नंगअय नचुन।

गुरू ने मुझे एक यह वाक्य कह दिया कि बाहर की अपेक्षा तू भीतर हृदय में झांक। मैंने इसी बात को उसकी शिक्षा तथा आदेश के रूप में ग्रहण करके मस्त होकर नंगा नाचना आरम्भ किया।[18] लल्लद्यद के परिवार के गुरू सिद्ध श्री कण्ठ थे जिसने लल्लद्यद में धर्म और ज्ञान के प्रति रूचि देखी। इनको स्यद मोल भी कहते हैं। सिद्ध श्री कण्ठ पांपोर के ही पहुँचे हुए विद्धान योगी थे संत लल्लद्यद इन्हीं गुरू की कृपा से योग के रहस्यों का ज्ञान प्राप्त किया। साधना से वह अपने गुरू से भी आगे बढ़ गई ऐसा विश्वास किया जाता है।

गव चाठ ग्वोरस खसिथ
त्युथ वर दितम दीव।[19]

(अर्थात हे देव! मुझे ऐसा वर दो जिससे शिष्य गुरू से आगे बढ़ जाये।)

संत लल्लद्यद ने विभिन्न धार्मिक कर्मकाण्डों, यज्ञ, जप, त्याग, उपवास, तीर्थयात्रा, गंगाास्नान ब्राह्मण भोज इत्यादि का विरोध किया। ईश्वर प्राप्ति के लिए अनावश्यक बताया है।[20] संत लल्लद्यद या लल्लद्यद के पदों में कबीर के समान हिन्दू-मुस्लिम कट्टरपंथियों के लिए कड़ी चुनौती न सही पर राम-रहीम को एक समझने की सद्भावना जरूर है। इसमें मनुष्य को मनुष्य मानने की जिज्ञासा पर बल दिया है।

ललद्यद कबीर के ढाई आखर प्रेम की तर्ज पर घोषणा करती है -

बूथ क्याह जान बोंद छुय कुअन्य
असलच कथ जौंह सनी नो
परान लेखान वुठ औगजि गलि
अंदरिम दूयी जों यजी नों।

मुखाकृति तेरी अति सुन्दर है, किन्तु पत्थर के समान कठोर है। उसमें तत्व कभी समाया नहीं। पढ़-पढ़ और लिख-लिख कर तेरे होंठ और अंगुलियाँ घिस गई, मगर तेरे अन्तर का दुराव दूर हुआ नहीं। ललद्यद ने धर्म में व्याप्त पाखंड, दिखावा कर्मकाण्ड आदि का घोर विरोध किया।

बलि प्रथा का विरोध करते हुए वे कहती है -

लज कासि शीत न्यवारि
त्रन जलि करि आहार
यि कम्य वोपदीश कोरूथ वटा
अचीतन वटस चीतन कठ दिन आहार

यह तेरी लज्जा को ढकता है, शीत से तेरी रक्षा भी करता है। बेचारा स्वयं तृण जल का आहार करता है। फिर ये उपदेश तुझे किसने दिया जो तू अचेतन पत्थर पर चेतन बकरे को बलि चढ़ाता है। संत ललद्यद का मानना था, मनु के 36 करोड़ देवी-देवताओं की पूजा-अर्चना की बजाय यदि वह एक शिव, केशव , जिन व नाथ को भी मान ले तो वास्तव में कोई फर्क नहीं पड़ने वाला। किसी एक में विश्वास रख कर भी सांसारिक कष्टों से मुक्ति संभव है।

अनादि से हम आए अनन्त में हमें जाना है
दिन रात हमें चलते रहना
जहाँ से आए वहीं जाना है।

कुछ नहीं, कुछ नहीं, यह संसार कुछ नहीं ललदेह का ये पद हमें विश्वास दिलाता है। ललदेह के जीवट, जीवन और संघर्ष शक्ति का, जो कष्टों, बाधाओं को सहकर खड़ी हो जाती है और अपने होने का विश्वास दिलाती है।[21]

बाह्याडम्बरों का विरोध करते हुए आगे कहती है।

तन्त्र गलि तय मन्त्र म्वचे।
मन्त्र गोल तय म्वतुय चित।
चित गोल तय कें हवि ना कुने।
शून्यस शून्याह मीविथ गव।[22]

अन्य संतों की भाँति लल्लद्यद ने भी बाह्याडम्बरों का विरोध किया है। उनके अनुसार तन्त्र मन्त्र सब व्यर्थ हैं। क्योंकि आत्म-परमात्मा एक है। शून्य-शून्य के साथ मिल जाता है।

देव वटा देवर वटा।
प्यठ व्बोन छुय एकवटा।
पूज कस करख हतो बटा।
कर मनस त पवनस संगाट।[23]

पूजा करना व्यर्थ है क्योंकि देवता भी पाषाण का है और देवालय भी पाषाण ही है। अत: मन को प्राणायाम से वश में करना चाहिए, पूजा के आडम्बर में मत पड़ो।

मन पुश वय यह पुशाजी।
भावकि कुसम लागिज्यस पूजे।
शशि रस ग्वोड दिज्यस जलधानी।
छूपि मन्त्र शंकर वुजे।[24]

मन को माली और इच्छा को उसकी पत्नी बनाकर भाव-रुपी पुष्पों से अर्चना करनी चाहिए! शशि रस से ब्रह्म को स्नान कराकर अजपा जाप के मन्त्र से शंकर का साक्षात्कर करना चाहिए।

परान परान ज्यव ताल फोजम।
च यूगि क्रय चजिन न जाह।
स्मरण फिरान न्योठ त ओंगजिफोजिम।
मनच धूलि चजिम न जाहै।[25]

मन्त्र पढ़ पढ़ कर जीव की इन्द्रियाँ क्षीण हो जाती हैं परन्तु मन स्वच्छ नहीं होता है।

शिव छुय थलि थलि रोजान।
मोजान ह्योंद त मुसलमान।
त्रुकय छुख ज पनुनुय पान परजान।
सुह ह्या मालि छय साहिबस सूल्य जानी जान।[26]

संसार मे जाति पाँति का भेद व्यर्थ है, हिन्दू-मुसलमान में द्वैतभाव नहीं करना चाहिए जीव को आत्म साक्षात्कार करना चाहिए। यही उस परमपद की प्राप्ति का कारण है। डॉ. ग्रियसन का कहना है कि आगे चलकर संत लालदेद की अनेक महत्वपूर्ण बातों से कबीर साहब भी प्रभावित हुए थे। उनके अनुसार लालदेद को मूर्ति पूजा के प्रति वास्तविक विरोध नहीं था और वह एक सच्ची धार्मिक हिन्दू ललना थी। परन्तु उसने अपने समय में ठीक वैसे ही यत्न किये थे। जैसे कबीर साहब ने पीछे, राम तथा रहीम एवं केशव और करीम को एक बतला कर हिन्दू और मुस्लिम जनता को एक सूत्र में बांधने के लिये किये।[27] लल्लद्यद कश्मीरी संत काव्योत्थान में प्रथम विकसित पुष्प की

भांति हमारे सम्मुख आती है। कश्मीरी भाषा के विकास की दृष्टि से लल्लद्दद का महत्वपूर्ण स्थान है। यही कारण है कि संत लल्लद्दद के समकालीन और परवर्ती प्राय: सभी संतों ने लल्लद्दद की प्रशंसा की है। मुक्त काव्यों की कश्मीरी परंपरा सन् 1350 ई. से मानी जाती है। उस समय कश्मीर के सांस्कृतिक जीवन में उथल पुथल मची हुई थी। इधर से शैवमत की परंपराओं को बाह्य आडम्बर ने ढँक लिया था और उधर से इस्लाम के प्रचारक सूफी फकीर एक नया दृष्टिकोण पेश करने लगे थे।[28] 'सर्वप्रथम लल्लेश्वरी (लल्लद्दद सन् 1350 ई.से सन् 1400 ई.) कबीर से सौ वर्ष पहले इस बाह्य आडम्बर और पाखण्ड पर तीव्र चोटे की।[29] वह अमीर कबीर सैयद अली हमदानी की समकालीन थी, जिसने सन् 1379-80 ई. से सन् 1385-86 में कश्मीर यात्रा की।[30] ललेश्वरी के वाक्यों या 'वाख्यों' में सूफी साहित्य के मुक्तक रूप का बीज निहित है। इनमें हकीकत की झलक स्पष्ट रूप से नजर आती है।[31] इस्लामी- ऋषियों में से लल्लेश्वरी की वाणी 'वाख्यों' में फूट पड़ी। हम लल्लेश्वरी के वाख्यों के मुक्तक काव्य को काश्मीरी भाषा की पुरातन संस्कृति के स्मृति चिन्ह के रूप में स्वीकार कर सकते है।[32] संत लल्लेश्वरी ने इस निर्गुण निराकार को शिव की संज्ञा दी है जो सर्वत्र विद्यमान है। उसी की ज्योति जगत् में व्याप्त है अत: न कोई हिन्दू है और न ही मुसलमान।

शिव छु थलि थलि रोजन,
मो जान ह्युन्द तअ मुसलमान।[33]

संत लल्लेश्वरी ने साथ ही, इनके समकालीन संतों ने सृष्टि की उत्पत्ति शून्य से ही मानी है। इनके मतानुसार शून्य से तात्पर्य ब्रह्म ही है। इन्होंने संसार को नाशवान माना है। संसार की क्षणभंगुरता पर प्रकाश डालते हुए कहा गया है कि यहाँ की कोई वस्तु स्थायी नहीं। सांसारिक प्रलोभन अथवा 'नफ्स' प्राणी को अपनी और आकर्षित करते है। जिसके परिणामस्वरूप वह परमात्मा से दूर हटता चला जाता है। काम, क्रोध, मोह, लोभ तथा अहंकार को मिटाकर ईश्वर एक में विश्वास रखते है। इन सब मोह त्याग के पुरूष को चेतावनी दी है ताकि वह जीवन के सन्मार्ग पर चलकर लक्ष्य प्राप्ति में सफल हो जाये। आलस्य का त्याग, भोग-विलास के प्रति विरक्ति तथा अज्ञान के परित्याग का अपने काव्यों में वर्णन किया है। मानव अज्ञानी होने से अपने अमूल्य जीवन को खो बैठता है।[34]

जहाँ तक शैली का संबंध है इन मुक्तक काव्य के कश्मीरी संत कवियों ने वाक्यों, श्लोकों, नज्मों, नातों, गज़लों, तथा गीतों का प्रयोग किया। संत लल्लेश्वरी ने वाक्यों की शैली को अपनाया। लल्लवाक्य दो बैती श्लोक है।[35] 'अधिकतर मुक्तककारों' ने नज्मों एवं गजलों की आधार भूमि फारसी की गजले एवं नज्मे रही है। इन संत कवियों ने संवादात्मक शैली का भी उपयोग किया है। शेख नूरउद्दीन (नुंदर्योश) व उसके शिष्य बाबा उद्दीन महान संत कवयित्रि लल्लेश्वरी के समकालीन थे। इन तीनों के शास्त्रार्थ का संवादात्मक रूप 'नूरनामा' मे प्रस्तुत किया गया है।[36]

लल्लेश्वरी ने जो 'वाक्य' या 'वाख्य' लिखे उनकी कोई प्रामाणिक प्रति उपलब्ध नहीं है। ये वाक्य या 'वाख्य' एक प्रकार की रूबाई है जिसमें चार चरण होते है। समय समय पर कतिपय विद्धानों ने उसके 'वाक्यों' को संग्रहित करके उन्हें प्रकाशित किया। सर जार्ज ग्रियर्सन की प्रेरणा से महामहोपाध्याय पं. मुकुंदराम शास्त्री सन् 1914 ई. मे 'लल्ल वाक्यानि' की खोज में गुश गांव चला। वहाँ के निवासी पं. धर्मदास नामक एक वृद्ध ने अपने पूर्वजों से मौखिक रूप में प्राप्त इन वाक्यों को कंठस्थ किया था। महामहोपाध्याय पं. मुकुंदराम शास्त्री ने उन्हें उनसे सुनकर लिपिबद्ध किया और बाद में सन् 1921 ई. मे ग्रियर्सन महोदय ने उन्हें अंग्रेजी अनुवाद सहित प्रकाशित किया। ये वाक्य तसव्वुफ तथा मारफित के कोष है। यह इम्क-हकीकी एक ऐसा संग्रह है जिसमें हकीकत की झलक स्पष्ट प्रकट होती है। शैवमत तथा त्रिक्दर्शन से प्रभावित लल्लेश्वरी के वाक्य सूफीमत के सम्मिश्रण के कारण आध्यात्मिक मिलन की अभिव्यक्ति के स्त्रोत है। उन 'वाक्योंय का एक संग्रह प्रो. जियालाल कौल द्वारा संपादित है तथा उसमें प्रो. नंदलाल कौल तालिब ने उनका सफल अनुवाद भी उर्दू मे प्रस्तुत किया है।[37] सर ग्रियर्सन उन्हें कश्मीर के प्रसिद्ध लेखक गिनते है। लालदेद की पद्योक्तियों में गहराई, ओज और प्रवाह है। आध्यात्मिक अनुभूति और विचार उनमें कूट-कूट कर भरा है। उन्होंने बहुत से संस्कृत शब्द जैसे 'लौह-लंगर' 'वटनाश' को काट-छांट, तराश कर अपनी पद्योक्ति में इस प्रकार पिरोया है कि वे ताजे तथा अर्थगर्भित हो गये हैं। अपनी भाषा को ग्रामीण परिवेश दिया है। पद्योक्ति को कश्मीरी वाख कहते है। लालदेद का स्थान वाख के रचनाकारों में अन्यतम है। पद्योक्तियाँ अधिकतम चार पंक्ति के पद्य हैं तथा प्रत्येक पंक्ति का अर्थ अपने आप में पूर्ण होता है।[38] उनके वाक्यों और सरस गीतों का संग्रह कश्मीरी भाषा मे 'लल्ला वाक्यानि' के नाम से प्रसिद्ध है। राजानक भास्कर ने अधिकांश का संस्कृत मे रूपांतर किया है।[39] आपकी रचनाओं के विषय शैवों की योग साधना से संबंधित है। आप लल्लायोगिनी नाम से भी प्रसिद्ध थी। डॉ. ग्रियर्सन के अनुसार - कबीरदास आपसे प्रभावित थे। संत लल्लद्यद के 60 पदों के संग्रहित रचनाओं के आधार पर कहा जा सकता है कि संत लल्लद्यद का आराध्यदेव वह परमतत्व है जिसे शिव, केशव, जिन वा नाथ में से कोई नाम दे सकते है। इनमें से किसी भी एक अथवा इनसे अन्य नामधारी तत्व के प्रति भी हार्दिक विश्वास रखने वाला सांसारिक दु:खों से मूक्ति प्राप्त कर सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Lalla vakyani, sir George Grierson, 1920, Page 3.
2. The word of Lalla the Prosphetess,R.C. Temple, 1924 Page1
3. Kashmir vol.II G.M.D. Sufi, 1949 Page 383
4. पं. जियालाल कौल जलाली-ललवाख सन् 1956 पृष्ठ-1
5. A History of Kashmir, P.N- Koul Bamzai, Ist Edition1962, Page 495
6. हण्डू, जियालाल- कश्मीरी और हिन्दी सूफी काव्य का तुलनात्मक अध्यन (सन् 1300 ई.- सन् 1925 ई.) प्रकाशक भारतयी ग्रंथ-निकेतन 133, लाजपतराय मार्केट दिल्ली 111006, पृष्ठ 476-477
7. चतुर्वेदी, परशुराम - उत्तरी भारत की संत परंपरा, भारती भंडार, लीडर प्रेस इलाहाबाद तृतीय संस्करण, सन् 1972 पृष्ठ 99
8. बेसन्तरी, देवेन्द्र कुमार - भारत के सामाजिक क्रान्तिकारी, प्रकाशक दलित साहित्य प्रकाशन संस्था दिल्ली, प्रथम संस्कारण 2001, पृष्ठ 43
9. सिंह, राजदेव - निर्गुण रामभक्ति और दलित जातियाँ, वाणी प्रकाश्न, दिल्ली, संस्करण 2004, पृष्ठ 38
10. दीक्षित, त्रिलोकी नारायण-हिन्दी संत साहित्य राजकमल प्रकाशन प्रा.लि. दिल्ली, प्रथम संस्करण 1963 पृष्ठ 30

11. रामलाल - भारत के संत महात्मा -प्रकाशक वोरा एण्ड कम्पनी पब्लिशर्स प्रा.लि., बम्बई प्रथम संस्करण 1957, पृष्ठ 160
12. नैमिशराय मोहनदास - भारतीय दलित आंदोलन एक संक्षिप्त इतिहास,प्रकाशक बुक्स फॉर चेन्ज, साउथ एक्सटेंशन,दिल्ली,प्रथम संस्करण सन् 2004 पृष्ठ 39
13. हण्डू, जियालाल - कश्मीर और हिन्दी सूफी काव्य का तुलनात्मक अध्ययन (सन् 1300 ई. -सन् 1925 ई), पृष्ठ 477
14. चतुर्वेदी, परशुराम - उत्तरी भारत की संत परंपरा, तृतीय संस्करण,सन 1972, पृष्ठ 99
15. गुप्ता, रमणिका - मलमूत्र ढोता भारत, विचार की कसौटी पर प्रकाशक, शिल्पायन वैस्ट गौरव पार्क, शहादरा दिल्ली, संस्करण 2009 पृष्ठ 342-345
16. चतुर्वेदी, परशुराम - उत्तरी भारत की संत परंपरा, पृष्ठ 99
17. रामलाल - भारत के संत महात्मा, प्रकाशक, वोरा एण्ड कम्पनी पब्लिशर्स प्रा.लि., बम्बई, प्रथम संस्करण 1957, पृष्ठ 161
18. हण्डू. जियालाल - कश्मीरी और हिन्दी सूफी काव्य का तुलनात्मक अध्यन (सन् 1300 ई.-सन् 1925 ई.),पृष्ठ 478 भारतीय ग्रंथ निकेतन,दिल्ली, प्रथम संस्करण, 1973
19. कृष्णा रेणा - कश्मीर निर्गुणसंत काव्य , दर्शन और भक्ति,पृष्ठ 70,71 सन 1977 प्रथम संस्करण, प्रकाशक-शारदा प्रकाशन महरौली, दिल्ली
20. बेसन्तरी, देवेन्द्र कुमार-भारत के सामाजिक क्रांतिकारी, पृष्ठ 18, संपादकीय व प्रकाशकीय कार्यालय, दलित साहित्य अकादमी, उज्जैन (म.प्र.)
21. गुप्ता रमणिका, सुशील टाकभौरो-मल मुत्र ढोता भारत विचार की कसौटी, प्रकाशक शिल्पायन,वेस्ट गोरखपार्क, शाहदरा, दिल्ली,पृष्ठ 342,344
22. सर जार्ज ग्रियर्सन-लल्ल वाक्यानि पृष्ठ 33 सन् 1920
23. सर जार्ज ग्रियर्सन-लल्ल वाक्यानि पृष्ठ 39 सन् 1920
24. सर जार्ज ग्रियर्सन-लल्ल वाक्यानि पृष्ठ 59 सन् 1920
25. वामजई, आनन्द कौल-लल्लायोगेष्वरी वाख पृष्ठ 49
26. रामज्यू भल्ला-अमृतवाणी (भाग 1) पृष्ठ 43 सन् 1961,कृष्णा रेणा-कश्मीर निर्गुण संत काव्य दर्षन और भक्ति, पृष्ठ 88 प्रकाशक शारदा प्रकाशन, महरौली दिल्ली, सन् 1977 प्रथम संस्करण
27. कश्मीरी भाषा और साहित्य पृष्ठ 4
28. कश्मीरी भाषा और साहित्य पृष्ठ 5
29. दि वर्ड ऑफ लल्ल पृष्ठ 1
30. लल्लद्यद भूमिका पृष्ठ 14
31. हण्डू, जियालाल - कश्मीरी और हिन्दी सूफी काव्य का तुलनात्मक अध्ययन पृष्ठ 397 (सन् 1300 ई. सन् 1925 ई.) प्रकाशक भारतीय ग्रंथ निकेतन, दिल्ली प्रथम संस्करण 1973
32. लल्लद्यद वाक्य 105 पृष्ठ 104
33. हण्डू, डॉ. जियालाल - कश्मीरी और हिन्दी सूफी काव्य का तुलनात्मक अध्ययन पृष्ठ 400
34. कश्मीरी जवान और शायरी पहला भाग पृष्ठ 138
35. लल्लद्यद पृष्ठ 130
36. हण्डू जियालाल - हिन्दी और सूफी काव्य का तुलनात्मक अध्ययन पृष्ठ 479-480
37. बेसन्तरी, देवेन्द्र कुमार - भारत के सामाजिक क्रांतिकारी पृष्ठ 42 प्रकाशक दलित साहित्य प्रकाशन संस्था दिल्ली प्रथम संस्करण सन् 2001
38. रामलाल - भारत के संत महात्मा पृष्ठ 163, 164 प्रकाशक वोरा एंड कंपनी पब्लिशर्स प्राइवेट लिमिटेड बंबई प्रथम संस्करण सन् 1957
39. दीक्षित त्रिलोकी नारायण - हिन्दी संत साहित्य पृष्ठ 30 प्रकाशक राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड प्रथम संस्करण 1963

****

धोड़ो केशव कर्वे और महिला विश्वविद्यालय की स्थापना - एक अध्ययन

डॉ. शालिनी शुक्ला *

प्रस्तावना – शिक्षा वह प्रकाशपुंज है जो सम्पूर्ण समाज को अपने दिव्य प्रकाशपुंज से आलोकित करता है। भारतीय विद्धानों ने शिक्षा को संस्कार माना है जो अंधविश्वास, कुरीतियों तथा पिछड़ेपन रूपी अंधकार को दूर भगा स्वच्छ और उन्नत समाज का निर्माण करता है। अगर देश की भागीदारी अर्थात महिला शिक्षा के संदर्भ में विमर्श करें तो पाते हैं कि महिलाओं को शिक्षित करना अनिवार्य होना चाहिए क्योंकि स्त्रियों की स्थिति किसी भी देश की संस्कृति एवं सभ्यता का एक मापदण्ड मानी जाती है। प्राय: देखा गया है कि अन्य देश में महिलाओं की स्थिति प्रारंभ में अत्यंत दयनीय थी लेकिन कालान्तर में धीरे-धीरे सुधार हुआ जबकि भारत में प्राचीनकाल में महिलाओं की स्थिति अच्छी थी किन्तु समय के साथ उनमें गिरावट आई इसलिए आज फिर स्त्रियों की दशा को मजबूत करने के लिये जरूरत है धोड़ो केशव कर्वे जैसे महान लोगों को याद करने की जिन्होंने महिलाओं के उद्धार के लिये सर्वाधिक लम्बे समय तक और सबसे अधिक कार्य करने वाले महानतम समाज सुधारक के रूप में अविस्मरणीय योगदान दिया।

धोड़ो केशव कर्वे का जन्म 18 अप्रैल 1858 को शेरावली में हुआ था। गरीबी और तकलीफों ने परिवार को परिश्रम और मितव्ययिता का पाठ सिखाया। सन् 1884 में बम्बई विश्वविद्यालय से बी0ए0 की परीक्षा पास की और शिक्षा व्यवसाय से जुड़ते हुए बम्बई के ऐलफिस्टन स्कूल में अध्यापक हो गये। सन् 1892 में वे फर्गुसन कालेज में गणित विषय के प्राध्यापक बनने के साथ डेक्कन ऐजुकेशन सोसायटी के आजीवन सदस्य बन गये और धीरे-धीरे सार्वजनिक सहायता कार्यों में इनकी रूचि बढ़ने लगी। इसी क्रम को आगे बढ़ाते हुए उन्होंने बालिका आश्रम खोला और बाद में उसे महिला विश्वविद्यालय के रूप में उन्नत किया।

सन् 1915 में भारतीय राष्ट्रीय कॉग्रेस के अधिवेशन के पश्चात् होने वाली राष्ट्रीय समाज की अध्यक्षता करने के लिये कर्वे जी को निमंत्रित किया गया तभी उन्हें जापान की महिला विश्वविद्यालय की पुस्तिका का ध्यान आया और उन्होंने अपने भाषण का आधार जापान की तर्ज पर महाराष्ट्र में भी महिला विश्वविद्यालय की स्थापना करने का विचार रखा। वास्तव में जापान विश्वविद्यालय में पाठ्यक्रम की स्थापना स्त्रियों का मुख्य कार्यक्षेत्र गृह को मानकर ही की गई थी। अत: स्त्रियों के अनुसार वहॉ का पाठ्यक्रम अच्छा व समाजोपयोगी था जिसने कर्वे जी को सर्वाधिक प्रभावित किया। दूसरी बात थी कि वह सरकारी नियंत्रण से मुक्त था और उसे सरकार की ओर से कोई आर्थिक सहायता नहीं मिलती थी। इन्हीं बातों ने महर्षि कर्वे को इस दिशा की ओर सोचने को प्रेरित किया और फिर इन्होंने अपनी बात अपने सहयोगियों से की। कई ने इस कार्य में सहयोग भी प्रदान किया। 30 दिसंबर 1915 को राष्ट्रीय सामाजिक संस्था के अध्यक्षीय भाषण में कर्वे ने समाज सुधार की चर्चा करते हुए देश में स्त्री शिक्षा के प्रश्न पर विस्तार से चर्चा की। उनकी दृष्टि में स्त्रियों की माध्यमिक और उच्च शिक्षा के 2 मुख्य सिद्धांत होने चाहिए। शिक्षा का माध्यम मातृभाषा एवं पुरूषों की अपेक्षा स्त्रियों को समाज में अत्यंत भिन्न कार्य करना है इस बात का ध्यान रखा जावे। इसका तात्पर्य यह बिल्कुल नहीं था कि शिक्षा के क्षेत्र में जो अवसर पुरूषों को प्राप्त हैं स्त्रियों को उनसे दूर रखा जाये।

कर्वे जी कहते थे कि स्त्रियॉ पुरूषों को परास्त करना चाहती हैं तथा वर्तमान विश्वविद्यालयों में सम्मान और पारितोषिकों के लिये पुरूषों से प्रतिस्पर्धा करना चाहती हैं। मैं नहीं चाहता कि उनके मार्ग में बाधा डाली जाये जो बौद्धिक, शारीरिक तथा आर्थिक दृष्टि से इस योग्य हैं वे वर्तमान अवस्था को अपने समाज में भूषण के समान होंगी। कर्वे जी ने अपनी इस योजना का प्रचार प्रसार संसार के हर कोने में जा कर किया और लोगों ने इस ओर अपनी रूचि प्रदर्शित की और फिर डा0 ऐनीबेसेन्ट से मिलने के बाद उन्होंने इसे अखिल भारतीय विश्वविद्यालय बनाने की सलाह दी।

रवीन्द्रनाथ टैगोर जी ने भी इस पुनीत कार्य में अपनी रूचि प्रदर्शित की। गॉधी जी ने उनकी योजना को स्वीकृति प्रदान की तथा उच्च स्तर पर शिक्षा का माध्यम मातृभाषा बनाने के सुझाव को विशेष रूप से पसन्द किया। अपनी योजना का समर्थन प्राप्त करने के लिये कर्वे एवं उनके सहयोगियों ने मद्रास, कलकत्ता, लाहौर, जालंधर आदि स्थानों का भ्रमण किया तथा चार माह के भीतर 1200 स्थानों को पंजीकृत किया। कुलाधिपति के पद पर डा0 रामकृष्ण गोपाल भंडासुर तथा कुलपति के पद पर डा0 परांजपे ने अपनी स्वीकृति प्रदान की। 3 जून 1916 को महिला विश्वविद्यालय की सीनेट की प्रथम सभा हुई और इस प्रकार कर्वे जी का स्वप्न साकार हुआ। विश्वविद्यालय की स्थापना के लिये कर्वे भारत के लगभग सभी स्थानों में गये और लोगों को महिला विश्वविद्यालय के बारे में बताया और लोगों से सहानुभूति प्राप्त की। स्थापना के 4 वर्ष पश्चात् विश्वविद्यालय फण्ड में दो लाख से भी अधिक रूपये एकत्रित हो गये। यह कर्वे जी के प्रयत्नों का ही फल था।

प्रारंभ में महिलाओं की संख्या विश्वविद्यालय में बहुत कम थी क्योंकि इसे सरकारी मान्यता नहीं मिली थी। सन् 1919 में पहली छात्रा ने बी0ए0 पास किया। परन्तु कर्वे निराश नहीं हुए बल्कि साहस के साथ अपने कार्य में लगे रहे जिसके फलस्वरूप विदेशी व्यक्तियों से भी उन्हें धन प्राप्त हुआ। उनमें विशेष उल्लेखनीय थे युगांडा के डा0 विट्ठल राघोवा लॉडेय जिन्होंने अपनी वसीयत में 40000 रूपये कर्वे महिला विश्वविद्यालय को सौंप दिये। इन्हीं रूपयों से पूना में कन्या शाला के भवन का निर्माण हुआ। सन् 1918 में कर्वे के प्रशंसकों ने उनकी 61वीं जन्म तिथि पर समारोह करने का निश्चय किया

* सहायक प्राध्यापक (इतिहास) शासकीय कन्या महाविद्यालय, सतना (म.प्र.) भारत

। इस समारोह का प्रमुख उद्देश्य स्त्रियों की दशा सुधारने के साथ में कर्वे द्वारा किये गये कार्यों के प्रति कृतज्ञता प्रकट करना था। डा0 भण्डारकर की अध्यक्षता में मुख्य समारोह पूना में हुआ।

पूना तथा बम्बई की महिलाओं ने भारतीय महिलाओं की ओर से उन्हें 2500 रूपयों की एक थैली तथा सम्मानपत्र भी दिया। इसके बाद श्री विट्ठल दास जी के साथ कर्वे जी जापान यात्रा पर गये जहॉ विश्वविद्यालय से प्रभावित होकर उन्होंने 1000 रू0 प्रतिवर्ष की छात्रवृत्ति महिला विश्वविद्यालय को देना शुरू की। फिर महिला विश्वविद्यालय को अपनी कुछ शर्तों के साथ 15 लाख रूपये देने का और उसका नाम अपनी मॉ श्रीमती नाथीबाई दामोदर के नाम पर रखने को कहा और तब से इस महाविद्यालय का नाम श्रीमती नाथीबाई दामोदर ठाकरसी महिला विश्वविद्यालय रख दिया गया। इसमें प्रवेश परीक्षा मराठी, गुजराती, सिन्धी, तेलगू में होती थी। परन्तु कालेज स्तर पर पढ़ाई मराठी, गुजराती व सिन्धी में ही होती थी। विश्वविद्यालय के विरूद्ध यह एक आलोचना का विषय था कि उच्च शिक्षा की दृष्टि से देशी भाषाओं को शिक्षा का माध्यम रखना ठीक नहीं। दूसरी बात यह कि स्त्रियों के लिये शिक्षा के विषय पुरूषों की शिक्षा से भिन्न थे। इन सबसे विचलित हुए बिना कर्वे जी ने अपना कार्य प्रारंभ रखा और बाद में उसका कार्यालय पूना से बम्बई आ गया। 1949 में बम्बई सरकार ने इसको स्थायी मान्यता प्रदान की।

1951 में विश्वविद्यालय एक्ट पास हुआ तथा सरकार ने डा0 श्रीमती प्रेमलीला ठाकरसी को मान्यता प्राप्त विश्वविद्यालय का प्रथम कुलपति नियुक्त किया। स्वतंत्रता के पश्चात् इसके लक्ष्य में काफी परिवर्तन आ गया। द्वितीय विश्व युद्ध के पूर्व शिक्षा का उद्देश्य केवल कुशल गृहिणी और कुशल नागरिक बनाना था इसलिए यह कला संकाय तक सीमित था। किन्तु बाद में रहन-सहन के स्तर में वृद्धि होने से शिक्षा के तथ्य भी विस्तृत हो गये। आज यहॉ मानव समाज विज्ञान, शिक्षा शास्त्र, पुस्तकालय आदि संकाय हैं। निकट भविष्य में विज्ञान, ललितकला तथा चिकित्सा संकाय खोलने की भी योजना है। शीघ्र ही इससे पत्राचार कोर्स, ग्रीष्मावकाश का कोर्स तथा मार्गदर्शन कोर्स आरंभ करने की योजना है।

निष्कर्ष -आज कर्वे द्वारा स्थापित महिला विश्वविद्यालय जैसी संस्था जो देश में अपनी जैसी एक मात्र संस्था है जो प्रगति के पथ पर बराबर अग्रसर हो रही है। यूं तो महर्षि कर्वे की स्मृति को चिर स्थायी रखने के लिये यही विश्वविद्यालय पर्याप्त है किन्तु शासन को भी इस ओर ध्यान देकर कर्वे जी के उन्नत कार्यों को चिर स्थायी बनाये रखने के लिये ठोस कदम उठाने चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. कर्वे के.डी. - लुकिंग बैंक।
2. गणेश एण्ड चन्द्रशेखर - महर्षि कर्वे।
3. पॉण्डेय रामसकल - आधुनिक शिक्षा का विकास।
4. पॉण्डेय रामसकल - शैक्षिक प्रगति विशेषांक।
5. प्रभाकर सदाशिव - महर्षि कर्वे।
6. पाण्डेय रामसकल - विश्व के श्रेष्ठ शिक्षा शास्त्री।

****

To Study Self Concept And Mental Health In Relation To Socio-Economic Status

Sunita Dhenwal * Preeti Mathur **

Abstract - The purpose of this research is to determine the self concept and mental health is relation to socio economic status. The sample consisted of 60 students from 30 high economic status and 30 low economic status. The slf concept questionaire by Srivastava and Rastogi (1983) and for mental health assessment test is used –mental health check lit by Kumar. t test was used to analyze the difference between the self concept and mental health of low and high economic status. **Keywords -**Self concept,Mental health.

Introduction - Self concept is a dominant element in personality pattern. Self concept is a multidimensional construct that refers to an individual perception of self in relation to any number of characterization such as academics,genders,roles and sexuality ,social identoityand many other. Self concept contains three parts-self esteem sability and self efficiency. Self esteem is the evaluative component ,stability refers to the organisation and self efficiency is continuity of one's . Self concept has refered by Lowe (1961) as one's attitude towards self and Pederson(1965) as an organisation configuration of perceptions beliefs, feeling,attitudes and values. Roger (1951) defined self concept as an organised perception of the self which are admissible to awareness. Saraswat and Gaur (1981) describe self concept is the individuals way of looking at himself, it also signifies his ways of thinking,feeling and behaving.

Self concept including people behaviour , cognitive and emotional outcomes in building academic achievement, level of happiness, anxiety, social integration and life satisfaction.

Mental health is an index which the person has been able to meet his environment demand,social,emotionalor physical. Mental health as such represents a psychic condition which us characterized by mental the absence of disabling and debilitating symptoms. Actually mental health like physical health can be recognised by its characterstics feature , individual should exhibit the following symptoms-

1. A mentally healthy person evaluation himself.
2. Mental healthy people are adjusting to a new situation with least disturbance and he is aware of the last that change is the principle of life.
3. The mature mind behaves responsible express his thought and feelings with clarity.
4. Habits are important element in maintain mental health.

In recent years, a consensus appears to be forming ones recognition of the powerful influence of an individual's social status own health. Social status is the position of an individual with in social relationships. An individual wins respect in society by virtue of his social status.

The critical role played by indivuals responses to his or her environment in shaping the internalization of exeternal. Social factor is well known (Autonovsky, 1987 & Pearlin, 1989). These symbols of respect change along in social status entitles him to more respect than before.

Method And Procrdure -

Sample- The study was conducted on 60 subject-30 high economic status and 30 low economic status. The age group was between 30-50 years both sex are included i.e.-male and female in the sample.

Material -

A. SELF CONCEPT- This scale was used to measure the self concept of working person . The scale was prepared by Dr.D.N.Srivastava & Dr.M.R.Rastogi. As t here are items in the booklet.
B. MENTAL HEALTH CHECK LIST- It was constructed by Pramod Kumar. It has been developed with a view to provide a handy tool for identifying person with poor mental health and in need of psycho-diagnostic help.

Analysis - The t ratio was computed below-

1. High economic status and low economic status on self concept .
2. mental health of high and low economic status.

Result- The table 1 showing self concept of high economic status and low economic status –

Sub/Group	Mean	T
High economic status (N=30)	160.70	4.05
Low economic status(N=30)	131.60	Significant

Result presented in the table that t value come as 4.05 which is significant difference on self concept between high & low economic status.

* Research Scholar (Psychology) Jai Narain Vyas University, Jodhpur (Rajasthan) INDIA
** Professor (Psychology) Jai Narain Vyas University , Jodhpur (Rajasthan) INDIA

Table 2 –

Sub/Group	Mean	t
High economic status(N=30)	16.26	2.73
Low economic status(N=30)	20.50	Significant

Result reveals that t value come as 2.73 which is significant means there is significant difference on mental health between high and low economic status.

Discussion - The aim the present study was to study self concept and mental health on relation to socio-economic status. Results indicate that self concept significantly differs with socio economic status individual of high socio economic status scored higher on self concept in comparison to low socio economic status.

Perception related to neighbourhood and city of residence matter to self rated health and quality of life independent of individual characterstics . Mental health was significantly different in high and low socio economic groups .High socio economic status people scored higher on mental health as compared to subjects of low economic status. From the point of view of mental health, healthy individuals maintains good adjustment with social situation and is engaged in some or the other project intended to benefit society and this is because in modern society the proper development of personality can take place only if there is multi co operation. The balance of social relationships and tghe simplicity the better will be individuals mental health. Improper conduct on the part of other can be cause of both mental problems and disease. Finally it may be stated that the prevention of mental imbalance is a problem of social & national importance.

Conclusion - The present study was done to study self concept and mental health in relation to socio economic status. The sample was of 30 high economic status and 30 low economic status in which they are all working person.

Self concept inventory adapted by Dr.D.N.Srivastava & dr.M.R.Rastogi. Mental health check list was by Dr.Pramod kumar. The results were found by computing t test between groups. It was found that the significant differences come between high and low economic status in self concept and mental health. The result shows that self concept & mental health of high economic status is better than the low economic status.

References:-

1. Autonousky (1987) & Pearlin(1989)- Journal of Psychology.
2. Kumar,Pramod- Manual of mental health checklist, Dept. Of Psychology,Sardar patel university,Gujrat.
3. Lowe(1961),Pederson(1965) & Roger(1951)- Journal of Psychology.
4. Nath K.& Nath R.(1997-98)-Applied psychology, S.J.Publication,,Meerut.
5. Saraswat & Gaur(1981)-Journal of Psychology.
6. Sprnger(2008)-Social indication research, January .
7. Srivastava,D.N & Rastogi,M.R-Manual of self concept.

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

Spirituality And Happiness

Jyotsna Jharia *

Introduction - Religious people are happier but that the difference are often small and do not apply to all nations or to all religions. For example, people in some places are often happier if they are religious but this not true of some other countries. They asserts that religious beliefs are diverse and whether they make believes happier depends to a great extent on the actual beliefs. So, for example they found that 'people who believes in hell and the eviltend to be slightly less happy that those who believes only in heaven.'

Spirituality is understood and defined differently by different groups of people. As the name implies, spirituality is concerned with spirit as opposed to matter. According to Oxford dictionary, spirit means soul; the immaterial, intellectual, or moral parts of man. Therefore, roughly spirituality is that which relates to the spiritual side of human beings. It refers to the immaterial reality and goes beyond material views of humans and the world.

People of all ages often seek to find meaning in their everyday activities. Understanding the relationship as well as the differences between spirituality and religion is important. It can help and supports the interest of older adults in reaching beyond themselves, doing and caring for others, and being disinterested in the material world. Defining spirituality, identifying its threats and strategies may lead readers into incorporating spirituality into or finding meaning in their lives. Expressions of spirituality through religious practices or compassion, service to others or passing on wisdom to succeeding generations (generativity) often bring deep personal satisfaction, comfort, and peace to older adults and thus help them mature more successfully.

Spirituality and happiness among kids - Over the past few years, scientists have been able to measure the affect of positive emotions and feelings of joys within our biology, so it is key to find out what best produces these feelings within us.

Just to be clear, they define spirituality as internal characteristics, an inner belief system that a person relies on for strength and comfort. Understanding happiness has been subjected to large amounts of research for a number of years. This particular one suggests that the processes that influence happiness are not guided by external factors, but internal characteristic and qualities.

If we look at the planet today, from the day we are born we are bombarded with marketing, advertising, television and more; our wants and desires are literally programmed into us. We constantly seek external factors for self-satisfaction and happiness (i.e., money), but after we acquire these external characteristics we instantly move on to something else outside of us in order to feel happy or fulfilled. This is a result of the mass conditioning we are exposed to throughout our lives.

Spirituality and happiness among teenagers - The links between spirituality and happiness is pretty well-established for teens and adults. More spirituality brings more happiness. Now a study has reached into the younger set, finding the same link in "tweens" and in kids in middle childhood.

Specifically, the study shows that children who feel that their lives have meaning and value and who develop deep, quality relationships – both measures of spirituality, the researchers claim are happier.

The researchers compared teenagers with inflammatory bowel disease (IBD) with their healthy peers. Their analysis showed that while spirituality helped all of the young cope A research project by Dr. Michael Yi and Sian Cotton at the University of Cincinnati revealed with life's challenges, but it was especially helpful for the ones with ones with IBD.

Yi said: "One of the most important predictors of poorer overall quality of life for both the healthy and sick teens was a poorer sense of spirituality well-being. It is important to point out that personal characteristics such as self-esteem, family functioning and social support were similar between adolescents with IBD and their healthy peers."

Cotton's analysis of the same 155 adolescents found that higher levels of spiritual well-being were associated with fewer depressive symptoms and better emotional well-being.

The result were detailed in online versions of the Journal of Pediatrics and the Journal of Adolescent Health.

Spirituality and happiness among young people - Psychologist Mark Holder and colleagues at the University of British Columbia in Canada discovered in their research with children that 6.5 to 16.5 per cent of children's happiness is attributable to spirituality. This research, published in 2008, was the first to establish the importance of spirituality to children. To put the importance of spirituality in context,

*Asst. Professor (Psychology) Swami Vivekanand Govt. P.G. College, Narsinghpur (M.P.) INDIA

this research showed that money only accounts for one percent of children's happiness and whether children attended public or private schools had no effect. The researchers explained the reasons for their findings by emphasising the link between spirituality and meaning, hope, positive social network. The research was undertaken with children aged 9-12.

Spirituality and happiness among old age people - Though growing old is a natural process but it produces a range of reactions in different people. One may feel positive about it, one may feel some dread or anxiety; others have mixed feelings. Old age may be defined as, "the witness of a lifetime of experience" (National Advisory Council, 1992 b) Even though the older adult may feel bombarded with life's burdens and stressors simultaneously they are able to employ strategies through their spirituality that enables them to be happy. Many older adults are without any form of formal or informal support and cope entirely through spiritual support. While we understand that older adults may turn to religious more over time to help them cope or adapt, the church often becomes less accessible in their time of need. Different individuals within cultures have differing philosophies and practices of spirituality, but derive similar positive outcomes.

References :-

1. Basavanna M.(2013)Mental Health And Spirituality-Improving Quality Of Life, Green Leaf Publication, Page 3.
2. G. Sampath Reddyand P. Gopal Krishna (2013) Mental Health And Spirituality- Improving Quality Of Life, Green Leaf Publication, Page 65,66.
3. www.collective-evolution.com
4. www.centre for confidence.co.uk.

****

Treating Anxiety – Systematic Desensitization And Relaxation Techniques

Smita Jain *

Introduction - Rani was 12 years old, and she suffered from terrible migraine headaches. They always happened at night before a school day, never on a Saturday night and never during the summer vacation. She went to a therapist for about two months, and learned relaxation exercise. Systematic desensitization was used to help her deal with school related anxiety. Her headaches disappeared and she ended here therapy. One month later Rani's parents had a quarrel and separated. Rani had sensed the tension between her parents but never mentioned it, and it contributed to her headaches.

This paper discusses two approaches to reducing anxiety sometimes called stress management. These include systematic desensitization and relaxation. There are also many coping strategies that are effective. In more recent years, alternative approaches to counseling and psychotherapy have been developed and proven to be effective. Some of these, called behavioural techniques, focus directly upon the anxiety itself, including a persons physical reactions, and a person's have proven to be fast and effective ways to reduce stress.

A combination of two techniques that are highly effective and extensively used are muscle relaxation and systematic desensitization. One of the signs of stress is muscle tension. Teeth and fist may be clenched and the muscles of the head and neck get tense. The subject may experience a headache or stiff neck. The word 'tension' denotes physical and emotional tension. The contraction of muscles, which connect from one bone to another, account for the movement of parts of the body. Since anxiety involves muscle tension, teaching people to relax their muscles helps in reducing anxiety. Muscle relaxation training is a method for teaching a tense person to relax his or her body, one set of muscles at a time. Jacobson's muscular relaxation technique (successful tensing and then relaxing various pairs of muscles throughout the body) or yoga are used. The advantages of using these techniques are firstly that they are useful for those patients who are unable to relax. Secondly, all anxiety disappears, and lastly, they make the technique of systematic desensitization more economical in time.

Systematic desensitization - This is a technique used to gradually help a tense or fearful person face the very situations or objects that make him anxious. If a subject is fearing taking an exam in school he is asked to imagine that he is taking a test in front of the therapist. The therapist monitors the emotional reaction. Then he is asked to imagine to submit his paper to the therapist. During this process he is asked to relax his muscles. As soon as he is feeling even a little bit anxious, he is asked to stop and practice more relaxation. The procedure of test taking is broken down into small bits and the subject is asked to imagine each bit in the presence of the therapist till he feels totally imagine the procedure without anxiety.

People with high anxiety usually get stressed even thinking about a frightening situation or activity. They are helped to create a series of imaginary scenes-scenes in which they are actually doing whatever it is that frightens them. Muscle relaxation is often used together with this technique. Little by little, the therapist guides the subject through imagining the frightening scene, until the subject can imagine each step without fear. Once the subject is able to imagine the procedure, he is then made to actually do the procedure bit by bit. The subject finds that he can actually do it without stress. One criticism of this technique is that it does not actually help in understanding why the subject is afraid. He is only taught to overcome the fear. This a valid objection, but many people who find this technique helpful do not need to or want to know why they feel and fear – they only want to be able to master it.

References :-

1. Alpern, M. (2002). The Effects of Job Loss on the Family. Chelsea House Publishers, Philadelphia.
2. Bhatia, M.S. (2008). Text Book of Clinical Psychology. New Age International Publishers, New Delhi. Pp. 35.4.
3. Sadock, B.J. and Sadock, V.A. (2008). Kaplan and Sacks Concise Textbook of Clinical Psychiatry.

* Professor & Head (Psychology) Govt. P.G. College, Narsinghpur (M.P.) INDIA

नारीवाद साहित्य का मूल और मूल्य

डॉ. रत्नेश विश्वक्सेन *

शोध सारांश – संस्कृति, धर्म, कला, दर्शन और इतिहास के अहाते से हाँक दी गयी, सामंती विलास में वस्तुवत् पशुवत् समझी गयी एक पूरी दुनिया स्त्री के अस्तित्व में कैद है। घर, घुंघट और घाघरे के प्रायोजित ढ़ाँचे में कमान सी कसी हुई नारी अबला के विशेषण और श्रद्धा के अन्वेषण से बाँध दी गई। भाषा के अधिकार से वंचित, निर्णय, विवेक और प्रज्ञा की किसी भी सत्ता से बेदखल वह आज भी तथाकथित वैज्ञानिक, सभ्य, शिक्षित और तकनीकी मानवों के समाज में लिंग परीक्षण और भ्रूण हत्या की अमानुषिक कृत्यों से अभिशप्त है। हाँ शिक्षा और आर्थिक निर्भरता से स्थितियाँ बदली जरूर है पर बाजार ने उसकी देह के अधीन से जो स्वतंत्रता की तस्वीर खींची है उसपर खूनी इरादों की नाखूनी खरोंच बड़ी बेरहमी से उभरती चली जा रही है उत्तवैदिक से उत्तर आधुनिक युग तक नारी की यात्रा निरंतर इसी तरह चली आ रही है।

हाँ यह जरूर है कि बदलाव और परिवर्तन के इस दौर में यह पहचान निश्चित तौर पर प्रेरणादायी है। इतिहास के दिए गए इस मौके को लपकने की जरूरत है ताकि नारीवादी साहित्य का मूल्य निर्माण आचरणधर्मी बन सके। परंपरा में पराधीनता की पीड़ा है तो वर्त्तामान में उसे न्यायोचित बनाना होगा ताकि भविष्य में गुमराही की संभावना खत्म हो सके। सच तो यह है कि नारीवादी साहित्य का मूल्य निश्चित रूप से हमें सहृदय बनाने में है क्योंकि यह सहृदयता ही हमें मानवोचित भाव देगी। और यही मानवोचित आचरण धर्मिता नारीवादी साहित्य का स्थायी मूल्य है।

शब्द कुंजी – पराधीनता, पितृसत्तात्मकता, वर्चस्ववाद, सेक्सुअल पॉलिटिक्स, सामंती विलास, पुरूषवाद, पुरोहितवाद ।

प्रस्तावना – उत्तर ऋग्वैदिक काल से सामाजिक संरचना में पितृसत्तात्मकता केंद्रों का बीज वपन होता है। शुद्र और स्त्री की स्थिति यहीं से दोयम दर्जे की शुरू होती है। मैत्रायणी संहिता में उसे पासा एवं सुरा के साथ-साथ तीन प्रमुख बुराईयों में गिना जाने लगा है तो ऐतरेय ब्राह्मण यह कहकर कि पुत्री ही सभी दुखों का स्रोत है तथा पुत्र ही परिवार का रक्षक है प्रकारांतर से वर्चस्ववादी पितृसत्तात्मक संरचना की व्याख्या करता है। उस युग में नारियों की शिक्षा संपन्नता है पर सीमा के साथ वृहदारण्यकोपनिषद में एक प्रसंग है कि 'एक वाद-विवाद के दौरान याज्ञवल्क्य ने गार्गी से यह कहा कि अधिक बहस न करो अन्यथा तुम्हारा सर तोड़ दिया जाएगा।'

हम यहाँ देखते है कि उत्तर वैदिक काल से पराधीनता की परिभाषा गढ़ती चली गयी। अवसर और संपत्ति से बेदखल कर पितृसत्ता ने अपने वर्चस्व का जश्न मनाना शुरू किया। स्त्री से हार बर्दाश्त न कर पाना और उसे अपने हीन समझने का प्रयास इस समय से प्रारंभ हो गया था। भारतीय संदर्भ में हम इसके मूल उत्सव की बात समझ सकते हैं।

पश्चिम में पुरूषों के समकक्ष स्त्रियों का राजनीतिक, सामाजिक और शैक्षिक समानता के आंदोलन के रूप में इसका विकास होता है। इंग्लैंड और अमेरिका इसका प्रारंभिक स्थल बनता है। 18वीं सदी के मानवतावाद और औद्योगिक क्रांति में इसकी जड़ें दिखती हैं। पहली बार 1792 ई0 में स्त्रियों के अधिकार की बहाली के रूप में सामने आता है क्योंकि कानून और धर्मशास्त्र द्वारा इन्हें पराधीनता की व्यवस्था ही मयस्सर हुई। पर 1848 ई0 में इसके ठोस शुरूआत की पहल मिलती है जब एलिजाबेथ कैंडी स्टैण्टन, लुक्रेसिया कफिन मोर के नेतृत्व में न्यूयार्क के महिला सम्मेलन में नारी स्वतंत्रता का घोषणापत्र जारी होता है। 70 के दशक में यह एक नया रूप धारण करता है जब 1966 में NOW का गठन होता है।

1970 में इस आंदोलन की दिशा में उग्रता आती है तो भटकाव भी एकबारगी दिखायी पड़ता है। जब केट मिलेट की पुस्तक 'सेक्सुअल पॉलिटिक्स' और जर्मन ग्रीअर की पुस्तक 'फीमल यूनख' अपनी प्रस्तुति में अतिवादी हो जाती है। जिसके कारण यह उसी पुरूषवाद का प्रतीक बनता दिखाई देता है, जिसका वह विरोध कर रहा होता है। फलस्वरूप एक अलग तरह की विसंगति से इसका सामना होता है। किसी भी अतिवाद का समर्थन नहीं किया जा सकता है, चाहे वह पक्ष का ही क्यों न हो। लेकिन इतना जरूर है कि मानसिकता नये बदलाव को समझने के लिए तैयार होने लगी।

एशिया में नारीवाद संघर्ष लोकतांत्रिक अधिकारों के प्रति चेतना की जागृति से प्रारंभ होता है। नागरिक अधिकार, मताधिकार, से हम इस संघर्ष की रूप-रेखा को आसानी से समझ सकते हैं।

भारत में भी यह आधुनिक संदर्भो में देखें तो पंडित रमाबाई और सावित्रीबाई फूले के माध्यम से क्रमश: स्त्रियों के अधिकार एवं स्त्रियों की शिक्षा के रूप में रचनात्मक उठान पाता है। पहली महिला ग्रेजुएट कादम्बिनी गांगुली का तक कितना विरोध हुआ था और वह कदम कितना क्रांतिकारी था यह कहने की आवश्यकता नहीं है

'पुरूष प्रधान समाज में स्त्रियाँ सर्वदा से उपेक्षित होती रही है। स्वतंत्रता के अभाव में उनका व्यक्तित्व विकृत होता गया। स्त्रीवाद स्त्रियों के दमन के विविध रूपों का अध्ययन करता है और दमन से उन्हें मुक्त कराने की दिशा में पहल करता है। यह स्त्री की वैयक्तिक, राजनीतिक एवं दार्शनिक समस्याओं से जुड़ा हुआ है।'[1]

'कुछ औपन्यासिक उदाहरणों द्वारा हम इसे स्पष्ट करेंगे- सड़क पर एक कुत्ता भौंक उठा और चौकीदार ने आवाज लगाई। हॉस्टल की सारी बत्तियाँ बुझ चुकी थीं। ..... उसे पहली बार अपने अकेलेपन का इतना

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) स्नातकोत्तर, राँची महाविद्यालय, राँची (झारखण्ड) भारत

अहसास हुआ। उसे लगा कि सबकुछ उसे अकेले ही झेलना है।'[2]

इस उपन्यास की पात्र स्वतंत्र है पर समाज उसे अकेलेपन की यातना देता है। भारतीय संरचना में वेश्या को एक स्वतंत्र नारी माना गया है। स्त्री अपने मर्दवादी संबंधों में ही स्वीकार्य है अन्यथा कहने की आवश्यकता नहीं। दूसरा उदाहरण 'एक और रस्म सिद्धार्थ के हाथ मे कपड़े से बना चाबुक जिसे वह लहरा रहा है और चला रहा है दुल्हन पर। दुल्हन बचने का नाटक करती भाग रही है चाबुक से बचने के लिए। लोग हँस रहे हैं, हर चाबुक पड़ते-पड़ते रह जाता है दुल्हन के जिस्म पर'[3]

मर्दवादी रस्मों में भी यातना के कई प्रतीक हमें दिखायी पड़ते हैं। वस्तु के रूप में स्त्री का अस्तित्व ऐतिहासिक साक्ष्यों में हमें बार-बार मिलता है नीत्शे - जरथुस्त्र उवाच में एक प्रसंग इस रूप में है कि 'एक बार जरथुस्त्र एक बुढ़िया से पूछता है बताओ, स्त्री के बारे में चुप रहना ही बेहतर है। हाँ अगर तुम औरत के पास जा रहे हो तो अपना कोड़ा साथ ले जाना मत भूलना।' तो पीड़ा की भाषा कोड़े और चाबुक की प्रताड़ना से तैयार होती है। एक तरह से कहें तो स्त्रियों की स्थिति दलितों से भी बदतर है क्योंकि स्त्री की पहचान उसकी देह से तय होती है। इसलिए दलित तो अपनी पचहान छुपा भी सकता है स्त्री नहीं क्योंकि देह छुपेगी नहीं। इस वक्तव्य में वह और स्पष्ट है कि 'दलित के मुकाबले स्त्री की मुश्किल यह भी है कि उसे उसी पुरूष की भाषा में रात-दिन अपने को परिभाषित करते रहना पड़ता है जो उसकी है ही नहीं आत्यांतिक रूप से **एक्सक्लूसिवली** पुरूष की है। वह तो शायद यह भी भूल गई है कि उसकी अपनी कोई निजी भाषा है भी या हो सकती है। किसी दूसरी औरत को जब वह अपमानित करना चाहती है तो उसके पास ठीक वही शब्द है जिनका लक्ष्य वह स्वयं स्त्री होने के नाते होती रही है।'[4]

हम देख सकते हैं कि पुरूषवादी व्यवस्था में हर चीज तय की गई है। भाषा, निर्णय, विवेक और अधिकार की मानवोचित एवं नैसर्गिक स्वतंत्रता से स्त्री दुगुनी दूर है। सब कुछ तय पहले से है, स्त्री उस तय शब्दावली में जीने को अभिशप्त है, उसी मुहावरे और फिकरे में जिसे पुरूषों ने अपने फायदे के हिसाब से बनाया है।

रेड इंडियन कवियत्री ज्वॉय हार्जो जिनकी कविताओं का अनुवाद वीरेन्द्र कुमार बरनवाल ने यरक्त में यात्रा' नाम से किया है - मैं मुक्त करती हूँ तुम्हें मेरे सुंदर भीषण भय ..... मुक्त करती हूँ तुम्हें उस समूचे दर्द के साथ जो अनुभव होता मुझे अपनी बेटियों की मृत्यु पर। इन पंक्तियों को पढ़ने समझने के बाद नारीवादी साहित्य का मूल्य तब और भी गहरा होता जाता है। मूल्य अर्जित किया जाता है जिसमें निश्चित रूप से पीड़ा, यातना और संघर्ष की पूरी परंपरा मौजूद है। स्त्री की व्याख्या इतनी तय है कि वह कोई नया अर्थ देने के बदले फीकी हँसी देकर ठिठुरी रह जाती है। श्रीधर मिश्र की 'कैद' कविता को देखें-

दीवार पर टंगे चित्र में, हँसती हुई लड़कियाँ है
कहीं जाती हुई, इन्हें कहा जाना है
इसका जिक्र वहाँ नहीं है।'[5]

इस पंक्ति हतभाग्य बना दी गयी गंतव्यहीन स्त्री की हँसी है जो अर्थहीन बना दी गयी है' आगे देखें -

'उन्हें निकालना होगा फ्रेम की गयी इस हंसी से
पाने के लिए अपने हक का रोना, गुनगुनाना,
चुप्पी और चीख, उन्हें बात करनी होगी खुलकर
तय करना होगा कि रोने के लिए
उन्हें हँसने जैसी सूरत न बनानी पड़े।'[6]

निष्कर्षत: नारीवाद साहित्य का मूल्य सामाजिक-संरचना को फिर से गढ़ने रचने में है जहाँ पुरूषवादी पुरोहितों को फिर से धर्मशास्त्र की व्याख्या करनी है, जहाँ स्त्री को व्यक्तित्व के रूप में स्वीकारना है, जहाँ सहानुभूति के बदले समानुभूति तथा सहधर्मिणी के बदले समधर्मिणी की शब्द-व्यंजना और व्यवहार परकता की जरूरत है। उत्तर आधुनिक संदर्भों में स्त्री विमर्श या नारीवादी साहित्य नेपथ्य से मंच पर आ गया है। यवनिका की डोर बंदिशों से पीड़ित नहीं है। समाज को नारीवादी साहित्य को पढ़ पहचान कर नयी संरचना में आगे बढ़ना होगा ताकि दुरभिसंधि से प्रेरित इतिहास में कलंकित अध्याय के शीर्षक होने से एक पूरी दुनिया बच सके। दरअसल पुरूष बड़ी मुश्किल से गुजरता है जब स्त्री के अस्तित्व से उसकी मुठभेड़ होती है। हम अपने घर और समाज में भी उसकी दोयम स्थिति लगातार देखते हैं। वस्तुवादी मानसिकता की जड़ इतनी गहरी है कि सहसा स्त्री के व्यक्ति रूप को व उसकी संवेदना को समझ पाने की क्षमता घुटती हुई नजर आती है। घर का बच्चा अपनी माँ के साथ जो पिता का व्यवहार देखता है तो उसे भी यह लगता है कि स्त्री सताने की चीज है। मूल बात यह है कि व्यक्ति के रूप में स्त्री को स्वीकार आवश्यक है पर बिना किसी शर्त के ताकि सुन्दर और विवेकपूर्ण जीवन - जगत हमारे सामने आकार ले सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. आधुनिक हिन्दी आलोचना के बीज शब्द - पृ0-141, डॉ0 बच्चन सिंह, वाणी प्रकाशन, प्रकाशन वर्ष-1994
2. पंचपन खंबे लाल दीवारें : ऊषा प्रियंवदा, राजकमल प्रकाशन, 1962
3. सखते चिनार : मधु कॉकरिया, पृ0-106, नया ज्ञानोदय, मार्च, 12
4. आदमी की निगाह में औरत, पृ0-242, राजकमल प्रकाशन, 2001
5. कैद : श्रीधर मिश्र, पृ0-36, हंस, मार्च, 2012 अंक।
6. कैद : श्रीधर मिश्र, पृ0-36, हंस, मार्च, 2012 अंक।

****

रहीम – काव्य में नारी विषयक चिंतन एवं अभिव्यंजन

डॉ. चेतना शर्मा *

प्रस्तावना – अपनी विलक्षण और विचक्षण प्रतिभा के कारण रहीम को भक्तिकाल का प्रथम पंक्ति का कवि अर्थात् महाकवि माना गया है। असि और मसि पर समान अधिकार रखने वाले इस प्रतिभा सम्पन्न अक्षर–पुरूष ने बहुत लिखा है– एक विशाल काव्य साधना की है – परन्तु अपनी विरासत के प्रति उदासीनता का भाव रखने वाले हम लोग उस विरासत की कहॉ रक्षा कर पाये है। आज मात्र कुछ सैकडा दोहे, संस्कृत में रचित श्लोक लघु काव्य तथा अवधी में प्रणीत 'नगर शोभा' काव्य कृति ही मात्र उनकी उपलब्ध होती रचनाऐ हैं। मात्र इतना सा उपलब्ध साहित्य ही यह बताने और जताने काफी है कि रहीम का कवि–व्यक्तिगत कितना बहुमुखी,बहुरंगी और बहु आयामी हैं।

रहीम अकबर महान् के नवरत्नों में से एक थे। तुलसी से मैत्री जग जाहिर है। साथ ही स्त्री के प्रति सदैव आदरणीय भाव रखते थे । उनका महादानी स्वभाव एवं आचरण चकित करने वाला है। वे स्त्री के सम्मान के साथ सदैव उस की सहायता के लिये तत्पर रहते थे आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने उनके दानी स्वभाव और नारी सहायक गुण का वर्णन करते हुऐ लिखा है–

'गोस्वामी तुलसीदास जी से भी इनका बडा स्नेह था ऐसी जनश्रुति है कि एक बार एक ब्राहाम्ण अपनी कन्या के विवाह के लिए धन न होने से घबराया हुआ गोस्वामी जी के पास आया। गोस्वामी जी ने उसे रहीम के पास भेजा और दोहे की यह पंक्ति लिख कर दे दी । –

'सुरतिय नरतिय नागतिय यह चाहत सब कोय'

रहीम ने उस ब्राहाम्ण को बहुत सा द्रव्य देकर विदा किया और दोहे की दूसरी पंक्ति इस प्रकार है। –

'गोद लिये हुलसी फिरै तुलसी सो सुत होय'(1)

रहीम विकट जीवन संग्राम के वे आजीवन योद्धा रहे । उसने जीवन की गहरी समझ उन्हें दी। उनका भारतीय दर्शन एवं संस्कृति के प्रति न केवल लगाव था अपितु अंतरंग जुडाव भी। उनकी कृष्ण भक्ति जग प्रसिद्ध थी – प्रेम उनकी कविता का स्वभाव भी है और चरित्र भी । इसी प्रेम ने उनसे नीति संबंधी दोहे लिखवाये। इसी प्रेम के वशीभूत होकर उन्होंने 'मदनाष्टक' जैसा प्रेम –तरल काव्य लिखा इसी सौन्दर्य और प्रेम के अमर गायक एवं उन्नायक के रूप में उन्होने 'नगर शोभा' जैसे काव्य –ग्रन्थ की रचना की।

रहीम के काव्य को मोटे तौर पर तीन आधार विषयक है (1) लोक व्यवहार एवं नीति (2) नारी की प्रेम भावना और (3) सौन्दर्य ।

उनका नारी विषयक दृष्टिकोण स्वस्थ एवं संतुलित है। उनकी नारी प्रेममयी है। प्रेम उसका जीवन भी है और दर्शन भी । पर,उसका प्रेम शरीरी नहीं है। उसमें वासना की दुर्गन्ध नहीं है – साधना की सुगन्ध है। रहीम को नारी मनोविज्ञान की कितनी सूक्ष्म एवं सटीक जानकारी थी इसका एक बोलता उदाहरण देखें –

कमला थिर न रहीम कहि,
यह जानत सब कोय।
पुरूष पुरातन की वधु,
क्यों न चंचला होये।। (2)

यद्यापि रहीम दरबारी व्यक्ति थे – परन्तु, उनका कवि दरबारीपन से सर्वथा मुक्त है। उनका कवि चारणी भाषा नहीं बोलता। उनका कवि मुॅह देखी बात नही करता। उनका कवि जैसा और जितना जानता है। उतना बिना लाग लपेट के कह डालता तभी शताब्दियां बीत जाने पर भी उनकी कविता हमारे बीच पूरी आन,बान और शान के साथ विद्यमान है।

रहीम का नारी चिंतन एवं भारतीय संस्कृति के अनुरूप भव्य भी है। और दिव्य भी। रहीम मदनाष्टक जैसा प्रेम काव्य रचकर राधा की अवतारणा और अवधारणा करते है। राधा अर्थात् प्रेम की देवी। राधा अर्थात् अनन्य प्रेम। राधा अर्थात् – जिसका समूचा 'स्व' कृष्ण प्रेम में साधना की लगन है,तपस्या की तपन है और भावना की जलन। यह सब कुछ न्यौछावर कर प्राप्त किया जाने वाला प्रेम हैं। यह हृदय के संगीत पर थिरकाने वाला प्रेम है। रहीम की नारी कहीं भी कर्कश नहीं है। वह मधुर है और उसकी उपासना भी मधुरोपासना है। नायिका के हृदय के छोर छोर को जनाने वाले रहीम ने कहा है। कि अपने प्रिय के साथ गृह निर्माण में व्यस्त नायिका थकान को भूलकर आनंद का अनुभव करती है।

'लैके सुघर खुरूपिया ,पिया के साथ।
छइवै एक छतरिया,बरखत पात।।' (3)

रहीम की नारी सर्वांग सुन्दर है वह भावना मयी,त्यागमयी और समर्पण शील हैं। उसके पास अनुभूतियो का अक्षय – कोष है। वह संवेदन शीलता का मूर्तिमंत स्वरूप है। उसका व्यक्तित्व सम्पन्न है। उसके व्यवहार की जडे संस्कृति में भीतर तक गड़ी हुई हैं। रहीम जिस नारी को प्रस्तुत करते है,वह नायिका भेद की भाषा में अभिसारि का भी हैं। और पोषित पतिका भी । वह मुग्धा भी है। श्रेष्ठ समर्पण भावना के कारण वह प्रेम के अनूठे आयाम प्रस्तुत करती है। लोक मर्यादाऐं उसके उग्र प्रेम को शासित और अनुशासित करने का सामर्थ्य नहीं रखती। इस प्रेम में आवेग भी है और आवेश भी। यह प्रेम अनुभूतियों का अनंत सिलसिला है। यह न बनावटी है और न बुनावटी । यह शाब्दिक भी नहीं है। यह हृदय की नैसर्गिक भाषा बोलता है। यह कूट मंत्राणाओं वाला और नारकीय यंत्रणाओं वाला प्रेम भाव भी नहीं है – यह हृदय के हिमालय में फूट –फूट कर संवेग से बह निकलने वाला गंगा जमुनी प्रेम है।

मध्यकालीन हिन्दी कवियों ने नारी को 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता' के तर्ज पर प्रस्तुत किया है। चाहे मलिक मुहम्मद जायसी की नागमति हो या पद्मावती,सूर की राधा हो या अपने ही काव्य की नायिका स्वंय मीरा हो या फिर महाकवि तुलसी की सीता हो सबमें एक उच्चता की भाव भूमि है। रहीम की नारी योजना भी इसी परपंरा की है। इस योजना में नारी का भोग्या रूप न होकर दिव्य समर्पण का रूप है। इनकी नारी देवत्व के गुणों से भूषित एवं विभूषित है। प्रेम के पंथ पर चलने के लिये जिस निर्भीकता और आत्म त्याग की आश्यकता होती है वह इस नारी योजना में अक्षर–अक्षर ,शब्द

* गेस्ट फैकल्टी (हिन्दी) शासकीय महाविद्यालय, सिरोंज (म.प्र.) भारत

शब्द योजित एवं संयोजित हैं।

यह प्रेम शरीरी न होकर आत्मिक है। इस प्रेम में कष्टों की चिन्ता न होकर प्रिय के कुशल क्षेम का आग्रह अधिक है। यह सर्वस्वत्यागी प्रेम है जो इन्द्रिय जन्य कम और अतीन्द्रिय अधिक है। रहीम उदत्तता के कवि है। उनके वर्णन उच्च मनो भूमि से युक्त –संयुक्त होने के कारण लौकिक सीमाओं को लांघकर अलौकिकता के प्रांगण में प्रसार पा रहे है। रहीम के युग में भले ही नारी की समाजिक कठिनाइयॉ बढ़ी हों और कष्टों का अनवरत सिलसिला रहा हों पर जिस कवि की दृष्टि पुराणों तक प्रसार जा रही हो वह युग की परिधि में भला कैसे कैद हो सकता है। वस्तुत: तुलसी और रहीम युग मात्र के कवि न होकर युग–युग के कवि है। इसलिये उनकी कविता आज भी उतनी ही प्रासंगिक एवं अर्थवत्ता से अभिमंडित है। नारी हृदय की भावनाओं की अनुभूति को यथा तथ्य चित्रण कैसे कर सके है।

मनमोहन बिन देखे,दिन न सुहाय।
गुन न भुल हौं सजनी,तनक मिलाय।। (4)

भक्ति परक बरवों की रहीम ने सुन्दर छटा छिटकायी है। इसका एक उदाहरण प्रस्तुत है।

नर नारी मतवारी ,अजरज नाहिं।
होत विटप हूँ नॉगे फागुन मॉहि।। (5)

कृष्ण काव्य की धडकन सी सुनाते हुए वे कहते है –

ब्रज वासिन के मोहन,जीवन प्रान।
ऊधो यह संदेसवा,अकह कहान।।(6)

अपने फुटकर पदों में रहीम ने नारी के सौन्दर्य का मनो मुग्धकारी चित्रण किया है एक उदाहरण इसे स्पष्ट कर सकता है।

अति अनियारे मानों सान दै सुधारे,
महा विष के विषारे ये करत पर घात है।
ऐसे अपराधी देख अगम अगाधी यहे,
साधना जो साथी हरि हिय में अन्हात है।
बार बार बौरे याते लाल लाल डोरे भये,
तेहू तो रहीम थोरे विधि ना सकात हैं।
थाइक घनेरे दुखदायक है मेरे नित,
नैन बान तेरे उर बेधि बेधि जात है।।(7)

नगर शोभा में नारी प्रेम के अनूठे चित्र हैं। आज का समय प्रकारान्तर से हृदय हीनता का समय कहा जा सकता है। स्नेह की कमी ने जीवन को नीरस और विषाक्त बना दिया है। रहीम ने 'नगर शोभा' में सौन्दर्य के असाधारण चित्र उकेरे है। नेत्रों का सौन्दर्य अभिव्यंजित करते हुए कहा है।

नैन सलोने अधर मधु, कहि रहीम घटि कौन।
मीठो भावे लौन पर,अरू मीठे पर लौने।। (8)

नगर शोभा में भावों से आप्लावित कुछ सौन्दर्य चित्र इस प्रकार प्रस्तुत किये गए है।

भाटा बरन सु कौजरी, बेचै सोवा साग।
निलजु भई खेलत सदा गारी दै दै फाग।। (9)
बनजारी झुमकत चलत,जेहरि पहिरै पाइ।
बाके जेहरि के सबद, बिरही हर जिय जाई।।(10)

मदनाष्टक का राधा कृष्ण प्रेम विषयक एक सजीव चित्र देखिये –

तरल तरनि सी है तीर सी नोकदारैं,
अमल अमल सी हैं दीर्घ है दिल बिदारैं।
मधुर मधुप हेरै, माल मस्ती न राखै,
विलसति मन मेरे सुन्दरी श्याम ऑखें।। (11)

इस प्रकार रहीम काव्य का एक प्रमुख स्वर है नारी प्रेम। इस प्रेम में रवानी भी है दीवानी अनुभतियॉ भी। रहीम का नारी चित्रण यही तथ्य बार बार ध्वनित करता है कि यदि नारी न होती तो संसार रेगिस्तान होता अपने कथ्य की शुरूआत में ही मैंने कहा है कि अपनी विरासत के प्रति हमारी उदासीनता ने हमारी अपूरणीय क्षति की है। रहीम के सन्दर्भ में यह व्यथा –कथा कुछ विशेष ही बन गयी है। रहीम –सहित्य का बहुत थोडा सा अंश ही आज दिनांक तक हमें प्राप्त हो सका हैं आवश्यकता उस गवेषणा की है जो काल के गर्भ में छिपे रहीम लिये पर्याप्त है कि उनकी साहित्य साधना संस्कार की आराधना अर्चना और उपासना है। अत: हिन्दी के शोध जगत को पिष्टवेण की प्रवृत्ति से उबरकर ताजे अछूते और नये विषयों को शोध की फेरी लगाकर हम रहीम जैसे सशक्त कमल के धनी के अवदान का सही और सच्चा मूल्यांकन करने मे कदापि कदापि सफल नहीं हो सकेगें।

रामचन्द्र शुक्ल जी ने रहीम के स्त्री परक ग्रन्थ 'बरवै नायिका भेद' के सन्दर्भ में लिखा है–

'बरवै नायिकाभेद में भी जो मनोहर और छलकते हुए चित्र हैं वे सच्चे हैं – कल्पना के झूठे खेल नहीं है। उनमें भारतीय प्रेमजीवन की सच्ची झलक है।' (12)

अपने अभिकथन को समेटते हुए मैं बल देकर कहना चाहती हूँ कि रहीम स्वस्थ संतुलित और सारगर्भित जीवन और जीवन दर्शन के कवि है। वे साधक कवि हैं। उनकी नारी विषयक सोच भारतीयता की पोषक है। उनकी नारी उत्सर्ग की भाषा बोलती है। उनकी नारी बलिदानी मुद्रा की नारी है। उनकी नारी प्रेम को साधना से अचल बनाती है – वासना से चंचल नहीं। हिन्दी के जिन अमर गायको ने नारी प्रेम को वाणी दी है उनमें रहीम का स्थान विशेष है। नारी चित्रण में उन्हें सिद्धता भी प्राप्त है और रस सिद्धता भी । वे नारी के बाह्य सौन्दर्य तक सिमटे कवि नहीं है –वे नारी सौन्दर्य के अंतर और अंतस को उजागर करने वाले कवि है। उनके नारी चित्रण में सूर की भाव विमुग्धता और तुलसी की समन्वय शीलता का आकर्षक गणीकांचन योग है। उनका नारी चित्रण परिपूर्ण भी है। और सम्पूर्ण भी। वह कल्पना की उडान नहीं है। वह वास्तव से भी अधिक वास्तविक और प्रमणिकता के उच्चतम शिखर तक पहुॅचने वाला मनो मुग्धकारी रचना संसार है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :–

1. हिन्दी साहित्य आचार्य रामचन्द्र शुक्ल 168 का इतिहास ।
2. रहीम ग्रन्थावली विद्यानिवास मिश्र, दोहा क्र.26 (खण्ड दोहावली से) गोविन्द रजनीश ।
3. हिन्दी साहित्य का इतिहासआचार्य रामचन्द्र शुक्ल170
4. रहीम ग्रन्थावली विद्यानिवास मिश्र, दोहा क्र. 16(खण्ड बरबै भक्ति परक से) गोविन्द रजनीश ।
5. रहीम ग्रन्थावली विद्यानिवास मिश्र, दोहा क्र.48 गोविन्द रजनीश ।
6. रहीम ग्रन्थावली विद्यानिवास मिश्र, दोहा क्र.32 (खण्ड दोहावली से) गोविन्द रजनीश ।
7. रहीम ग्रन्थावली विद्यानिवास मिश्र, पद क्र.1 (फुटकर पद) गोविन्द रजनीश ।
8. रहीम ग्रन्थावली विद्यानिवास मिश्र, पद क्र.11 (नगर शोभा) गोविन्द रजनीश ।
9. .....पद क्र पद क्र 22 10. .... पद क्र. 25
11. रहीम ग्रन्थावली विद्यानिवास मिश्र, दोहा क्र.06 (मदनाष्टक) गोविन्द रजनीश ।
12. हिन्दी साहित्य का इतिहास आचार्य रामचन्द्र शुक्ल पृष्ठ क्र.16

आधुनिक नाट्य लेखन: रंगमंच एवं प्रस्तुतिकरण की आधुनिकता

डॉ. रश्मि जैन *

प्रस्तावना – नाटक एक साहित्यिक विधा है। रंगमंच अनेक कलाओं का समागम स्थल होता है। रंगमंच अपने विस्तृत अर्थ में ही नाटक का माध्यम है और उसके विस्तार में प्रस्तुतिकरण का अर्थ समाविष्ट है। निर्देशक से लेकर दर्शक प्रस्तुतिकरण को स्वरूप प्रदान करते है। ये रंगमंच की शक्तियाँ अपने सामूहिक उत्तरदायित्व में क्रियाशील रहती है। रंगमंच की परिकल्पना प्रस्तुतिकरण के आयोमों से बंधी रहती है। आधुनिकता का प्रारंभ व्यक्ति के स्त्रोत से होता है। समसामयिक जीवन मूल्य व्यक्ति के स्त्रोत माने जाते है। रंगमंच और प्रस्तुतिकरण के आधुनिक संदर्भ में नाट्य लेखन शब्द और दृश्य दोनों रूपों में भारतीय और पाश्चात्य के प्रवर्धित रूप को प्रस्तुत करता हुआ भारतीय आत्मसत्य को समेटे हुए है।

डॉ. नगेन्द्र ने 'आधुनिक' शब्द का प्रयोग समय–सापेक्ष्य, नए का वाचक एवं विशिष्ट दृष्टिकोण या जीवन दर्शन इन तीन अर्थों में स्वीकार किया है। इन अर्थों में आधुनिकता हर युग में गत्यात्मक रही है और स्व चेतना ने एक अनिवार्य भूमिका का निर्वहन किया। हमारे जनजीवन को जहाँ भारतीय चिंतन ने निरंतर जागरूक किया, वहीं पाश्चात्य विचारधाराओं ने भी प्रभावित किया। आधुनिकता का प्रारंभ व्यक्ति के स्त्रोत से होता है। उसमें निहित समसामयिक जीवन मूल्य आधुनिक सर्जनात्मकता का शुभारंभ करते हैं। सृष्टा की रचना में व्यक्ति की शक्ति निहित रहती है केवल आधुनिकता के लिए लिखी गई रचना न तो कभी आधुनिक होती है और न कालजयी। रंगमंच और प्रस्तुतिकरण के आधुनिक संदर्भ में नाट्य लेखन शब्द और दृश्य दोनों रूपों में भारतीय और पाश्चात्य के प्रवर्धित रूप प्रस्तुत करना हुआ भारतीय आत्मसत्य को समाहित किए हुए है।

हिन्दी नाट्य शताब्दी (1964 ई.) के बाद नाट्य लेखन में अनेक प्रयोग किए गए। नए परिवर्तन और कुछ भिन्न ढंग से कहने की प्रवृत्ति नाटककारों में मिलती है। दृष्टि ओर शैली में भिन्नता के नजरिए से ललित सहगल का 'हत्या एक आकार की' गाँधी जी के मानवतावादी सिद्धांतों पर आधारित विचारात्मक नाटक है। नाटककार मोहन राकेश का 'आधे अधूरे य आधुनिक महानगीरय जीवन शैली को अभिव्यक्त करता है। वर्तमान समाज में पति –पत्नी के संबंधों में आए हुए नए तनाव को चिन्हित करता है। जिससे बार –बार यह लगा है कि हमारे घर अधूरे है और इसमें रहने वाले दम्पत्ति भी आधे –अधूरे हैं। इस नाटक में गंभीर चित्र हमारे समझ प्रस्तुत हुआ है। आधे–अधूरे नाटक का रंगमंच शिल्प भी इस अर्थ में नया है कि इसमें एक ही व्यक्ति कई व्यक्तियों की भूमिकाएँ लेकर इस नाटक में आया है। 'चेहरों के जंगल' आलोक शर्मा का मौलिक प्रयोगात्मक नाटक है जो मात्र प्रतीकों और मुखमुद्राओं का सहारा लेकर लिखा गया एक मात्र नाटक है।जिसमें नाटक का प्रमुख तत्व 'सांद योजना ' का परित्याग भी देखने मिलता है। अमृत राय ने 'चिन्दियों में एक झालर' नाटक मात्र एक अंक में लिखा है। जो हिन्दी नाट्य लेखन में प्रयाकग की एक कड़ी है। जिसकी समाप्ति आदर्शों की हत्या करके हाती हैं। ' नरमेघ' गिरिराज किशोर का ऐसा नाटक है , जिसमें नाटककार ने अभिनेताओं को भाव – प्रदर्शन की पूरी छूट दी है। इसमें मानसिक स्थिति को ध्वनियों, प्रकाश–योजना तथा सांकेतिक शब्दावली से अभिव्यक्त किया गया है।

सफल प्रयोगात्मक रंग नाटकों में विपिन अग्रवाल का 'तीन अपहिज', डॉ. शंभूनाथ सिंह का 'दीवार की वापसी' तथा शांति मेहरोत्रा का ' एक और दिन' नाटक गिने जाते है। विपिन अग्रवाल का 'लोटन' परम्परा से भिन्न रचनात्मक दृष्टि से भले ही प्रभावशाली नहीं है परन्तु प्रयोग की एक दिशा की ओर संकेत करता है। सत्यव्रत सिन्हा का 'अमृत पुत्र' आधुनिक संदर्भ का नाटक है। इसमें सुविधा भोगी वर्ग के द्वारा आज की मानवीय विसंगति को उद्घाटित करने का सफल प्रयास किया गया है। दयाप्रकाश सिन्हा का 'इतिहास चक्र' युद्ध पूर्व और युद्ध पश्चात् दो कथांशो को एक अंक में समाए हुए है। नाटककार ने प्रस्तुति के लिए मंच को तीन भागों में बाँटकर बहुधरातलीय रंगमंच की कल्पना की है। भीष्म साहनी का 'हानूस' यथार्थवादी शैली को अभिव्यक्त करता है। इसमें ' हानूस य नामक लुहार की कथा के रूप में जीवन की नाटकीय विडम्बना को बिना कि वैचित्यक के सूक्ष्म कालत्मक रूप में प्रस्तुत किया गया है 'हानूस हिन्दी नाटक की विशेष उपलब्धि है इसके बारे में श्री नेमीचंद जैन ने लिखा है कि 'हानूस हिन्दी नाटक को कई कदम आगे ले जाता है सुशील कुमार सिंह का सिहांसन खाली है गहरा व्यंग्य रूपक है जो सिहांसन के प्रति राजनीतिक कुचक्रों से जुड़ा है इसमें दर्शक और मंच की दूरी बहुत कम हो गई है नाटक का प्रारंभ सूत्रधार के आह्वान से और समापन सूत्रधार द्वारा खाली करने की घोषणा से होता है ये रंगमंच की दृष्टि से सफल नाटक है इस नाटक से सुशील कुमार सिंह बहुत चर्चित हुए है। उनका 'चार यारों की चार' भी सफल रंगमंचीय नाटक है विनोद रस्तोगी के 'नए हाथ', 'बर्फ की मीनार' श्री कृष्ण किशोर का 'रास्तेय, मोड़ और पगडंडी, नीव की दरारे, चंद्रगुप्त, विद्यालंकार का न्याय की रात नाटकों ने भी पर्याप्त रंगमंचीय सफलताऐं प्राप्त की है कथ्य की नवीनता, कमोवेश और शैलीगत मंच प्रयोग की दृष्टि से शंकरशेष का, एक और द्रोर्णाचार, शरद जोशी का, अंधो का हाथी, एक और अभिमन्यु, संतोष नारायण , नौटियाल का, चाय पार्टियाँ, रामेश्वर प्रेम का , चार पाई, आजाद घर, कणाद ऋषि भटनागर का, 'जहर', गंगाप्रसाद विमल का 'आज नहीं कल', सुदर्शन चौपड़ा का ' काला पहाड़', बलराज पंडित का 'पाँचवा सवार', शिवप्रसाद सिंह का ' घाटिया गूंजती

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) – प्रवर श्रेणी, शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना (म.प्र.) भारत

हैं', जि.जे.हरिजीत का 'एक और मिट्टी आदि नाटक गिने जाते है।

नाट्य लेखन और प्रदर्शन में सत्यदेव दुबे, हबीब तनवीर तथा ब्रजमोहन शाह का नाम भी उल्लेखनीय है सत्यदेव दुबे ने अपनी उपकरण विहीन शैली में अनेक नाटक निर्देशित व प्रस्तुत किए है तो नाट्य अनुवाद व नाट्य लेखन भी किया है। 'संभोग से सन्यास तक' एक सफल पौराणिक फार्स शैली का नाटक है जिसे वे सुबोध और रंजक नाटक मानते है। उनके 'अप्रत्याशित' नाटक का विषय परपुरूषगमन है। ब्रजमोहन शाह का ' त्रिषंकु भी' फार्स शैली में उल्लेखनीय नाटक है। हबीब तनवीर का 'चरन दास चोर' पहला मौलिक नाटक है, जिसमें लोक धुनों और लोक भाषा में चरित्र और कोरस के माध्यमों का प्रयोग किया है। 'सूत्रधार' तनवीर का नया नाटक है जिसमें कथानक का विन्यास, सनसनीखेज रोमांचक उपन्यासों जैसा है। यह नाटक नागर मंच और लोक मंच दोनो शैलियों के मिश्रण से एक नई शैली प्रस्तुत करता है।

नए नाटक लेखन और प्रदर्शन का कलात्मक स्तर रंगमंच का मूर्त सत्य है हिन्दी के नए नाटककार ने अपनी नाट्य रचना के माध्यम से रंगमंच,अन्वेषण को नए रंग नाटक के जन्म की अन्वेषण प्रविधि के रूप में स्वीकार किया , जो एक व्यवहारिक प्रक्रिया रही है। जीवन मूल्यों के प्रति सजग दृष्टि ही आधुनिक नाट्य लेखन में रंगमंच की दृष्टि है। डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल के शब्दों में **'रंगमंच एक अनुभूति है, उसे रंगमंच का आंतरिक पक्ष कह सकते है पर जीवन में इसकी विराटता और समग्रता को देखना और उनके विभिन्न तत्वों को सही अर्थों तथा उनके ही अनुपात में समझना, रंगमंच की अनुभूति का व्यवहारिक पक्ष है'**। अभिनेता की कला और दर्शक की रूचि रंगमंच की परम्परा का विकास करती है तब कहीं नाटक मात्र इसका पोषक अंग बन पाता है। नए नाटक लेखन में समाज के आनंद को महत्व दिया जाता है समाज के आनंद की मूल दृष्टि रंगमंचीय होती है नाटक केवल नाटककार के आनंद की वस्तु नहीं है, नाटककार का आनंद उसकी रचना प्रक्रिया के क्षण में है। नाटक का संबंध ही रंगशाला, अभिनेता और दर्शन से अन्योन्याश्रित और अभिन्न है। रचना और प्रस्तुतिकरण की आधुनिकता नाटय की अभिव्यक्ति में शब्द और दृश्य के समंजन में बँधी हुई ही होगी। मोहन राकेश के –

शब्दों में – 'नाटयाभिव्यक्ति में श्रव्यमूलक और दृष्यमूलक माध्यमों का एक अर्थवान संयोजन किया जाना चाहिए। इस संयोजन में ही नाट्यकला की प्रभविष्णुता निहित है।'

स्वतंत्रता के पश्चात् घोषित भारतीय रंगमंच के कारण हिन्दी नाट्य लेखन में अनुवाद की दृष्टि से देशी विदेशी भाषाओं की नाट्य पद्धितयों का आदान प्रदान हुआ है , जिससे आधुनिक नाट्य लेखन को एक नई दिशा मिली है। हिन्दी नाट्य लेखन का रूझान मूलत: भारतीय लोक शैली की ओर आकर्षित हुआ और आधुनिक नाट्य लेखन और रंगमंच ने निजी रंग परम्परा से परिचय प्राप्त किया। पूरे भारत की नाट्य समृद्ध भाषाओं में नई प्रतिभाओं का उदय हुआ। भारतीय रंगमंच की कल्पना ने प्रांतीयता और भाषाओं की सीमाओं को तोड़ दिया। देशभर में नाट्य शालाओं के निर्माण, नाट्य संस्थाओं के गठन समृद्ध और कल्पनाशील निर्देशकों के उदय तथा आधुनिक रंगमंच की मूलभावनाओं को दर्शकों में आत्मसात कराने उद्देश्य के कारण आधुनिक नाट्य लेखन को नवीनतम् रंगमंचीय अनुदृष्टि उपलब्ध हुई।

निष्कर्षत कहा जा सकता है कि रंगमंच और प्रस्तुतिकरण के विवेच्य संदर्भ में आधुनिक हिन्दी नाट्य लेखन में नए नाट्यकारों ने नए शिल्प को रंगमंच की वास्तविकता से जोड़कर रखा है। निसंदेह इन नाट्यकारों ने अपनी नाट्य सर्जना में संभावना के कला प्रकोष्ट खोले है तो विषय वस्तु की दृष्टि से समकालीन जीवन को भी अभिव्यक्ति दी है। नाट्यकार की रंगमंचीय संवेदनशीलता ही आधुनिक नाट्य लेखन में रचना का विकास विन्दु है। आधुनिक युग की नाट्य चेतना ने रंगमंच को एक विज्ञान की रूप में स्वीकार किया गया है जो नाट्यकृति को चाक्षुश अभिव्यक्ति प्रदान करता है आधुनिक रंगमंच में प्रयोक्ता ही अभिव्यक्ति का आधार है। जो रचित कृति की प्रकट रूप में पुनर्रचना करता है। ग्रीक 'कोरेगियस' अथवा संस्कृत नाट्य का स्थापक (सूत्रधार) ही रंगमंच के आधुनिक वैज्ञानिक संदर्भ में ' निर्देषक' कहा गया है। प्रशिक्षित निर्देशकों ने आधुनिक हिन्दी नाट्य लेखन को स्फूर्ति प्रदान की ही रचना की। दृश्यमूलकता ही आधुनिक रंगमंच और प्रस्तुति की उपलब्धि है। वैज्ञानिक साधनों के प्रयोग की समर्थ और समुचित दृष्टि नाट्य रचना और रंगषिल्प में परिलक्षित है रंगशिल्प – संयोजन का कलात्मक कौशल ही प्रस्तुतिकरण की आधुनिकता को परिभाषित करता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. आधुनिक हिन्दी नाटक और भाषा की सृजनशीलता: डॉ. प्रेमलता, लोकभारती प्रकाशन, 15-ए, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद-1,प्रथम संस्करण सन् 1993
2. आधुनिक नाटक और रंगमंच:डॉ.लक्ष्मीनारायण लाल,साहित्य भवन प्राइवेट लिमिटेड,के.पी. कक्कड़ रोड, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण सन् 1973
3. आधुनिक नाटक का मसीहा: मोहन राकेश: गोविन्द चातक इन्द्रप्रस्थ प्रकाशन के -71 , कृष्णनगर,दिल्ली 110051 प्रथम संस्करण सन् 1975
4. नाटक प्रस्तुतिकरण स्वरूप और प्रक्रिया: डॉ. विश्व भावन देवलिया, सूर्य प्रकाशन, नई सड़क दिल्ली – 6 प्रथम संस्करण सन् 1986
5. प्रसाद का नाट्यसाहित्य: डॉ. भानुदेव शुक्ल,मीनाक्षी प्रकाशन,बेगम ब्रिज मेरठ अथवा 4, अंसारी रोड, दरियागंज,नयी दिल्ली
6. प्रसादयुगीन हिन्दी नाटक: डॉ. भगवती प्रसाद शुक्ल,म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी,भोपाल, प्रथम संस्करण सन् 1971
7. हिन्दी नाटक और रंगमंच ब्रेख्त का प्रभाव; डॉ. सुरेश वशिष्ट, प्रेम प्रकाशन मंदिर 3012, बल्लीमारान,दिल्ली 110006 प्रथम संस्करण सन् 1995

****

विरह की साकार प्रतिमा महादेवी वर्मा

डॉ. शाजिया खान *

प्रस्तावना – विरह प्रेम की पूर्णता है। प्रेम सच्चे अर्थो में विरह की कसौटी पर कसकर ही कुन्दन के समान चमकीला हो उठता है। विरह का मूलभाव में वर्णन प्राय: सभी कवियों ने किया है। कबीर ने तो विरह को सबसे अधिक ऊँचा स्थान दिया है; यथा–

'विरहा है सुलितान।'

वस्तुत: आत्म के परमात्मा से अलग होकर संसार में आने के साथ ही विरह की उत्पत्ति हो गयी।

यही विरह कबीर, जायसी, मीरा, घनानन्द आदि से लेकर गुप्तजी के 'साकेत' **और प्रसादजी के** 'आँस' **तक निरन्तर प्रवाहमान है।**

महादेवीजी के काव्य में भी विरह की इसी पीड़ा का शब्दांकन है। उपन्यास सम्राट प्रेमचन्द वेदना का महत्व स्वीकारते हैं– विरह में कितना उल्लास, कितनी शक्ति और कितना बल है। जो कभी एकान्त में बैठकर किसी की स्मृति में किसी के वियोग में सिसक–सिसक और बिलख–बिलखकर नहीं रोया, वह जीवन के एक ऐसे सुख से वंचित है जिस पर सैकड़ों मुस्कानें न्यौछावर हैं।

इसी प्रकार और भी कवियों ने काव्य की उत्पत्ति ही वेदना अथवा विरह से मानी है।

'सुमित्रानन्दन पंत' **भी काव्य की उत्पत्ति वेदना या आह से मानते है –**

वियोगी होगा पहला कवि
आह से उपजा होगा गान।
उमड़कर आँखों से चुपचाप
बही होगी कविता अनजान।'

आह से गान उत्पन्न होना व आँखों से आँसू रूपी कविता उत्पन्न होती है। ठीक इसी तरह जयशंकरजी ने भी अपने काव्य को केवल आँसू से उत्पन्न माना है। इन्होंने तो आँसूओं को इतना महत्व दिया कि अपनी एक काव्य कृति का नामकरण भी आँसू **ही किया।**

'जो घनीभूत पीड़ा थी,
मन में स्मृति–सी छाई
दुर्दिन में आँसू बनकर
वह आज बरसने आई।'

डॉ. एल.डी. जोशी ने महादेवी के काव्य की माधुर्यपूर्ण रहस्यानुभूति को लक्ष्य करके लिखा है –

'मेरा तो मानना है कि परमात्मतत्व की भक्ति भावना और तन्मयता में महादेवी मीरा से कम नहीं है।' इसी प्रकार कवि श्री सुमित्रानंदन पंत ने भी अपने एक कथन में महादेवीजी को 'भव साधना के युग की प्रेम साधिका मीरा' **कहा है।**

उनकी सर्जना में असीम के प्रति प्रेम, चिन्तन का गाम्भीर्य भक्ति और संवेदनशीलता का जो संगमित रूप उपलब्ध है, वह अन्यत्र हिन्दी कवियों में अप्राप्य है।

महादेवीजी के जीवन में विरह – महादेवीजी के काव्य में विरह कब व कैसे उत्पन्न हुआ यह उनके काव्य में अथवा गीतों में बार–बार कहा गया है।

उनकी गीत उनके विरह के सुदृढ़ रूप को प्रस्तुत करते हैं। उनके जीवन का विरह कोई एक या दो दिन का विरह नहीं अपितु चिरकाल से प्रेम के लिये तड़फता हुआ विरह है और अपने प्रिय की क्रिया–प्रतिक्रियाओं को यादकर करके प्रियतमा अपने प्रियतम को निरन्तर याद कर रही हैं।

महादेवजी को वेदना बड़ी प्रिय रही है और उनके काव्य में भी बिखरी पड़ी है। यहाँ तक कि वे पीड़ा में ही प्रियतम (परमेश्वर) को पाना चाहती है वे अपने जीवन को पीडा से भरा देखती हैं–

मै नीर भरी दुख की बदली।
विस्तृत नभ का कोना–कोना मेरा न कभी अपना होना।
परिचय इतना, इतिहास यही उमड़ीकल थी मिट आज चली।।

विरह प्रेम की पराकाष्ठा है। जिस प्रकार सोने को आग में तपाकर शुद्ध बनाया जाता है ठीक उसी प्रकार विरह की तपन से तपकर प्रेम अपने सात्विक रूप को प्राप्त करता है। महादेवीजी का विरह तपकर शुद्ध हो चुका है। उनके विरह में कल्पना की प्रचुरता है तो आध्यात्मिकता भी है, नारी सुलभ सात्विकता है तो स्वाभाविकता व सजीवता भी है इनकी विरहानुभूति व्यापक है। इनके विरह में प्रेम का आवेग, काव्य की हलचल, पीड़ा का आन्दोलन व व्यथित चित्त की पुनीत पीड़ा हैं। महादेवीजी के काव्य में करूणा का प्रार्चुय –

महादेवीजी का काव्य करूणा से भरपूर है। ये व्यक्तिगत पीड़ा को व्यापक बनाने की ओर बढ़ती चली गयी हैं और इस प्रयास में उनके काव्य में करूणा को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त होता चला गया है। उनके काव्य की करूणा हृदय को द्रवित करने वाली है –

'शून्य मन्दिर में बनूँगी
आज मैं प्रतिमा तुम्हारी।
अर्चना हो शूल भोले,
क्षत दग जल अर्ध्य होले
आज करूणा स्नात उजाला
दु:ख हो मेरा पुजारी।'

दु:खवाद महादेवीजी के काव्य की एक और विशेषता है। दु:खवादी विचारधारा उनको बौद्ध दर्शन से प्राप्त हुई है, परन्तु महादेवजी का दु:खवाद आध्यात्मिक अधिक है। उन्होंने दु:ख को आनन्द की तरह स्थायी माना है। उनके काव्य में दु:ख कभी साधन बनकर तो कभी साध्य बनकर आया है। उनकी कविता दु:ख से खाली नहीं है –

तुम मानस में बस जाना
छिप दु:ख के अवगुण्ठन से,

* अतिथि विद्वान (हिन्दी) 65, बनियावाड़ी दीक्षित फोटो स्टूडियो के पास, धार (म.प्र.) भारत

मैं तुम्हें ढूँढने के मिस
परिचित हो लूँ कण कण से

महादेवीजी का काव्य चित्र वेदना की अतलस्पर्शी गहराइयों में निमज्जित है। उनका प्रिय परब्रम्ह है। उनके प्रियतम का निवास किसी भौतिक लोक में नहीं वरन् पीड़ा की अतल गहराइयों में है। इस प्रेमानुभूति का मुख्य आधार उनके हृदय की वेदना है। इसीलिए वे अपने प्रियतम की खोज पीड़ा में करती है।

पर शेष नहीं होगी यह मेरे प्राणों की पीड़ा।
तुम को पीड़ा मे ढूँढा, तुममें ढूँढूँगी पीड़ा।

महादेवजी के गीत अपनी सहज सहनशीलता भावविद्ग्धता के कारण सजीव है। विरह की आग में अनजान कविता उनके हृदय से बह निकलती है।

जो तुम आ जाते एक बार।
कितनी करूणा कितने सन्देश, पथ में बिछ जाते बन पराग।
गाता प्राणों का तार-तार, अनुराग भरा उन्माद राग।
आँसू लेते वे पद पखार, जो तुम आजाते एक बार।

विरह वेदना की कसक और रहस्यवाद की एकान्तिक अनुभूति छायावादी काव्य की महानदेवी महादेवी वर्मा की महानता बताने के लिए डॉ. गोविन्दराम शर्मा लिखते हैं, 'छायावादी काव्य की संवृद्धि में उनका योगदान अत्यधिक महत्वपूर्ण है। छायावादी काव्य के जहाँ प्रसाद ने प्रकृति तत्व दिया, निराला ने उसमें मुक्तक छन्द की अवतारणा की ओर पन्त ने उसमें सुकोमल कला प्रदान की, वहाँ छायावाद के कलेवर में प्राण प्रतिष्ठा करने का गौरव महादेवी को ही प्राप्त है।' **इनके गीतों में सजलता को देखते हुए कई आलोचक इन्हें आधुनिक युग की मीरा कहते है। इस पीड़ा के अतिरिक्त हमें उनके काव्य में रहस्यवाद के दर्शन होते हैं। इनके रहस्यवाद में अद्धैतवाद की तरह जगत का निषेध नहीं है। इस दृष्टि से सर्वात्मवादी है। इनके अनुसार जीव और ईश्वर का सम्बन्ध अभिन्न है। वह लिखती हैं कि-**

मैं तुम से हूँ एक एक है, जैसे रिश्म प्रकाश।
मैं तुम से हूँ भिन्न-भिन्न ज्यों, घन मे तड़ित विलास।

महादेवी प्रत्येक स्थिति मे स्वयं को अभिन्न देखती हैं -

'बीन भी हूँ मैं तुम्हारी रागिनी भी हूँ।'

इनकी कविता में वंदना मुखरित हुई है। प्रेम के जीवन को वह दुख का जीवन मानती है। इसी दृष्टि से वे लौकिक एवं आलौकिक प्रेम में कोई अन्तर नही मानती। वेदना को ही वह प्यार करती हैं, इसी कारण वह स्वयं लिखती हैं, - सुख और दु:ख के धूपछाँही डोरी से बने जीवन में मुझे केवल दु:ख ही गिनते रहना क्यों इतना प्रिय है, यह बहुत से लोगों के आश्चर्य का कारण हैं। संसार जिसे दु:ख एवं अभाव के नाम से जानता है, वह मेरे पास नहीं है। जीवन में मुझे बहुत दुलार, बहुत आदर और बहुत कुछ मात्रा में सब कुछ मिला है, परन्तु उस पर पार्थिव दु:ख की छाया नहीं पड़ सकी। कदाचित् यही उसी की प्रतिक्रिया है कि वेदना मुझे इतनी मधुर लगने लगी है। इसके अतिरिक्त बचपन से ही भगवान् बुद्ध के प्रति एक भक्तिमय अनुराग होने के कारण उनकी संसार को दु:खात्मक समझने की फिलासफी से असमय ही मेरा परिचय हो गया था। **इस प्रकार महादेवी ने स्वयं अपने दु:ख प्रियता का कारण सुख की अधिकता माना है और इसके साथ ही बुद्ध की फिलासफी का प्रभाव स्वीकार किया। वह भगवान में पीड़ा को ढूंढ़ती है और पीड़ा में भगवान को उनके व्यथा से भरपूर गीत को वह पीड़ा में गाती जा रही हैं।**

पर न अन्तिम छन्द व्यथा का मैं अभी तक गा सकी हूँ।

वह उस असीम ईश्वर से दाम्पत्य भाव स्थापित करती हुई अपने मिटने के अधिकार को अपने पास ही रखना चाहती है और कहती है कि -

क्या अमरों का लोक मिलेगा
तेरी करूणा का उपहार
रहने दो है देव, अरें !
यह मेरे मिटने का अधिकार।

उनके काव्य में रहस्यवाद के साथ-साथ विश्व कल्याण की भावना है। उनका पीड़ासिक्त जीवन एक दीपक के समान है, जो जलकर भी दूसरे का मार्गदर्शन करता है,

दीप मेरे जल अकस्पित धुल अचंचल।
पथ न भूले एक पग भी।

इस प्रकार महादेवजी वर्मा के काव्य में विश्व-कल्याण की भावनाओं को लक्ष्य कर विजयेन्द्र स्नातक लिखते है दीपक कवि की व्यक्तित्व का प्रतीक है। अपने सुकुमार कोमल शरीर को, अपने जीवन के प्रत्येक अणु को, दीपक की भाँति जलाती हुई कवियत्री अपने प्रियतम का पथ आलोकित करना चाहती हैं अपने को मोम की भांति गलाकर आलोक फैलानेवाली दीपशिखा में विश्व कल्याण और संसार सेवा का जो उदत्त आदर्श दृष्टिगत होता है, वह काव्य का ही नहीं, संसार का आदर्श है। **इस प्रकार काव्य में विरह के गीत लिखकर कविता में प्राण फूँकने वाली कवयित्री आज भी अपने प्रियतम से नहीं मिल पाती। उनका आँसूओं से भरी आँखें प्यासी की प्यासी रह जाती हैं,**

रहने दो प्यासी आँखें, भरती आँसू के सागर

निष्कर्ष - 1982 के ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मनित महोदेवी वर्मा विश्व साहित्य की महिला साहित्यकारों में आदरणीय स्थान रखती हैं।

महादेवीजी विरह वेदना की कुशल चितेरी हैं। उनके सम्पूर्ण काव्य में वेदना का सागर हिलोंरे ले रहा हैं उनकी वेदना चिरस्थायी है तथा उनके अनुसार सुख से अधिक आनन्ददायी है। महादेवी की विरहानुभूति सागर के समान गहरी, आकाश के समान अनन्त तथा प्रकाश के समान देदीप्यमान है। उनकी इस अनुभूति को स्पष्ट करते हुए कवि पन्त ने लिखा है - 'उनके काव्य का सर्वप्रथम तत्व वेदना, वेदना का आनन्द, वेदना का सौन्दर्य, वेदना के लिए ही आत्म समर्पण है। वे तो वेदना के साम्राज्य की एकछत्र साम्राज्ञी है और कोई सुख उन्हें आत्मविस्मृत या आत्म-तन्मय होने को नही चाहिए।

'सुख तो क्षणजीवी है, वेदना ही चिरस्थायी है,
चिरस्थायी एवं चिरस्पृहणीय है।'

महादेवी के काव्य में विरह की धारा निरन्तर प्रवाहमान है। वह अविरल, शाश्वत और अनन्त है। उनका हृदय विरह से मुक्त होना नहीं चाहता है, विरह उनके जीवन का सार है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. हिन्दी साहित्य सम्पादक एवं परिवर्धक, डॉ. शिशिर एवं शालिनी।
2. डॉ. केशरीनंदन मिश्र, हिन्दी विभाग, शास. महाविद्यालय, खरगोन।
3. सिरेमल सेठिया व्याख्याता, ग्रेसिम उच्चतर माध्यमिक विद्यालय, बिरलाग्राम नागदा।
4. डॉ. आर.एन. गौड़ पी.ई.एस. पूर्व प्राचार्य, राजकीय इण्टर कॅलिज, मेरठ।
5. अनुभवी अध्यापक मण्डल, नीरज पब्लिकेशन्स।

****

विवेकानन्द एक अनुशीलन

डॉ. गुलाब सोलंकी * प्रो. वीणा बरड़े **

प्रस्तावना – 'अज्ञान विषमता और आकांक्षा ही वे तीन बुराइया हैं जो मानवता के दुखो की कारक है और इनमें से हर एक बुराई दूसरे की घनिष्ठ मित्र हैं।'

विवेकानंद देश के ऐसे आलोकपुंज हैं, जिनके आभामण्डल से 21 वीं सदी भी आलोकित हैं। उनका ऊर्जावान व्यक्तित्व प्रेरणा का स्त्रोत है। उनके विचार आज भी प्रासंगिक और प्रभावी हैं।

स्वामी जी का पूरा जीवन प्रेरक हैं। अल्पावधि में विवेकानंद ने देश, समाज और विश्व को आगे बढ़ाने की जो प्रेरणा दी हैं और कार्य किए उनकी कोई तुलना नहीं हैं स्वामी जी भविष्य के विश्व स्वरूप को पहिचानने वाले महत्वपूर्ण महापुरूषो में से हैं।

12 जनवरी 1863 को जन्मे वीरिश्वर जिन्हें माता विले कहकर पुकारती थी और पिता नरेन्द्रनाथ नाम से पुकारते थे। पिता विश्वनाथ कलकत्ता उच्च न्यायालय के प्रसिद्ध वकील थे, माता भुवनेश्वरी देवी धार्मिक महिला थी। नरेन्द्र का प्रारंभिक जीवन तैराकी, संगीत और दौड़ जैसी भौतिक कलाओं के अर्जन में बीता ज्ञान और सत्य के खोजी तो नरेन्द्र बचपन से ही थे। कुशाग्र बुद्धि व नटखट नरेन्द्र का सपना एक ऐसे राष्ट्र का निर्माण था, जिसमें जाति, धर्म के आधार पर भेदभाव न हो। 25 वर्ष की आयु में नरेन्द्र ने गेरूवे वस्त्र धारण कर संपूर्ण भारत की पैदल यात्रा की। जब भारत भ्रमण पर थे, तब खेतड़ी के महाराजा ने उन्हे विवेकानंद नाम दिया। वर्ष 1893 जब अमेरिका में विश्व धर्म सम्मेलन का आयोजन हुआ तो खेतड़ी के महाराज ने विवेकानंद को भारत के प्रतिनिधि के तौर पर उन्हें भेजा। 11 सितम्बर 1893 को सभा के स्वागत भाषण में स्वामी जी ने श्रोताओं को संबोधित करते हुए कहा– अमेरिका के भाईयो और बहनो, वैसे ही तालियो की गड़गड़ाहट से वहां का वातावरण गुंजने लगा, लोग आश्चर्यचकित थे। 17 दिनो में उनके व्याख्यान सुनने वालो की संख्या निरंतर वृद्धि होती गयी।

शिकांगो यात्रा के दौरान प्राध्यापक जॉन हेनरी राइट ने प्रो.बरोज को लिखा था–विवेकानंद ने अमेरिका स्थित सभी विद्धान प्राध्यापको से अधिक प्रकांण्ड पण्डित हैं।

रेवरेड़ बरोज तथा श्रीमती एस.के लॉजेड ने लिखा – बहनो और भाईयो के संबोधन से ही सात हजार श्रोता मंत्रमुग्ध होकर उठ खड़े हुए तथा कुछ मिनटो तक तालिया बजाते रहे हैं।

पश्चिम जगत के लोग भारतीयों को हीन दृष्टि से देखते थे और उनका मानना था कि भारत हर मामले में पिछड़ा हैं। स्वामी जी भारत के पहले व्यक्ति थे जिन्होंने पश्चिम जगत के लोगो का भ्रम दूर कर भारतीय ज्ञान एवं विद्धता का डंका सारी दुनिया में बजाया। स्वामी जी ने रामकृष्ण मिशन के माध्यम से सदा गरीबों की भलाई एवं सेवा में जुटे रहे। स्वामी विवेकानंद भारतीय संस्कृति, भारतीय आदर्शो एवं मानवीय मूल्यों के आधार स्तंभ थे।

विवेकानंद ने युवाओं को अपनी ऊर्जा को रचनात्मक कार्यो में लगाने के लिए कहां। उन्हें युवाओं का सच्चा मार्गदर्षक माना गया हैं। स्वामी जी ने देश की दो महान बुराईयो की ओर संकेत किया –

1. महिलाओं पर अत्याचार।
2. जतिवादी चक्की जिसमें गरीबो का शोषण होता हैं।

स्वामी विवेकानंद भारतीय संस्कृति, भारतीय आदर्शो व मानवीय मूल्यों के आधार स्तम्भ थे।

महाकवि दिनकर ने कहा– विवेकानंद वह सेतु हैं जिस पर प्राचीन और नवीन भारत परस्पर आलिंगन करते हैं। विवेकानंद वह समुद्र हैं, जिसमें धर्म और राजनीति, राष्ट्रीयता और अन्तर्राष्ट्रीयता तथा उपनिषद् और विज्ञान सबके सब समाहित होते हैं।

स्वामी जी ने कहा – 'जो सत्य हैं, उसे साहसपूर्वक, निर्भीक होकर लोगों से कहो, इससे किसी को कष्ट होता हैं या नहीं इस ओर ध्यान मत दो, दुर्बल को कभी प्रश्रय मत दो।'

स्वामी विवेकानंद ने एक बार अपने गुरू के सामने दीर्घकाल तक समाधि अवस्था में रहने की इच्छा जाहिर तो उनके गुरू परमहंस ने उन्हें एक लक्ष्य की ओर प्रेरित करते हुए कहा कि 'मैंने सोचा था कि तुम जीवन के एक प्रकाश पुंज बनोगे और तुम हो कि एक साधारण मनुष्य की तरह व्यक्तिगत आनंद में ही डूब जाना चाहते हो, तुम्हे संसार में महान कार्य करने हैं तुम्हें मानवता में आध्यात्मिक चेतना उत्पन्न करनी हैं और दीन–हीन मानवों के दुखो का निवारण करना हैं।'

जब 1886 में परमहंस ने अपना शरीर त्यागा, उनके 12 शिष्यों ने संसार छोड़कर साधना का पथ अपनाया लेकिन विवेकानंद ने दरिद्रनारायण की सेवा के लिए एक कोने से दूसरे कोने तक सारे भारत का भ्रमण किया।

विवेकानंद ने देखा जनता भयानक गरीबी से घिरी हुई हैं तब उनके मुख से परमहंस के शब्द अनायास ही निकल पड़े–'भूखे पेट से धर्म की चर्चा नहीं हो सकती।'

अपने रचनात्मक स्वरूप को अंजाम देने के लिए 01 मई 1897 को रामकृष्ण मिशन एसोसिएशन की स्थापना की।

स्वामी जी नैतिक पवित्रता और त्यागमय जीवन को अत्यधिक महत्व देते थे। उनकी मान्यता थी कि ये दो सद्गुण ही युवको को पीड़ित मानवता के उत्थान और जागरण के लिए प्रेरित कर सकते हैं। उन्होने कहां था 'कोई भी महान कार्य बलिदान के बिना संभव नहीं हो सकता बलिदान की एक ऐसी श्रृंखला बना दो कि जिसके ऊपर से असंख्य लोग जीवन समुद्र को पार कर सके।

04 जुलाई 1902 को मात्र 39 वर्ष की अवस्था में उनका देहान्त हो गया।

* प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय महाविद्यालय, धामनोद – धार (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय महाविद्यालय, धामनोद – धार (म.प्र.) भारत

जब संयुक्त राष्ट्र संघ ने वर्ष 1985 को अन्तर्राष्ट्रीय युवा वर्ष के रूप में मनाने का निर्णय लिया, तब उसी वर्ष से भारत सरकार ने स्वामी जी के जन्मदिन को 'राष्ट्रीय युवा दिवस' के रूप में मनाने की घोषणा की।

स्वामी विवेकानंद ने अपने जीवन के उत्तरार्द्ध में कहा था कि जो कुछ वे कर चुके हैं वह अगले पन्द्रह सौ वर्षो के लिए पर्याप्त होगा। विवेकानंद की प्रतिभा बहुमुखी थी, उनका व्यक्तित्व अनेक क्षमताओं से युक्त था।

दत्तापंत ठेगड़ी का कथन हैं कि उनमें गौतम बुद्ध की जीवदया, ईसा की करूणा, मुहम्मद की संगठन क्षमता, नेपोलियन का साहस और अलेक्जेण्डर की विश्वविजय की चाहना का संगम था, वे हिन्दू धर्म की समग्रता के प्रतिनिधि थे।

स्वामी जी का निजी जीवन संघर्षमय था पारिवारिक समस्याओं को लेकर वे आजीवन परेशान रहे। परिवार के संपत्ति संबंधी झगड़े उनकी मृत्यु के कुछ दिन पूर्व ही सुलझे।

विवेकानंद युग पुरूष थे, उन्होंने भारत एवं भारत के बाहर भारतीय धर्म, संस्कृति, तत्वज्ञान और भारतीय परम्पराओं का जयघोष किया।

स्वामी जी ने निम्न वर्ग के लोगो को ऊपर उठाने, दलित वर्ग का विकास एवं सम्मान, स्त्री शिक्षा पर जोर एवं समाज की प्रगति, मातृभाषा एवं शिक्षा पर विशेष जोर दिया था, उसी तारतम्य में आज विकास हो रहा हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. दैनिक समाचार पत्र 11 जनवरी।
2. रचना पत्रिका हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल।
3. स्वामी विवेकानंद साहित्य, संचयम 2014, नागपुर।
4. पोतदार, बसंत, योद्धा सन्यासी विवेकानंद, नई दिल्ली, 2012
5. कुमार एम, स्वामी विवेकानंद, नई दिल्ली, 2011

****

इक्कीसवीं शताब्दी और हिन्दी भाषा

डॉ. भावना यादव *

प्रस्तावना – भाषा अभिव्यक्ति का माध्यम होती है जो देशकाल, परिस्थितियों और आवश्यकताओं से उपजती और पनपती है। हिन्दी न केवल हमारी मातृ भाषा है अपितु समयानुसार स्वतन्त्रता पूर्व और पश्चात् हमारे विकास का सशक्त माध्यम भी बनी है। इस यात्रा के दौरान हिन्दी ने लोगों के अनुसार अपना रंगरूप और स्वरूप बदला किन्तु आत्मा वही भारतीय रही। फलस्वरूप हिन्दी पंजाब में पंजाबी, मुम्बई में मुम्बईया, बुन्देलखण्ड में बुन्देली स्वरूप के साथ जनसामान्य के बीच बनी रही। हिन्दी समाज में बह रही सतत् धारा है जो उसमें मिलने वाली सभी भाषाओं को लेकर अपना स्वयं का मार्ग इस प्रकार बनाती चल रही है कि स्वयं का पालन–पोषण जीवंत तरीके से कर खुद को सशक्त और सक्षम बनाये हुये है।

'सन् 1820 के बाद 1900 ई. तक का समय हिन्दी के महत्वपूर्ण संघर्षों का रहा है जिसमें 19वीं सदी के अंतिम दशकों में हिन्दी के आंदोलनों को मुखरित करने में अनेक प्रतिभावान लोगों की भूमिका महत्वपूर्ण रही। हिन्दी की लिपि और उसके शब्दों तथा अर्थों का उच्चारण एवं बोध इतना वैज्ञानिक अर्थात् सहज है कि हिन्दी की लोकप्रियता अपने आप बढ़ी।'(1) परन्तु आजादी के बाद के दशकों में हिन्दी भाषा क्रमश: कमजोर होती गई। परिणामस्वरूप शासन प्रशासन, न्यायालय, महानगरों में हिन्दी के प्रति विभेद रखने वाला, हिन्दी से अस्पर्श्यता रखने वाला ऐसा वर्ग पैदा हो गया है जो आज भारत वर्ष में इंडिया का प्रतिनिधि बन कर उभरा है। जिसने भारतीय संस्कृति और संस्कारों से गहरे से जुड़ी हिन्दी भाषा के स्थान पर पष्चिमी उपनिवैशिक आंग्ल भाषा को ज्ञान विज्ञान विकास एवं सभ्यता के एकांगी मानव के रूप में आत्मसात कर लिया है। राष्ट्रीय राजनैतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक दार्शनिक साहित्यक परिप्रेक्ष्य में शिष्टता को छूने वाले सभी प्रमुख व्यक्तित्व राष्ट्रीय स्वाभीमान के स्थान पर अन्तर्राष्ट्रीय सरोकारों से जुड़ने की हड़बड़ी भरे प्रयासो के चलते अंग्रेजी के आगे नतमस्तक होकर उसकी अधीनता को मानसिक रूप से स्वीकारने लगे। उनका अनुसरण करने वाला उच्च मध्यम वर्ग इसी दिशा में तेजी से अग्रसर है आज भी देश के सुदूर पूरब पश्चिम उत्तर–दक्षिण में त्रियाम दर्जे के कान्वेन्ट स्कूलों के जरिये अंग्रेजी और अंग्रेजीयत से भरी हुई गाजर घास को बलपूर्वक पैदा करने का प्रयास किया जा रहा है।

ज्ञान विज्ञान राष्ट्रीय अन्तर्राष्ट्रीय सेमीनारो में हिन्दी की भागीदारी तो दूर की बात है गेट पर खड़े दरबान के रूप में भी हिन्दी संघर्ष करते दिखती है। हिन्दी वस्तुत: सभी जगह है पर डरी सहमी अपने भविष्य के प्रति आशंकित है कई बार राष्ट्रभाषा हिन्दी अपने अस्तित्व की रक्षा के लिये हिन्दी दिवस और पखवाड़ों के द्वारा आयोजित कार्यक्रमों में अपने अस्तित्व की रक्षा के प्रयासों को खोजती नजर आती है। वहीं वैश्विक स्तर पर 'विश्व में महाशक्ति के रूप में उभरते भारत की राजभाषा हिन्दी अभी तक संयुक्त राष्ट्र की अधिकारिक भाषा नहीं बन पाई है, जबकि वह संख्या बल के अनुसार विश्व की तीसरी भाषा है। दुखद यह है कि अभी तक वह हिन्दी प्रदेशों की उच्च शिक्षा तथा अनुसंधान संस्थानों की भाषा नहीं है।'(2)

हिन्दी लगभग सभी मोर्चों पर संघर्षरत है परन्तु इस सब से इतर अपने समावेशी एवं बदलते हुये परिवेश से समांजस्य बैठाने की अपनी अद्भूत आन्तरिक शक्ति के चलते वह वैश्विक परिप्रेक्ष्य में अपनी प्रभावी दस्तक भी दे रही है। विश्व के लगभग सभी देशों में भारत से आर्थिक एवं राजनैतिक सम्बन्धों को बनाने के महत्व को समझते हुये हिन्दी से सभी ने न केवल हाथ मिलाया है वरन् उसे आगे बढ़ कर गले भी लगाया है। भारत की आवश्यक वैश्विक अपरिहार्यता के चलते पांचो महाद्वीप एवं विश्व के प्रमुख देशों के विश्वविद्यालयों में हिन्दी को जानने सीखने समझने हेतु अकादमी विभागों की स्थापना का दौर सा चल पड़ा है। 'पूरे देश की 41.6% आबादी हिन्दी ही बोलती है अत: हिन्दी को नजर अंदाज करना अब संभव नहीं है। शायद यही कारण है कि पिछले दिनों अमेरिका के पूर्व राष्ट्रपति जार्ज बुश ने अपने नागरिकों को हिन्दी भाषा सीखने की सलाह दी है।'(3)

हिन्दी को राष्ट्रीय स्तर पर संरक्षण की दरकार है एवं ज्ञान विज्ञान के सभी आयामों में हिन्दी को समकालीन वैश्विक परिवेश के अनुरूप विकसित करने की आवश्यकता है। देश एवं समाज में हिन्दी के प्रति पनपे भय, उपेक्षा, आशंका के स्थान पर हिन्दी स्वाभिमान को राष्ट्रीय स्वाभिमान से जोड़ा जायें, और राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकारने के व्यवहारिक प्रयास किये जायें।

इक्कीसवीं सदी के प्रारम्भ में संचार क्रांति के तूफानी प्रवाह में हिन्दी के अस्तित्व पर चिन्ता जतायी जाने लगी थी। परन्तु हिन्दी ने अपना विकास इसी संचार क्रांति के कम्प्यूटर और इन्टरनेट को अपना रथ बनाकर कर किया। 'भारतीय संविधान में हिन्दी भाषा को राष्ट्रभाषा घोषित किया गया है। साहित्यिक दृष्टि से हिन्दी भाषा को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। वह एक उपभाषा, मातृभाषा, द्वितीय भाषा, राजभाषा, राष्ट्रभाषा, सम्पर्क भाषा के रूप में विकसित होकर सूचना तंत्र की भाषा भी बन गयी है।'(4) परिणाम स्वरूप हिन्दी के प्रति पिछले दशक में देश–विदेश में लोगों की मानसिकता बदली है। देश उत्तर अर्थात् हिन्दी भाषी और दक्षिण अर्थात् गैर हिन्दी भाषियों के रूप में जाना जाता था। परन्तु ग्लोबल होती हिन्दी ने प्राय: इस भेद को समाप्त कर दिया है। 'हिन्दी विरोधी माने जाने वाले दक्षिण भारत में भी अब हिन्दी को लेकर माहौल काफी बदल रहा है। लोग अब हिन्दी सीखने में रूचि दिखा रहे हैं, भले ही इसका कारण रोजगार से जुड़ा हो। आंकड़ों के मुताबिक 2010.2011 के दौरान दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा से हिन्दी भाषा का कोर्स करने और हिन्दी माध्यम के जरिए डिग्री लेने वाले कुल विद्यार्थियों की संख्या 18 लाख थी, जिनमें से 10 लाख छात्र तमिलनाडु के थे। इसी तरह केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय के हिन्दी पत्राचार माध्यम से पढ़ने

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्ठता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत

वाले 2010.11 में कुल 8959 छात्र थे जिनमें से 6 हजार से ज्यादा तमिलनाडु के थे।'(5)

इसी प्रकार आज विश्व में लगभग हर देश में हिन्दी के जानकार और बोलने वाले रह रहे हैं। 21वीं सदी में विद्धानों का मानना था कि विश्व में चीनी बोलने वालों की संख्या सर्वाधिक है परन्तु 21वीं सदी में विश्व में अंग्रेजी के बाद सर्वाधिक व्यवहारिक भाषा हिन्दी है। 'फिलहाल विश्व के लगभग 150 विश्वविद्यालयों और कई सैकड़ों छोटे-बड़े केन्द्रों में विश्वविद्यालय स्तर से लेकर शोध स्तर तक हिन्दी के अध्ययन अध्यापन की व्यवस्था है। विदेशों से 25 से ज्यादा पत्र-पत्रिकाएं लगभग नियमित रूप से हिन्दी में प्रकाषित हो रही हैं। 10 साल पहले तक अमेरिका में केवल 25 विश्वविद्यालयों में हिन्दी पढ़ाई जाती थी, लेकिन अब 100 से भी अधिक विश्वविद्यालयों में हिन्दी पढ़ाई जा रही है।'(6) चीन, अमेरिका, जापान, फ्रांस और बिट्रेन जैसे देशों में हिन्दी सीखने वालों का प्रतिशत क्रमश: बढ़ता जा रहा है। धीरे-धीरे हिन्दी वैश्विक स्वीकृति की तरफ अग्रसर है। हिन्दी के देश के अन्दर और बाहर विस्तार के अनेकों कारण है यथा -

- हिन्दी समृद्ध भाषा है।
- हिन्दी में शब्दों का अतुल भंडार है।
- हिन्दी व्याकरण सम्मत है।
- भारत की जनसंख्या का बढ़ा भाग हिन्दी बोलता और समझता है।
- हिन्दी सरल और उदार है जिसने अंग्रेजी, फारसी, अरबी, पुर्तगाली, फ्रांसीसी, चीनी, तुर्की तथा जापानी भाषा के अनेक शब्दों को अपनाया है।
- हिन्दी 'टेक्नोफ्रेंडली' भाषा है।
- युवा साहित्यकार और हिन्दी का अनुपात बढ़ रहा है क्योंकि युवाओं की शिक्षा और रोजगार की भाषा तो अंग्रेजी है परन्तु अभिव्यक्ति की भाषा हिन्दी है।
- **रोजगार** - आज हिन्दी सिनेमा, व्यापार, मनोरंजन, टी.व्ही. चैनल्स, विज्ञापन, कथा लेखक, गीतकार, अखबार, समाचार चैनल, अनुवादक आदि ऐसे क्षेत्र हैं जो हिन्दी से फल-फूल रहे हैं और इन क्षेत्रों में निरन्तर हिन्दी जानने वालों के लिये रोजगारों का सृजन हो रहा है।
- **ब्लॉगिंग** - ग्लोबल वर्ल्ड में हिन्दी में ब्लॉगिंग हिन्दी की समृद्धि का नया आयाम है।
- **भारतीय संस्कृति की विभिन्न परम्पराओं यथा** - ध्यान, योग, आयुर्वेद, संगीत, नृत्य ने विदेशियों को आकर्षित किया है। जिससे उन्हें हिन्दी को जानना आवश्यक हो गया।
- **संचार क्रांति** - ने वास्तविक अर्थों में हिन्दी को 'ग्लोबल' कर दिया। आज कम्प्यूटर, नेट, मोबाइल में उपलब्ध विभिन्न टूल्स और एप्लीकेशंस के माध्यम से अंग्रेजी और हिन्दी दोनों का समान्तर प्रयोग किया जा सकता है। जिससे जहाँ देश के गांवों में 'ई चौपालें' लग रही हैं तो सात समन्दर पार भी कम्प्यूटरों पर हिन्दी किसी न किसी रूप में कब्जा बनाये हुये है।
- **इन्टरनेट** - ने हिन्दी को नये आयाम दिये हैं। यह हिन्दी भाषियों को जोड़ने का सेतु बना है। आज एक लाख से भी ज्यादा ब्लॉग हिन्दी में उपलब्ध हैं। 15 से ज्यादा खोज इंजन हिन्दी में हैं अनेकों पत्र-पत्रिकाओं के संस्करण नेट पर उपलब्ध हैं। इतना ही नहीं आज सात समंदर पार श्री रामचरितमानस को इंटरनेट पर पढ़ा जा रहा है।
- **व्यापार -** कारपोरेट जगत को ज्ञात है कि यदि गांव-गांव तक पहुंचना है तो हिन्दी को अपनाना होगा। परिणामस्वरूप अपने ब्रांडों और उत्पादों को अखिल भारतीय बनाने के लिये मल्टीनेशनल कंपनियां हिन्दी प्रयोग पर बल दे रही हैं।

'सी डैक, नोएडा ने अंग्रेजी हिन्दी सूचना प्रौद्योगिकी शब्दावली, भारतीय भाषा कोश, शाब्दिक (प्राधिकृत शब्दावली) ऑनलाइन हिन्दी विश्व कोश (नागरी प्रचारिणी सभा, काशी द्वारा प्रकाशित) अंग्रेजी-हिन्दी कोश आदि ई कोशों का निर्माण किया है..... इंटरनेट और दुनिया के बीच सिमटती भौगोलिक दूरियों के चलते अंग्रेजी के अलावा संसार की अन्य भाषाएं भी विश्व भर में अपनी जगह बना रही है। हर साल हिन्दी के 5.7 शब्दों का ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी में शामिल होना इसका बड़ा उदाहरण है।'(7)

इस प्रकार इक्कीसवीं सदी में ग्लोबल होती हिन्दी में जीवन के हर पहलू से जुड़ी आवश्यकताओं, समस्याओं का समाधान 'हिन्दी में' उपलब्ध है। फलस्वरूप विश्व फलक पर हिन्दी का विस्तार हो रहा है जिससे हिन्दी ग्लोबल भाषा होती जा रही है। यह सच है कि संचार क्रांति के आगमन पर विद्धानों को हिन्दी को लेकर चिंता हुई थी परन्तु अब हिन्दी के क्षेत्र और उपयोग के बढ़ते प्रसार से हिन्दी सशक्त अंतर्राष्ट्रीय भाषा के रूप में उभर रही है जिसकी ग्राह्यता अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर बढ़ी है। जिससे स्वत: ही वे लोग भी हिन्दी की ओर आकर्षित हो रहे हैं जो इसे कमजोर समझ दूर होते जा रहे थे। 'आज जरूरत है कि हिन्दी के व्यापक उपभोक्ता समाज की संख्या का ध्यान रखते हुए हिन्दी के डाटाबेस विकसित किये जाये, हिन्दी में बेवसाइट पर विभिन्न विषयों के शब्दकोष और विश्वकोष उपलब्ध हों, वैज्ञानिक चैनलों के साथ-साथ आध्यात्मिक, सामाजिक और सांस्कृतिक चैनल भी हिन्दी में और भारतीयता को उभारने के दृष्टिकोण से स्थापित किये जाये। इस सारी तैयारी के साथ हिन्दी वैश्वीकरण और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया की संयुक्त चुनौती का सामना कर सकती है।'(8) वर्तमान में आवश्यकता है कि अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में भारतीय प्रतिनिधि, राजनयिक, नेता और नौकरशाह हिन्दी का इस्तेमाल सार्वजनिक और व्यवहारिक रूप से करें। ताकि ग्लोबल होती हिन्दी को सुदृढ़ता मिले और समाज निर्माण की प्रक्रिया में हिन्दी की अविरल धारा से देश विकास पथ पर अग्रसर हो। चूंकि शासन जीवन के हर क्षेत्र को प्रभावित करता है अत: आवश्यकता है कि शासन हिन्दी के प्रति दोहरेपन को समाप्त कर उसके संरक्षण व विकास के लिये प्रभावी पहल करें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. नवीन शोध संसार अक्टूबर-दिसम्बर 2013 पृ. 244
2. कृतिका अंतर्राष्ट्रीय अर्द्धवार्षिक शोध पत्रिका अंक 1.2 जनवरी-दिसम्बर 2013 पृ. 252.253
3. मध्य भारती अंक 61ए 2009 पृ. 66
4. मध्य भारती अंक 61ए 2009 पृ. 62
5. नवदुनियां 11 सितम्बर 2011
6. नवदुनियां 9 सितम्बर 2012
7. स्मरणिका राष्ट्रीय संगोष्ठी-केशरबाई लाहोरी कॉलेज अमरावती 12.13 अक्टूबर 2008 पृ. 143.44
8. रिसर्च लिंक - अंतर्राष्ट्रीय शोध-पत्रिका - 117 Vol-XII दिसम्बर 2013 पृ. 80

****

Women Empowerment : The Living Legends

V. M. Audichya *

Introduction - India is the land of many religious, philosophies, time tested traditions and great personalities**.** Its story of Glorious past and remarkably successful present cannot be complete without mentioning the tremendous role played by many a great woman from time to time in the development of our country India. They have proved their worth in different fields. They are not only equal to men and now in many fields they have left their male counterparts far behind to write new stories of success in Golden words. In modern age many women in our country have established their special identity by breaking traditions. These women belong to very ordinary class. They worked very hard to attain their goals. They did not allow their age to come in their way. There are some most successful women of India who have made their mark in various fields. They have made their country proud by their extraordinary feats and have broken the total dominance of their male partners. Here are some of these women who have created a new history in our country by their rare achievements.

1) Chetna Gala Sinha - Her's is the extraordinary story of women empowerment in rural India. Women run bank and B-school successfully in the Satara district of Maharashtra. Chetna Gala Sinha made this possible with the help of 500 women. In 1997 she, in the partnership of little educated women laid foundation of Maan Deshi Women Cooperative bank. In the beginning she collected six lac rupees from these women. This is the first rural bank to obtain cooperative license from Reserve Bank of India. This is the largest microfinance bank of Maharashtra which has more than one lac 27 thousand clients. She also runs a business school which teaches women how to become successful entrepreneur. This school is solely meant for rural women. Maan Deshi bank provides services like private and group loans, savings, insurance and pension plans. The bank offers loans to women in drought affected areas of Maharashtra and help them to be self reliant economically. The bank has assisted more than 62 thousand women so far which enabled them to run their own business and earn money. Today the bank has worth 40 crore rupees business. Chetna has been awarded with the titles of 'World Fellow' by Yell University and 'Bridge Builder 'by Howard University for her remarkable achievements.

2) Ela Bhatt - 80 years old Ela Bhatt was main source of inspiration for foundation of 'SEVA' organization of the women who lifted weight. This organization has been working for more than forty years. Agriculture Samiti 'Van Laxmi' was formed in Mehsana district of Gujarat under her able leadership. This Samiti saves water in rainy season for irrigation during the summer. This beautiful arrangement working wonders indeed. Found in e Samiti has done extraordinary work. More than 35 lac plants have been planted through the inspiration of Ela Bhatt, the amazing social worker to restore ecological balance.

3) Kanika Diwan - There are many works in the world which have big planning behind them. Such a work, designing first floor of Terminus- 3 of Indira Gandhi International airport was a big challenge. In 2010 this responsibility was successfully shouldered by Kanika Diwan. A Terminus- 3 floor was show piece of the whole building as far as matter of design and standard is concerned. Her company Bram co won the contract and flooring of 1.30 lac square meter area of 3.3 was decorated with the help of the team of 800 engineers and employees.

4) Dr S.A. Padmawati - 96 years of age Dr. Padmawati is the oldest cardiologist of the country. She is recipient of Padam Bhushan and Padamvibhushan; prestigious civilian awards given by the Government of India. Born in 1917 in Myanmar, she started first heart foundation of the country. She received education in cardiology in the forties in UK and USA. She has been looking after heart patients for sixty years.

5) Dr Seeta Bhateja - Dr Seeta Bhateja is a very well known name in Gynochology. Starting her career from Mumbai Dr Seeta has successfully helped in delivery of more than one lac children running her own specialty hospital in Bangalore, Dr Seeta had started child Foundation for the poor and helpless children 30 years ago. Kannad medium high school at Padamnabh Nagar is also being run by her. She examines at least 50 patients per day regularly.

6) Jennesy Thomas - Associated with defence research, this woman scientist has played the most important role in successful launch of India's longest 5000 km long range

* **Asst. Prof. (English) Govt. College, Dhana, Distt. Sagar (M.P.) INDIA**

missile 'Agni'. With this achievement India has become one of the most powerful countries of the world.

7) Priya Nayak:- She started ' Sanhita Social Ventures' in 2009 to help N.G.O.'s, corporations , Donor agencies and people devoted to human welfare. Her organization provides education to the children of weaker sections, working in poverty action lab of Massachusetts institute of technology, Cambridge are research scholar. She developed interest in school entrepreneurship. Highly qualified Priya has three masters' degrees from. Yell, Michigan and Mumbai and versities in Economic, Public Policy and Commerce respectively.

8) Sheetal Mehta Walsh - Sheetal is founder of Shan chi Life. This is a microfinance platform which provides economic aid to the poor living in slums and villages of Gujarat at low interest rate so they may start their business. Her organization provides, financial, educational mentoring, echo-sanitation facilities to those who receive assistance. A Yoga teacher Sheetal is also making online market place for these people to enable them sell their items.

9) Arunima Sinha - 26 years old, Arunima was travelling from Lucknow to Mumbai on 11th April, 2011, when some ruffians tried to snatch her bag, when she did not leave her bag she was thrown out of the train by those ruffians. She lost her one leg in this accident. Despite this fatal accident, she did not lose her heart, on 21st May 2013 she successfully climbed Mount Everest to create a new history and make India feel proud of her.

10) Chanda Kochar - Managing director and CEO of prestigious ICICI Bank, Chanda Kochar is known as a 'Woman of Power'. It was she who made ICICI Bank as one of the best private banks in thirty years. She has received India Government's civilian honour' Padam Bhushan.

11) Chitra Ramkrishanan - Established in 1992, world's third largest stock exchange NSE, which controls most of nation's business, has its first woman CEO and managing director in form of Chitra Ramkrishanan.

12) Usha Anant Subramaniyam - Last year Indian Government had made declaration in its budget to open a bank for women. Usha Subramaniyam is its first chairman and managing director.

13) Arundhati Bhattacharya - She is the first chairman of the India's biggest bank The State Bank of India, established in 1955. Bank's total assets amounts to more than 21 lac 36 thousand crore rupees.

14) Jyotsna Dhawan - Both men and women are working in the field of life sciences and stem cell but the daughter of Famous aero space engineer Dr Satish Dhawan, Jyotsna has made remarkable contribution on mussels stem cell.

15) Usha Sangwan - The oldest institute of insurance LIC had never seen any woman on the post of managing director. Now we have Usha Sangwan as the first MD of LIC. Working in LIC housing Finance, she had saved it from being deraised.

16) Nishi Vasudev - No woman dominated Government declared Navratna Companies till now. Nishi Vasudev became chief of HPCL. Oil industry has been known to be ruled by men but she has broken this tradition.

17) Abanti Shankarnarayan - Marketing of Liquor and beverages has undoubtedly been the dealt by men throughout the country. In India's corporate history it is for the first time Abanti Shankarnarayan has been appointed marketing director of 'DieJio' in India.

18) Shikha Sharma - She started her career with ICICI bank in 1980. Shikha Sharma became managing director and CEO of Axis bank in 2009 the third biggest private bank in India.

19) Suchita Kadethakar - She crossed Asia's biggest Gobi desert in 51 days along with International team. She is the first Indian woman to do so in July under 45 degree temperature.

20) Gloria Beni - She prepared network of youth volunteers in 2006 known as make a difference this group has improved lives of more than one thousand children through education. Her organization has spread in 19 cities of our country. She has also received many awards.

Besides above mentioned women who have achieved remarkable success in their fields there are many others like Sushma Swaraj, Sheela Dixit, Saina Nehwal, Saniya Mirza, Deepika Kumari, Meera Nayar, Vidya Balan, Kangna Ranaut, Medha Pathkar, etc. who are very successful and still active in their respective fields. These living legends present bright picture of the women in 21st century. They are real role modals and perennial source of inspiration for the young generation of our country. We can rest assured that future of women in India will always remain safe.

These are a few examples of some very successful women of our country. There are many more others who have been working silently for many years behind the scene, without coming into limelight for the betterment of the nation and its people. Their positive contribution is changing the face of the country cannot be neglected. In fact these women are true embodiment of women empowerment.

References :-

1. Dainik Bhaskar-Newspaper.
2. Pratiyogitadarpan – Magazine.
3. Women Empowerment and Social Change, Kumar, A. -2007.
4. www.google.com

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

संस्कृत रूपकों में नवीन प्रवृत्तियों का उदय और प्रयोग

डॉ. लज्जा शुक्ला *

प्रस्तावना – प्राचीन संस्कृत साहित्य रामायण, महाभारत पुराण इतिहास पर आधारित रहा है। इन कथाओं के श्रेष्ठ चरित का चित्रण करना ही कवि का ध्येय रहा है। ऐसे चरित्रो की श्रेष्ठता को और अधिक प्रकाशित करने के उद्देश्य से ही इन कथाओं के खलनायक चरित्रो का चित्रण किया जाता रहा है न कि खलता दुष्ट प्रवृत्तियों का निराकरण करने के उद्देश्य से। राम का चरित्र श्रेष्ठ सिद्ध हो इस उद्देश्य से रावण का चरित्र आवश्यक था। श्रेष्ठता का आंकलन दृष्टता के सापेक्ष से ही संभव है।

रूपक निरूपण– नाट्य शास्त्र के रचयिता भरत मुनि ने नाट्य शास्त्र के प्रथम अध्याय में ब्रह्मा और महेश्वर शिव की स्तुति करते हुए इन्हें नाट्य तथा नृत्य का जनक या प्रथम उपदेष्टा या प्रतिष्ठापक माना है। ब्रह्मा ने ही वेदों तथा इसकी विविध शाखाओं से नाट्य विधायक तत्वों को ग्रहण किया था। उन्होंने चारो वेदों की गरिमा से मण्डित ऐसा नाट्यवेद या पंचमवेद निर्माण किया जो सभी वर्णों के द्वारा समान रूप से अध्येय था। यह नाट्यवेद ही नाट्य शास्त्र है। नाट्यशास्त्र की व्याख्या अभिनव गुप्त ने 'अभिनव भारती' नाम से की है जिसमें 'नाट्यवेद' और 'नाट्य शास्त्र' को समान अर्थी बतलाया है। भरतमुनि नाट्य के उद्भव की कथा कहते हुए कहा है कि मनु के कलयुग में भले बुरे कार्य समाज में फैलने लगे। लोगों का जीवन सुख:दुखाय हो गया। तब इन्द्रादि देवो ने ब्रह्माजी के पास जाकर कहा हमें मनोरंजन का ऐसा साधन प्रदान करे जो दृश्यत्व और श्रव्यत्व से युक्त हो। तब ब्रह्मा जी ने चारो वेदों के सार रूप नाट्य वेद की रचना की। भरतमुनि ने नाट्य को पंचम वेद कहा है–

नाट्यस्तु पंचमो वेद: इति।

दशरूपककार धनन्जय ने भी 'रूपक' का निरूपण इसी आधार पर किया है उनके अनुसार 'अवस्था' का अनुकरण नाट्य है –

अवस्थानुकृतिर्नाट्यं

दृश्यत्व होने के कारण वह रूप कहलाता है– **रूपं दृश्यतयोच्यते।**
आरोप किये जाने के कारण वह रूपक कहलाता है– **रूपकं तत्समारोपात्।**
यह रस की प्रधानता के आधार पर दश भेदों में विभक्त है– **'दशधैव रसाश्रयम्'**

नाटक सप्रकरणं भाण: प्रहसनं डिम:।।
व्यायोगसमवकारौ विच्यड्कहामृगा इति।।

इसी प्रकार साहित्य दर्पण विश्वनाथ ने रूपक के विषय में कहा है कि रूपक 'दृश्य' होकर अभिनय युक्त होता है। पात्रों में रामादि भूमिकाओं का आरोप होने से वह रूपक कहलाता है।

भतमुनि धनन्जय और विश्वनाथ के रूपक विषयक मतों के अनुसार 'रूपक' शब्द से सारांश रूप में यही तात्पर्य है कि रूपक में अभिनेयत्व का आरोपण मुख्य तत्व हैं और रसानुभूति–दृश्यत्व के आधार पर होती है।

नाट्यशास्त्र में नाट्य रचना और नाट्य प्रदर्शन के दोहरे महत्व को ध्यान में रखकर मनुष्य मानसी दशाओं का विवरण दिया गया है, जो मनोविज्ञान के अनुकूल है। तथा इस विषय का प्रतिपादक यह प्राचीन ग्रन्थ है। नाट्यशास्त्र में वर्णित नायक और नायिका का लक्षण और भेद उनकी मनोवृत्तियों पर ही आधारित है। सभी भारतीय सिद्धान्तकारों ने एक साथ भरतमुनि के मानस विवरण या मनोविज्ञान की प्रस्तुति को मान्य किया है यह अति प्राचीन काल से ही खोज लिया गया था कि वस्तुनिष्ठ या विषयनिष्ठ स्तर, जो श्रेष्ठता के लिए आधार होता है तथा भौतिक तत्वों में रहता है वह जब कला से संबंध हो तो मनोविज्ञान सम्मत स्थिति प्राप्त कर लेता है।

इसी आधार पर आज भी अनेक मनौवैज्ञानिक मानते हैं कि नाटक ऐसा बहुकौशल समन्वित खेल है जिसमें शिक्षा, ज्ञानार्जन, उपदेश और नैतिक संस्कार सभी की संभावनाएँ समन्वित है।

नवीन प्रवृत्तियों का उदय और प्रयोग– प्राचीन साहित्य ऐसा कोई भी रूपक अथवा रचना नहीं है, जिसमें मात्र रावण का चरित्र ही वर्णित हो। जिसमें उसकी दुष्ट प्रवृत्तियों के साथ उसके वेद ज्ञान, नीति–नियामक ब्रह्मणत्व को प्रस्तुत किया हो। समय के परिवर्तन के साथ लेखक और दर्शकों के दृष्टिकोण भी परिवर्तित होने लगे है। पुरूषोत्तम राम के चरित्र में आज का श्रोता अथवा दर्शक मानवोचित गुण दोषों के दर्शन करने लगा है। वही रावण तुल्य खलनायक के चरित्र में भी मनुष्यता के दर्शन पाता है।

आज के युग में समाज में अनगिनत समस्याएँ फैली हुई है। नीति शब्द के मायने नहीं के बराबर हो गये है। धरम करो तो धक्के खाओ, और हो अनीति से समृद्धिवान जैसे स्थितियाँ आज की सामाजिक रीति बन गई है। नीति, ईमानदारी, सत्यता इत्यादि नैतिकताएँ आज भीरूता के पर्याय माने जाते हैं। ऐसी वीभत्स सामाजिकता में आज जो संस्कृत रूपक कारों ने ऐसी रचनाएँ प्रस्तुत की है जो समाज को अनीति से गर्व से बचाकर श्रेष्ठ सामाजिक मूल्यों के समकक्ष स्थिर करने का प्रयत्न करती है।

ऐसी कुछ चुनिंदा रचनाएँ यहाँ संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत है, जो इन समस्याओं के चित्रण के साथ ही उनका समाधान भी प्रस्तुत करती है– यथा पण्डित मथुरा प्रसाद दीक्षित रचित 'गाँधी विजय नाटकम्' समाज में फैली हिंसक प्रवृत्ति पर वार करता है और गाँधी द्वारा प्रयुक्त अहिंसा और सत्याग्रह प्रयोग से इस दुष्ट प्रवृत्ति को रोकने का सफल प्रयास कर नाटक में कवि ने चित्रित किया है।

श्री केशव छत्रे द्वारा रचित यशिषणम नाटक समाज में फैली यअशिक्षा के दोष को दूर करने का प्रयास करता है। अशिक्षा के दोष से समाज का एक बड़ा वर्ग शिक्षित वर्ग की दास्ता से जकड़ा हुआ है कि भी कभी–कभी ये शिक्षित लोभवश इनका शारीरिक मानसिक और आर्थिक शोषण करने लगता

* अतिथि विद्वान, महाराजा भोज शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.) भारत

है। ऐसे में समाज का प्रत्येक व्यक्ति शिक्षित हो, यह आवश्यक है। इसी उद्देश्य से लेखक ने इस नाटक की रचना की है।

आधुनिक समाज में दहेज लोलुपता अपनी पराकाष्ठा तक फैली हुई है। यह लोलुपता निम्न या मध्यम वर्ग में अल्पमात्रा में है पर धनिक वर्ग में नव विवाहित को शारीरिक मानसिक रूप से प्रताड़ित किया जाता है। यह प्रताड़ना इस हद तक होती है कि युवती या तो आत्महत्या कर लेती है या उसे मार डाला जाता है। इतना होने पर भी धन लोलुप वर्ग समाज में बड़ी शान से जीवन यापना करता है और सम्मान पाता है। इस भयानक समस्या को दूर करने के उद्देश्य से श्री कपिल देव द्विवेदी ने परिवर्तन नामक रूपक की रचना की है। इसके प्रसार से नवयुवतियों में जीवन शक्ति का विकास होकर वे इसका कठोरता से सामना कर सकती है। देश में एक छत्र एकता आवश्यक है। हमारे देश में कश्मीर राज्य की समस्या समय-समय पर देश की एकता पर प्रश्नचिह्न लगाती है। कश्मीर वासी तो तन-मन धन से भारत के साथ रहना चाहते है। परन्तु कुछ विघ्न संतोषी लोग भय उत्पन्न करके उन्हें भारतीय होने से दूर करते रहते है । इस समस्या को आधार बनाकर 'नीरपाजे-भीमभट्ट' द्वारा उचित 'काश्मीर सन्धानसमुद्यम:' रूपक सम सामयिक है, जो कश्मीर प्रदेश को देश का अभिन्न अंग सिद्ध करता है।

भारत के स्वतंत्र होने पर दिल्ली की केन्द्र सरकार ने सभी राजा, रियासतदारों के समक्ष दो विकल्प रखे। एक तो देश की एकता को मजबुत करने के उद्देश्य से वे केन्द्र में विलीन हो सकते है। दूसरे स्वतंत्र भी रह सकते है। अधिकांश राजाओं ने स्वहित और देशहित के उद्देश्य से केन्द्र में विलीन होना स्वीकार किया, परन्तु कुछ राजाओं को यह उचित नहीं लगा। उनमें हैदराबाद के निजाम भी शामिल थे। तब सरदार पटेल के अथक और अर्थपूर्ण प्रयास से यह दुष्कर कर्म भी सुकर हो गया और स्वतंत्र भारत एकता की मजबुत जंजीरों में बंध गया। इसी कथानक को नीरपाजे भीम भीट्ट ने यहैदराबाद विजयम नाटक में प्रस्तुत किया है। यह कथानक आज भी प्रासंगिक है। जबकि देश में आन्तरिक आंतकवाद देश की एकता के लिए खतरा बना हुआ है।

श्रीमती रमा चौधरी द्वारा रचित 'भारततातम्' रूपक में महात्मा गाँधी द्वारा किये गये समाज के उपेक्षित, दलित वर्ग के लिए किये गये उपचारों का वर्णन है गाँधीजी के इन प्रयासों की देश को आज भी आवश्यकता है। आज भी देश में सवर्ण ओर दलित वर्ग के रूप में समाज दो भागों में विभाजित है। यही सामाजिक समानता देश की आर्थिक, सामाजिक, विकास के लिए घातक भी है। लेखिका की यह कृति इसी असमानता को कम करने की दिशा में प्रयास तुल्य है। इसी प्रकार श्रीमती चौधरी की अन्य कृतियाँ इस प्रकार है - 'भारतपथिकम्'' इसमें लेखिका ने श्री राजाराम मोहनराय को मुख्य चरित्र बनाया है। उनके द्वारा किये गये समाजोपयोगी कार्य जैसे सती प्रथा उन्मुलन, बाल विवाह विरोध, स्त्री , शिक्षा प्रसार और अन्यायन्य कुरूतियों को रोकना और स्त्री शिक्षा, वयस्क विवाह, विधवा विवाह को बढ़ावा देना तत्कालीन समाज की अत्यन्त महत्वपूर्ण आवश्यकताएँ थी और आज भी है। निर्धनता के कारण स्त्री शिक्षा का महत्व आज महत्वपूर्ण नहीं माना जाता है। अशिक्षा के कारण ही बाल विवाह को बढ़ावा मिलता है। इसी से निर्धनता भी बढ़ती है। शोषण बढ़ता है और व्यक्ति समाज के विशेष वर्ग का दास बन जाता है। अत: ऐसे रूपक आज भी समाज के लिए प्रासंगिक है। व्यक्ति के विकास से ही समाज और देश का विकास संभव होता है।

इसी प्रकार इसी क्रम में स्त्री महत्ता को दर्शाता ऐतिहासिक कथानक पर आधारित श्री गोपालशास्त्री, दर्शन केसरी द्वारा उचित नाटक 'नारीजागरणम्' एक अमूल्य कृति है। इसमें विदेही, आत्रेयी, द्रौपदी, सती, गार्गी इत्याादि अन्यान्य स्त्री पात्रों की विद्वत्ता प्रस्तुत कर आधुनिक युग की स्त्रियों को भी शिक्षित होना आवश्यक है और उसमें भी संस्कृत भाषा का ज्ञान होना आवश्यक है। क्योंकि संस्कृत साहित्य में जीवन की सम्पूर्णता के दर्शन होते है। इसी भाषा के द्वारा व्यक्ति जीवन जीने की कला सीखता है। आधुनिक युग में संस्कृत भाषा साहित्य का प्रसार अल्पतर है। यह नाटक इस समस्या को दूर कर संस्कृत भाषा के प्रसार में गति प्रदान करता है।

स्वतंत्र भारत में हिन्दी भाषा को 'राष्ट्रभाषा' का सम्मान प्राप्त है। फिर भी अंग्रेजी भाषा का ऐसा दबदबा है कि अंग्रेजी के ज्ञाता को समाज में विद्वान समझा जाता है और हिन्दी में व्यवहार करने वाला अल्प ज्ञानी। जन-जन में अंग्रेजीयत दहशत कम हो और अधिकाधिक हिन्दी भाषा का प्रचार-प्रसार हो और हिन्दी में व्यवहार करने वाले व्यक्ति को समाज आदरणीय समझे इसी उद्देश्य को लेकर श्री राठकोप विद्यालंकार जी ने 'भारती विजयम्' नामक नाटक की रचना की है। इसमें सभी प्रादेशिक भाषाएँ व्यक्तिगत रूप में मंच पर अवतरित होती है। परन्तु बीच में ही अंग्रेजी भाषा आकर उन भाषाओं में क्लेश उत्पन्न कर देती है, तब परस्पर लड़ते हुए सभी भाषाएँ अंग्रेजी भाषा की महत्ता स्वीकार कर उसकी दासियाँ बन जाती है। स्वर्ग में नारदजी यह दृश्य देखकर खिन्न हो जाते हैं, तब सरस्वती देवी को सूचित करते है। वह सभी भाषाओं को स्व-गौरव समझाती है, तब सभी भाषाएँ अंग्रेजी भाषा की दासता से मुक्त हो हिन्दी भाषा को आदर देती है।

निष्कर्ष -इस प्रकार आज भारत में जो भी अल्पाधिक समस्याएँ है उनका रूपांकन आधुनिक संस्कृत नाटककारों ने अपनी रचनाओं में किया है। उनका यह प्रयास देश की इन समस्याओं को दूर करने में सहायक होगा। संस्कृत भाषा में प्रसार के साथ ऐसी आशा हम अवश्य कर सकते है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अभिनव भारती- अभिनव गुप्त ।
2. हिन्दी नाट्य शास्त्र-बाबुलाल शुक्ल ।
3. नाट्यशास्त्र- भरतमुनि ।
4. साहित्य दर्पण- विश्वनाथ ।
5. दश रूपक- धनंजय ।
6. संस्कृत साहित्य में राष्ट्रीय भावना - डॉ. हरिनारायण दीक्षित ।
7. आधुनिक संस्कृत नाटक- रामजी उपाध्याय ।

****

भक्ति संगीत में कीर्तन (सिक्ख संतों की वाणियों के संदर्भ में)

डॉ. श्रीपाद् आरोणकर *

शोध सारांश – कीर्तन भक्ति काव्य में बहुत महत्त्वपूर्ण आयाम है। सगुण एवं निर्गुण भक्ति काव्य में समान रुप से कीर्तन को नाम स्मरण का एक अभिन्न अंग माना गया है। 'राम से बड़ा राम का नाम', 'श्री कृष्ण गोविंद हरे मुरारी हे नाथ नारायण वासुदेवा' जैसे कीर्तन स्वरुप दिखाई पड़ते हैं। गुरु ग्रंथ साहिब में भी कीर्तन को भक्ति के रत्न के रुप में माना गया है। शोध पत्र में मैंने इसे प्रकट करने का प्रयास किया है।

शब्द कुंजी – गुरु साहिबान, चौकिया, रबाब वादक, सारंदा, सगुण एवं निर्गुण, मिरासी, ढाढ़ी, दिलरूबा।

प्रस्तावना – यदि व्यापक दृष्टि से देखा जाय तो प्रत्येक धर्म में संगीत के माध्यम से प्रभु-प्राप्ति का मार्ग सुझाया गया है।

की + रतन कीरतन

पंजाबी भाषा में 'की' का अर्थ 'क्या' होता है। अत: कीर्तन का अर्थ हुआ, प्रभु रूपी नाम रतन। इसका अन्दाजा निम्न पंक्तियों द्वारा लगाया जा सकता है –

कलियुग महि कीरतन प्रधाना,
अर्थात् कीर्तन रुपी हीरे की कोई कीमत नहीं चुका सकता।
भलो-भलो रे कीरतनिया
अर्थात कीर्तन करने वाला व्यक्ति ही भला है। अन्य पंक्तियाँ जैसे-
अैया कीरतन कर मन मेरे,
ईहां उहां जो काम तेरे।
हरि दिन रैनि कीरतन गाइये।
जो जो कथै सुनै हरि कीरतन,
ताकि दुरमति नास।
साधो गाबिन्द के गुन गावो,
मानस जनम अमोलक पायो।
सो असथान बताबहु मीता,
जाकै हरि-हरि कीरतन नीता।
जागना जागन नीका,
हरि कीरतन महि जागना।

इस प्रकार अनेकों पंक्तियों द्वारा कीर्तन की महानता को दर्षाया गया है।

सिक्ख- धर्म में कीर्तन का प्रचलन – प्रारम्भ में सिक्ख धर्म में कीर्तन करने का प्रचलन नहीं था। पहले गुरु साहिबान अपने दरबार में कीर्तन करने वालो को नियुक्त करते थे जो कि सुबह-शाम सिक्ख सेवकों को कीर्तन सुनाते थे तथा बाद में गुरु जी स्वयं उपदेश देते थे।

एक बार गुरु अर्जुन देव जी (पाँचवें गुरु) के समय में प्रसिद्ध कीर्तनकार भाई सत्ता और बलवंड जी ने कीर्तन करने से मना कर दिया। तब गुरु जी ने सिख सेवकों को निर्देश दिया कि आज से स्वयं ही कीर्तन करना शुरु करें तभी से सिक्ख-धर्म में कीर्तन का प्रचलन आरम्भ हुआ।

कीर्तन तथा अन्य गुरु साहिबान- गुरु नानक देव जी ने चार बार यात्राएँ की जिन्हें उदासी कहा जाता है। गुरु जी अपने साथ एक उच्चकोटि के गायक एवं रबाब वादक भाई मरदाना जी(मुस्लिम) को अपने साथ रखते थे। एक संगीताचार्य भाई फिरंदा(जो कि कपूरथला के निवासी थे) ने भाई मरदाना जी के लिए सफर की मुश्किलों को ध्यान में रखते हुए एक साज (रबाब) का निर्माण किया।

गुरु नानक देव जी लोगों को अपनी और आकर्षित करने तथा उन्हें उपदेश देने सुबह-शाम कीर्तन की परम्परा का सूत्रपात किया। जिसमें भाई मरदाना जी के सुपुत्र भाई शहजादा जी ने कीर्तन परम्परा का सूत्रपात किया। सिक्खों के तीसरे गुरु अमरदास जी ने 'सारंदा' नामक वाद्य का आविष्कार किया। जिसका उल्लेख यकानूने मौसीकी के कर्ता ने अपनी पुस्तक में किया है। इनके समय से कीर्तन में सारंदा भी शामिल हो गया।

गुरु रामदास जी ने नई कीर्तन गायकी 'पड़ताल' का आविष्कार किया। 'पड़ताल' की रचना को 5 तालों में तालबद्ध कर एक ही राग में गाया जाता था, इसका प्रचलन न के बराबर रह गया है। गुरु रामदास जी ने 7 रागों में 19 पड़तालों की रचना की थी।

सिक्खों के छठें गुरु हरगोविन्द जी ने नई बार-गायकी की (वीरता पूर्ण) परम्परा का सूत्रपात किया। इस गायकी के लिए इनके समय में भाई नत्था और भाई अब्दुला प्रसिद्ध गायकों में से थे।

कीर्तन चौकियाँ – सिक्ख-धर्म में कीर्तन करने की 5 चौकियाँ (समय) का निर्धारण किया गया है-

1. आसा दी वार की चौकी (सुबह-सूर्योदय से पहले)
2. बिलावल की चौकी (सूर्य चढ़ने के बाद)
3. चरन कमल की चौकी (सूर्य चढ़ने)
4. सादर की चौकी (शाम को)
5. कल्याण की चौकी (रात को)

कीर्तन का सिक्ख धर्म में महत्त्व –सिक्ख-धर्म मे प्रत्येक परिवार के एक या दो सदस्य तो अवश्य ही कीर्तन से जुडे होते है तथा उनमें कीर्तन सीखने की इच्छा भी होती है। सिक्ख-धर्म में खुशी या गमी का कोई भी अवसर क्यों न हो प्रत्येक अवसर पर कीर्तन का कार्यक्रम अवश्य रखा जाता है। इसी प्रकार

* विभागाध्यक्ष (संगीत) राजमाता सिंधिया शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत

गुरु साहिबानों के प्रकाश उत्सव (जन्म दिन) गद्दी नशीनी,जोति-जोत (स्वर्गवास) आदि अवसरों पर बड़े-बड़े कीर्तन दरबार आयोजित किए जाते हैं तथा प्रसिद्ध कीर्तनकारों (रागी जत्थों) को निमन्त्रण दिया जाता है।

सिक्ख -धर्म में कीर्तन के प्रचलन ने रोजगार भी उपलब्ध करवाये हैं, क्योंकि देश के प्रत्येक शहरों तथा विदेशों में गुरुद्धारे स्थापित हैं, इन सभी गुरुद्धारों में सुबह शाम कीर्तन करने के लिए रागी जत्थों (जिसमें 2 हारमोनियम वादक तथा एक तबला वादक) को मासिक वेतन पर नियुक्त किया जाता है। इस प्रकार हजारों व्यक्ति गुरुद्धरों में ईश्वरी वाणी को संगीतबद्ध कर कीर्तन संगीत के प्रचार-प्रसार में कार्यरत हैं।

कीर्तन में प्रयुक्त होने वाले वाद्य – गुरु साहिबानों के समय में तथा उनके कुछ समय बाद तक रबाब, ताउस, सारंदा, दिलरुबा तन्त्र वाद्यों का बखूबी प्रयोग होता था परन्तु आज के समय में हारमोनियम के प्रचार ने तन्त्र वाद्यों का प्रयोग न के बराबर कर दिया है। अपवाद स्वरुप कोई-कोई रागी जत्था अपने साथ तन्त्र वाद्य का प्रयोग अवश्य करता है। ताल वाद्य के लिए प्राचीन समय में मृदंग, पखावज को प्रयोग किया जाता था परन्तु अब ताल देने के लिए केवल तबला ही प्रमुख ताल वाद्य बन गया है। तबले को पंजाब में 'जोड़ी' भी कहा जाता है।

प्राचीन कीर्तनकारों के नाम – जिन्हें मिरसी या ढाढ़ी भी कहा जाता था उनमें - भाई मरदाना, भाई शहजादा, भाई सत्ता और बलवंड, भाई बादू सादू, भाई झाँझ, भाई केदार, भाई मुकंद, भाई नत्था और अब्दुला (वार गायक) तथा बाबा दीपसिंह जी जैसे नाम प्रमुख हैं।

आधुनिक काल के कीर्तनकार – इनमें भाई हीराभाई, भागसिंह, सन्तासिंह, मंछासिंह सुधासिंह, प्रधान सिंह, सुरजन सिंह, भाई चाँद (जो कि बँटवारे के बाद पाकिस्तान चले गये थे) तथा धरमसिंह जख्मी इत्यादि प्रमुख हैं।

वर्तमान के कीर्तनकार – इनमें भाई दिबाग सिंह गुलबाग सिंह, गोपाल सिंह, राजिन्दर सिंह, गुरमेल सिंह, प्रो. दर्शन सिंह (जत्थेदार अकाल तख्त) चरनजीत सिंह आदि अनेकों उच्चकोटि के कीर्तन करने वाले हुए हैं।

कीर्तन संगीत शिक्षा केन्द्र – सिक्ख धार्मिक संस्था ने कीर्तन के प्रचार एवं प्रसार हेतू अनेक संस्थाओं एवं विद्यालयों का गठन किया है जैसे दिल्ली में रकाबगंज का गठन किया है, गुरुद्धारा बालासाहिब अमृतसर, यमुनानगर (हरियाणा) ऋषिकेश आदि अनेक संस्थाएँ कीर्तन की शिक्षा दे रही है।

कीर्तन संगीत का बदलता स्वरुप – प्राचीन समय में कीर्तन पूर्ण रुप से शास्त्रीयता पर आधारित होता था जिसे रागों में निबद्ध किया गया है। पूर्व में सभी रागी उसी राग में कीर्तन गाते थे वर्तमान में रागियों के लिए यह बंधनकारी नहीं है।

इस बदलाव की जिम्मेदारी कीर्तन करने वालों तथा गुरुद्वारों के प्रबन्धकों पर आती है। इस स्थिति से बचने के लिए सिक्ख धार्मिक संस्थाओं को आगे आना होगा तथा हाल में ही अकाल तख्त से जारी हुकुमनामा जो कि कीर्तन संगीत की शास्त्रीयता के पक्ष में था, को लागू करना होगा तभी हम कह सकेंगे-

कथा कीर्तन राग नाद धुनि ऐहु बनियो सुआओ।
नानक प्रभु सो प्रसन्न भऐं, बांछत फल पाओ।

निष्कर्ष – इस तरह हम कह सकते हैं कि भक्ति संगीत में कीर्तन अविभाज्य अंग है। नाम साधन में इसका महत्व सगुण एवं निर्गुण पंथियों ने माना है।

संदर्भ ग्रंथ सूंची :-

1. डॉ. मनमोहन सहगल गुरु ग्रंथ साहिब एक सांस्कृतिक संदर्भ।
2. डॉ. नगेन्द्र- हिन्दी साहित्य का इतिहास।
3. बानी - गुरुनानक -देव जी आदि ग्रंथ।
4. संगीत/(पत्र पत्रिकाएँ)।

****

लोक संगीत एवं शास्त्रीय संगीत

डॉ. नीरज राव *

प्रस्तावना – लोक का अर्थ है, जो यहाँ प्रस्तुत है लोक में रहने वाला मनुष्य। अन्य प्राणी व्यवहार की भाषा में तीन लोक भूलोक, अंतरिक्ष (स्वर्लोक), द्युलोक इन तीनों को त्रिलोकी कहते है। पृथ्वी के उस पार को पाताल लोक कहते है। एक तो लोक में जो सुंदर वस्तुयें हों कुंओ का जल, मिट्टी, औषधी, पेड़- पौधें, बर्तन, दीये, फल, फूल इनके बिना लोकानुष्ठान पूरा नहीं होता है। लोककंठ में बसे गीतों और गाथाओं, कथाओं को उतना महत्व माना जाता है।

प्रकृति का नियम है कि प्राणी अपनी अनुभूतियों को कल्पनाओं को भावनाओं को किसी न किसी रुप में व्यक्त करता है, प्रकट करता है। संगीत मानव मन को प्रफुल्लता से भर देता है। मनुष्य के अन्तकरण का भाव और उसका सम्बन्ध मनुष्य को पूर्ण करता है। जिन रचनाओं में भाव प्रकट करने की क्षमता होती है वे रचनायें मन को आकर्षित करती है।

संगीत जब भाव प्रधान होता है तो शास्त्रीय संगीत को थोड़ा सा ज्ञान भी व्यक्ति को रस आनन्द से विभोर कर देता है। प्रचलित देशी संगीत को दो भागों में विभक्त किया जा सकता है –

1. लोक संगीत (Light Music)
2. शास्त्रीय संगीत (Classical Music)

देशी संगीत में विकास की पृष्ठभूमि लोक संगीत है। लोक और संगीत शब्दों का समुच्चय जिसका अर्थ है जनमानस में प्रचलित संगीत जिसमें जीवन के सुख-दु:ख, सामाजिक स्थिति, मिलना-बिछड़ना, सम्पूर्ण जीवन के उतार-चढ़ाव को अभिव्यक्त करती है – लोक संगीत। यूँ तो केवल लोक रंजन का साधन परन्तु उसके गीतों के द्वारा सामाजिक स्थिति, रीतिरिवाज, संस्कार, सभ्यता, संस्कृति आदि की झलक मिलती है इस प्रकार लोक संगीत ज्ञानवर्द्धन में भी सहायक है। लोक संगीत ग्रामों एवं नगरों दोनों ही में इसे महत्ता प्राप्त है। लोक संगीत अनेक अलग-अलग रुपों में प्रचलित है। लोक संगीत विभिन्न स्थानों और विभिन्न भाषाओं के आधार पर भी लोक संगीत पृथक-पृथक नाम व रुप धारण कर लेता है। कजरी, मांड, घुमर, झझर, विदेसिया, बिहुला। देखा जाये तो सम्पूर्ण भारत वर्ष में प्रचलित लोक संगीत की सूची ही बहुतायत हो जावेगी।

भारतीय संस्कृति के सभी संस्कारों जन्म से लगाकर मोक्ष तक विभिन्न उत्सवों में गाये जाने वाले लोकगीत आजकल प्रचार में तो है परन्तु फैशन के रूख को देखते हुये ऐसा प्रतीत होता है कि इनका भविष्य में अस्तित्व होगा। रहेगा भी तो कम से कम वर्तमान रूप में नहीं रहेगा। पश्चिम सभ्यता की रोशनी से जिनकी दृष्टि चकाचौंध हो रही है उस नवीन युग की पीढ़ी को अपनाने में अपमान प्रतीत होगा। युवा पीढ़ी की दृष्टि में गीत सभ्यता या असभ्यता के प्रतीक है।

लोक संगीत में हमें अपनी संस्कृति की खुशबू एवं अपनी मिट्टी की संस्कृति दिखाई देती है। लोक संगीत हमारे जीवन के विकास का इतिहास है जिसमें जीवन के सुख-दु:ख, सामाजिक स्थिति, मिलन-विरह जीवन के समस्त उतार चढ़ाव की भावनायें व्यक्त करती है। यह मनुष्य की भिन्न-भिन्न स्थानों के सामाजिक जीवन, धर्म एवं परम्परा पर आधारित है।

लोक-संगीत छन्द, शास्त्र अलंकारों से मुक्त रहता है। नगरों की अपेक्षा लोक संगीत ग्रामों में ज्यादा प्रचलित है। इन गीतों में ग्रामीण जीवन, ग्रामीण साहित्य, ग्रामीण भावनाओं का स्वाभाविक व सजीव चित्रण मिलता है। जिसमें हमें भारतीय संस्कृति की मूल झांकी के दर्शन प्राप्त होते है। जिस प्रकार आमजन लोक भाषायें, लोकोक्तियां आदि अभिव्यक्ति ही लोक संगीत कहलाया। गहराई से यदि देखा जाये तो लोक संगीत से रागों का उत्पादक होगा। यह सर्वविदित है कि शास्त्रीय संगीत की उत्पत्ति लोक संगीत से ही हुई है। लोक संगीत का निर्माण स्वाभाविक है। यह संगीत शास्त्रीय संगीत के समय में न बंधकर अवसर से बंधा रहता है। लोक संगीत का उद्भव संसार की सृष्टि के साथ ही माना जाता है।

शास्त्रीय संगीत के नियमों से बंधा अर्थात् शास्त्रों के कहे अनुसार शास्त्र पर आधारित संगीत – शास्त्रीय संगीत, जिसमें नियमबद्धता, गम्भीरता आदि चीजों का समावेश है। पुरातन परम्परा को नियमों में बांधना शास्त्रकारों का कार्य है। स्व. पं. विष्णु नारायण भातखंडे एवं स्व. पं. विष्णु दिगम्बर पलुस्कर जी ने सम्पूर्ण जगह अलख जगाकर भारतीय शास्त्रीय संगीत के प्रचार प्रसार उद्धार में अपना सम्पूर्ण जीवन अर्पण कर दिया।

गीतं वाद्यं नृत्य त्रयं संगीत मुच्यते
नृत्यं वाद्यानुगं प्रोक्तं गीतानुवर्ति च

संगीत रत्नाकर पंडित शारंण देव ने अपने ग्रंथ संगीत रत्नाकर में संगीत शब्द की उत्पत्ति पर प्रकाश डाला। कहने का तात्पर्य यह है कि गायन को तो हम संगीत कहते ही है किन्तु जहाँ वादन या नृत्य का प्रदर्शन होता है, वह भी संगीत कहलाता है। संगीत में सम और गीत उपसर्ग लगाकर अर्थात् जो सब प्रकार से गाया जाये उसे संगीत कहते है। गायन वादन एवं नृत्य इन तीनों कलाओं का सम्मिलित समावेश संगीत है।

संगीत कला ईश्वर प्रदत्त मानी जाती है। यह सभी व्यक्तियों को प्राप्त नहीं होती जिस मनुष्य में संगीत कला का जन्मांतरीय संस्कार होता है, वही उच्चकोटि का संगीतकार होगा, वह व्यक्ति उतना ही उच्च कोटि का कलाकार बनता है। संगीत सम्बन्ध मानव जीवन से है संगीत में मानव जीवन के साक्षात दर्शन होते है। समस्त नौ रसों का समावेश भी संगीत में होता है। जिन सभी रसों की अभिव्यक्ति मानव द्वारा संगीत के माध्यम से ही होती है। शास्त्रीय संगीत में भाव पक्ष एवं कला पक्ष दोनों का समन्वय मिलता है। ऐतिहासिक दृष्टि से भी संगीत के दो रूप पाये जाते है – मार्गी संगीत एवं देशी संगीत।

संगीत का उद्देश्य मानव मनोरंजन न होकर ईश्वरोपासना का माध्यम मानकर साधना की जाये तो नि:संदेह हम उस ब्रह्मानन्द की रसानुभूति को प्राप्त कर सकते हैं। आधुनिक युग में लोक संगीत का सर्वाधिक प्रचलित रूप

* सहायक प्राध्यापक (संगीत) शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

फिल्मों, गीत, भजन अन्य सुगम संगीत में दृष्टिगोचर होता है जिनमें कव्वाली आदि का प्रयोग भी प्रचलन में है। लोक संगीत एवं शास्त्रीय संगीत दोनों का स्थान सम्पूर्ण समाज में व्याप्त है। इसे संरक्षित व सुरक्षित रखने का उत्तरदायित्व हमारा है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :-

1. निबंध संगीत – लक्ष्मी नारायण गर्ग।
2. संगीत निबंध माला – जगदीश नारायण पाठक।
3. संगीत रत्नाकर – शारंगदेव।
4. लोक और लोक का स्वर – विद्या निवास मिश्र।
5. भारतीय संगीत का इतिहास – वीर राम अवतार।
6. लोक संगीत अंक 1986 – संगीत कार्यालय हाथरस।
7. निबंध संगीत – संगीत कार्यालय हाथरस।

****

वर्तमान सामाजिक परिवेश में भारतीय संगीत की दशा एवं दिशा

डॉ. नीरज राव*

प्रस्तावना – प्राचीनकाल के ईश्वराधिष्ठित संगीत कला का उपयोग जब मुगलकाल में बादशाहों नवाबों की विलासिता को बहलाने के लिये होने लगा तब से संगीत के उद्देश्य में परिवर्तन हुआ। मध्यकालीन युग में मनोरंजन ही संगीत का साधन बन गया संगीत को राजा–महाराजाओं का आश्रय प्राप्त था दरबार में, महल में जो भी संगीत कलाकार नियुक्त होता था वह कला की साधना के लिए उसके पास पर्याप्त समय था, आश्रयदाता का मनोरंजन करना उनकी आज्ञा, उनकी दैनिक जीवन शैली थी। इसके बतौर उन्हें विदाई के तौर पर उचित मानदेय धन प्राप्त होता था। परन्तु जैसे ही रियासतों एवं दरबारों का युग समाप्त हुआ मानों कला साधकों पर पहाड़ सा टूट पड़ा। कुछ साधक संगीत के अतिरिक्त अन्य कार्यों के द्वारा रोजी–रोटी कमाने लगे, जैसे तैसे रूपये पैसा कमाने लगे संगीत के प्रति श्रद्धा तथा प्रेम अटूट रहा। आर्थिक रूप से सम्पन्न न होते हुए भी एक कलाकार एवं गुरू के रुप में समाज में उनका सम्मान एवं प्रतिष्ठा कायम रही। वर्तमान में वैश्विक उदारीकरण के कारण वैज्ञानिक प्रगति तो हुई जिसका असर भारतीय संगीत पर भी पड़ा, आज जितनी तकनीक व अन्य साधनों का जिस तेजी से प्रचार प्रसार हुआ। आज वैश्विक उदारीकरण का असर बाकी क्षेत्रों के साथ–साथ शास्त्रीय संगीत पर भी पड़ा। प्राचीनकाल की गुरू–शिष्य की परम्परा, घराना परम्परा पर भी आज के परिवेश पर असर साफ दिखाई दे रहा है।

संगीत के प्रचार–प्रसार आजकल पहले की अपेक्षा अधिक है, परन्तु ऊँची कक्षा का नहीं है। ऊँची कक्षा से तात्पर्य बड़े–बड़े राग गाये–बजाये नहीं जाते, गायकों का ढंग अच्छा नहीं है। संगीत से जब तक आनन्द प्राप्त नहीं होता तब तक संगीत के ऊपर यह अन्याय है।

गायन, वादन, नृत्य जिसे सुनकर श्रोता आनन्द का अनुभव कर सके यदि प्रस्तुतिकरण से आत्मा को शांति नहीं मिलती तो ऐसा गाना – बजाना वैसा ही है जैसे निर्दयता से किसी को समाप्त करना। संगीत को सुनने के दो ही प्रकार है रेडियो एवं संगीत सभा। रेडियो संगीत भी एक प्रकार की महफिल ही है। सामने बैठकर महफिल सुनना तो बहुत कम है।

गायकों द्वारा शास्त्रीय संगीत की प्रस्तुतिकरण सुधि श्रोताओं के समक्ष खलबली मचा जाती है कि अमुक राग को प्रस्तुत करेंगे। वस्तुत: देखा जाये तो पुराने संगीतज्ञों ने केवल अपनी प्रसिद्धि एवं यश को प्राप्त करने के लिये ही राजनैतिक, सामाजिक समाज का उपयोग किया, उन्होंने कभी भी संगीत के प्रचार–प्रसार में शासन तथा जनता का ध्यान आकृष्ट नहीं किया। विदेशों में जाकर कार्यक्रम प्रस्तुत करना तथा वहाँ से पैसा प्राप्त करना। विदेशों में अकादमी स्थापित करना वहाँ विद्यार्थियों को तैयार करना। यही कार्य प्रमुखता से उन्होंने किये। संगीतज्ञों द्वारा रात–दिन अथक परिश्रम करने के उपरान्त भी उन्हें अपनी कला का प्रदर्शन करने के लिये पर्याप्त मंच एवं श्रोता नहीं प्राप्त होते हैं। कला एवं कलाकार अपनी प्रतिभा एवं सभी कार्य का गला घोंट देता है।

बाकी संगीत की तुलना में शास्त्रीय संगीत के प्रचार माध्यमों द्वारा मिलने वाला लाभ कम ही दिखाई देता है। अल्प प्रसार के मुद्दे पर विचार होना आवश्यक है। निजी चैनलों द्वारा रियलिटी प्रतियोगिता सा, रे, गा, मा, इडियन आइडल, मेरी आवाज सुनों जैसे कार्यक्रम किये जाते हैं, परन्तु ऐसे शास्त्रीय संगीत के क्षेत्र में नहीं पाये जाते न ही स्वस्थ्य प्रतियोगिता।

रियलिटी शो कार्यक्रम व्यावसायिक दृष्टिकोण से किये जाने के कारण उनकी प्रसिद्धि भी बहुतायत है। क्या कोई भी औद्योगिक समूह या संस्था शास्त्रीय गायन या वादन की प्रतियोगिता आयोजन नहीं करती। प्रसिद्ध कलाकारों द्वारा कार्यक्रम प्रस्तुतियों का आयोजन इन संस्थाओं द्वारा किया जाता है।

शासन की ओर से शास्त्रीय संगीत के प्रचार–प्रसार के लिये एक स्वतंत्र प्रसारण माध्यम की व्यवस्था होना चाहिये। शासन अपनी ओर से इस कार्य को करने में असमर्थ है तो प्रायोजक एकत्रित कर उनसे आर्थिक सहयोग प्राप्त कर इस पुनीत कार्य को किया जा सकता है। इसमें सभी विद्वानों को न केवल अपनी कला के प्रदर्शन का अवसर प्राप्त होगा वरन् देश तथा विदेशों में भी हमारी संस्कृति एवं संस्कारों का व्यापक प्रचार–प्रसार होगा। यह क्षेत्र केवल बुजुर्ग कलाकारों द्वारा ही व्यापित है, यह भावना दूर होकर युवा पीढ़ी को भी प्रसिद्धि प्राप्त होगी तथा आजीविका के रूप में युवा पीढ़ी इस क्षेत्र में स्थिर होगी।

वैश्वीकरण के इस दौर में शास्त्रीय संगीत पर भी दिखाई दे रहा है फ्यूजन संगीत। इस फ्यूजन संगीत ने युवा वर्ग को इतना प्रभावित किया है आज हर कोई कलाकार अपने प्रदर्शन में इसको प्रयोग कर रहा है। प्रसिद्ध कलाकार का कार्यक्रम सुनना और तुरन्त ही धन प्राप्त करना। ताल–लय के माध्यम से थोड़े समय के लिये मन को आकर्षित करने वाले अन्तर को नई पीढ़ी को समझना होगा।

वर्तमान में संगीत के जलसों में आने वाले श्रोताओं की भी कुछ अपेक्षायें होती है आज कल के कार्यक्रम शास्त्रीय न होकर उपशास्त्रीय के मर्म में होते है। विश्व की प्रगति में तकनीकी के महत्व को नकारा नहीं जा सकता संगीत क्षेत्र में भी तकनीकी के कारण बदलाव हो रहे है। आज हम कम्प्यूटर, इंटरनेट द्वारा संगीत का आदान–प्रदान कर रहे हैं। सरल संगीत की उन्नति की बड़ी आवश्यकता है। यह तय होना चाहिये कि सरल संगीत किसे कहते है, जो समझा जा सके सरलता के साथ, शब्दों के साथ, साथ ही भावपूर्ण धुनों पर भी ध्यान देना आवश्यक है। इससे भारतीय संगीत की प्रगति की आशा की जा सकती है। यह भी आशा की जा सकती है विद्वानों को और कलाकारों को आजीविका के लिये प्रयास करना सम्भव हो सकेगा।

सकारात्मक सोच इस दिशा में बहुत अच्छा कार्य करेगी उज्जवल भविष्य के साथ ही हमारे संगीत का अपनी वैभव व प्रतिष्ठा हम फिर से प्राप्त कर सकेगें।

सन्दर्भ ग्रंथ सूंची :-

1. संगीत निबंध संग्रह – लक्ष्मीनारायण गर्ग।
2. संगीत निबंधावली – लक्ष्मीनारायण गर्ग।
3. संगीत निबंधमाला – जगदीश नारायण पाठक।
4. संगीत मासिक पत्रिका – जनवरी 1986
5. संगीत कला विहार – मार्च 2008
6. भारतीय संगीत का इतिहास – उमेश जोशी।
7. लोक संगीत अंक – संगीत कार्यालय हाथरस।

* सहायक प्राध्यापक (संगीत) शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

Academic Achievement of Senior Secondary School Students in Relation to Anxiety, Learning Style, and School Environment

Dr. Satish Kumar Gill * **Dr. S.K. Upadhyay** **

Abstract - Academic achievement is mainly a function of cognitive variables such as anxiety & learning style. Non-cognitive variable .i.e. School environment has also been taken into account in order to diminish the margin of error in the prediction of academic achievement. No one can deny the fact that quite a good number of studies have been conducted in cognitive field but the non-cognitive areas have not been totally neglected. It is because of this that the research has to probe the unexplored territory i.e. non-cognitive variable and their resultant bearing upon achievement. Anxiety has become the order of the day which is generally found in all sections of population. Anxiety mainly refers to the problems such as academic stress, sexual health, drugs and other issues faced by them in everyday life. Recently some researchers and social scientists have noted anxiety's relationship with achievement but the extent of the relationship either was very low or it was found to be inversely related with academic achievement. Increasing competition in schools are being drawn and the aspiration of parents place a tremendous burden of stress and anxiety of all children. To determine their personal growth and development and inculcating in them the joy of learning.

The achievement of the students at this stage depends on many reasons such as family, socio-economic status, mental health, and so on. Moreover researchers and social scientists particularly in the field of educational Psychology have observed an association between academic achievement, and with achievement motivation , patterns of adjustment, fear of failure and success, learning habits, intelligence, nature of schools, forms of curricula, parent's education, types of family. Furthermore, diverse issues involved in studies do play a significant role which is causing the students bound to have a peculiar type of anxiety which influence their academic achievement.

Learning style is an important factor in the academic achievement of the students. Some students have good learning styles, some students have poor learning styles which may be due to several factors such as, family back ground, economic status, size of the family, education of the parents. Individual differences are also an important factor. The learning style of an individual has relation to factors such as prior learning experiences, openness to inter personal and intrapersonal information, physical facilities and learning environment.

Key Words - Academic achievement, Anxiety, Learning style, School Environment, and students.

Introduction - Academic achievement is an important factor, which helps to get that goal and make all round development of a child. It is the instrument of personal progress. It helps in fulfillment of parent's desire that their children climb the ladder of success. In achievement of the goal a lot of pressure is imposed on the students, teachers and in general education system itself. Achievement of students in our country is measured in terms of her/his performance in examination. This may not be desirable goal but there is no alternative of it. On the basis of achievement of performance in a school a student is bracketed either good/poor, intelligent/slow. In fact, it appears as if the whole system of education revolves round the academic achievement of students.

Correlates of Academic Achievement in School - Across the country, schools keep exploring strategies to close achievement gaps. A recent report by the North Central Regional Educational Laboratory, Perspectives on the Gaps: explains fostering the Academic Success of Minority and Low-Income Students, highlights the promising results of initiatives at several racially and economically diverse schools. These accounts of how to address achievement gaps that suggest successful strategies which may include paying attention to factors in students' lives inside and outside of school. Intern are associated with persistent learning differences among groups of students with different socioeconomic and ethnic backgrounds. Baselines for Tracking Progress, a 2003 report from the Educational Testing Service (ETS), distill a vast array of research to identify fourteen interrelated factors of achievements which shows the performance level of students in school. The correlates of academic achievements of the students in senior

* **Research Scholar , Deptt. of Education, MDU, Rohtak (Haryana) INDIA**
** **Associate Professor, Hindu College of Education, Sonipat (Haryana) INDIA**

secondary schools. The academic achievement of students differ keeping in view low ,average and high socio economic status of the students. The academic achievement of the students is effected by certain academic indicators like standardized scores, performance rate etc. and home circumstances. Systematic monitoring these aspects can suggest how to best target efforts to close achievement gaps. Information about correlates of achievement can inform decisions about instructional strategies that address achievement gaps. At national levels, policy makers can use the same information to target and monitor initiatives aimed at school and social factors most closely associated with student achievement.

In pursuing the achievement gap fourteen correlates of achievement given below are organized in various categories on the basis of **Teaching and Learning** (Rigor of the curriculum, Teacher preparation, Teacher experience and attendance, Class size and Availability of appropriate technology-assisted instruction),**Learning Environment** (School safety),**Development Environment** (Weight at birth, Lead in the environment and Hunger and nutrition), **Home Learning Connection** (Reading to young children, Amount of television watching and Parent availability), Community (Student mobility),and Home–School Connection (Parent participation).

Academic achievement thus is influenced by many factors. The correlates mentioned above gives us some idea about it. In the proposed study we plan to understand the academic achievement of senior secondary school students in relation to certain psycho-social dispositions namely anxiety, learning styles and school environment. Each one of these factors has its own bearing in shaping the achievement level of the students and therefore becomes pertinent to examine them in detail .

Correlation of Anxiety in School

Anxiety can be classified in different forms like

i) Manifest anxiety
ii) Performance anxiety
iii) Test anxiety

i) **Manifest anxiety** - It refers to the neurotic anxiety, the realistic anxiety and the moral anxiety. Neurotic anxiety is anxiety experienced as the ego struggles to control Id impulses. It is the feeling of fearfulness associated with the phenomenological sensation that an individual thinks that he is about to lose self-control and allow the Id free reign to satisfy its urges, either sexual or aggressive.

Realistic anxiety is anxiety experienced in the presence of real danger. It is a normal human reaction to a threat to one's physical well being.

Moral anxiety is apprehension experienced when thoughts, impulses, or actions conflict with superego standards as represented in the ego-ideal. In effect, it is the conscience kicking in and reminding the people that they are contemplating behavior, or actually engaging in behavior, which is contrary to what the internalized standards say it ought to be.

ii) **Performance Anxiety** - Performance anxiety is the fear or nervousness experienced during a performance and it is commonly called as stage anxiety. It can either help or hinder a result. Some kinds of anxiety benefit us by focusing our attention towards an output to perform. When an individuals anxiety increases and level of concentration decreases which results into poor performance. Student's anxiety sometimes feels depressed as a result of their distress. Performance anxiety is experienced by all students, teachers, amateur performers, player, sportsmen and professional artists, and others who are highly skilled and laborious. It can feel like extreme tension or apprehension in the face of performing a certain task in public, like a music recital in a large concert hall in front of others.

iii) **Test Anxiety** - Test anxiety is actually a type of performance anxiety-a feeling someone might have in a situation where performance really counts or when the pressure is on to do well.

For example, a person might experience performance anxiety when he is about to try out for the school play, sing a solo on stage, get into place at the pitcher's mound, step on to the platform in a diving meet, or go into an important interview. In other situations if a person faces performance anxiety ,test anxiety develops headache, sweating, a stomachache as well as tension . Some people might feel shaky, sweaty, or feel their heart beating quickly while waiting for the test. A student with really strong test anxiety may even feel like he or she might pass out or throw up.

Good academic result is very important now a day's not only to students, but also to their guardian, institutions of learning educationists. The quality of students' academic performance is influenced by wide range of environmental factors. Psychological factors within the learners such as motivation and the self could also be participating farther. The test anxiety and Mathematics anxiety are increasingly being seen as factors underpinning levels of motivation for academic performance**. Suinn, Taylor, and Edwards(1988),** suggested that it affects many people and threatens both performance of participation.

Correlates of Academic Achievement in Learning Style-

The learning styles combine various factors that have a close bearing upon the academic achievement of the students. Each student's cognitive perception varies and if the factor associated with it is properly learnt it may help students what they want to achieve. It is important here to discuss the concept of learning styles and its associated factors that influence academic achievement of the student.

An individual's preferred learning environment or the ability to adapt to a specific learning environment is based on the way the individual processes the information. Although students have the ability to adapt independent style against their preferred learning styles.

Karuna Shankar Misra (2012) refers to the educational conditions which enables students to learn. He has discussed following learning styles and has also prepared an inventory that attempts to measure them. Enactive

Reproducing , Enactive Constructive, Figural Reproducing, Verbal Reproducing, and Verbal Constructive.

It refers to the preference for reflective, accommodative and abstract thinking about subject so as to develop conceptualizations.

The 1 and 2 can be clubbed to as' enactive learning style' 3 and 4 may be joined to mean 'figural learning style' and 5 and 6 can be combined to mean 'verbal learning style' 1,3 and 5 taken together mean ' Reproducing Learning Style '2,4,and 6 when combined refer to ' Verbal constructive Learning style '.

There are following factor effecting learning style:

1. Immediate Environment: It includes physical environment i.e. sound, light, and furniture/ setting design.
2. Own Emotionality : Motivation, Persistence responsibility and mind set.
3. Sociological Preferences: Different groups of student and their relation with their peace of teachers.
4. Physiological Characteristics: perceptive , strengths represented by Auditory, Visual, and Kinesthetic etc.
5. Processing Inclination: Global / analytic, Right / left, Impulsive reflective

Many researcher's study conducted abroad lend support to a close link between school climate and academic achievement (some researchers in India also support their findings (Sharma, 1971, Bhasin, 1974, Rao, 1976 and Shah, 1981) **.**

Figure:
Model of the Conceptual Framework

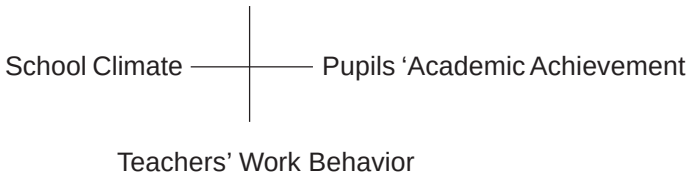

Fig. Relationship between Academic Achievement and School Environment

It can be said that when the school climate is unfavorable, it psychological sickness spills over to teachers and make them dissatisfied. This satisfaction would naturally affect their working style. Teachers in their frustration may communicate ineffectively or inadequately to the students, which can greatly affect their academic achievement.

Correlates of Academic Achievement In School Environment - Learning is possible when social relationships between teachers and pupils are both formal and informal. School is institutional place, of communities of learners, including both students and teachers. Students play, scuffle with their friends in school, during free time. They share knowledge while chatting with their friends during breaks. They gather together for morning assembly and other festival in the classroom as well as out of boundaries of the school campus and community sectors. Behind the scenes, but still significant in giving the school its character, are the teachers and head master, planning and carrying out daily routines, examinations and special events that mark the school calendar.

It is significant to note that school occupies the first and the most significant place for the development of the child. Inadequate school environment is likely to cripple the personality of child from the point of his/her abilities and behavior adjustments. The nature of the environment provides the necessary sensory inputs, stimulation and experimental basis for the development of perceptual skills and cognitive skills.

Karuna Shankar Misra,(2012) developed six different dimensions of School Environment viz. creative stimulation, cognitive encouragement, acceptance, permissiveness, rejection and control.

There are many factors which affect a study environment; some of them have been discussed below:

Illumination - one of the important factors of school environment is proper illumination or lighting which affects the academic achievement of the students in the classroom.

Noise - It is found that the place should have a low level of noise. Actually noise pollution hurdles normal classroom teaching by diminishing concentration of the students.

Possibility for Interruption - Obviously, any type of interruption created by a school and social environment like as student-unrest or social evils may affect achievement of the students.

There is a need to study how different independent variable like anxiety, learning style, and school environment influence educational performance regarding academic achievement of Indian students.

References :-

1. **Agrawal, A. K. (2011).** A study of learning styles in relation to learner's self-concept, Shikshan Anveshika, Vol.1, No.1.
2. **A.K.P.Sinha,L.N..K.Sinha(2002.)** Shina's comprehensive anxiety test (SCAT), Agra: National Psychological Corporation, 4/230, Kacheri Ghat.
3. **Amarnath,(1980).** Comparative study of the organizational climate of government And privately managed higher secondary school , Ph. D. Dissertation, Punjab university.
4. **Anderson , G.J. (1968).** Effect of classroom social climate on individual learning, Unpublished Doctoral Dissertation, Hardvard University.
5. **Bhardwaj, J. & Gupta, R. (2006).**Learning Styles, The Primary Teacher, Vol. 31(3-4).
6. **Boyle, E. A. et al. (2003).** Learning styles and academic outcome: the validity and utility of vermont's inventory of learning styles in a British higher education setting. The British Psychology Society, Vol. 7.
7. **Crow,L.P. And Crow, A.(1963).** Educational psychology, New York: American. Book Co.
8. **Devi, P. and Ahmed, J. (2006).** Anxiety and achievement: A research study of high and low

achievers, Indian Education Review, Vol. 17, No. 4.

9. **Gokal, Murat(2013.** The effect of students' learning styles to their academic success, Scientific Research, Vol.4, No.10.
10. **Karuna Shankar Mishra(2012).** School Environment Inventory, Agra: National, Psychological Corporation 4/ 230, Kacheri Ghat.
11. **Karuna Shankar Mishra(2012)**. Learning Style Inventory, Agra: National Psychological Corporation, 4/ 230, Kacheri Ghat.
12. **Kiranjit Kaur, Balbir Singh (2011)** Learning styles and overall academic achievement in a specific educational, International Journal of Humanities and Social Science, Vol. 1 No. 10;
13. **Levilt, E.E. (1971).** Psychology of Anxiety, London: Paladin.
14. **Malathi, S. & Malini, E. (2006).** Learning style of higher secondary students of Tamilnadu. Edutracks, Vol. 5, No.10.
15. **Rao, S. Narayan(1990).** Educational psychology, New Delhi: Wilsey Eastern Limited.
16. **Saha Kabiri.(2012).** Learning style and their classroom application, Edutract, Vol. 12, No.3.
17. **Samit Kumar Das, Ujjwal Kumar Halder, Bapi Mishra(2014).** A study of academic anxiety and academic achievement on secondary level school students**,** Volume 4., Issue 4.
18. **Susan, Bentham.(2002).** Psychology and education, New York: Routiedge,
19. **Vaishnav, Rajshree S. (2013)** learning style and academic achievement of secondary school students, Voice of Research, Vol. 1 Issue 4 .

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

विभिन्न वर्गों के. बी.एड. प्रशिक्षणार्थियों में प्रशिक्षण पूर्व एवं प्रशिक्षण पश्चात् उनकी अध्यापन अभिवृति का तुलनात्मक अध्ययन

जसवंत सिंह *

प्रस्तावना – किसी कार्य की सफलता के लिए व्यक्ति में सकारात्मक अभिवृतियों का होना अति आवश्यक है। शिक्षा क्षेत्र में आने वाली पीढी को योग्य, समृद्ध, और उन्नतिशील बनाने के लिए शिक्षको की जिम्मेदारी बढ़ जाती हैं। अत: प्रशिक्षणरत भावी अध्यापकों में अध्यापन अभिवृति की जाच के लिए उक्त शीर्षक का चयन किया गया है।

समस्या कथन – बी.एड प्रशिक्षणार्थियों में प्रशिक्षण पूर्व एवं प्रशिक्षण पश्चात अध्यापन अभिवृति का अध्ययन करना।

अध्ययन के उद्देश्य :-

1. प्रशिक्षण पूर्व एवं प्रशिक्षण पश्चात् बी.एड. प्रशिक्षणार्थियों की अध्यापन अभिवृत्ति का पता लगाना ।
2. प्रशिक्षण पश्चात् सामान्य वर्ग के प्रशिक्षणार्थियों एवं अनुसूचित जाति/जनजाति के प्रशिक्षणार्थियों की अध्यापन अभिवृत्ति का तुलनात्मक अध्ययन करना।
3. प्रशिक्षण पश्चात् पुरूष एवं महिला प्रशिक्षणार्थियों की अध्यापन अभिवृत्ति का तुलनात्मक अध्ययन करना।
4. प्रशिक्षण पश्चात् सामान्य वर्ग की महिला प्रशिक्षणार्थियों व अनुसूचित जाति/जनजाति वर्ग की महिला प्रशिक्षणार्थियों की अध्यापन अभिवृत्ति का तुलनात्मक अध्ययन करना।

अध्ययन की परिकल्पनाएं –

1. प्रशिक्षण पूर्व एवं प्रशिक्षण पश्चात् बी.एड. प्रशिक्षणार्थियों की अध्यापन अभिवृत्ति में अन्तर होता है।
2. प्रशिक्षण पश्चात् सामान्य वर्ग के प्रशिक्षणार्थियों एवं अनुसूचित जाति/जनजाति के प्रशिक्षणार्थियों की अध्यापन अभिवृत्ति में सार्थक अन्तर नही होता हैं
3. प्रशिक्षण पश्चात् पुरूश एवं महिला प्रशिक्षणार्थियों की अध्यापन अभिवृत्ति में सार्थक अन्तर नही होता है।
4. प्रशिक्षण पश्चात् सामान्य वर्ग की महिला प्रशिक्षणार्थियों एवं अनुसूचित जाति/जनजाति की महिला प्रशिक्षणार्थियों की अध्यापन अभिवृत्ति में सार्थक अन्तर नही है।

अध्ययन् विधि – इस अध्ययन् के लिए सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है।

न्यादर्ष – प्रस्तुत अध्ययन् में उदयपुर संभाग के प्रतापगढ़, बांसवाड़ा, डूंगरपुर और उदयपुर जिलों के बी.एड. महाविद्यालयों का यादृच्छिक विधि से चयन कर उनमें अध्ययनरत् 450 पुरूश प्रशिक्षणार्थियों व 450 महिला प्रशिक्षणार्थियों को न्यादर्श के रूप में चुना गया।

अध्ययन् में प्रयुक्त उपकरण – प्रस्तुत शोध अध्ययन् के दत्त संग्रहण हेतु डा.एस.पी.अहलुवालिया द्वारा निर्मित 'अध्यापक अभिवृत्ति मापनी' का उपयोग किया गया है। इस मापनी में कुल 90 कथन दिये गये हैं जिनके द्वारा अध्यापन अभिवृत्ति का मापन किया गया हैं

अध्ययन् में प्रयुक्त सांख्यिकी – प्रस्तुत शोध अध्ययन् में मध्यमान, मानक विचलन, टी परीक्षण और प्रतिशांक का प्रयोग किया गया हैं

विश्लेषण एवं विवेचन – प्राप्त आंकड़ों का सारणीयन कर विश्लेशण किया गया —— बी.एड. प्रशिक्षण पूर्व एवं प्रशिक्षण पश्चात् समग्र प्रशिक्षणार्थियों की अध्यापन अभिवृत्ति की सारणी-

सारणी-1(देखे अगले पृष्ठ पर)

व्याख्या – बी.एड. प्रशिक्षण पूर्व एवं प्रशिक्षण पश्चात् प्राप्त आंकडों का मध्यमान क्रमष: 216.60 व 259.96 आया। जबकि मानक विचलन क्रमश: 25.31 व 23.96 आया। टी. तालिका को 1798 डिग्री स्वतंत्रता के अंश पर क्रमश: .05 व .01 सार्थकता के स्तर पर देखा गया। टी का मान 37.78 आया जो कि टी के सारणी मूल्य से अधिक है, अर्थात सार्थक अन्तर कहा जा सकता है। अत: परिकल्पना संख्या-1 को स्वीकृत किया जाता है।

बी.एड. प्रशिक्षण पश्चात् सामान्य वर्ग के प्रशिक्षणार्थियों एवं अनुसूचित जाति/जनजाति के प्रशिक्षणार्थियों की अध्यापन अभिवृत्ति की तुलनात्मक सारणी-

सारणी संख्या-2 **(देखे अगले पृष्ठ पर)**

व्याख्या – सामान्य वर्ग एवं अनुसूचित जाति/जनजाति वर्ग के बी.एड. प्रशिक्षणाथियों में बी.एड. प्रशिक्षण पूर्व एवं प्रशिक्षण पश्चात् प्राप्त आंकडों का मध्यमान क्रमश: 256.76 व 263.36 आया। जबकि मानक विचलन क्रमष: 23.41 व 24.09 आया। टी. तालिका को 898 डिग्री स्वतंत्रता के अंष पर क्रमश: .05 व .01 सार्थकता के स्तर पर देखा गया। टी का मान 37.78 आया जो कि टी के सारणी मूल्य से अधिक है, अर्थात सार्थक अन्तर कहा जा सकता है। अत: परिकल्पना संख्या-1 को स्वीकृत किया जाता है।

बी.एड. प्रशिक्षण पश्चात् पुरूष और महिला वर्ग के प्रशिक्षणार्थियों की अध्यापन अभिवृत्ति की तुलनात्मक सारणी-

सारणी संख्या-3 **(देखे अगले पृष्ठ पर)**

व्याख्या –पुरूष और महिला बी.एड. प्रशिक्षणाथियों में बी.एड. प्रशिक्षण पूर्व एवं प्रशिक्षण पश्चात् प्राप्त आंकडों का मध्यमान क्रमश: 256.46 व 265.43 आया। जबकि मानक विचलन क्रमश: 24.55 व 24.14 आया। टी. तालिका को 898 डिग्री स्वतंत्रता के अंश पर क्रमश: .05 व .01 सार्थकता के स्तर पर देखा गया। टी का मान 5.52 आया जो कि टी के सारणी मूल्य से अधिक है, अर्थात सार्थक अन्तर कहा जा सकता है। अत: परिकल्पना संख्या-3 को अस्वीकृत किया जाता है।

बी.एड. प्रशिक्षण पश्चात् सामान्य वर्ग की महिला प्रशिक्षणार्थियों और अनुसूचित जाति/जनजाति की महिला प्रशिक्षणार्थियों की अध्यापन अभिवृत्ति की तुलनात्मक सारणी-

* शोधार्थी, मेवाड़ विश्वविद्यालय, चित्तौडगढ़ (राज.) भारत

सारणी संख्या–4 **(देखे अगले पृष्ठ पर)**

व्याख्या – सामान्य वर्ग की महिला प्रशिक्षणार्थियों व अनुसूचित जाति/जनजाति की महिला प्रशिक्षणार्थियों के बी.एड. प्रशिक्षण पूर्व एवं प्रशिक्षण पश्चात् प्राप्त आंकडों का मध्यमान क्रमश: 258.1 व 267.5 आया। जबकि मानक विचलन क्रमश: 24.90 व 21.82 आया। टी. तालिका को 448 डिग्री स्वतंत्रता के अंष पर क्रमश: .05 व .01 सार्थकता के स्तर पर देखा गया। टी का मान 4.25 आया जो कि टी के सारणी मूल्य से अधिक है, अर्थात सार्थक अन्तर कहा जा सकता है। अत: परिकल्पना संख्या–4 को अस्वीकृत किया जाता है।

निष्कर्ष –

1. बी.एड.प्रशिक्षण पूर्व प्रशिक्षणार्थियों की अध्यापन अभिवृत्ति का मध्यमान 216.60 रहा जबकि प्रशिक्षण पश्चात् यह मध्यमान 259.96 रहा। अत: प्रशिक्षणार्थियों पर प्रशिक्षण के प्रभाव से अध्यापन अभिवृत्तियां विकसित होना पाया गया।
2. बी.एड. प्रशिक्षण पश्चात् सामान्य वर्ग के प्रशिक्षणार्थियों की तुलना में अनुसूचित जाति/जनजाति के प्रशिक्षणार्थियों में अध्यापन अभिवृत्ति अधिक पायी गयी।
3. बी.एड. प्रशिक्षण पश्चात् पुरूष प्रशिक्षणार्थियों की तुलना में महिला प्रशिक्षणार्थियों में अध्यापन अभिवृत्ति अधिक पायी गयी।
4. बी.एड. प्रशिक्षण पश्चात् सामान्य महिला प्रशिक्षणार्थियों की तुलना में अनुसूचित जाति/जनजाति महिला प्रशिक्षणार्थियों में अध्यापन अभिवृत्ति अधिक पायी गयी।

शैक्षिक निहितार्थ –

1. प्रशिक्षण महाविद्यालयों में योग्य शिक्षकों द्वारा नियमित रूप से अध्ययन् कराये जाने से अध्यापन अभिवृत्ति का विकास संभव है, अत: प्रशिक्षणार्थियों की उपस्थिति को नियमित रखने का प्रयास छात्रहित में होगा।
2. अनुसूचित जाति/जनजाति की छात्राओं को बी.एड. प्रशिक्षण में प्रवेश लेने व अपनी अध्यापन अभिवृत्ति को अधिकाधिक विकसित करने का अवसर मिलेगा।
3. महिला प्रशिक्षणार्थियों को अध्यापक शिक्षा के लिए प्रेरणा मिल सकेगी।

सुझाव –

1. विभिन्न स्तरों पर अध्ययनरत् छात्र–छात्राओं की विभिन्न अभिवृत्तियों का अध्ययन् किया जा सकता है।
2. शहरी और ग्रामीण क्षेत्र के बी.एड. महाविद्यालयों के प्रशिक्षणार्थियों की अध्यापन अभिवृत्ति का तुलनात्मक अध्ययन् किया जा सकता है।
3. राजकीय व निजी बी.एड. महाविद्यालयों के प्रशिक्षणार्थियों की अध्यापन अभिवृत्ति का तुलनात्मक अध्ययन् किया जा सकता है।
4. बी.एड. प्रशिक्षणाथियों में अध्यापन अभिवृत्ति बढ़ाने में योग्यता प्राप्त व अयोग्य अध्यापकों की भूमिका पर भी अध्ययन् संभव है।
5. बी.एड. प्रशिक्षणाथियों की न्यून व अधिकतम उपस्थिति वाले प्रशिक्षणार्थियों की अध्यापन अभिवृत्ति का तुलनात्मक अध्ययन् किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. शिविरा पत्रिका राजस्थान, माध्यमिक शिक्षा विभाग, बीकानेर (मार्च–1986)
2. माहेष्वरी के. के.(2004) 'माध्यमिकविद्यालयों के शिक्षकों में व्यावसायिक प्रतिबद्धता की मात्रा व अन्तर का अध्ययन्' (एम.एड.लघु शोध प्रबंध एम.डी.एस.अजमेर/शिक्षा चिंतन सितमबर 2011)
3. भानुप्रतापसिंह (2007) 'प्रारंभिक शिक्षा के भावी शिक्षकों की अध्यापन अभिवृत्तियों, मूल्यों, तथा अध्यापन व्यवसाय के प्रति वचनबद्धता एवं समर्पण स्तर का अध्ययन्' (प्राथमिक शिक्षा–अक्टूबर 2007)
4. कुमार डी. (2009) 'बेसिक शिक्षक प्रशिक्षणार्थियों की शिक्षण अभिक्षमता, अभिवृत्तियां,तथा शिक्षण व्यवसाय के प्रति वचनबद्धता एवं समर्पण स्तर का अध्ययन्' (शिक्षा चिंतन–सितम्बर 2011)
5. journal of Indian education,NCERT Delhi, November-2010
6. चौधरी प्यारेलाल, 'शैक्षिक अनुसंधान' स्वाति पब्लिकेशन,जयपुर'

सारणी संख्या – 1

क्र. सं.	वर्ग	प्रशिक्षणार्थियों की संख्या	प्राप्तांको का मध्यमान	प्राप्तांको का मानक विचलन	टी.मान .05 स्तर पर	टी. मान .05 स्तर पर सारणी मूल्य 1798 df	विशेष विवरण
1	प्रशिक्षण पूर्व	900	216.60	25.31	37.78	.01पर 1.96	सार्थक अन्तर है।
2.	प्रशिक्षण पश्चात्	900	259.96	23.96			

सारणी संख्या –2

क्र. सं.	वर्ग	प्रशिक्षणार्थियों की संख्या	प्राप्तांको का मध्यमान	प्राप्तांको का मानक विचलन	टी.मान .05 स्तर पर	टी. मान .05 स्तर पर सारणी मूल्य	विशेष विवरण
1	सामान्य	450	256.76	23.41	4.16	.01पर 1.96	सार्थक अन्तर है।
2.	अनुसूचित जाति/ जनजाति	450	263.36	24.13			

सारणी संख्या –3

क्र. सं.	वर्ग	प्रशिक्षणार्थियों की संख्या	प्राप्तांको का मध्यमान	प्राप्तांको का मानक विचलन	टी.मान .05 स्तर पर	टी. मान .05 स्तर पर सारणी मूल्य 898 df	विशेष विवरण
1	पुरूष	450	256.46	24.55	5.52	.01पर 1.96	सार्थक अन्तर है।
2.	महिला	450	265.43	24.14			

सारणी संख्या –4

क्र. सं.	वर्ग	प्रशिक्षणार्थियों की संख्या	प्राप्तांको का मध्यमान	प्राप्तांको का मानक विचलन	टी.मान .05 स्तर पर	टी. मान .05 स्तर पर सारणी मूल्य 898 df	विशेष विवरण
1	सामान्य वर्ग की महिला	225	258.1	24.90	4.258	.01पर 1.96	सार्थक अन्तर है।
2.	अनुसूचित जाति / जनजाति महिला	225	267.5	21.82			

****

बी.पी.एड विद्यार्थियों की मन : शारीरिक दशाओं का अध्ययन

शिवा संतोषी *

शोध सारांश – हमें उस शिक्षा की आवश्यकता है, जिसके द्वारा चरित्र का निर्माण होता है, मास्तिष्क की शक्ति बढ़ता है। बुद्धि का विकास होता है। और मनुष्य अपने पैरों पर खड़ा हो सकता है। शारींरिक शिक्षा के विद्यार्थियों के तथा सब को अच्छे रखने के लिए मन शारीरिक दशाओं का अध्ययन करना अति आवश्यक है। स्वास्थ्य मानव जीवन की अमूल्य संपत्ति है। यदि स्वास्थ्य अच्छा न हो तो जीवन नीरस निष्क्रिय तथा सुख विहिन हो जाती है। अत: शिक्षा के माध्यम से विद्यार्थियों को मन शारीरिक दशाओं का अध्ययन कराना आवश्यक है। इस शोध कार्य के माध्यम से हमे यह देखने को मिलती है कि विद्यार्थियों में मन शारीरिक दशाओं में घनात्मक सहसबंध होता है। अत: मन और शरीर के इस परस्पर सर्म्पक को विद्यार्थियों को अध्ययन कराना अति आवश्यक है।

प्रस्तावना – शिक्षा का उद्देश्य बालक का सर्वांगीण विकास करके उसे तेजस्वी बुद्धिमान चरित्रवान विकास विद्धान तथा वीर बनाना है। उसी प्रकार दूसरा ओर शिक्षा समाज की उन्नति के लिए भी एक आवश्यक तथा शक्तिशाली साध है। शिक्षा के द्वारा समाज भावी पीढी के बालकों उच्च आदर्शो आकांक्षाओं विश्वाङ्गों तथा परम्पराओं आदि सांस्कृतिक संपत्ति को इस प्रकार से हस्तान्तरित करता है। कि उनके हृदय में देश प्रेम तथा त्याग की भावना प्रज्वलित हो जाती है।

शिक्षा का अर्थ बालक के व्यवहार में वांछित परिर्वतन लाना है। शिक्षा विकास संबंधी क्रिया है। शिक्षा बालक को नये– नये अनुभव प्रदान कर इस योग्य बानाता है। कि वह अपने वातावरण से समायोजन कर अपनी निहित शक्तियों का विकास करते हुए अपनी योग्यतानुसार परिवार समाज और राष्ट्र के विकास में योगदान दे सके।

शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति की सब जन्म जात शक्तियों का विकास करके व्यक्तित्व का सर्वोगीण विकास और सांमजस्य पूर्ण विकास करना है। व्यक्ति की विशेषताऍ व्यक्ति के विकास के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण होती है। ये विशेषताऍ शारीरिक गठन मानसिक योग्यता स्वभाव, आत्म विश्वास और अभिक्षमताओं से प्रभावित होती है।

स्वस्थ्य शरीर में ही ईश्वर का निवास होता है और स्वस्थ्य शरीर में ही एक अच्छा शिक्षा को विद्यार्थियों तथा अन्य विद्यार्थियों के स्वास्थ्य को अच्छा रखने के लिए शरीर रचना क्रिया विज्ञान तथा स्वास्थ्य शिक्षा का ज्ञान रखना आवश्यक है।

अध्ययन का औचित्य – शिक्षा मानव का मूल साधन हैं जिसके द्वारा मनुष्य की जन्म जात शक्तियों का विकास ज्ञान एवं कला कौशल में वृद्धि तथा व्यवहार में परिभाजन किया जाता है और उसे एक सभ्य सुसंस्कृत योग्य नागरिक बनाया जाता है। शारीरिक शिक्षा के छात्र तथा छात्राओं एवं सभी विद्यार्थियों के स्वास्थ्य को अच्छा रखने के लिए शरीर रचना ,क्रिया विज्ञान तथा स्वास्थ्य शिक्षा का ज्ञान रखना आवश्यक है।

अनेकों ईटों से जुडने से दीवार, दीवार के जोड़ने से कमरा,कमरा को जोड़ने से भवन बनता है।

यहॉ हम ईट को भवन रचना की संरचनात्मक ईकाई कह सकते है। इसी तरह कोशिक मनुष्य की संरचनात्मक ईकाई ही। मानी जाती है। बल्कि शरीर में परिलक्षित होते है वे सभी कार्य कोशिका में भी सपन्न होते है।

अत: शिक्षा का उद्देश्य केवल व्यक्ति का मानसिक विकास करना ही नहीं है बल्की शारिरिक विकास भी है। जिससे व्यक्ति अपने लिए और समाज के लिए अधिक उपयोगी सिद्ध हो सके।

अध्ययन का उद्देश्य –

1. बी.पी. एड के छात्र एवं छात्राओं के मन शारीरिक दशा को ज्ञात करना ।
2. बी.पी. एड के छात्रों को मन शारीरिक दशा को ज्ञात करना।
3. बी.पी.एड के छात्राओं की मन शारीरिक दशाओं को ज्ञात करना।

अध्ययन की परिकल्पना –

1. बी.पी. एड के छात्र तथा छात्राओं के मन शारीरिक दशाओं में सार्थक अंतर पाया जाएगा।

न्यादर्श चयन की प्रक्रिया – प्रस्तुत शोध में न्यादर्श चयन के लिए 4 महा.वि. का चुनाव किया गया जिसके अंतर्गत सर्वेक्षण विधि का चयन किया गया । न्यादर्श चयन के लिए बी.पी.एड के 60 विद्यार्थियों का चयन न्यादर्श के रूप में किया गया।

शोध उपकरण – किसी चर के मापन हेतु उपकरण की आवश्यकता होती है। अत: शोध में प्राप्त आंकडों के मापन हेतु ऐसे उपकरण की आवश्यकता है जो सर्वाधिक विश्वसनीय तथा वैध हो प्रस्तुत अध्ययन में बी.पी. एड. विद्यार्थियों के मन शारीरिक दशाओं को मापने के लिए Evgene Walker द्वारा निर्मित परीक्षण स्केल अपनाया गया।

सांरिव्यकीय अभिप्रयोग – उपकरण के प्रशासन के बाद प्राप्त आंकडों का मध्यमान, मानक विचलन एवं टी मूल्यज्ञात किया गया।

चार	संस्था	मध्यमान	प्रमाणिक विचलन	स्वतंत्रता अंश	टी मूल्य	सार्थकता स्तर
छात्र	30	33.6	1.94	58	0.34	असार्थक
छात्राए	30	32.93	9.34			

* सहायक प्रध्यापक, पं. हरिशंकर शुक्ल स्मृति महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग.) भारत

परिणाम – उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि छात्रो में मन शारीरिक दशाओं के लिए मध्यमान 33.6 तथा प्रमाणिक विचलन 1.94 प्राप्त हुआ तथा छात्राओं में मन शारीरिक दशाओं के लिए मध्यमान 32.93 तथा प्रमाणिक विचलन 9.34 प्राप्त हुआ है। अत: दोनो में टी मूल्य 0.34 पाया गया अत: दोनों के मध्य असार्थक स्तर पाया गया।

निष्कर्ष – समग्र रूप से आंकडों के विश्लेषण से यह निष्कर्ष निकलता है कि सभी छात्र एवं छात्राओं के मन: शारीरिक दशा समान नहीं होते है। प्रस्तुत शोध में प्राप्त परिणामों से भी यही ज्ञात हुआ है। जो कि निम्नुसार है।

1. छात्रों एवं छात्राओं की मन: शारीरिक दशा में सार्थक अन्तर नहीं पाया गया है। अत: यह कहा जा सकता है कि वर्तमान युग में छात्र एवं छात्राओं दोनों की ही देख भाल व शिक्षा समान रूप से चलती है। आज छात्राएँ भी खेल कूद में छात्रो को पीछे छोड रहे है। अत: उनकी मन: शारीरिक छात्रों के समान ही है।

शैक्षिक महत्व – सुयोजित शारीरिक शिक्षा द्वारा मानव मे स्वाथ्य ,उल्लास योग्यताएँ तथा चरित्र दृढता की भावनाएँ स्थान लेती है। शारीरिक शिक्षा को समान्य शिक्षा के लक्ष्यों की पूर्ति में सहयोग प्रदान करने वाला महत्वपूर्ण माध्यम स्वीकार कर शारीरिक क्रिया कलापों के माध्यम से शिक्षा कहा गया है।

शारीरिक शिक्षा आत्मा और शरीर को ही नहीं बल्की सम्पूर्ण मनुष्य को प्रशिक्षित करता है। शारिरीक शिक्षा के महत्व निम्नलिखित है।

1. बच्चों को अपनी नैसर्गिक शक्तियों के विकास के पूर्ण अवसर प्राप्त करने के लिए।
2. शारीरिक शिक्षा के गलत धारणओं निर्मूल सिद्ध करने के लिए
3. शारीरिक शिक्षा में आने वाली समस्याओं तथा कठिनाइयों कों सुलझाने के लिए
4. भिन्न भिन्न आयुक्त स्तरों के लिए कार्यक्रम और पाठ्यक्रम का निर्धारण करने के लिए।
5. शारीरिक शिक्षा के कार्यक्रमों को परिवर्तित करने के लिए।

References :-

1. Gescheicder (2001) PsychophysicsThe Fundamentals third edition Lawrence Erlbaum.
2. Wikipedia (2002) encyclopedia " Empirical evaluation of a Modal of Global Psychophysical Jvdments vol.III
3. Chadda N.K. and Ganesan U (2009) Manual of Intelligence Scals agra National Psychological Cooperation.

****

Social Empowerment And Education Of Women In India : Reality & Way Ahead

Dr. Rashmi Verma *

Introduction - Education is the single most important instrument for social and economic transformation. A well educated population, adequately equipped with knowledge and skill is not only essential to support economic growth, but is also a precondition for growth to be inclusive, since it is only the educated and skilled person who can stand to benefit most from the employment opportunities which growth will provide. Improvements in education are not only expected to enhance the efficiency but also augment the overall quality of life. Education is an instrument of social change and eliminates gender disparities and ensures equal opportunities.

In this context, National Mission for the Empowerment of Women (NMEW) through its Social Empowerment and Education domain ensures gender mainstreaming in the education sector in-order to empower women holistically and through her the nation building. Social Empowerment and Education domain aims at converging and linking various schemes of Government of India focusing on women with special reference to the flagship programs of Ministry of Human Resource Development (MoHRD).The domain will review existing studies, policies, programmes, schemes and also commission research studies of various programmes/ schemes on education for better implementation.The approach paper of the Planning Commission for the Twelfth Plan lays emphasis on expansion of secondary education to facilitate enhanced access. The paper also accords priority for skill development for the employability of the persons especially to the empowerment of women with suitable skills. The MoHRD has appreciated the setting up of the NMEW and has expressed the view that the objectives of the NMEW are in consonance with the National Education Policy and the schemes of the MoHRD will be a vehicle of achieving the goals of NMEW.

The National Policy on Education (NPE) 1986- emphasizes the need to use education as an agent of basic change in the status of women. The NPE proposes national education system to play a positive interventionist role in the empowerment of women, fostering of development of new values through redesigning of curriculum, text book, training and orientation of teachers, decision making and administrators and active involvement of educational institutions. These will be an act of faith and social engineering. Women studies will be promoted as the part of various courses and education institutions encouraged taking up active programs to further women's development.Removal of women's illiteracy and obstacles inhibiting their access to, and retention in elementary education will receive overriding priority, through provision of special support services, setting up of time targets and effective monitoring. Major emphasis will be laid on women's participation vocational, technical and professional education at different levels. The policy of non-discrimination will be perused vigorously to eliminate sex, stereotyping in vocational and professional courses and promote women's participation in non-traditional occupations as well and existing and emergent technologies.

The National Policy of Empowerment of Women of 2001 has endorsed the provisions of NPE 1986. The policy prescribes -

1. Equal access to education for women and girls.
2. Special measures will be taken to eliminate discrimination.
3. Universalize education.
4. Eradicate illiteracy.
5. Create a gender-sensitive educational system.
6. Increase enrolment and retention rates of girls.
7. Improve the quality of education.
8. Development of occupation/vocation/technical skills by women.
9. Reducing the gender gap in secondary and higher education.

State Initiatives for promoting girls education Assam - Self defenses training is imparted under MahilaSamakhya Program which evoked good response from the girls.

Uttarakhand: 1) Remedial teaching and Early Childhood Care Education (ECCE) were functional where ICDS centres were not existence. 2) SSA supporting with additional TLM; capacity building; honorarium; constructing rooms in primary schools for running ECE centres; relocation of ICDS centres in/near primary schools; synchronized timings of ECE and primary school.

* Asst. Prof. (Home Science) Govt. Girls College, Neemuch (M.P.) INDIA

Haryana:1) Summer camps were organized on life skills for upper primary school girls which includes physical exercise, yoga and exposure visit. 2)Bicycles are given to girls on joining class VI in a Govt. school located outside the village to prevent dropout at the end of class V and help girls to complete 8 years of schooling16171 girls in 2004-05 and more than 21000 girls 2005-06 benefitted from the programme.

Tripura - Out-of-school girls were enrolled and as an incentive to come to schools, they were given vocational training and provided cycles which has made an appreciable difference.

Uttar Pradesh: 1) MeenaManch- Forum for adolescent girls to discuss their own issues and motivate girls to attend school. 2) Intensive campaign for community mobilisation in selected villages; 21 days training of instructors; use of TLM; residential arrangement for girls and instructors; arrangements for sports, cultural programmes, life skills.

Madhya pradesh: Decentralised provisioning of additional incentives, e.g.: school uniforms, by the local bodies, to motivate girls' retention in schools.Open Learning for many girls who are unable to complete elementary education due to poor access. A tie up with State Open School where there is a 50:50 cost sharing between SSA & State Open School for girls fees.

Orissa – KalasiDhara (carrying earthen vessel): An initiative to mobilise the community and Mother Teacher Associations to monitor the attendance of teachers and children, cleanliness of the school compound, regularity of classes being held. The designated mothers are also required to bring to school those children found to be absent by motivating their parents etc.

Bihar:Summer Camps for Remedial Teaching, provided to girls.

Way Ahead -

1. In the case of SSA programs like KGBV and NGEPEL, optimum utilization of infrastructure requires more attention.
2. Special programs for women under vocational education programs require more emphasis.
3. 3)Coverage of women under Higher Education is only 41.6% and more attention is required on enrolment in faculties like Science and technology.
4. 4)In 2009-2010, women students enrolled was around 60.80 lakh (41.6%), out of which 18.45% were enrolled in professional courses.
5. Remedial programs needed for the girls who have not cleared the NIOS examination.

References :-

1. http://thebreakingstory.com/careers/in-india-a-long-way-before-nakusa-becomes-aishwarya/4010.html
2. http://blogs.wsj.com/indiarealtime/2011/10/20/maharashtra-renames-its-unwanted-girls/
3. http://savethebabygirl.in/home.aspx
4. http://groups.yahoo.com/group/karmayog/message/71296.

****

Right To Information: A Tool of Good Governance

Vinay Dubey *

Abstract - Our country was made a republic on January 26, 1950 and the constitution of the greatest democracy in the world was enforced. With the provisions in our constitution, the efforts have been made to make our democracy a strong institution. It is the backbone of the management of our country and guarantees each and every right to citizen of India. These rights include the right to information from any institution to the rank and file of the country. It is included in the freedom of speech and expression under 19(1)(A) of the Indian constitution. Hon. Supreme court has included the RTI to 'right to live' under A 21, without which the later remains incomplete.

Introduction - RTI- A Principle of Accountability - In the democratic set-up, the governments do not work for the interests of a particular person or group but for the common good of the people in general. That is why each and every public servant and their institutions are required to be accountable to the public. The public must have the right to know the on doings of the government and its functionaries.

RTI- A Principle of Transparency - The good governance depends on the transparent working of the government. The more transparent the government is, the more it becomes reliable to the people. It helps in making them feel that the government is 'for the people'. It checks the embezzlement of the public funds and the carelessness of the public servants and helps in rooting out the rampant corruption and the corrupt officials.

RTI- An International Perspective:

1. At the very outset, it was first introduced in 1810 in Sweden and was made a part of the constitution in 1949;
2. UNO also accepted the same in December 1948 and freedom of expression under Sec.19;
3. In Australia, it was introduced in December 1982;
4. In USA, it has been introduced in 1986;
5. Recently the commonwealth nations like Canada, New Zealand and France have granted the right to their people.

As a whole, RTI is like oxygen to the democratic people in India. It is an exemplary step in order to make Indian democracy strong. It has made the Government agencies transparent and accountable by making the citizens aware of the ins and outs of the RTI act.

The RTI act may be analysed in two different aspects:

1. It is the common constitutional and legal right of a person to obtain any type of the information regarding record, file registers, maps, blueprints etc.
2. It is the constructive duty of the government to provide information to the common man without waiting. Some information which may adversely affect the social peaceful environment and may be detrimental to the common cause of law and order may be restricted and denied to the common man and these are:

- Any information adversely affecting the security and sovereignty of the country;
- Any information adversely affecting the diplomatic relations of the states or countries;
- Any information hindering the investigation and position of law and order;
- Any information leaking the personal confidentiality of a person and which may not be of common good;
- Any information, violating the communal, confidential relations etcetera;
- Any information executing the contempt of court.

In the above cases, the information may however be restrained for the common good of people and country under section 8.1.

An act may be evaluated from two aspects. If the users keep a positive view, the RTI act is a boon for good governance. If the user is negative in outlook, he may violate the true spirit of the act and may mar the very fabric of the act. The act has been constructed in the spirit of rights to the common man and if the same are granted to the people in positive way it is definitely a tool of good governance. People must be positive in outlook while using the same.

References :-

1. www.wikipedia.com
2. RTI india
3. Times of India
4. The Hindu.
5. Hintustan Times
6. India Today

****

*Asst. Prof. (English) Govt. Girls College, Bina (M.P.) INDIA

भारत में महिला सशक्तिकरण एवं संवैधानिक प्रावधान

प्रो. अलका जैन *

प्रस्तावना – महिलाएं किसी भी राष्ट्र, समाज व परिवार की धुरी होती है पर बहुत ही आश्चर्य एवं दुख की बात है कि **'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता:'** जैसे आप्त वचन का अक्षरश: पालन करने वाले भारत जैसे परम्परावादी एवं महान राष्ट्र में आज भी महिलाओं की स्थिति में न तो कोई बदलाव आया है और न ही कोई क्रांतिकारी परिवर्तन। पूर्वाग्रहों और विषमताओं के फलस्वरूप उन्हें 21 वीं सदी में अनेक समस्याओं तथा पीड़ाओं से होकर गुजरना पड़ रहा है। शिक्षा और आर्थिक अधिकारों से वह कोसों दूर है। मूल्यों का इतना अधिक अवमूल्यन कि आज उसे जीवन के अधिकार से ही वंचित किया जा रहा है।

वास्तव में यह एक वैश्विक समस्या है। भारत में नहीं पाकिस्तान, बंग्लादेश, नेपाल और श्रीलंका में लड़कियों का पैदा होना ही अभिशाप माना जाता है। इन देशों में यह स्थिति महिलाओं के प्रति सामाजिक और आर्थिक दृष्टि से उपेक्षापूर्ण रवैया तथा पुत्र प्राप्ति की मानसिकता के कारण लम्बे समय से चली आ रही है। अमेरिका में स्त्रियाँ सबसे अधिक यौन शोषण, मानसिक, अत्याचार एवं बलात्कार की शिकार होती रही है। अधिकांश विकासशील देशों में परम्परागत समाज में महिलाओं को आर्थिक आत्मनिर्भरता से वंचित रखा जाता रहा है, वहाँ नारी की स्वतंत्रता को पारिवारिक विघटन के रूप में देखा जा सकता है। बंग्लादेश में सबसे ज्यादा लड़कियों की मौत गर्भ के समय, जन्म के बाद और दहेज के कारण होती है। श्रीलंका में महिलाओं को भोग की वस्तु समझा जाता है।

विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यूएचओ) के प्रकाशित सिलसिलेवार अध्ययनों के मुताबिक घरेलू हिंसा को रोकने की मौजूदा कोशिशें अपर्याप्त हैं क्योंकि दुनिया भर की एक तिहाई महिलाओं का शारीरिक शोषण होता है। 10 करोड से 14 करोड महिलाएं खतना से पीडित हैं और करीब सात करोड लडकियों की शादी 18 साल की उम्र से पहले अक्सर उनकी मर्जी के खिलाफ कर दी जाती है। अध्ययन में कहा गया है कि करीब सात प्रतिशत महिलाएं अपने जीवन काल में बलात्कार का शिकार होने के जोखिम का सामना करती है। संघर्ष और मानवीय संकट के दौरान होने वाली हिंसा का पीडिताओं के शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य पर नाटकीय असर पडता है। लंदन स्कूल ऑफ हाइजीन एंड ट्रॉपिकल मेडिसिन की प्राध्यापक शेरलोट वाट्स ने बताया, महिलाओं और लडकियों के खिलाफ हिंसा को जादू की कोई छडी खत्म नहीं कर सकती है। लेकिन साक्ष्य हमे बताते हैं कि रवैये और बर्ताव में बदलाव लाना संभव है तथा इसे एक पीढी से कम समय के अंदर हासिल किया जा सकता है।

भारत जैसे सभ्य और विकासशील राष्ट्र में महिलाओं की अस्मिता की रक्षा उनकी समुचित भागीदारी एवं उचित प्रतिनिधित्व हेतु अनेक नियम व कानून बने हैं पर इसके बावजूद आज भी उन्हें उनकी हैसियत व उनकी जनसंख्या के अनुपात में उपयुक्त स्थान मिलता हुआ नहीं दिख रहा है। देश के एक बहुत बड़े भाग में महिलाएं जहां एक ओर कुपोषण, एनीमिया और पौष्टिक आहार की कमी जैसी मूलभूत समस्याओं से जूझ रहीं हैं वहीं दूसरी ओर बालवेश्यावृत्ति, बाल विवाह, देह-व्यापार, महिलाओं की खरीद-फरोख्त, कन्या भ्रूण-हत्या, दहेज-हत्या, भेदभाव तथा अशिक्षा आदि कुछ ऐसी ज्वलन्त समस्याएं है जो हमारा पीछा आज भी नहीं छोड़ रही हैं। हमारे देश में जहां बालिकाओं को गर्भ में ही मरने के लिए विवश कर दिया जाता है वहीं दूसरी ओर बालिकाओं को पैदा होने का अवसर तो प्रदान किया जाता है पर सामाजिक पारिवारिक अंधविश्वास के चलते जीवित ही जमीन में गाड़ दिया जाता है। यह हमारे समाज का एक ऐसा भयावह और घिनौना दृश्य है जो हम सबको कलंकित करने के साथ-साथ हमारी प्राचीन एवं अर्वाचीन सभ्यता को भी शर्मसार कर देता है।

भारत में महिला सुरक्षा कानून- गाँधीजी ने कहा था-'महिलाओं को कानूनी अधिकार मिलना चाहिए, मैं किसी भी हालत में महिलाओं के अधिकारों के विषय पर समझौता नहीं कर सकता। मेरे विचार में कानूनी असमर्थता के तहत् महिलाओं को काम नहीं करना चाहिए। मैं तो लड़के व लड़कियों को समान स्तर पर पूर्ण समानता का पक्षपाती हूँ।'

भारत के संविधान की प्रास्तवना '**हम भारत के लोग'** शब्द से प्रारंभ है, जिसका अर्थ है स्त्री और पुरूष को समानता का दर्जा दिया गया। भारतीय संविधान में मूल अधिकारों के संदर्भ में महिलाओं के लिए महत्वपूर्ण प्रावधान किए गए है।

अनुछेदन 15-

1. राज्य किसी नागरिक के विरूद्ध किसी आधार पर भेदभाव नहीं करेगा।
2. कोई नागरिक केवल धर्म, वंश, जाति, लिंग के आधार पर किसी भी नियोग्यता दायित्व या शर्त के अधीन नहीं होगा।
3. अनुछेदन का कोई भी प्रावधान राज्य को महिलाओं और बच्चे के लिए विशिष्ट प्रावधान बनाने से नहीं रोक सकता।

अनुछेदन 16 -

4. राज्य के अधीन किसी पद के संबंध में धर्म, वंश, जाति, लिंग के आधार पर कोई नागरिक अयोग्य नहीं होगा।

अनुछेदन 21- यह प्राण, देहिक स्वतंत्रता और संरक्षण के अधिकार की व्यवस्था करता है। यह अधिकार स्त्री-पुरूष को समान संरक्षण देता है।

अनुछेदन 39- पुरूष और स्त्री नागरिकों को समान रूप से जीविका के पर्याप्त साधन प्राप्त करने का अधिकार हो।

अनुछेदन 43- यह महिला मजदूरों के लिए वेतन तथा अच्छा जीवन जीने की व्यवस्था करता है।

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

अनुछेदन 51– प्रत्येक नागरिक का यह कर्त्तव्य होगा कि वह ऐसी प्रथाओं का त्याग करें जो स्त्रियों के सम्मान के विरूद्ध है।

संविधान के नीति निर्देशक तत्वों में महिलाओं के अधिकार सुनिश्चित किए गए। अनुछेदन 320, 326 निर्वाचन नामावली में महिला और पुरूषों को समान रूप से मत देने और चुने जाने का अधिकार देता है।

भारत में महिला मानव अधिकारों को मूल अधिकारों के साथ जोड़ा गया है तथा महिलाओं के लिए विस्तृत अधिकारों की विवेचना की गई हैं। इस संदर्भ में संविधान में विभिन्न अधिनियमों को स्थान दिया गया है–

बाल विवाह अवरोध अधिनियम 1929 (संशोधित 1976) – लड़के के विवाह की आयु 21 वर्ष व लड़की की 18 वर्ष तय की गई है तथा अपराध को संज्ञेय बना दिया गया।

दहेज निवारण अधिनियम 1961 (संशोधित 1986) – इसके अन्तर्गत दहेज लेना दण्डनीय अपराध है तथा दहेज–मृत्यु पर 7 वर्ष से लेकर आजीवन कारावास का प्रावधान है।

अनैतिक व्यापार निवारण अधिनियम 1956 (संशोधित 1986)– इसके अन्तर्गत व्यवस्था है कि संदिग्ध या अपराधी महिला से पूछताछ, तलाशी, एक गिरफ्तारी केवल महिला पुलिस या महिला सामाजिक कार्यकर्त्ता द्वारा की जायेगी।

सती प्रथा निवारण अधिनियम 1987 – इस अधिनियम के अन्तर्गत सती कर्म करने के लिए कारावास और जुर्माना दोनों का प्रावधान है।

समान पारिश्रमिक अधिनियम 1976 – इसके अन्तर्गत समान कार्य हेतु महिलाओं को भी पुरूषों के समान पारिश्रमिक देने का प्रावधान किया गया है।

गर्भ का चिकित्सीय समापन अधिनियम 1971– इस अधिनियम के अनुसार गर्भ समापन कब किया जा सकता है, बताया गया है। कन्या–भ्रूण हत्या को रोकने के लिए यह कानून बनाया गया है।

स्त्री अशिष्ट रूपण (प्रतिबंध) अधिनियम 1986 – इस अधिनियम के अन्तर्गत किसी भी महिला को इस प्रकार चित्रण नहीं किया जायेगा जिससे उसकी सार्वजनिक नैतिकता को आघात पहुँचे। समस्त विज्ञापन, प्रकाशन आदि में अश्लीलता पर प्रतिबंध लगाया गया है।

चलचित्र अधिनियम 1952 – इस अधिनियम में फिल्म सेंसर बोर्ड के गठन का प्रावधान किया गया है जो ऐसी फिल्मों पर रोक लगायेगा जिसमें महिलाओं की मर्यादा भंग होती हैं।

विशेष विवाह अधिनियम 1954 – इसमें महिलाओं को पैत्रक सम्पत्ति में उत्तराधिकार प्रदान किया गया है। हिन्दू विवाह अधिनिमय 1956 स्त्रियों को भरण–पोषण ओर सम्पत्ति प्रदान करता है।

प्रसव पूर्व निदान तकनीकी अधिनियम 1993– इसमें गर्भावस्था में बालिका–भ्रूण की पहचान कराने पर रोक लगाई गई है।

73वॉ, 74 वॉ, संविधान संषोधन 1993 – इस नियम के द्वारा महिलाओं को त्रिस्तरीय पंचायतों में एक तिहाई आरक्षण प्रदान करने का प्रावधान है।

भारतीय दण्ड संहिता (फौजदारी कानून) की धारा 376 – बलात्कार के अपराध से संबंधित है। इस जुर्म के लिए अपराधी को उम्र कैद भी हो सकती है।

घरेलू हिंसा के संरक्षण अधिनियम 2005 – यह अधिनियम महिलाओं को शारीरिक, लैंगिक, मौखिक, भावनात्मक या आर्थिक दुर्व्यवहार से बचाने का प्रावधान है। महिलाओं को प्रताड़ित करने के अपराध में एक वर्ष तक की जेल अथवा बीस हजार रूपये जुर्माना अथवा दोनों हो सकते है।

पैतृक सम्पत्ति अधिकार अधिनियम 2005– पैत्रक सम्पत्ति में बेटे और बेटियों को समान अधिकार प्राप्त हो गये है।

महिला सुरक्षा बिल– देश में महिलाओं की सुरक्षा को लेकर बनाया गया महिला सुरक्षा बिल राष्ट्रपति प्रणब मुखर्जी के हस्ताक्षर के साथ अप्रैल 2013 में कानून बन गया है। दिल्ली गैंगरेप के बाद महिलाओं की सुरक्षा के मुद्दे पर देशभर में विरोध प्रदर्शन हुआ जिसके चलते कई सामाजिक संगठनों ने महिलाओं की सुरक्षा के लिए कड़े कानून की मांग की। नए बिल में न केवल साधारण यौन अपराधों की सजा बढ़ाई गई है बल्कि बलात्कार मामले में न्यूनतम 20 वर्ष और अधिकतम मौत की सजा का प्रावधान किया गया है। इसके अलावा महिला के संवेदनशील अंगों से छेड़छाड़ को बलात्कार की श्रेणी में रखा गया है। नए कानून के तहत सरकार ने महिलाओं से जुड़े अपराधों को वर्गीकृत कर कड़ी से कड़ी सजा का प्रावधान रखा है।

भारत में महिला सशक्तिकरण हेतु राष्ट्रीय नीति –भारत सरकान ने देश में महिलाओं की स्थिति सुधारने का लक्ष्य हासिल करने के लिए वर्ष 2001 में महिला सशक्तिकरण हेतु राष्ट्रीय नीति जारी की। भारतीय संविधान की प्रस्तावना, मूल अधिकार, मूल कर्त्तव्य और राज्य के नीति–निर्देषक तत्वों में लिंग समानता का सिद्धांत अंतर्निहित है। संविधान में न केवल महिलाओं को बराबरी का दर्जा दिया गया है, बल्कि इसमें राज्यों को इस बात के भी अधिकार दिये गये है कि वे महिला हितों के लिए आवश्यक कदम भी उठा सकते है।

महिलाओं के अधिकारों की रक्षा और कानूनी हक प्रदान करने के लिए 1990 में संसद में पारित एक कानून के जरिए 'राष्ट्रीय महिला आयोग' का गठन किया गया। संविधान के 73वें व 74वें संशोधन के जरिए महिलाओं के लिए पंचायतों व नगर निगमों में स्थान आरक्षित किये गये। इससे स्थानीय स्तर पर नीति निर्माण व निर्णय निर्धारण में महिलाओं की भागीदारी की मजबूत नींव तैयार हुई।

भारत ने महिलाओं के बराबरी के अधिकार को सुरक्षित करने के प्रति वचनबद्ध अनेक अंतर्राष्ट्रीय संधियों व मानवाधिकार समझौतों का अनुमोदन भी किया है। इनमें 1993 की महिलाओं के प्रति सभी तरह के भेदभाव को समाप्त करने की संधि, 1985 की नैरोंबी प्रगतिशील रणनीति संधि, 1995 की बीजिंग घोषणा व प्लेटफार्म फॉर एक्शन संधि, 1975 की मैक्सिको कार्य योजना और संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा स्वीकृत 21वीं शताब्दीं के लिए लिंग समानता और विकास व शांति पर घोषणा पत्र शामिल है। पिछले तीन दशकों में सामाजिक आर्थिक और राजनीतिक समानता को बढ़ाने वाले कदमों या उपायों के जरिए महिलाओं के सशक्तिकरण की आवश्यकता और मूलभूत मानवाधिकारों तक महिलाओं की पहुँच, पोषण व स्वास्थ्य और शिक्षा में सुधार के बारे में जागरूकता बढ़ी है।

लिंग समानता हासिल करने का संयुक्त राष्ट्र और दूसरी कई एजेंसियों का कार्य एक–दूसरे से नजदीकी रूप से जुड़े तीन क्षेत्रों की ओर अभिमुख है। महिलाओं की आर्थिक क्षमता को मजबूती प्रदान करना जिसमें नई तकनीकी और नए व्यापार एजेण्डा पर ध्यान केन्द्रित है, महिला नेतृत्व और राजनीतिक भागीदारी को प्रोत्साहन देना और महिलाओं के खिलाफ होने वाली हिंसा को समाप्त करना। इससे यह स्पष्ट है कि महिलाओं के लिए बराबरी का दर्जा हासिल करने के लिए अभी बहुत लम्बा फासला तय करना है और इस कार्य के लिए कई मंचों पर एकाग्र प्रयासों की आवश्यकता है।

चुनौतियाँ एवं निष्कर्ष–भारत में जहाँ तक महिलाओं की सुरक्षा की प्राप्ति का प्रश्न है, तो यह कटघरे में है। भारत की सामाजिक व्यवस्था इस प्रकार की

है कि स्त्री को दोयम दर्जे का इंसान समझा जाता है। हमारी नींव ही (धार्मिक ग्रंथ) स्त्रियों की जड़े खोद रही है। जब नींव ही कमजोर हो तो उसकी इमारत कैसे मजबूत हो सकती है। सिर्फ 60 साल की आजादी बरसों से चली आ रही गुलामी को कैसे तोड़ सकती है। महिलाओं की स्थिति सुधारने और उसे समानता का हक दिलवाने के लिए संविधान में सारे प्रबंध औचित्यहीन हो जाते है। दहेज प्रतिबंध अधिनियम है, फिर भी दहेज के लिए कितनी ही लड़कियों को जला दिया जाता है या उन्हें आत्महत्या पर मजबूर होना पड़ता है। बाल विवाह अवरोध अधिनिमय है लेकिन हर साल कई बाल विवाह होते है। सती निवारण अधिनियम है पर आज भी सती होने की घटनाएँ होती है। कन्या भ्रूण हत्या कानूनन अपराध है पर वह लगातार जारी है। बलात्कार पर कठोर प्रावधान है पर बलात्कार होते रहते है। घेरलू हिंसा अधिनियम बन चुका है लेकिन घेरलू हिंसा लगातार जारी है। लिंग भेद हर स्तर पर देखने को मिलता है।

लिंग भेद के मामले में वर्ल्ड इकोनोमिक फोरम के द्वारा कराये गये सर्वेक्षण में 56 देशों में भारत का स्थान 53 वाँ है। राजनैतिक अधिकारिता में 24 वाँ, स्वास्थ्य व बेहतर रहन-सहन के क्षेत्र में 34 वाँ 9 आर्थिक अवसरों के क्षेत्र में 35 वाँ, शिक्षा और आर्थिक भागीदारी में 57 वाँ व 54 वाँ, स्थान हैं। यही कारण है कि आज भी पुत्र की चाह में पुत्रियों की बलि चढ़ा दी जाती है। आज बाल जन्मदर 1000 लड़कों पर 940 लड़कियाँ रह गई है। शहरों में यह प्रतिशत और भी कम है।पहले तो स्त्रियों को दूसरे अधिकारों से वंचित किया गया लेकिन आज तो उसे जन्म लेने के अधिकार से भी वंचित कर दिया गया है। तब हम कौन-सी स्वत्रंता की बात करते हैं? और कौन-से मानव अधिकार की? क्योंकि जीवन जीने का अधिकार सबसे बड़ा अधिकार है जब उसी अधिकार से उसे वंचित कर दिया जाता है तब सारी बातें खोखली लगती है।

प्रत्येक वर्ष एक करोड़ बीस लाख लड़कियाँ जन्म लेती है लेकिन 30 प्रतिशत लड़कियाँ 15 वॉ जन्मदिन भी नहीं देख पाती। हर जगह उपेक्षा का शिकार होती है। बलात्कार के मामले में 90 प्रतिशत गिरफ्तारी के बावजूद 77 प्रतिशत लोग बाईज्जत बरी हो जाते है। बलात्कार के 56 हजार मामले लंबित है। देषभर में 40000 बाल वेश्याएं है। व्यावसायिक बाल वेश्यावृत्ति 5 से 10 प्रति वर्ष की दर से बढ़ रहीं हैं।

एमनेस्टी इन्टरनेशनल में राष्ट्रीय महिला दिवस मार्च 2004 के एक दिन पूर्व जारी रिर्पोट में कहा कि विश्व मे एक तिहाई महिलाएं अपने जीवन में गम्भीर हिंसा झेलती है ओर यह उनके मानव अधिकार का उल्लघन है। विश्वभर में कराए गए 50 सर्वेक्षणों से पता चलता है कि हर तीन में एक महिला अपने जीवनकाल में पीटी जाती है और यौन कार्यो में जबर्दस्ती धकेल दी जाती है। 16 से 44 साल के बीच महिलाओं की मौत और विकलांगता का प्रमुख कारण घरेलू हिंसा है। 30 प्रतिशत परिवारों में महिलाओं पर अत्याचार होता है। भ्रूण हत्या के कारण विश्व में 6 करोड़ महिलाओं का जन्म ही नहीं हो पाता। जो महिलायें हत्या की शिकार होती है उनमें 70 प्रतिशत अपने पतियों द्वारा शिकार होती है। अनपढ़ और गरीब होने के कारण ये महिलाएँ अपने अधिकरों की लड़ाई नहीं लड़ पाती है। ये सब ऐसी चुनौतियाँ है जिनको दूर करना आसान नहीं है।

स्त्री हमेशा समाज की दृष्टि में एक औरत है, एक इंसान या एक व्यक्ति नहीं, वह तो सिर्फ और सिर्फ एक औरत है। यही कारण है कि एक स्त्री सदा औरत बनकर पिछड़ती आई है। उसकी देह की सुरक्षा ने उसे सदा के लिए कमजोर बना दिया है और पुरूष के लिए मात्र देह बनकर रह गई है। जरूरत है समाज के इस दृष्टिकोण को बदलने की, उसे आगे बढ़ावा देने की न कि जंजीरों से जकड़े रखने की, उसे सशक्त करने की न कि शोषण करने की।वास्तव में महिला सुरक्षा को जन-मानस अपने मन से क्रियात्मक रूप देगा तभी महिला सशक्तिकरण का सपना साकार होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अग्रवाल अनुजा, 2013 'समझने की मानसिकता' नईदुनिया 1 सित. 2013, पृष्ठ क्र. 3
2. चन्द्रशेखर डॉ. ममता, 2008, मानव अधिकार और महिलाएँ, म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल
3. चतुर्वेदी पंकज, 'देश में बिगड़ता लैंगिक अनुपात , दैनिक जागरण 2013.
4. जोशी आर.पी., 2003 मानव अधिकार एवं कर्त्तव्य, नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद
5. कुमार रंजना, 2013 'लगातर घट रहा औरत का सम्मान', नईदुनिया 13 जून 2013 पृष्ठ क्र. 3
6. मेहता डॉ. दीपक, 2013, 'बंदिशों से बेफ्रिक हिंसा से गुरेज नहीं' नईदुनिया, तरंग 1 सित. 2013 पृष्ठ क्र. 3
7. परसाई संजीव, 2014 'ओर कितना असमंजस आधी आबादी के सवालों पर' जनसत्ता पृष्ठ क्रं. 4
8. रघुवंशी राखी, 2014 'महिलाओं की आजादी का रास्ता' दैनिक पीपुल्स समाचार 27 जुलाई, पृष्ठ क्र. 5
9. शर्मा डॉ. पुलकित, 'बेकाबू पुरूष: शैतान बन रहे शरीफ' नईदुनिया, 1 सित. 2013 पृष्ठ क्रं. 3 (तरंग)
10. सिंह अभिमन्यु, 2013 'लुटती अस्मत चुभते सवाल' नइदुनिया, तरंग 13 जून 2013, पृष्ठ क्र. 3
11. श्रीवास्तव राजीव, 2009 'महिला सशक्तिकरण के लिए राष्ट्रीय नीति' समसामयकी महासागर जून 2009 पृष्ठ क्रं. 7
12. शैवाल स्वाति, 2013 'अभावों की जानलेवा विरासत' नायिका, नईदुनिया 10 अप्रैल 2013 पृष्ठ क्र.2
13. व्यास डॉ. गिरिजा, 2010 महिला सशक्तिकरण : 'एक नई सुबह का आगाज' - मानव अधिकार : नई दिशाए, वार्षिक अंक 2010, पृष्ठ क्रं. 163, 164 राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग, नई दिल्ली
14. Tejaswinisanwaad.blogspot.in
15. wwww.naidunia.com
16. hhttp://navbharattimes.indiatimes.com/
17. http://yojana.gov.in/
18. http://books.google.co.in/

****

कामकाजी महिलाओं की स्थिति एंव वैश्वीकरण

डॉ. सुमित्रा वर्मा *

शोध सारांश – वैश्वीकरण शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम थ्योडोर लेबिटने 1985 में किया था। वैश्वीकरण व्यापार के अंतर्राष्ट्रीयकरण का परिचायक है जिसमें अंतर्राष्ट्रीय प्रतियोगिता विकसित करने के लिए व्यापार एवं आर्थिक नीतियों के प्रति मात्रात्मक एवं गुणात्मक प्रतिमान स्थापना हेतु विश्वव्यापी दृष्टिकोण अपनाया जाता है। वैश्वीकरण बाजार अर्थव्यवस्थाओं और निजी पूँजी प्रवाह जैसी शक्तियों से संचालित होने के साथ श्रम कौशाल का अंतर्राष्ट्रीय करण करता है। वैश्विक अर्थव्यवस्था में आये परिवर्तनों से महिलाओं, पुरूषों एवं बच्चों के कार्य अनुभवों में अनेक परिवर्तन हुए हैं।
वैश्वीकरण का महिलाओं पर मिश्रित प्रभाव दिखाई देता है। वैश्वीकरण ने मुक्त व्यापार क्षेत्र एवं फैक्ट्रिओं में एवं निर्यात प्रसंस्करण क्षेत्रों में रोजगार के अवसर पैदा किये हैं। विकासशील देशों में इसने आंशिक रूप से महिलाओं को आय पर नियंत्रण स्थापित करने में, रोजगार प्राप्त कर उनके सशाक्तिकरण में योगदान प्रदान किया है। उन्होंने परम्परागत पितृसत्तामक ढाँचे से बाहर आने तथा पारिवारिक एवं वैवाहिक संबंधों में परिवर्तन लाने में सफलता प्राप्त की है। परन्तु अधिक काम के अवसरों के साथ उनकी कार्य की दशाॉए सोचनीय है, वेतन कम है एवं वे असुरक्षित है। सम्पूर्ण विशव में महिला श्रमिकों को सस्ते एवं लचीले श्रम के कारण प्राथमिकता दी जाती है। वे दिहाड़ी ठेका, अस्थायी या कुटीर कामगार के रूप में कार्य करती है। अस्थायी श्रेणी में महिला श्रमिकों की सभी श्रमिक अधिकारों से वंचित होना पड़ता है। इलेक्ट्रॉनिक्स, डाटा एन्ट्री, खेलकूंद के वस्त्र टेली सर्विसेज, वस्त्र निर्माण, जैसे क्षेत्रों में महिलाओं के पास तकनीकी दक्षता में नई ज्ञान आधारित अर्थव्यवस्था में उनकी समुचित भागीदारी में संदेह हैं।

प्रस्तावना – अधिकांश नियोक्ताओं का कहना है महिला कामगारों के लिए रोजगार पदोन्नति आदि के समान अवसर उपलब्ध करवाने में कठिनाई उत्पन्न होती है। इसके अतिरिक्त पुरूष भी इनके प्रति अपनी दयिकानूसी सोच में परिवर्तन नहीं ला सके। सामाजिक संस्कृति के नाम पर महिलाओं का क्षेत्र खाना पकाने, सफाई करने, बच्चों के पालन पोषण या अन्य घरेलू कार्यों तक सीमित कर दिया जाता है। अस्थायी नौकरी या पार्ट टाईम नौकरी भी वही ठीक है जिसमें ओवरटाईम न करना। सारांशात: समानता के स्तर को प्राप्त नहीं कर पाये हैं।

अमेरिका श्रम सचिव ब्यूरौ के ऑकडों के अनुसार श्वेत पुरूष की एक डॉलर आय की तुलना में अश्वेत महिला की 64 और हिस्पानी महिला केवल 55 सेंट की आय होती है। दक्षिण अफ्रीका में रंगभेद एवं जेंडर एक दूसरे को महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित करते है। जापान में स्थायी एवं अस्थायी कामगारों में पुरूष कामगारों की संख्या 9.4 प्रतिशात अस्थायी है तो महिलाओं में यह प्रतिशात 39.8 है। इसी तरह फिलिपीन महिला घरेलू कामगार पुरूषों के प्रत्येक 1 पी के तुलना में 39 संटिवों कम प्राप्त करती है। कुटीर कामगारों की स्थिति वैश्वीकृत अर्थव्यवस्था से सीधे प्रभावित होती है। बढ़ती हुई जीवनयापन लागत एवं वास्तविक आय में कमी के कारण महिलाओं को नये आय स्त्रोत ढूढने पड़ते है। फसलों के उत्पादन में बढ़ती महिला भागीदारी उत्पादन लागत में कमी ला रही है। पुरूष रोजगार की तलाश में शहरों की ओर उन्मुख हो रहे है। अशंकालिक रोजगारों में महिलाएँ अपने कार्य एवं परिवार दोनों को समय दे पाती है। तथा नियोक्ता बेहतर कार्य प्रदर्शान के नाम पर अधिक कार्य का बोझ लाद देते है तथा मामूली पारिश्रमिक से काम चला देते है।

जर्मन जनसंख्या लघु रोजगार के अनुसार एक गणना में ऐसे लघु कामों पर आश्रित लोगों की संख्या 40 लाख है और इनमें लगभग आधी महिलाएँ है। ट्रेड यूनियनों में भी महिलाएँ कम शामिल होती है। भारी सदस्यता शुल्क या नौकरी छिनने का डर उन्हें इससे दूर रखता है। भारत में महिलाएँ आर्थिक रूप से बुरी तरह पिछड़ी हुई है। उनके शारीरिक श्रम की कोई मान्यता नहीं है न ही उन्हें उक्त श्रम के संदर्भ में कोई आर्थिक अधिकार प्राप्त है। कामकाजी महिलाएँ भी आर्थिक रूप से अपने पति या पिता से स्वतंत्र नहीं हैं, ए.आई.आर. 1996 सुप्रीम कोर्ट 1697 यह स्वीकार किया गया है कि महिलाऐं आबादी का आधा हिस्सा होती हैं, वे काम की कुल अवधि का 23 अवधि कार्य करती हैं लेकिन वे विश्व की कुल आय का मात्र 110 वाँ प्राप्त करती हैं, विश्व की पूरी सम्पत्ति के 100 वें से भी कम हिस्सा है उक्त तथ्य महिलाओं के भीषण शोषण को प्रकट करता है, महिलाओं में शिाक्षा के व्यापार तथा समाज के आधुनिकीकरण के साथ महिलाओं में प्रताड़ना की घटनाऐं भी लगातार बढ़ रही हैं पुरूष समाज का बढ़ा वर्ग आज भी उनके व्यवसाय नौकरी या स्वावलम्बन को स्वीकार नहीं कर पा रहा हैं

उक्त तथ्यों के विवेचना से स्पष्ट होता है कि महिलाओं को उनके बुनियादी मानवीय अधिकार तथा सम्मान जनक एवं समानता युक्त जीवन तब तक प्राप्त नहीं हो सकता जब तक समाज की मानसिकता में परिवर्तन नहीं आता है। इस संदर्भ में कार्य पालिका को जो भूमिका निर्वाहन करनी चाहिए उसमें न्याय पालिका ने आगे बढ़कर पहल की है साथ महिलाओं को भी स्वयं आगे बढ़कर अपनी मानसिक स्थति में परिवर्तन लाना अनिवार्य है। उन्हें पुरूष पर निर्भरता खत्म करनी होगी समाज की स्थापित नारियों की दोहरी भूमिका के संदर्भ में समाज को विवेकपूर्ण तरीके से विचार करना होगा बदलती दुनिया

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, ढ़ाना, जिला–सागर (म.प्र.) भारत

में औरत के बदलते संसार को पहचानने की अंत: दृष्टि जरूरी है जिसकी खोज में पुरूष की सकारात्मक साझेदारी से इंकार नहीं किया जा सकता|

वैश्वीकरण की प्रक्रिया महिलाओं के श्रम को सघन बनाने के साथ उन्हें दिहाड़ी, अकुशाल, कम वेतन एवं गैर यूनियन कार्यो से बाँधकर कमजोर एवं विभाजित करती है। महिला कामगारों के अधिकारों का संघर्ष एक सम्पूर्ण लक्ष्य नहीं है बल्कि उन्हें इस चेतना से भरने का प्रयास भी है कि वे भी शोषित वर्ग की एक सदस्य हैं और उन्हें भी ऐसे समाज निर्माण के लिए संघर्ष की आवश्यकता है जहाँ उन्हें उनकी अस्तित्व स्वीकृति के साथ मानवीय अधिकारों से वंचित ना हो। महिला परिप्रेक्ष्य पर परिचर्चा और लैंकिग चिन्ताओं को मिली मान्यता पृथ्वी शिखर सम्मेलन (रियो डी जेनेरियो 1992) मानवाधिकार (वयना 1993) जनसंख्या (काहिरा 1994) सामाजिक विकास (कोपेनहेगेव 1995) जैसे प्रमुख अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में भी अभिव्यक्त होने लगी है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. www.adaily.org
2. www.mynation.net
3. The hindu, 26 oct,2006
4. योजना पत्रिका।
5. आधुनिक समाजशास्त्रीय निबंध-डॉ.एम.एन सिंह।
6. कुरूक्षेत्र पत्रिका, नवंबर 2006

****

महिला हिंसा - कारण एवं जागरूकता

डॉ. भारती जोशी *

प्रस्तावना – भारत की आजादी के 65 वर्षो के सफर में देश ने 80 प्रतिशत से अधिक साक्षरता अर्जित कर ली है, तकनीकी क्षेत्र में नित नये परचम फहराये जा रहे है। लेकिन अफसोस साक्षरता और शिक्षा जो कि एक ही सिक्के के पहलू है, पूर्णतया विपरीत प्रतीत होते है जब रोज सुबह अखबारों में अपराधी खबरें पढ़ने को मिलती है, टी.वी पर क्राइम पेट्रोल दस्तक, सावधान इंडिया जैसे कार्यक्रम प्रतिदिन प्रसारित कर जनता को सचेत करने का प्रयास किया जा रहा है।इस तरह बढ़ते अपराधों को देखकर लगता है कि क्या शिक्षित समाज में अपराध और हिंसा मान्य है? या समाज असंवेदनशील हो गया है ? अशिक्षित जनता को साक्षर करने की मुहिम इसलिए चलाई जाती है ताकि व्यक्ति अक्षर ज्ञान के माध्यम से हर क्षेत्र में जागरूक हो और एक सभ्य, जिम्मेदार, संवेदनशील एवं प्रगतिशील नागरिक बने। वर्तमान में जैसे जैसे साक्षरता का आँकड़ा बढ़ता जा रहा है वैसे वैसे नैतिक मूल्यों और संवेदनशीलता का ग्राफ नीचे की ओर झुकता जा रहा है। क्या यही शिक्षा है? **'अशिक्षा'** जो कि अनेक समस्याओं की जड़ है। अशिक्षा से बेकारी, बेरोजगारी की समस्या पैदा होती है जिससे समाज में अपराध बढ़ते है। विभिन्न अपराधों में महिलाओं के विरूध्द हिंसा के आँकड़े चिन्ताजनक है। एक ऐसे देश में महिलाओं पर बढ़ती हिंसा झकझोरने वाली है जहाँ महिला को देवी की तरह पूजा जाता है, स्तुति की जाती है। बरसों से कहा सुना जाता रहा है कि जहाँ महिलाओं का सम्मान होता है वहाँ देवगण निवास करते है पर आज तो महिला सुरक्षा के प्रथम पायदान पर ही प्रश्न चिन्ह लगा है । माँ के गर्भ में अवतरित होते ही बालिका भ्रूण की हत्या हो जाती है, यह तथाकथित सुशिक्षित समाज की देन है।

इतिहास के पन्ने पलटने से विदित होता है कि वैदिक काल में महिलाओं की समाज में सर्वोच्च स्थिति थी। उस समय महिलाओं के खिलाफ अपराध जैसी बात अस्तित्व में ही नहीं थी। जैसे जैसे समाज विकसित होता जा रहा है वैसे वैसे महिलाओं के खिलाफ हिंसा और अपराध का ग्राफ भी बढ़ता ही जा रहा है। भारत के कुछ हिस्सों में आज भी महिलाओं को वस्तु की तरह बेचा जाता है, उनके शरीर का सौदा किया जाता है। बड़े बड़े शहरों में भी महिलाएं असुरक्षित है सरेआम छेड़छाड़, अपहरण की घटनाएं सामान्य हो गयी है। इस तरह की समस्याओं के तेजी से बढ़ने का कारण यह है कि आज का 'सभ्य' 'शिक्षित समाज यह सब होते हुए मौन देख रहा है। सुरक्षित वातावरण मुहैया कराना शिक्षित समाज की सर्वोपरि जिम्मेदारी है, जिससे वह मुँह मोड़ रहा है। केन्द्रीय स्वास्थ्य मंत्रालय द्वारा कराये गये एक सर्वे के मुताबिक घरेलू हिंसा के मामले में देश में बिहार राज्य पहले नंबर पर है, वहाँ लगभग 60 प्रतिशत में से 50 प्रतिशत महिलाओं के साथ मारपीट की जाती है जबकि 10 प्रतिशत यौन हिंसा की शिकार होती है। मध्यप्रदेश एवं राजस्थान घरेलू हिंसा में द्वितीय स्थान पर है। यहाँ 46 प्रतिशत महिलाएं घरेलू हिंसा की शिकार है। तीसरा स्थान मणिपुर का है जहाँ लगभग 44 प्रतिशत महिलाएं घरेलू हिंसा की शिकार है। उत्तर प्रदेश एवं तमिलनाडू का चौथा स्थान है जहाँ 42 प्रतिशत महिलाएं घरेलू हिंसा की चपेट में है। असम और पश्चिम बंगाल पाँचवें स्थान पर है जहाँ 40 प्रतिशत घरेलू हिंसा से पीड़ित है और अरूणाचल प्रदेश में 39 प्रतिशत के साथ छठे स्थान एवं उड़िसा राज्य सातवें स्थान पर है जहाँ 38 प्रतिशत महिलाएं घरेलू हिंसा की शिकार है। राष्ट्रीयस्तर पर घरेलू हिंसा की शिकार महिलाओं की संख्या 37 प्रतिशत है। थॉमसन रायटर्स फाउंडेशन के एक सर्वे के अनुसार भारत महिलाओं के रहने के लिए जी-20 देशों में सबसे खराब मुल्क है क्योंकि-

1. भारत में सबसे ज्यादा लिंगभेद एवं कन्याभ्रूण हत्या होती है।
2. घरेलू हिंसा और यौन उत्पीड़न के मामलों में महिलाएं अब भी सुरक्षित नहीं है
3. बाल विवाह के केस अब भी सामने आते है।
4. बेहतर स्वास्थ्य सुविधाओं तक हर महिलाओं की पहुँच नहीं है।
5. महिलाएं अपने अधिकारों का उपयोग करने में बहुत पीछे है।
6. महिलाओं की आबादी का एक बड़ा हिस्सा प्रारंभिक शिक्षा से वंचित है, उच्च शिक्षा तक कुछ प्रतिशत महिलाएं ही पहुँच पाती है।

सर्वे में अलग अलग देशों के 370 विशेषज्ञों से बातचीत की गयी। सर्वे 19 विकसित और विकासशील देशों में किया गया। इनमें भारत, ब्राजील, मैक्सिको, इंडोनेशिया, सउदी अरब जैसे देश शामिल किये गये।स्वास्थ्य सुविधाओं की गुणवत्ता, शारीरिक और यौन हिंसा का खतरा, राजनीति में महिलाओं का दखल और महिलाओं को संपत्ति के अधिकार जैसे पैमाने रखे गये थे। 19 देशों की सूची में सबसे अन्तिम पायदान पर रहते हुए भारत में महिलाओं की स्थिति सबसे बदतर पायी गयी। कनाडा में महिलाओं की स्थिति को सबसे बेहतर बताया गया है। कनाडा सरकार ने महिलाओं को हिंसा और शोषण से बचाने के लिए पुख्ता प्रबंध किये है। जर्मनी, ब्रिटेन, आस्ट्रेलिया और फ्रांस महिलाओं के रहने के लिहाज से टॉप 5 में शामिल है। आज के वैश्वीकरण के युग में हमारे देश में इस तरह के आंकड़े हमें शर्मसार करते है कहाँ तो हम चंद्र मंगल पर बसने की बातें करते है और कहाँ अब तक पारम्परिक बेड़ियों से ही मुक्त नहीं हुए है। महिलाओं में अशिक्षा इसकी खास वजह मानी गयी है। वास्तव में महिलाओं को शिक्षा से वंचित करना उन्हें सत्ता, प्रभुताऔर शक्ति से दूर रखना हमारे समाज की परम्परा रही है। आज भी समाज में ऐसे अनेक पाखंडी रीति रिवाज, तौर तरीके, अभिवृत्तियाँ, पूर्वाग्रह और संस्थागत वैचारिक विभिन्नताएं मौजूद है जिसने बड़ी चालाकी के साथ महिलाओं को सामाजिक मान्यताओं की बेड़ियाँ पहनाकर दोयम दर्जा दिया है। पर्दाप्रथा, छूआछूत, रजोनिवृत्ति एवं शिशु जन्म संबंधी पुरूष समाज द्वारा बनाए गए कतिपय प्रतिबन्धों के कारण महिलाओं में स्वयं के प्रति एक

* संचालक, आजीवन शिक्षण विभाग, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

तरह की हीन भावना, नकारात्मकता पनपने लगती है जो कि एक विकसित होती महिला के व्यक्तित्व के लिए **साईलेन्ट किलर** का काम करती है। हमारे देश में महिलाओं के विरूध्द हिंसा मुख्य रूप से तीन तरह से दृष्टिगत होती है। पहली है- सामाजिक हिंसा, जिसके तहत् पत्नी या पुत्रवधू को कन्या भ्रूण हत्या के लिए बाध्य करना, लड़कियों से छेड़छाड़, सम्पत्ति में महिलाओं को हिस्सा न देना, दहेज के लिए सताना, विधवा को सती होने के लिए दबाव बनाना, धार्मिक परम्परा के नाम पर देवदासी बनाना आदि। दूसरी तरह की हिंसा घरेलू हिंसा के रूप में दिखाई देती है- जैसे पत्नी बेटी को पीटना, लैंगिक भेदभाव, दुर्व्यवहार, दहेज संबंधी हत्या, विधवाओं या वृद्ध महिलाओं के साथ दुर्व्यवहार, महिलाओं को पूरे समय घरेलू कार्यों में कोल्हू के बैल की तरह जुटाये रखना आदि। तीसरी तरह की आपराधिक हिंसा है-जैसे महिलाओं का अपहरण, बलात्कार, हत्या जैसे घिनौने दुष्कृत्य सामने आते है। चौथी तरह की हिंसा का नया रूप सामने आ रहा है जिससे कामकाजी महिलाएं पीड़ित है जैसे - रोजगार एवं पदोन्नति में भेदभाव, समान पारिश्रमिक एवं वेतन न देना, कार्यालयीन ईर्ष्या स्वरूप किसी मेहनती व काबिल महिला को दुष्प्रचारित करना आदि। इस तरह की छुपी हुयी कार्यालयीन हिंसा से काबिल महिला का व्यक्तित्व प्रभावित हुए बिना नहीं रहता है।

अमेरिका की सुप्रसिद्ध पत्रिका न्यूजवीक के द्वारा कराये गये सर्वे से भारत में महिलाओं की उपेक्षित स्थिति बयान होती है। न्याय, शिक्षा, स्वास्थ्य तथा आर्थिक, राजनैतिक आधार पर इस पत्रिका द्वारा तैयार 165 देशों की सूची में भारत का स्थान 141वें नम्बर पर आया है। हमारे देश को कुल 100 में से 41.9 अंक ही प्राप्त हुए है। विश्व बैंक की रिपोर्ट लैंगिक समानता और विकास के मुताबिक दुनिया में जन्म से पहले ही बालिकाओं को खत्म करने की सबसे ज्यादा घटनाएं चीन के बाद भारत में ही होती है। आधुनिकता के जामें में लिपटा भारतीय समाज महिलाओं के प्रति दकियानूसी सोच से ग्रसित है। परिवार में बेटों की चाहत से आज भी बेटी दोयम दर्जे की है। बालिका के जीवन में यहीं से विषमता के बीज बो दिये जाते है जिसकी बेल सारी ज़िन्दगी पल्लवित होती रहती है। कम्युनिटी बिजनेस की एशिया रिपोर्ट में कहा गया है भारत में पुरूषों का परिवार में वर्चस्वकारी एवं कमाऊ स्थान है, वहीं महिलाओं का प्रमुख कार्य घर संभालना है। छोटी उम्र में बालिका पर शादी का दबाव उसके व्यक्तित्व विकास में बाधक सिध्द होता है।

मनोवैज्ञानिक कहते है कि साधारण रूप से उग्र आक्रामक व्यवहार ही हिंसात्मक व्यवहार की श्रेणी में आता है। यह हिंसात्मक व्यवहार शारीरिक और मानसिक दोनों हो सकता है। मैगारकी के अनुसार हिंसा शक्ति का ऐसा प्रयोग है जिससे किसी के शरीर भावना या प्रतिष्ठा को आघात पहुँचता है। अन्य रूपों में कहा जा सकता है कि हिंसा वह मानवीय व्यवहार है जिसमें व्यक्ति अपनी शक्ति के मद में चूर चूर हो कर कानून का उल्लघंन करना है और किसी दूसरे व्यक्ति को चोट पहुँचा देता है। वर्तमान में महिलाओं के विरूध्द हिंसा को रोकने के लिए व्यापक उपायों की आवश्कता है। सर्वप्रथम तो महिलाओं को स्वयं अपनी शक्ति से परिचित होना आवश्यक है। प्रत्येक महिला को पारिवारिक स्तर पर यह अहसास दिलाया जाना चाहिये कि आपमें एक विशिष्ट ताकत निहित है। स्वयं को शिक्षा से दूर कभी नहीं करे, कुछ न कुछ कौशल हमेशा सीखती रहे यह महिला में दक्षता के साथ आत्मविश्वास बढ़ाने में सहायक सिध्द हो सकता है। अपना नेटवर्क बढ़ाए और आर्थिक रूप से स्वतंत्र होने के रास्ते तलाशे। सामाजिक उपायों के बतौर जनसंचार के माध्यमों में महिलाओं के विरूध्द हिंसा के प्रकरणों को बहुत अधिक महत्व नहीं दिया जाना चाहिए। पारिवारिक अदालतों, परामर्श केन्द्रों का कार्यक्षेत्र बढ़ाया जाना चाहिए इससे शादियों के टूटने से रोकने के अलावा महिलाओं को हर तरह की घरेलू और गैर घरेलू समस्याओं के समाधान में मदद मिल सकती है। महिला हिंसा रोकने के लिए समाज की विचारधारा खासकर माता पिता की सोच में परिवर्तन करना आवश्यक है। माता पिता अपनी पुत्रियों विवाहित हो या विधवा, जिन्हें उनके पति पीटते है या सुसराल में अच्छा बर्ताव नहीं किया जाता है, ऐसी बेटियों को अपनी इच्छा के विपरीत लोकलाज से पति के घर रहने के लिए क्यों दबाव डालते है? बल्कि अपनी बेटियों को स्वाभिमान , आत्मविश्वास और आशावादिता का गहना पहनाए। अपने परिवार की महिलाओं को योग्यता बढ़ाने के अवसर उपलब्ध कराऐं, भयमुक्त सुरक्षित समाज की संकल्पना को साकार कीजिए ताकि महिला जो कि देश की आधी आबादी है देश को सुन्दर, सुशिक्षित बनाने में अपनी दक्षता का भरपूर उपयोग कर सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. दैनिक भास्कर, 27 सितम्बर 2011
2. महिलाओं के लिए भारत सबसे खराब देश, दैनिक भास्कर, 14 जून 2012
3. योजना पत्रिका।
4. कुरूक्षेत्र।
5. विक्कीपीडिया डॉट कॉम।
6. नवीन शोध संसार, ISSN No. 2320-8767

****

भारत में जल प्रदूषण - कारण, निवारण

डॉ. सुनील शर्मा *

प्रस्तावना – 'जल के गुणों में प्राकृतिक या उत्प्रेरक परिवर्तन जो कि जल को भोजन, मनुष्य एवं प्राणियों के स्वास्थ्य, उद्योगों, कृषि, मत्स्य पालन या सुख-सुविधाओं के लिए अनुपयुक्त कर देते है। जलीय प्रदूषण कहलाते है'

जल पृथ्वी के 70 प्रतिशत भाग में पाया जाता है। जीवन पानी पर पूरी तरह निर्भर करता है। मनुष्य, पशु, पक्षी, आदि के लिए पीने का पानी के मुख्य स्त्रोतों में नदियॉ, तालाब, झीलें, नलकूप, आदि मुख्यत: आते है। हमारे द्वारा इन स्त्रोतों का प्रयोग भोजन बनाने के साथ ही सिंचाई, कृषि, औधोगिक कार्यों के लिए किया जाता है। अधिकांश सतही जल में अनेक जीवित, निर्जीव पदार्थ एवं प्राणी पाये जाते है। तब यह पदार्थ एवं प्राणी पाये जाते है। तब यह मनुष्य और प्राणियों के जीवन को कोई हानि नहीं पहुंचाते बल्कि पानी की गुणवत्ता बनाये रखने में सकारात्मक प्रभाव डालते है। जब इन पदार्थो की वास्तविकता में सान्द्रता मे वृद्धि होती है, तब यह पानी के गुणों पर बुरा असर डालते है और मनुष्य के लिए हानिकारक सिद्ध होते है।

आज मनुष्य ने ही अपने कृत्यों द्वारा जल को प्रदूषित करने का महापाप किया है। विश्व तथा भारत देश के अधिकांश जल स्त्रोत वर्तमान में प्रदूषण की ओर तेजी से बढ रहे है। यदि इस बढते हुए जल प्रदूषण को समय रहते नही रोका गया तो यह मनुष्य, अन्य प्राणियों एवं जीवों के लिए भयानक होने के साथ ही जानलेवा सिद्ध होगा।

जल प्रदूषण के प्रकार

जल प्रदूषण को चार श्रेणियों में स्त्रोंतो एवं भंडारण के अनुसार विभाजित किया जाता है-

(1) **भूमिगत जल प्रदूषण-** औधोगिक, धरेलू एवं कृषि तथा अपशिष्ट पदार्थो को भूमिगत जल में भयानक रूप से मिला रही है।

(2) झील जल प्रदूषण – देश में तटीय झीलें तथा ज्वालामुखी ने 2.6 मिलीयन हेक्टर जलीय क्षेत्र को तेजी से प्रदूषित किया है। साथ ही तीव्र गति से औधोगिकरण तथा शहरीकरण ने इस अत्यधिक तथा वृहद प्रकारके जलीय प्रदूषण को बढावा दिया है।

(3) समुद्री जल प्रदूषण – कुल जल का 95 प्रतिशत समुद्री जल के रूप में, 4 प्रतिशत पर्वतीय बर्फ के रूप में तथा मात्र 1 प्रतिशत जल मनुष्य के कार्यों के लिए उपलब्ध है। औधोगिक क्रांति के फलस्वरूप कारखानों में वृध्दि हुई जिससे समुद्री जल अधिक मात्रा में प्रदूषित हुआ है।

(4) नदी-तालाब जल प्रदूषण- जनसंख्या वृद्धि, शहरीकरण, औधोगिकरण, आम लोगों द्वारा कूडा-करकट , मूर्ति विर्सजन, समुचित जल-मल निपटान के प्रबंध न होना इस प्रदूषण के बडे कारण है।

जल प्रदूषण के मुख्य कारण – जल एक अत्यधिक भरपूर चमत्कारिक प्राकृतिक स्त्रोत है। यह सभी सजीव जीवों के जीवन की उत्तर जीविता के लिए अत्यधिक आवश्यक है। लेकिन वर्तमान समय में स्वच्छ, शुद्ध, जल एक बहुमूल्य द्रव्य के रूप में सामने आ रहा है, जो निरंतर महंगा होता चला जा रहा है। एक लीटर ब्राण्डेड पेयजल की बॉटल के 20 रूपये वसूल किये जा रहे है। जलीय प्रदूषण के मुख्य कारण निम्नप्रकार है-

(1) वाहित मल एवं धरेलू ड्रेनेज- नालियों का गंदा पानी तथा वाहित मल के निपटान की जवाबदारी स्वायत्त संस्थाओं की है, लेकिन इसका समुचित निर्वहन न होने से जल निरंतर प्रदूषित हो रहा है। साथ ही ग्रामीण क्षेत्रों में नदियों, तालाबों के जल स्त्रोत स्वच्छ शौचालय न होने से प्रदूषित हो रहा है।

(2) औधोगिक बहि:स्त्राव – विषैले रसायनिक पदार्थ जो मानव जीवन के लिए हानिकारक है जैसे उर्वरक, अम्ल, खाधतेल, पेट्रोकेमिकल्स, चमडा सफाई एवं रंगाई आदि खतरनाक पदार्थ बिना उपचार किये ही जलस्त्रोतों में छोडे जा रहे है। जो जल प्रदूषण का एक बड़ा कारण है,। कानपुर में गंगा के प्रदूषण का मुख्य कारण चमडा शोधन इकाईयॉ ही हैं

(3) कीटनाशकों एवं रसायनों, उर्वरकों का बेतहाशा प्रयोग- आज खेतों एवं धरों में संग्रहित अनाज को सुरक्षित रखने तथा फसलों का उत्पादन बढाने में रसायनों तथा कीटनाशकों का बेतहाशा प्रयोग किया जा रहा है। इसमें टोक्सेफीन, एन्ड्रीन, पैराथायोन आदि का प्रयोग ज्यादा हो रहा है। ये पदार्थ मिलकर या नदियों, तलाबों के पानी में पहुंचकर हानिकर होते है।

(4) विषाक्त धातु/तापीय प्रदूषक, नाभिकीय उर्जा संयंत्र, नाभिकीय परीक्षण आदि से विसर्जित पदार्थ जल को खतरनाक तरीकों से प्रदुषित कर रहे है।

(5) गाद एवं एस्बेस्टॉस के कारण भी बडी मात्रा में जल प्रदूषित हो रहा है।

(6) भारी धातुओं, पारा, सीसा, लोहा, जस्ता आदि द्वारा जल प्रदूषित हो रहा है।

जल प्रदूषण के दुष्प्रभाव – जल प्रदूषण के निम्नलिखित दुष्प्रभाव स्पष्ट: दृष्टिगोचर हो रहे है, जो प्राणी मात्र के लिए जानलेवा हैं —

(1) औधोगिक बहि: स्त्राव सजीवन जीवों तथा मानव जीवन पर हानिकारक प्रभाव डालते है। जिसके कारण किडनी, यकृत, मस्तिष्क एवं प्रजनन तंत्र पर धातक रोग जनित प्रभाव पड रहा है।

(2) जल प्रदूषण के कारण जल में आक्सीजन की कमी हो जाती है, जिससे प्राणियों की अनेक अवसरों पर मृत्यु तक हो जाती है।

(3) औधोगिक कुडे-करकट में विषैले रसायनिक एवं सुक्ष्म धातु के कण पाये जाते है। जिससे किडनी, यकृत तथा कैंसर जैसे रोग तेजी से फैल रहे है।

(4) धरेलू वाहितजल, मल द्वारा प्रदूषित जल के कारण हैजा, डायरिया, टाईफाइड, अतिसार आदि रोगों में वृद्धि हो रही है।

* प्राध्यापक, शासकीय महाविद्यालय, बड़वाह, जिला - खरगौन (म.प्र.) भारत

(5) प्रदूषित जल से साफ किये गये बर्तनों में रखे गए दूध तथा अन्य खाध पदार्थों के दूषित होने पर टाईफाईड, अतिसार, डायरिया आदि रोग ज्यादा उत्पन्न हो रहे है।

जल प्रदूषण का नियंत्रण - कुछ उपाय - जल प्रदूषण के नियंत्रण के उपाय निम्नलिखित है, जो जल प्रदूषण का नियंत्रण करने में सहायक होगे, बशर्ते है कि इन्हें योजनाबद्ध तरीके से तथा सख्ती से लागू किया जावे-

(1) कारखानों, उधोगों, अस्पतालों आदि के अपशेष जल को जल स्त्रोतों में विसर्जन के पूर्व उनको उपचारित किया जाना चाहिये।

(2) कुंओं, तालाबों, नदियों तथा जल के अन्य स्त्रोतों में कपडे धोने, पशुओं को नहलाने, वाहनों की सफाई, बर्तनों तथा कपडों को धोने पर प्रतिबंध लगाने के साथ ही सख्त दंडात्मक प्रावधान किये जाना चाहिये।

(3) जल स्त्रोतों में इस प्रकार की मछली प्रजातियों का पालन किया जाना चाहिये जो कि जलीय खरपतवार का भक्षण करती हों। जैसे-गंबुसिया मछलियों का आहार मच्छर ही होता है जो मच्छर वृद्धि पर अंकुश लगाने में सहायक है।

(4) शहरों, ग्रामीण क्षेत्रों में कच्ची, टूटी फूटी नालियों, सैफटी टेंकों, की मरम्मत सतत रूप से की जाती रहना चाहिये।

(5) कृषि, खेतों तथा बगीचों में कीटनाशकों, रसायनिक उर्वरकों के प्रयोग के स्थान पर जैविक खेती को प्रोत्साहित किये जाना नितांत आवश्यक है।

(6) नगर निगमों, नगर पालिकोंओं को वाहित जल मल शोधन संयंत्रों की स्थापना कर धरेलू बहि:स्त्राव उपचार के बाद ही छोड़ा जाना चाहिये।

(7) आम जनता को जल प्रदूषण के कारणों, दुष्प्रभावों एवं रोकथाम के विभिन्न उपायों के बारे में सतत् रूप से जागरूक बनाने की आवश्यकता है।

(8) पेयजल एवं अन्य जल स्त्रोतों की नियमित जॉच एवं परीक्षण, सफाई सुरक्षा करना आवश्यक है।

(9) पर्यावरण संरक्षण की चेतना का विकास, पर्यावरणीय शिक्षा के माध्यम के द्वारा करना चाहिये।

(10) भारत सरकार तथा राज्य सरकारों द्वारा लागू जल नियंत्रण कानूनों का कठोरता से पालन करवाना सुनिश्चित करने की आवश्यक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची:-

1. पर्यावरण अध्ययन् - डॉ एस.एम.सक्सेना, कैलाश पुस्तक सदन, भोपाल।
2. पर्यावरण चेतना - म0प्र0 हिन्दी ग्रंथ अकादमी,भोपाल।
3. कुरूक्षेत्र - नईदिल्ली।
4. योजना - नईदिल्ली।
5. नवीन शोध संस्कार जर्नल, नीमच।
6. विविध समाचार पत्र, पत्रिकाए।

****

महिला सशक्तिकरण में उच्च शिक्षा की भूमिका

डॉ. सुशीला श्रीवास्तव *

प्रस्तावना – देश की प्रगति वहां के स्त्री–पुरूष कितने प्रतिशत शिक्षित हैं, इस पर निर्भर करती है। विवेकानंद, गाँधीजी बालिका शिक्षा के पक्षधर रहे हैं, इन्होंने बालिका शिक्षा को ही देश की प्रगति का आधार माना व इनकी शिक्षा हेतु अथक प्रयास किये।

शिक्षा चरित्र का निर्माण करती है, अत: इसकी आवश्यकता महिला व पुरूष सभी को है। महिला सशक्तिकरण के अंतर्गत ये प्रयास किये गए हैं कि महिलाओं को घर, समाज व विभिन्न क्षेत्रों – राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, वैधानिक आदि में बराबर के अधिकार प्राप्त हों साथ ही उन्हें निर्णय लेने की स्वायत्ताता भी हो।

शिक्षा समाज की अनिवार्यता है, शिक्षा के अभाव में समाज की उन्नति संभव नहीं है, बालिकाओं का शिक्षित होना भी बहुत अनिवार्य है। एक सामान्य कहावत भी है –

'बेटा तो एक कुल को रोशन करेगा, दो–दो कुल की लाज रखती है बेटियाँ'

अर्थात बेटियाँ शिक्षित होने पर दो परिवारों को शिक्षित करती है। उच्च शिक्षा विभाग ने महिला सशक्तिकरण में सराहनीय भूमिका निभाई है।

ग्रामीण शिक्षा स्थिति – गांवो में बालिकाओं की संख्या जितनी प्राथमिक स्कूल में होती है वो माध्यमिक स्तर से कम होते–होते उच्च क्षिक्षा तक बहुत कम हो जाती है। उन्हें बहुत सी परेशानियों का सामना करना पड़ता है जैसे – ग्रामीण परिवेश, पुरूषों का वर्चस्व, बडे होने पर दुर्व्यवहार की आशंका में बाहर निकलने पर प्रतिबंध लगाना, महिलाओं की उच्च शिक्षा को अधिक उपयोगी न समझने जैसी सोच रखना आदि। इसमें धीरे – धीरे बदलाव भी आ रहा है परन्तु शत – प्रतिशत नहीं।

उच्च शिक्षा का योगदान – उच्च शिक्षा ने बालिकाओं को आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर व सक्षम बनाया है। ग्रामीण क्षेत्र की महिलाओं को – **गांव की बेटी योजना** द्वारा मदद व प्रोत्साहन प्रदान किया जा रहा है। वहीं उच्च शिक्षा विभाग द्वारा गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाली मेधावी सभी बालिकाओं को **प्रतिभा किरण योजना** के माध्यम से आर्थिक सहायता दी जा रही है। शैक्षणिक स्थल से दूरी की बाधा दूर करने हेतु 5 किमी. या इससे अधिक दूर निवास करने वाली छात्राओं को **यातायात भत्ता व आवागमन सुविधा योजना** के अंतर्गत आर्थिक सहायता उपलब्ध कराई जा रही है। उच्च शिक्षा ने महिलाओं को रोजगार के अवसर उपलब्ध करवाकर स्वावलंबी बनने तथा अपनी दक्षता का पूर्ण लाभ उठाने हेतु अवसर प्रदान किये हैं। उच्च शिक्षा में महिला सशक्तिकरण से उनका सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीति विकास हेतु मार्ग प्रशस्त होगा व उनके अधिकार का ग्राफ उंचा उठेगा।

नगरीकरण की प्रक्रिया तीव्र होने से सामाजिक सोच में भी बहुत बदलाव आया है। आज महिलाओं में आत्म विश्वास व संकल्प शक्ति बढ़ी है। पिछले तीन दशकों में महिलाओं की जीवन शैली, आचार विचार व भूमिकाओं में काफी बदलाव आए है। 2005 के बाद से महिला सशक्तिकरण के अत्याधिक प्रयास किए गए।

आज महिलाएं आई.टी. एविएशन, डिफेंस, राजनीति, शिक्षा, खेल, मेडिकल, टेक्नालाजी, बिजनेस आदि सभी क्षेत्रों में दमखम से अपनी उपस्थिति दर्ज करा रही हैं। आज किसी भी क्षेत्र में बालिकाएं युवकों से पीछे नहीं हैं। उच्च शिक्षा ने ही उन्हें देश–विदेश में रोजगार के अवसर उपलब्ध कराए हैं। हर विभाग में बालिकाएं उच्च पदों पर आसीन हैं। आज बालिकाएं उच्च शिक्षा व नौकरी हेतु अकेले ही विदेशों तक प्रस्थान कर रही हैं। जबकि कुछ वर्षों पहले पुरूष के बिना उसके जाने की कल्पना भी नहीं कर सकते थे। महिला सशक्तिकरण के कारण तीव्र गति से सामाजिक बदलाव हुआ है।

महिलाए अलग क्यों ? वैज्ञानिक तथ्य –

1. एस्ट्रोजन और आक्सीटोसिन, न्युराकेमिकल महिलाओं को ज्यादा केअरिंग, संयमी व घर बाहर को एक साथ संभालने की मैनेजरियल स्किल्स देते है।
2. महिलाए पुरूषों की तुलना में औसतन 5 साल ज्यादा जीती हैं। उनके x-x क्रोमोसोम्स उन्हें लंबी जिंदगी जीने व जूझने की क्षमता देते हैं।
3. सिरेटोनिन व डोपामिन न्यूरोकेमिकल अन्य न्यूरोकेमिकल के साथ मिलकर महिलाओं में खास मैकेनिज्म बनाते है जो उन्हें ज्यादा संवेदनशील बनाते हैं।
4. महिलाए ब्रेन के दाहिने हिस्से का उपयोग ज्यादा करती हैं। जो उन्हें स्थितियों को भांपकर जल्दी निर्णय करने की क्षमता देता है व रचनात्मक बनाता है।
5. आक्सीटोसिन की ज्यादा मात्रा होने के कारण इनमें वफादारी ज्यादा होती है।

महिलाओं की बढ़ती साक्षरता से और उनके काम करने की बढ़ती ललक से आने वाले समय में कई क्षेत्रों मे महिलाओं की संख्या और बढ़ने की पूरी उम्मीद है, साथ ही कई क्षेत्रों मे पुरूषों का एकाधिकार भी टूटेगा। महिलाओं को दुनिया को समझने के लिये उच्च शिक्षा एक बेहतर माध्यम बन सकता है। क्योंकि महाविद्यालयीन छात्राएं वैचारिक धरातल पर परिपक्व होने लगती हैं, और उन्हें मार्गदर्शन देकर सशक्त बनाना उच्च शिक्षा का उत्तरदायित्व है।

'महिलाएं खुद को संज्ञा माने विशेषण नहीं'

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. व्यक्तिगत अनुभव के आधार पर।
2. दैनिक भास्कर, नईदुनियां।
3. योजना पत्रिका।
4. कुरूक्षेत्र।

* प्राणीशास्त्र विभाग, शासकीय निर्भय सिंह पटेल विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

सार्थक सफलता से ही मिलती है संतुष्टि

डॉ. ए. के. पारीख *

प्रस्तावना – सफल होना प्रत्येक व्यक्ति की चाहत होती है सफलता का तात्पर्य संतुष्टि और संतुष्टि का सम्बंध व्यक्ति के जीवन की सार्थकता से होता है। यह सार्थकता उसे उसकी मौलिकता से प्राप्त होती है। इस मौलिकता के अनुरूप निर्धारित लक्ष्य को प्राप्त करके व्यक्ति सफलता प्राप्त कर सकता है।

प्रत्येक व्यक्ति के लिए उसकी सफलता के अपने मानदण्ड होते हैं। सांसारिक दृष्टि में सफलता का अर्थ है – 'तुम्हारे पास क्या है ?' परन्तु वास्तविक रूप में सफलता का अर्थ है – 'तुम क्या हो ?' सामान्यत: इच्छा पूरी होने पर हम स्वयं को सफल मानते हैं, परन्तु प्राय: यह देखने में आता है कि सफल होने के बावजूद लोग संतुष्ट नही होते हैं। जो लोग हमें सफल दिखाई देते हैं जानने पर ज्ञात होता है कि वे संतुष्ट नही हैं। सफलता उनके लिए बोझ बन गई है। एक के बाद एक इच्छा उत्पन्न होती रहती है। लोग उसकी पूर्ति हेतु प्रयास भी करते हैं और सोचते हैं कि यह मिलने पर सब मिल जायेगा, परन्तु इच्छा पूर्ण होने पर पुन: अतृप्ति का अनुभव होता है। तात्पर्य यह है कि सफलता तो है पर संतुष्टि नहीं। जबकि विकास के साथ साथ खुशी बढ़नी चाहिए थी लेकिन हमारी बाहरी उपलब्धियां बढ़ती जाती है परन्तु इसके साथ ही आंतरिक तृप्ति घटती जाती है। विक्टर ह्यूगो का कहना है कि – 'जिंदगी के सारे यशोगान अरमान की राख पर रखे जाते हैं।' इस बाहरी सफलता में व्यक्ति की मौलिकता खो जाती है।

सफलता यदि जीवन की सार्थकता का एहसास दे पाती है तभी संतुष्टि अनुभव होती है। जिंदगी की सबसे बड़ी चाहत जिंदगी के सार्थक होने का एहसास है। यदि जीवन में सार्थकता का एहसास नहीं है तक जो कुछ प्राप्त किया है, वह भी व्यर्थ है। यदि सफलता के साथ सार्थकता का एहसास होता है तभी संतुष्टि महसूस होती है। सार्थकता का संबंध व्यक्ति की मौलिकता से होता है। मौलिकता की अभिव्यक्ति ही व्यक्ति को सार्थक्ता का अहसास देती है। सार्थकता का तात्पर्य है – संतुष्टि, खुशी अपने होने का एहसास। प्रत्येक व्यक्ति मौलिक होता है जो वह है वह कोई दूसरा नहीं हो सकता। आंतरिक संतुष्टि प्रसन्नता वह होती है जो संतुष्टि और सार्थकता का एहसास देती है यही एहसास व्यक्ति की सच्ची सफलता होती है। व्यक्ति को अपना लक्ष्य इसी के आधार पर निर्धारित करना चाहिए।

सफल होने के लिए निम्न बिन्दुओं को अपने जीवन का अंग बनाना आवश्यक है ।

1. **आत्म विश्वास** – जिसका स्वयं पर भरोसा होता है वे कुछ भी करने में समर्थ होते हैं। इमर्सन ने इसलिए कहा है – आत्म विश्वास सफलता का प्रथम रहस्य है। व्यक्ति को अपनी आत्मा की शक्तियों पर प्रबल विश्वास होना चाहिए। उसे यह भरोसा होना चाहिए कि आत्मा अनन्त शक्तियों के स्त्रोत परमात्मा का अंश है। अतएव उस परमात्मा के अंश इस आत्मा की शक्ति के बल पर मैं अपने लक्ष्य को प्राप्त करने में अवश्य सफल होऊंगा।
2. **ईश्वर विश्वास** – यद्यपि वैसे तो आत्म विश्वास ही ईश्वर विश्वास है, तथापि व्यक्ति को यह विश्वास रखना चाहिए कि परमात्मा के लिए कुछ भी असंभव नहीं है। वह अनंत शक्तियों का स्त्रोत है। उसमें हर असम्भव को सम्भव बना देने की सामर्थ विद्यमान है। उसे ईश्र्या के इस वाक्य पर निष्ठा होनी चाहिए – भयभीत न हो निराश न हो, क्योंकि मैं तुम्हारा भगवान तुम्हारा ईश्वर सदा तुम्हारे साथ हूँ जहां जहां भी तुम जाओगे मैं तुम्हारे साथ रहूंगा। ईश्वरीय विश्वास व्यक्ति को सदैव सकारात्मक ऊर्जा एवं उत्साह से परिपूर्ण करता है।
3. **संकल्प** – संकल्प वह होता है जिसका कोई विकल्प नहीं होता। व्यक्ति को अपने लक्ष्य के प्रति संकल्पित होकर अपार धैर्य के साथ उसे पूर्ण करने में संलग्न हो जाना चाहिए। लक्ष्य की प्राप्ति में अब चाहे जितनी बाधाऐं आये, कितनी ही आलोचना क्यों न हो, कितनी ही विपदाऐं या परेशानियां क्यों न आये, परन्तु संकल्प को डिगने या टूटने नही देना चाहिए और संकल्प पूर्ण होने तक अविराम पुरूषार्थ करते रहना चाहिए।
4. **समर्पण** – व्यक्ति में अपने उद्देश्य के प्रति समर्पण का भाव होना चाहिए। ऐसा समर्पण कि व्यक्ति अपने लक्ष्य के लिए सर्वस्व न्यौछावर कर सके। लक्ष्य ऐसा होना चाहिए जिसके लिए स्वयं को समर्पित किया जा सके।
5. **साहस** – साहस व्यक्ति को निर्भय बनाता है और जहां निर्भयता होती है वहीं जीवन अपनी पूर्ण अभिव्यक्ति कर सकता है। साहसी ही सफलता का स्वप्न लेकर चलता है। लक्ष्य की प्राप्तियों में बाधाऐं आना स्वाभाविक है। व्यक्ति को इन बाधाओं को चीरते हुए आगे बढ़ जाना चाहिए। उसमें कुछ भी कर गुजरने का ऐसा साहस होना चाहिए कि चाहे जो भी परिस्थिति आए परन्तु विश्वास न टूटे, मनोबल बना रहे।

इस तरह प्रत्येक व्यक्ति को जीवन में सफलता के सही अर्थ को समझते हुए अपनी मौलिकता को खोजकर उसके अनुरूप अपने लक्ष्य का निर्धारण करना चाहिए और तत्पश्चात उपरोक्त लिखित तत्वों को जीवन में अंगीकार करते हुए लक्ष्य प्राप्ति हेतु अग्रसर होना चाहिए। इस नीति को अपना कर व्यक्ति सफलता को प्राप्त कर सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. बिहेवियर मैनेजमेंट।
2. दैनिक जागरण।
2. दैनिक भास्कर।
4. योजना पत्रिका।
5. कुरूक्षेत्र।

* प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय महाविद्यालय, सिरोंज (म.प्र.) भारत

The Moral Values of Literature

Dr. P. S. Nargesh *

Abstract - This work examines the relationship between moral value and literature. I start by exploring a dialectic that exists between, "prevalent view" theorists, who argue that the moral interest of literature lies in explicit deliberative arguments modeled in literary texts, and let it be said at the outset that plays, poems, are not to be selected chiefly because they convey a moral lesson. Good writing can stand on its own feet. Quite as excellent painting needs to carry no advertising to make it worth looking at, so an enjoyable piece of literature has its highly important place in the day's living even though we should be puzzled to find in it any special "moral" value. Rather, the ways in which literature affects us emotionally can make in eliminable contributions to fully rational moral Thought. I respond to these challenges in give us a better picture of literature's moral value. Why is this project an important one? First of all, as should be clear from reading the above overview, a great deal of this work is exegetical. I will be either explicitly or implicitly be making her controversial arguments surrounding morality, which encompasses arguments about sensibilities or emotions and human language, as sturdy as possible. This alone gives us what is uniquely important about this work.
Key words- Moral value and literature, prevalent view rational moral thought.

Introduction - Moral values refer to those values which are related to a virtuous individual's character, there are related to principles' conduct, practices and duties. Values like detachment, faith, loyalty, non-violence, obedience, and purity of thought, truthfulness and so many others are life's goal for each of us. These values teach us to love everything and everyone in the world as a proof of our absolute love for God. It teaches us to keep our hearts free from any attachment or worldly affairs. This work aims to clarify the relationship that exists between literature and moral value that such relationship can be drawn should not surprising,; literary works often take as their starting point human situations or , more generally, can reflect the moral thoughts of their authors(s).

Indeed, it will be the business of the discuss two conflicting interpretations of this particular relationship. It is not my claim that these are, by means, the only two possible interpretations, but I think the debate that can be drawn between these two camps raises extremely interesting and moral issues. One of the interpretations, the "prevalent view," will chime with a great many of our inclinations about how literature and moral values relate. The hallmark of these prevalent views is that fully blown moral values depends upon argumentation, and more specially, argumentation which is objective, by which these theorists mean that our subjective sensibilities do not play an essential role in our seeing things as they are. As a consequence, for example, the ways in which literature engages us emotionally do not in and of themselves contribute to a fully developed moral values on this view, in fact, their emotionality may even way us.

This "prevalent view" will then be contrasted with one advocated by Alice Crary, Cora Diamond, and others. This uniquely realist view argues that the ways in which literature engages us emotionally provide us with an in eliminable component of moral values. This is because our sensibilities from an essential part of objectives descriptions, allowing literature to make legitimate contributions to morality insofar as it can engage us emotionally; for instance, coming to share in the author's sense of humor will shape the world we see. This, obviously, would mean that much moral values can be critized as having overlooked something basic.

It will be the central goal of this work to strengthen the arguments for this latter relationship. After briefly setting out each of these positions, I will discuss the ways in which Crary has advanced this dialectic against the prevalent view. We will see that she forcefully argues that whole stretches of our lives become muddled and incomprehensible unless we reject the prevalent view. Thus, the realist is wrong in claiming that there is no distinction between "fact" and "value". It may not be an easy distinction to see, but, Blackburn argues, it is there. Because of his attack on the Diamnondian realist, it is necessary to address his arguments; if not, the advancements made to this controversial position by Crary will remain, at best suspect.

As we see, the case since we are trained to respond to certain facts in the world in a certain manner and then over time this develops into an attitudinal disposition. To put this in another way, when we come across something in the world, we respond in an evaluative manner immediately; they seem to come bound up together, and it becomes very difficult to see how a separation between fact and value is possible. If I approved and you disapprove of a quality it does not follow that we are using two different concepts. Indeed, if

*Asst. Prof. (English) Govt. College, Dharampuri, Distt. Dhar (M.P.) INDIA

the realist is correct it would seem to follow that you and I might not even be able to understand each other and this seems false.

One of the central points of this work is that we ought to reject the "prevalent view" theorists (Raphael, O'Neill and so on) because their view of moral judgments' depends upon incoherent view of language. This will be argued for, in depth, in chapter of this work. If I see something to be the case (i.e., I see intelligence as a horrible thing) and you see it differently (i.e., as a good thing), then, if I am a realist, I can immediately reject your attempts at criticizing my position. For this reason genuine value discussion cannot occur within a realistic framework.

Why is this project an important one? First of all, as should be clear from reading the above overview, a great deal of this work is exegetical. When dealing with thinkers, simply being able to represent their theories without distortion represents no small achievement. In particular, when it comes to Diamond, bringing her work into conversation with contemporary ideas in moral value is fulfilling a need which has been, for the most part, greatly overlooked. If only to redress such omissions in mainstream value, the exegetical component of my work has value in and of itself. The idea is that in setting out Diamond's arguments I will be either explicitly or implicitly be making her controversial arguments surrounding morality, which encompasses arguments about sensibilities or emotions and human language, as sturdy as possible. This along gives us what is uniquely important about this work.

Of course, reading literature is no more certain to drive us insane than it is guaranteed to make us moral. As Landy quipped: "results may vary." In any case, "moral" is a slippery term. Any reasonably divers group of people will be by stymied in their attempts to give substantive content to the concept; there is profound disagreement among people from different groups even within the United States about what is or is not moral. Even if the result of reading a work of literature could always be the same for everyone, there would be vehement disagreement about which result could be considered moral.

So, if the answer to the question of whether reading literature makes us more moral is so obviously "no" why ask it in the first place? And why did so many people show up to the event to consider the question? It may have something to do with the worry-pervasive after some literature departments over the past decade were shuttered-that if literature is not shown to be "useful," then it will be considered dispensable. The implication is that reading literary fiction might enhance a person's ability to discern others feelings and intentions-a skill that is central to the successful navigation of complex social relationship in a multifaceted multicultural world like our own. Regardless of its use or morality, literature, I submit, is brilliantly suited to the exploration of what means to be an ethical human being in a particular socio-historical situation, works of literary fiction represent a creative and formal linguistic engagement- in the shape of an oral or written artifact- with the historical and geographically-situated socio-political tensions found at the level of individual experience.

The most important relationship in the novel is the friendship between Nel and Sula. Over the course of the novel, the friendship between Nel and Sula ultimately fails not because Sula does not care about Nel, but because she confuses her own interests with Nel's. The "lines" between self and other that one must "not step across" are-like other ethical and moral imperatives- historically and culturally particular; they are not universal. For now, literature remains the most significant venue through which authors and readers alike can examine the myriad and complicated reasons that people-as inescapably situated beings-think and behave the way they do. Let it said at the outset that play, stories, poems are not to be selected chiefly because they convey a moral lesson. Good writing can stand on its own feet. Quite as an excellent painting needs to carry no advertising to make it worth looking at, so an enjoyable piece of literature has its highly important place in the day's living, even though we should be puzzled to find in it any special "moral" value.

References :-

1. This term from Alice Crary pg. 132.
2. Henry Neumann moral values in literature.
3. See Crary, 2007,p.132 for a succinct discussion of this point.

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

Moral Values, Education & Literature : interlinked factors to fostering society

Preeti Pantel *

Abstract - This paper examines a variety of perspective on the role of education and literature in moral education. How it is interlinked and can be beneficial to groom society. Discussion about the transferability of moral awareness acquired through literature to actual moral conduct.
Key words - moral values, ethics, literature.

Introduction - We all are enjoying new buds of modernization and various faces of development. Every stream for instance scientific, social and human development got foster these days. A society' development based on whole development; which included educational, economical, social, moral and ethical development as well. The spinning wheel of modernization is rotating in speed but unfortunately elapsing moral and ethical values as well which are core need to stabilize a society and humanity.

Now a day's our society is facing problems regarding loss of moral values and every age group's member is became a victim of it. Moral values are inner quality rather than genetic quality of a person which affects society. It also represents a region or nation in whole such as India and Indians known for their moral values- honesty, mercy, love, sacrifice, spirituality, religion and its unity. As I have told moral values are not genetic rather than a thought or manner which any one gets from his or her culture and civilization.

Title of the paper suggests moral values, education and literature in inter linkage manner. Education and literature is the vector of it. Then one question strike in mind that what about illiterate people, don't they have morals? And what about them who don't know about literature; aren't they aware about moral' values? There is no doubt about it that they are aware about their moral values and this paper emphasis that education helps to make it understand, follow, and take it as responsibility; and also provide a platform to groom humanity through literature.

We accept the role of literature in moral education then one thing strikes in mind, there is a question of whether it can serve as more than a reference point for moral awareness, and whether and how it can contribute to shaping moral behavior, as well as thinking. It is important to take a look on which moral aspects deal by literature, which is relevant for our learning from it and acting upon it. It is universally known, literature is the mirror of society. It presents various themes related to society and varied form of moral values. Flaubert's dictum *Read in order to live* suggests that books and literature can teach us something about ethics and human condition in its intimate and universal aspects, as well as illustrate the follies and achievements of our own epoch. Renowned writers of Hindi, English and other Literature tried their pen to present various themes related to moral and ethical values. The holly books Ramayana, Mahabharata, Geeta, Kuran, Bible teach lessons on morality which deals with love,mercy,s acrifice,equality, unity, spirituality, brotherhood,respect, faith and many more. These are the great legends of literature established on lofty pedestal. Hindi poet Kabir's Songs are rich in moral lessons. Lord Rama Character of The Ramayana, Lord Krishna, Pandavas character of The Mahabharata leaves us with a thought of moral and ethics. Khushwant Singh's literary work *Portrait of a Lady* represents changing relationships of grandmother and grandson; her portrait as universally love emphasis to love and respect all. Ravindranath Tagore's *Geetanjali* has mode of devotion towards God; it also represents faith, love, devotion, respect, humanity and humbleness.

Shakespeare's King *Lear'* character Coredelia represented as mirror of love, sacrifice and forgiveness. Most of his revenge tragedies' consequences lead us to ponder that should we do so or should we demoralized just to fulfill our quench for money and ego. William Golding's *Lord of the Flies, Fall of Man, The Inheritance* leave us with a thought of loss of love, innocence, brotherhood, humanity and civilization. It deals with depravity in human nature and bloodshed. Readers' heart gets full of sorrow to know about the death of Piggy and other innocence characters of Golding. Yan Martel's *Life of Pi* reveals varied aspects of love towards humanity, animal, and Nature, faith in God, hope and positive attitude about life. Hindi drama *Panna Dhai'* character panna continues moral values chain by saved King's son. She sacrifices her son and proved her loyalty towards king and Kingdom. Kamala Markandya's *Nector in a Sieve* expressed demoralized face of the society. Vishnu Sharma's

*Guest Faculty (English) Govt. College, Kasrawad,Distt. Khargone (M.P.) INDIA

'*Panchatantra'* is the depiction of morality. There is a wide range of historical and biographical literary work which deals with values of morality.

Literature connects with every age group's member - Younger, older and child, and makes them to think about their selves. In this way there is wide range of literary work which deal with particularly group and sometime pleased every one. There is a range of motivational literary work and books which lead anyone to think from new perspective for instance APJ Kalam, Sachin Tendulkar, M. K. Gandhi, Pt. J.L. Nehru's biography and autobiography, Prakash Shivkheda's book *You Can Win etc.* Short stories, comic characters such as Krishna, Bheem, Robin hood, Jack, Hamid, mogli, tarzan,Harry Porter, Spiderman, Ben Ten, Chacha Chodhari are the characters who capture mind of five to sixteen year old age group's members and make them to understand the values of friendship, love, courage, respect and help others; it also help them to understand do and don'ts as well. Ruskin Bond and Anita Desai's short stories cover major and minor aspects of life which are rich from moral perspective as well.

Literature helps to shape society and education is the platform to connect people with it. There is no doubt that these fictional lives have affected generations of readers and, because of their power, immediacy and beauty influenced many lives in a profoundly moral sense. A coin has two sides positive and negative. In present scenario literature covers many themes and good deeds v/s bad deeds is one of them. Unfortunately lack of understanding, people fascinated towards bad deeds. Children also want to be like their role hero and try hero's magical activities because Spiderman, Krishna, Harry potter, Ben ten have imaginative, magical and fancy world and power. This following behave towards their hero's deeds meets them with many psychological and physical injuries. To apply morality through education and literature and come up from this dilemma, it is important for teachers to recognize their compatibility with the appropriate stage of moral reasoning. However, recommending these characters as an influential source for fostering children's moral development in the first place is due to the fact that these stories have a hold on the imagination of millions of children who identify with their hero. This certainly speaks in favor of the critical importance of an appeal to children's feelings and imaginations, which character educators stress when they recommend in moral education use of 'role models' from the stories which involves the struggle of good and evil, and moral obligation.

Moral Science has been added in school's curriculum so that primary buds of new generation are pampered by the moral values. Literature must be included in higher education and should be essential part of the curriculum; every stream's curriculum. Scientific research has proved that meditation is helpful to boost physical and mental strength; so it will be beneficial to add yoga education in curriculum. There is need to deliver morals in right way to the people through practical exercises .All obstacles must be cure through social-educational programs. Every single aspect of morality should be visualized by author's pen and it must be passes to readers in positive tone. Literary works and related books must be part of educational institutes' libraries. Students must get guidance and easy accessibility to libraries. Through cultural programs literary activities would get platform to share morals among students. Above all suggestion there is one of the important thing is that these all mention activities must be in practical work rather than paper work.

Thus it is need to think from a new perspective to establish moral values in the society. Teachers need to pass morality to student through literature. Education has path to reach literature and literature has many scope to understand and apply moral and ethical values in social lives. It strikes human mind and make them to meet their inner sole or the real one. It fulfills the proverb "pen is mightier than sword"; we should apply it to get a better environment.

References :-

1. Carr, D. "On the contribution of literature and the arts to the educational cultivation of moral virtue, feeling and emotion." Journal of Moral Education (2005):2. English.
2. Panti,Natasa. "Moral Education through Literature." Ipi(2006): 401. English.
3. Samundar.Manish. "Meditation." Dainik Bhaskar 8 Feburary2015:7. Hindi.
4. Self experiences

****

Need and Importance of value-based Higher Education in Global Era

Dr. Kushal Jain *

Introduction - There is a need for imparting value-based education with a spiritual bent of mind in educational institutions to shake out good citizens. Imbibing the qualities of good conduct, self-confidence and high values would help students earn a significant place in society. Education without values is like a flower without fragrance. Students should realize that character building is equally important as career building. A good character in life is ultimate thing that stretches person's self-realization. Therefore, students should learn not just from their curriculum, but from other spheres too to widen their knowledge base to emerge as bright citizens of the future.

Meaning of Term Value - Value means primarily to prize, to esteem, to appraise, to estimate, it means the act of cherishing something, holding it dear and also the act of passing judgment upon the nature and amounts of values as compared with something else. A value stands for ideas men live for. They are the part and parcel of the philosophy of a nation and that of its educational system. They are the guiding principles of life.

Relevance of the study - Higher Education in the present era of LPG is stimulated by economic consideration without any reference to age old human values that separate man from animals. Cut throat competition to achieve material success has made man mechanical. Results of such rat race in the field of education and economic life can be seen in terms of insecurity, distrust, lack of fellow feeling, lack of honour for human values etc. leading to discontent and maladjustment in personal and social life and finally leading to drug abuse, maladjustment and even suicide among students. It is here that the urgent need for value education is felt by one and all currently

Review of literature - Rao, (2004)The broad objective of education is to create a sizeable population of such educated men and women who could understand the world well enough and are able to bring about a change leading to adequate health and education services, a better environment, and elimination of ignorance and deprivation (limitations), which continue to strangulate the developing societies. The policy, therefore adhering to the principles of equity, quality and efficiency place added emphasis on the education of the people, who are under-privileged and live in misery.

PRAVANANDA, S(1947)In ancient India, the instructions of a teacher (guru) to a student (disciple) would start as follows:"Let your conduct be marked by right action, including study and teaching of the scriptures; by truthfulness in word, deed and thought; by self-denial and the practice of austerity; by poise and self-control; by performance of the everyday duties of life with a cheerful heart and in unattached mind. … Deviate not from the path of good. Revere greatness

LOKESWARANANDA (1972)Education had to provide principally the codes of behaviour , as exemplified in the instructions above, initiation to the value system and an understanding of the ultimate objective of life in terms of spirituality. The ultimate goal of the whole process of education was to unravel the 'truth', to manifest "the perfection already in man", to combine knowledge with compassion and efficiency with moral excellence.

Objectives Of The Study –

1. To find the factors that helps in creation of value- based higher education.
2. To give suggestions for improving India s higher education system.

Methodology- In this paper, the research was based on secondary data taken from different research reports. to make the article so passionate by referring a set of literature from books, and websites and compiled with the views of the author.

Need of Value Education - The purpose of education is self-affirmation and not self-negation. It is the process of removing the self-negating ideologies in order of self-affirmation. Value education alone can provide real meaning and content in life. The following are some reasons that may be mentioned in this connection:

It is very essential that moral awareness is promoted to orient the progress in science and technology towards the welfare of mankind.

1. Some common values should be re-discovered to unite human beings.
2. Role of Teacher should be enhanced same to previously accepted in ancient times.
3. It cannot be ignored that the rate of juvenile delinquency is increasing everywhere. It is a definite symptom of a crisis which today's youth undergoes in the process of

*Professor (Economics) M.J.B. Govt. Girls P.G. College, Indore (M.P.) INDIA

his personal growth. In such a situation value education assumes a special significance.

4. Human beings should not be treated as saleable commodity that can be disposed of when they can not help the material cause.

In present scenario where we live, the society values material gains and profits above all. It is not an exaggeration if to say that in this materialistic era of science and technology, everything except morality has reached to its echelon. Values unlike other aspects have gone into abysses where human existence and its future looks dismal and in dark. Though every nation is worried about the continuous corrosion of values yet no serious action has been taken by any of the nations for the restoration of values. Even our current system of education is oriented towards giving knowledge and skills that would make students saleable products and nothing else. This education system has developed only cognitive aspect of a man and left effective and psychomotor aspects starving, which results in sordid rapes, heinous murders, treacheries, chicaneries, frauds and malpractices. Such a system of education is devoid of the primary human values of solidarity, justice, equality, brotherhood, affection, generosity, empathy etc. Thus the problem of value crises seems to be inherent in the system of education itself.

Conclusion - Current socio-economic forces of Liberalization, Privatization and Globalization have created a global society where the ancient values have been thrown into the winds. However the general degradation of values has led only to personal discontent and heap of social-economic problems. Hence people across the globe are looking towards the system of education to infuse human values among the students so that the world remains as a place of peace, security and prosperity.

References :-

1. PRAVANANDA, S. and Frederick Manchester. The Upanishads, Vedanta Press, Hollywood, California, 1947, pp. 81-82
2. LOKESWARANANDA, S. Education, Theory and Practice. Ramakrishna Mission Ashrama, Narendrapur, India, 1972, p.52
3. Gailbraith, R., & Jones, T. (1975, January). Teaching strategies for moral dilemmas: An application of Kohlberg's theory of moral development to the social studies classroom. Social Education, 39, 16-22.
4. Saikia, Mukul .(2012) Higher Education and Inculcation of Values. In Anuradha, Rajeev &Manoj(first edition), Higher Education: context and linkages(pp. 41-46)., Bhiwani: Lakshmi Book Depot.

✲✲✲✲✲✲✲✲✲✲✲✲

Moral Value, Moral Judgment in Childhood

Dr. Neeta Deshmukh *

Introduction - Morality is our ability to learn the difference between right or wrong and understand how to make the right choices, Children's experiences at home, the environment around them and their physical, cognitive, emotional and social skill influence their developing sense of right v/s. wrong.

Moral values provide a core of integrative concepts for the development of personality and for the maintenance of society. Morality, in these terms, is not a question of prohibitions or musts, but rather the values and definitions of appropriate behavior and protest against destructive social mores.

Moral values derive from within one's own self - This is clearly demonstrated in the behavior of older infants and young toddlers.

Religion is another source of moral values - Most religions have built in list of do's and don't a set of codes by which its adherents should live.

Freudian concept - Morality has been taken to be an individual matter by both psychology and theology. For Freud morality was the super ego the inculcation of parental prohibitions. In theology morality was the response to conscience, the still small voice of feeling guilty. In both instances morality was a question of guilt. However this individual emphasis on morality overlooks the fact that morality is as much a social issue as a personal one.

Moral judgment - The most important early research on the development of moral judgment of children is that of Piaget. Piaget emphasized the development of moral judgment as a gradual cognitive process, stimulated by increasing social relationship of children as they get older, Piaget's work is reported in four sections. The first section discusses the attitudes of children to the rules of the game when playing marbles. The second and third sections report the results of telling children stories that require them to make moral judgments on the basis of the information given. The last section reviews his findings in relation to social psychology.

The development of moral judgment is the knowledge of right or wrong. The study showed through group analysis of children law or high in moral motivation and inhibition that cheating or non cheating could be predicted with a rate of about 90 percent accuracy. (Asendrof & nunner – winkler 1992).

Another study investigated children's concepts standards and evaluate reactivity to lying or telling the truth about misdeeds (Bussey 1993) children in this study were preschooler. The study produced clear evidence of the development of moral standards associated with lying and story telling in all children.Punishment affected the moral judgment of the preschoolers but not of the older children. Many theory based research found effect of moral values and moral judgment on children.

Story telling - Story telling provides a foundation for children in understanding the core values of their community story telling carries lessons across generational lines with words of meaning and instruction providing children the guidelines for living life. It is used as a tool to pass down the symbolic significance of life and ideologies of moral character.

Interpersonal influences - Children's interactions with caregivers and peers have been shown to influence their development of moral understanding and behavior. Researcersh have addressed the influence of interpersonal interactions on children's moral development from two primary perspectives : Socialization / internalization (Grusec and good now 1994 Kochanka and Askan 2000)

Cognition - Recent research on children's theory of mind, Tom has focused on when children understand others intentional (well mar and Lui 2004). The moral concept of actor intentionally develops with experience in the world. Killen, Mulvey, Richardson Jampol and wood ward (2011) present evidence that with developing false belief competence, children are capable of using information about actor intentions when making moral judgments about act acceptability and punishment acceptability recognizing that accidental transgressors who do not hold negative intentions, should not be held accountable for negative outcomes.

Intergroup attitudes - Researchers interested in intergroup attitudes and behavior have approached the study of stereotypes prejudice and discrimination in children and adolescents from several theoretical perspectives. some of these theoretical frame works include : cognitive development theory (1988) social domain theory (Killen & Rutland 2011). most of this research has investigated two dimensional relationship between each of the three components : stereotypes, prejudice and discrimination, very few

* Asst. Prof. (Home Science) D.A.V.V. Sugnidevi Girls College, Indore (M.P.) INDIA

addressed all three aspects of intergroup attitudes and behaviors to gather (mckown 2004)

According to Piaget, children between the ages of 5 and 10 see the world through a heteronomous morality. developmental psychologist Lawrence Kohlberg built on piglet's work to create his theory of the stages of moral understanding.

Conclusion - Children develop morality in a series of steps. They move from a morality of constraint to a morality of co-operation. From heteronomy to autonomy. from making objective judgments to making subjective judgments from a morality of obedience to a morality of reciprocity and from a concept of expiatory punishment. they also move from a concept of imminent justice to a concept of equity

There is the need for a moral order. human life is necessarily a moral life precisely because it is a social life. and in the case of human animal the minimum requirements for predictability of social behavior that will insure some stability and continuity are not taken care of automatically by biologically inherited instincts, as in the case with the bees and the ants. No society, then can function without a specific morality. Adult can encourage the internalization of values by rewarding and encouraging moral values, judgment and behavior.

References :-

1. Pikunas :- human development – a science of growth, mcgrow hill new work.
2. Rice Philip :- child and adolescent development pretice hall, upper saddle rives new jersey 1997.
3. Sharma Rajendra :- Child development and psychology sublime publications, jaipur 1998.
4. Http//en wikipedia.org/moral development.

****

Necessity of moral Values in Modern Era

Dr. Kiran Sitole *

Introduction - Moral values are one basis on which we make decisions–right or wrong? Good or evil? A moral value gives us guideline which we can follow for better life. Morals and values of today's society have really changed. For an example; the younger generations have less respect for elders, their parents or an authority figure which leads to a higher crime rate among our children. This is the reason there is no respect for others belongings, and people take what they want instead of asking for it. The reason the morals and values are like they are in today's society, is because the parents do not take the time to teach their children, to show respect to their elders or to show respect for others or teach them what is right or wrong. They are not taught the value of family. So instead the children are spoiled with material a belonging which puts the parents in a position of having to by them what they want regardless of the cost this instills lack of morals and greed in our children.

Goodness, purity, truthfulness, humility of man rank higher than genius, brilliancy, exuberant vitality, than the beauty of nature or of art, than the stability and power of a state.which govern an individual's behavior and choices. Individual's morals may derive from society and government, religion, or self. When moral values derive from society and government they, of necessity, may change as the laws and morals of the society change.

We need to teach morals in our children and teach our youth the family values to do this we need to start spending quality time with our children, and monitor what our children are watching on television and internet.

We should spend more family time with our children either playing games or helping with their school work. We could teach children better morals and values by being a good role model for our children. We should tell them our Indian cultural values and why our culture is good. We could tell them about our Indian history with stories of legend emperors, monks (mahatma's), independent revolutionaries and great leaders. We can use "Panchtantra Katha" and good "Bal Sahitya".

We need to take more time with our children so we can teach them the morals and values that can make better society for better and safer world.

Morals and values are the foundation of society. Childhood is a time in which presents embed most of our morals into us. Historically, parents have essentially been children's only social interaction, and therefore, shape their children's lives parents religion plays an important role to shape morals in children. It is an important source of moral values in our society. Over the past century there has been a great differ in the views of the people how people see religion and important and how influential it is to our modern contemporary Society today. Too a large extent in our in Fra structure today religion does play a vital part in how society runs. Religion especially helps integration between people before the industrial revolution quite a vast population would integrate with each other through temples, and religious activities. That time people think that morality comes from god. Moral behavior is that behavior that conforms to the will of god. Religion interpret what the will of god. Religion teach us about good behavior, truth and divinity. So there religion plays very important role to teach morality.

Moral values impact on success. Every person has their own set of values and principles that have been helped throughout life. Moral values are learned behaviors, hence some are easy to understand and apply. Some can be acquired, and each compliments the other. Values can carry consequences. Therefore, if one applies the practices, he can succeed in every field. Values affect not only our social life but professional life also. Values give us confidence to face the competition world. I give us enjoy after victory. It give us hope in sadness or failure. Moral values play very important role to get our goal. If we have morals we practice more. If we practice more we ret success. I examined values and based them on how important they are within my personal and organizational work and success. Each day we people attend different types of schools and in the end we learn that when we follow morals we get success. At the time of bed we can analyze how was our day was it full of morality and truth. If yes we go in sleep. If not we can't sleep. The day when we sleep was full of morality and it was our success.

The values which are given us happiness, pleasure and joy are called moral values moral values are come from god. We can say the good behavior is our moral. Moral values are very important for politics. We are feeling that our political parties lost all the moral values. At the time of election they make no of promises and after the results they forgot

* Asst. Prof. , Govt. College, Dhamnod, Distt. Dhar (M.P.) INDIA

everything. Now days every leader want to earn money by politics. In this path they lost their moral values. Leader want to only charm. They play with the poor emotions. They last their values that's why we are going back word. Our education system our health policies our nutrition policies all are going back word. If we want to get progress we must need moral in politics.

Today we obsessive lack Moral Values and Self Discipline Moral values and graciousness, in the past were prominent in most teenagers. Majority of the youths then learnt respect, courtesy, consideration, decency, propriety, honesty and righteousness from a young age, and had enough self- discipline to hold to these values. However, these moral values and self- discipline are slowly diminishing over the years, as most of the younger generation is gradually disregarding these, lack of moral values in teenagers increasing crime And degradation. Now we are observing that teenage child doesn't want to spent time with their parents. They don't want to obey their teachers. They don't' want to follow the customs of society. All these are the examples of lack of moral values Teenagers want to live jollity, want to play with emotions. They don't want long relationships all these are also the examples of lack of moral values.

References :-

1. my experience with truth : M K Gandhi
2. Vivekanand : Dr.SinghD K
3. Adhyatma avam darshan :Dr. Kumar S
4. Panchatantra:Vishnu Sharma
5. Naitik Mulya avam Parichay : Dr. Shashi Raj

****

NeednessOf Moral Value In Present Condition

Nisha Pathak *

Introduction - What Are Moral Value - Moral value refer to a set of principles that guide an individual as on how to evaluate right versus wrong . As we generally see that people apply moral value's to justifie's their decision, intention's and actions and it also defines the personal character of a person . An individual with high moral values typically displays characteristics of integrity, courage, respect, fairness , honesty, compassion.

Because different groups of people often have different sets of beliefs , societies may privilege different sets of values and develop different moral codes. As a result definition of "right" and "wrong" changes across cultures, As we know one society may support a behavior while another may punish it.

Moral Values In Society - The moral value of today society have really changed for example :The young generation have little respect for elders , Their parents as authority figures which leads to a higher crimes rate among our children. This is the reason there is no respect for others belongings and people take what they want instead of asking for it.

Today we notice one thing about new generation that they doesn't know about moral value because the parents do not take proper time to teach their children how to show respect for others. So they are not taught the value of family due to which children are spoiled their life with material belongings which puts the parents in a position of having to them what they want regardless of the cost this lead them lack of moral and greed in our children .

Today we note that the rate of teen age pregnancy to a lot higher and the number of woman being pregnant without being married is higher than it was in years past .

Another reason for the lack of moral value today both father and mother are in job so they do not give proper time to their children in this way a distance is created in between parents and children in feel that moral education must begin when the child is young. As it takes time for the child to internalize it both families and schools should be responsible in bringing up children with moral values. There has been over emphasis on academic subject and neglected moral education as a result. Parents are the first teacher that children encounter and emulate , therefore parents have to set a good examples for them. In schools teachers can come up with interesting Ways to impart moral values and life skill to students.

Importance Of Moral Value In Education - As we know that india being a secular country, Here we can not take up religious educations in schools and colleges. They argue that, to the extent the moral education can be given in educations institutions , It is given through discipline and punishment for breaking the code of conduct .

Before 1976, Education was the exclusive responsibility of the states. In the constitutional Amendment of 1976, Education was included in the concurrent list. Since the central government continues to play a leading role in the evolution and monitoring of educational policies and programmes.

The most notable of which are the national policy of educations (NEP) 1986 and the programs of action , 1986 as updated in 1992. The modified policy envisages a national system of education to being about uniformility in education, making adults educations a mass movments, providing universal acces, retention and quality in elementary education and expanding the structure of higher education.

The method of teaching moral values to students is universal. It is the most important duty of the teacher, if a child misbehaves or tells lies, The people blame the parents and teachers, But it is not a good job.

If a child observes his teachers to be truthful and honest he shall imbibe some of their virtues, If not all. In school through text book students get only behavioural knowledge because it based on symbolic stories . So these days the government plans the text of the children on these principles in history, character of great heroes, social reformers and prophetes of truth are painted through colourful stories.These directly influence the personality of a child they readily condemn the evil doers and the liars.

Importance of Moral value in National Services Scheme - NSS can play an active role in creating awareness to promote education, imparting of basic education can be initiate by NSS volunteers. Educators must examine whether other values might be more basic to society and must consider how they can be inculcated.Students must get a good grounding in the socioeconomic political realities of

* Research Scholar, Dhamnod, Distt. Dhar (M.P.) INDIA

India and outside, If they are to related to the Indian reality that oppresses the majority of Indians.

NSS Volunteers may be involved in the activities related to literacy programms in both regular and special camp programs. In their adopted villages they may adopt few illiterate people of the village and can make them literates. At each and every step, NSS volunteers during their participation in social service educate themselves and other. NSS can play a great role in educates the society and help to overcome some basic problem faced by the society in day life. NSS provide more information about rights which are as follows:-

Human rights education - The government is introducing varity of scheme to uplift the poor people of the society. Human rights are the basic rights which are required for smooth living in the society .NSS volunteers should learn various human rights to make use of them to improve their living standards. NSS volunteers also need to create awareness among the public about human rights. They should also explain various human rights which are extended by government.

Civil rights and responsibilities - NSS volunteers have to learn about the civil rights and also their responsibilities. The NSS volunteers have to act as social soldiers. They have to motivate people to discharge their respective responsibilities. There is a great deal to educating the citizens about civil rights.

In their way NSS provide many information about rules and regulation and some rights of people which are made by government.

References :-

1. The science of self realization (A.C. BHAKTIVEDANTA)
2. News paper of English (Times Of India,The Hindu)
3. Wikipedia , google

****

Osho Said Scarcity in moral values

Dr. Umesh Kakeswar *

Introduction - In this globle world why we are raising the questions of moral values to raise such question indicates the average civilized society it means we all are the part of barbaric world.

Moral Values is the strangest foundation of life in a poem the world is too much with us greatest romantic poet William words worth says the man is becoming materialistic day by day he is escaping from spiritualism and colleting the sources of artificial happiness. Overall what is meant is by moral value.

Moral values means – To establish ideals in the society zeal of heroism patriotism passion for scarification for society as well as to the society. Society is foundation on which the noble castle of country depends. At present declining in moral social and every sphere of society is desirable.

In the present reference moral values is not only necessary but also indispensible. Because Social media is playing the positive role in the formation for civilized or moral society scientific inventions and discoveries made the worlds gloable village think over the presetage of divorce cases spreation of joint family most of the presents are living in kashi banaras and Mathura not because Bhakti but because of the demoraled behavior of their children. It reminds of the sublime era of Ram sharvan kumar now it has become the history of by gone days.

Physical exploitation has become the matter of routine. The percentage of dowery cases increasing graph of rape cases compelled us thins that we all are a part and parcel of civilized society harlotship (licensed) is like a leoproacy

On the mouth of our society spreading disease like aids indicting is the worse to worst society matrimonial relationship is also the subject matter of thinking over.

Uncountable problem indicate that there is exists declaiming moral values excepts this some factors are followings.

Literature gives birth to literature and literature remains the crown of

Education – The ultimate aim of education is to make a good citizen. If you have a mass of good citizen then mo society. So it is moral duty of all the educated people to think on the demerits of present education system.

Challenges – Need is challenge - Sexual deformity and impotencies moralist lack of spiritualism lack of literay love. Impact of western culture lack of yogik shiksha lack of accult science Anthropology ancient tantra and mantra vidhya.

Sexual deformity is the biggest facter . it is the cause of all challenges as every psychologist accept.

Solution –

Precaution is better them diagnosis first of all we all must move to optimistic attitude. It is the curable stage of our society it is not fully mentally restarted.

Intoxication causes dispersed

Meditation – In this field more research is required so that we can save our youth and society form the brutal clutches of death.

Our grand mothers and father must break the silence . silence means passiveressistencce such weapon of passive resistance is proving dangerous to society.

The best opportunity for author thinker philosopher or scholors to compose the new scripture which can prove the aims of life. It will definitely prove help ful In communal harmony. Psychology and philosophy must be the parry and parcel of every Universities of our Nation. Both nation will make the nation idealistic. the biggest prize the noble prize is given by our government for the best work in the any filed.

Government should declare noble prize for those who sell the moral vales in the society being researcher I am optimistic the day is not for while Ram – Rajay (welfare) society be back.

Cause of my optimism is very obvious that or county represent and have 1 st rank in the statistics of young generation.

Young blood will bring out the revolution In our society.

References :–

1. Osho world magazine.
2. Various interview with Osho's folowers.

* **English, Govt. College, Anjad (M.P.) INDIA**

वर्तमान समय में नैतिक मूल्यों की आवश्यकता

डॉ. अरूणा मोटवानी *

शोध सारांश – आधुनिक समय में हमारे देश का बचपन सड़कों पर मारा–मारा फिर रहा है। महिलाओं के प्रति होने वाली हिंसा एवं उत्पीड़नों का प्रतिशत बढ़ा है। सीमित सामाजिक संसाधनों की वजह से जीवन की सामान्य आवश्यकताओं की पूर्ति भी नहीं हो पा रही है। इसके कारण शोषण, अत्याचार और अनाचार की एक व्यापक संरचना निर्मित हो गई है। आज का दौर वैश्वीकरण एवं बाजारवाद का है। वैश्वीकरण की इस आँधी ने सबसे ज्यादा हमारे नैतिक मूल्यों को प्रभावित किया है। सब कुछ बदल गया है– हमारी सोच, हमारी मान्यताएँ, हमारी परम्पराएँ। हमारे पारिवारिक और सामाजिक सम्बन्धों का ताना–बाना बदल रहा है। अपनी परम्पाओं से हम कटते जा रहे हैं। हम अपने घर–परिवार, रिश्तो–नातों, मेलों–ठेलों, अपने उत्सवों–त्योहारों सबसे विमुख होते जा रहे है। हमारी संवेदनाओं की धार कुंद होती जा रही है।

आधुनिक संचार साधनों ने वैश्वीकरण की इस प्रक्रिया को तीव्रगामीकर सम्पूर्ण विश्व को 'ग्लोबल विलेज' या 'विश्वग्राम' बना दिया है। जिस भौतिकतावादी संस्कृति का हम अनुकरण करते जा रहे है, वह बाजारवाद पर आधारित है जहाँ हर व्यक्ति उपभोक्ता है और हर चीज़ बिकाऊ वस्तु इसने हमारी लालसाओं को अनन्त बना दिया है। बढ़ती लालसाओं में मूल्यों को कहाँ ढूँढा जायें? यह अनुत्तरित प्रश्न सामने है।

एक समय हमारे देश का वह भी था, जब गरीब व्यक्ति के भी अपने नैतिक मूल्य होते थे, अपना चरित्र होता था। किन्तु आज ईमानदारी, सच्चाई, सच्चरित्रता, मूल्यबोध खोटे सिक्के हो गए है। किसी तरह के नैतिक मूल्यों की बात करना अब पुरातन पंथी सोच है। ऐसा लगता है नैतिकता एवं उससे जुड़े मूल्यों की बात मात्र एक मृगतृष्णा हैं।

परन्तु इस नकारात्मक सोच में बदलाव की आवश्यकता है। आज आवश्यकता है संहार होते नैतिक मूल्यों को पुनर्जीवन देने की। मृतप्राय: होते हमारे मूल्यों में जीवनदायिनी शक्ति फूँकने की। हमारे देश में पश्चिमीकरण से आए विचार हमारी आत्मा रूपी दर्पण पर जमे धूल की परत है, जैसे ही नकारात्मकता और उपभोक्तावादी इस धूल की परत को हटाया जायेगा, हमारा सही एवं सच्चा भारतीय हमारे समक्ष खड़ा होगा।

आज नैतिक मूल्यों की क्रियान्विति आवश्यक है, क्योंकि नैतिकता का रिश्ता हमारे आन्तरिक आचरण की सुचिता से है। यहम जो कहे वहीं करेय कहे कुछ और करे कुछ और इस द्वैत भाव से हमें बाहर आना होगा। तभी नैतिक मूल्य जागृत होगें क्योंकि मूल्य हमें सही जीवन की अनुभूति प्रदान करते है। यह व्यक्ति के आचरण के माध्यम से परिलक्षित होते हैं।

शब्द कुंजी – 1. उपभोक्ता– उपभोग करने वाला, 2. लालसा–इच्छा, 3. ग्लोबल विलेज– विश्वग्राम, 4. पुरातनपंथी–प्राचीन राह पर चलने वाला, 5. शुचिता – पवित्रता।

प्रस्तावना – आधुनिक, उत्तर आधुनिकता और भू–मण्डलीकरण के दौर में जहाँ चारों और बाजार फैला हुआ है, सूचनाओं का ताँता लगा है, लोग बिकने को तैयार हैं और कुछ लोग खरीदने को बेताब है। व्यक्ति के जीवन में सुबह से शाम तक स्वार्थो का मेला है, भागम–भाग है और सब कुछ जल्दी–जल्दी बटोर लेने की महत्वाकांक्षा है, ऐसे मुश्किल समय में क्या नैतिक बने रहने या नैतिक होने के लिए कोई 'जगह' है ? जहाँ आज आदर्श, ईमानदारी और सच्चरित्रता जैसे गुणों का गला घोंट दिया गया है क्या ऐसे दौर में नैतिकता पर जमे रहना संभव है? कहीं यह हमारा नैतिकता के लिए संभव प्रयास तो नहीं? किन्तु फिर भी कोशिश तो की जा सकती हैं। क्योंकि यह भी सत्य है कि समूची नैतिकता तो शायद कभी नहीं रही होगी, क्योंकि नैतिकता एक आदर्श स्थिति और परिकल्पना है। नैतिकता के रास्ते पर चलना दरअसल तलवार की धार पर दौड़ने के समान है। आज हम एक हिंसक और आचरणविहिन समय में जी रहें हैं। जहाँ 'आचरण की सभ्यता' के लिए हमारे ज़्यादा 'जगह' नहीं है।

नैतिकता समाज के मान–मूल्यों या आचरण के नियमों का सम्पूर्ण जोड़ है। न्याय–अन्याय, अच्छाई–बुराई, मान–अपमान जैसे महत्वपूर्ण विचारों को रेखांकित और प्रतिबिंबित करने का दूसरा नाम नैतिकता है।

'मूल्य' शब्द अर्थशास्त्र से आया है और भारतीय समाज में इसका प्रचलन दर्शन और हमारे जीवन के व्यवहार शास्त्र से भी हुआ है। जब भी मूल्यों की बात होती है, कई शब्द सामने आते है जैसे – जीवन मूल्य, नैतिक मूल्य और मानवीय मूल्य। अगर हम इन्हें एक ही माने तो गलत न होगा क्योंकि मूल्य को किसी भी नाम से पुकारा जाए, वे उन गुणों को बताते हैं जिन्हें व्यक्ति उपयोगी मान उन्हें अपना कर समाज में मान्यता प्राप्त करता है।

नैतिक मूल्य का अर्थ एवं परिभाषा – मूल्यों का उद्य मानवीय चेतना की सृजनात्मकता के कारण होता है। सृजनशील मनुष्य ही मूल्यों का निर्माण करता है। मूल्य मनुष्य के विकासशील जीवन के लक्ष्य है। अत: कहा जा सकता है कि मूल्य विवेकशील स्वतंत्र मनुष्य की वे अपेक्षाएँ है जिनका वरण वह करता है। मानवीय मूल्यों या नैतिक मूल्यों का अर्थ उन मूल्यों से है जो एक व्यक्ति को दूसरे व्यक्ति से जोड़ते है।

इस संबंध में यफ्लिंक के विचारों को देखा जा सकता है – 'मूल्य सामान्य

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.) भारत

मानक होते है, जिनके द्वारा मनुष्य अपने समक्ष ऐसी क्रियाओं के विकल्पों में से चयन करने में सफल होता है, जिनका वह प्रत्यक्षीकरण करना चाहता है।'

राधाकमल मुखर्जी का मानना है कि – 'मूल्य समाज द्वारा अनुमोदित उन इच्छाओं और लक्ष्यों के रूप में परिभाषित किये जा सकते है, जिन्हें अनुबंधन अधिगम या समाजीकरण की प्रक्रिया द्वारा आत्मसात किया जाता है और जो व्यक्तिगत मानकों तथा आकांक्षाओं के रूप में परिवर्तित हो जाता है।'

उपर्युक्त परिभाषाओं से भी यह स्पष्ट है कि मूल्य वे आचरण सिद्धांत है जो हमारी आस्थाओं और सामाजिक मर्यादाओं पर आधारित है।

शोध प्रविधि –

शोध का उद्धेश्य – समय परिवर्तनशील है वह किसी के लिए नहीं ठहरता। हमारा समाज भी परिवर्तनशील और भविष्योन्मुखी है। इस गतिशीलता में कई मूल्य ढ़ह गये है और कई ने नया रूप एवं आकार ग्रहण कर लिया है। कालिदास मानते थे कि पुराना सब अच्छा नहीं होता और नया सब बुरा नहीं होता। हमारी समाज व्यवस्था में मूल्यों और धरोहरों के बारे में प्रश्नांकन हैं, कुछ संदेह है, कुछ शंकाएँ है और कुछ अपाहिज व्यथाएँ भी। नैतिक मूल्यों की उपयोगिता भी संदेह और प्रश्नों के आवर्त में घिरी है।

आज हमारी अन्तरात्मा लहूलुहान हो चुकी है। आधुनिकता की तेज़ हवा के बहाव में पूरा देश घिर चुका है। गरीबी, बेकारी, अशिक्षा, विषमता, भ्रष्टाचार, अन्याय, कुपोषण, आतंक जैसे मुद्दों से हमारा देश झुलस रहा है। हमारी मानवीय गरिमा नष्ट होती जा रही है। आज हमारे समाजिक सांस्कृतिक मूल्य कराह रहे है, इसलिए आवश्यकता है उनको जिन्दा रखने की। यही इस शोध का उद्देश्य है।

उपकल्पना – नैतिक मूल्य वे मानवीय मूल्य है जो एक व्यक्ति को सही अर्थो में एक व्यक्ति को मानव बनाते है। भारतीय दर्शन में मूल्यों को चार भागों में बाँटा गया है – धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। परन्तु आज उपभोक्तावादी संस्कृति के कारण नैतिकतावाद की संस्कृति पर कालीछाया मंडराने लगी है। आज मूल्यों के महत्व एवं प्रभाव को समझने की आवश्यकता है। यह तथ्य बेहद प्रासंगिक है।

निदर्शन – निदर्शन पद्धति से भारतीय दर्शन को अवधारणाओं को मूल प्रतिपाद्य बनाते हुए नैतिक मूल्य का अध्ययन एवं चयन कर वर्तमान संदर्भ में विषय केन्द्रित किया है। मानवीय मूल्यों की महत्ता उद्घाटित की गई है।

सामग्री संकलन – प्राथमिक सामग्री स्त्रोत के रूप में नीतिशास्त्र से जुड़े मूल ग्रंथ एवं मूल्यपरक वे व्याख्यान एवं उद्बोधन है, जो तथ्य उपलब्ध कराते है।

द्वितीयक सामग्री स्त्रोत के रूप में सहायक ग्रंथ 'नैतिक मूल्य और भाषा' एवं कुछ शोध पत्रिकाएँ एवं विशेषांक आदि लेखन का आधार बने हैं।

मूल्य अध्ययन विवेचन

व्यक्तित्व के निर्माण में मूल्यों का विशेष महत्व होता है। मूल्य व्यक्तित्व को प्रभावित करते है। कोई व्यक्ति समाज से कितनी आसानी से सामन्जस्य कर पाएगा, यह इस बात पर निर्भर है कि उसके व्यक्तित्व में मूल्यों का प्रवेश कितना व्यवस्थित रहा है।

नैतिक मूल्यों के महत्व एवं इसकी महती आवश्यकता को निम्नलिखित बिन्दुओं में देखा जा सकता है –

1. सामाजिक संदर्भ में अहम् भूमिका।
2. प्रजातान्त्रिक मूल्यों की शक्ति।
3. पर्यावरण में संतुलन एवं संरक्षण भी मूल्यों द्वारा किया जा सकता है।
4. सामाजिक व्यवस्था में संतुलन, सहयोग, सहानुभूति, न्याय, प्रेम, स्नेह जैसे मूल्यों से रखा जा सकता है।
5. व्यक्तिगत स्तर पर मूल्यों को अपनाकर उच्चादर्शों की प्राप्ति की जा सकती है।
6. संस्कृति के विकास में सहायक।
7. विश्व स्तर पर नैतिक मूल्यों का महत्व – 'वसुधैवकुटम्बकम' के मूल मंत्र के रूप में।
8. शिक्षा के लक्ष्यों का प्रतिपादन– आदर्श नागरिक की कल्पना को साकार बनाने हेतु।

परिणाम एवं विवेचन – भारतीय संस्कृति आधुनिक युग में भी जीवित है, यही भारत की पहचान है। इसका सबसे बड़ा कारण हमारे नैतिक मूल्य है, जो संदेहपूर्ण भले ही हो गये हो फिर भी जीवित है। जिन्होंने अपनी अस्मिता को आज भी बरकरार रखा है। ये नैतिक मूल्य तो भारतीय संस्कृति की नींव के वे पत्थर है जो कभी हिल नहीं सकते। इनके अभाव में कोई भी सभ्यता अधिक समय जीवित नहीं रह सकती।

पश्चिमीकरण की आँधी ने उनका क्षरण अवश्य किया है। परन्तु वह इसे पूर्णत: मिटा नहीं पाई है।

निष्कर्ष – आज मूल्य शिक्षा को तकनीकी शिक्षा के पाठ्यक्रम में एक विषय के रूप में सम्मिलित किया गया है और उच्च शिक्षा के एकीकृत पाठ्यक्रम का आधार भी नैतिक मूल्य बने हुए है ताकि हमारे युवा विद्यार्थी को इन मूल्यों को जीवन में उतार सकें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. नैतिक मूल्य और भाषा – संयोजक संपादक– सेवाराम त्रिपाठी, प्रकाशक – म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी।
2. प्रतियोगिता दर्पण – अंक अक्टोम्बर 2009, अप्रेल 2010, सितम्बर 2011
3. रचना अंक– मई–जून –2014, अंक जुलाई–अगस्त, 2014 प्रकाशक– म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी।

****

समाज में नैतिक मूल्यों के पतन के कारण तथा नैतिक मूल्यों को पुन:स्थापित करने के उपाय - एक अध्ययन

देवेन्द्र सिंह ठाकुर *

शोध सारांश – नैतिक मूल्य अर्थात वे मूल्य जो व्यक्तित्व विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। नैतिक मूल्यों का पता हमें व्यक्ति के आचरण और व्यवहार से चलता है। नैतिकता की शुरुआत परिवार से शुरु होती है। नैतिक मूल्य अमूर्त होते हैं, जो व्यक्ति के व्यवहार और आचरण में झलकते है। प्रत्येक व्यक्ति अपनी अभिरूचियों के अनुसार नैतिक मूल्यों को ग्रहण करता है। नैतिक मूल्यों के कारण ही व्यक्ति को समाज में सम्मान प्राप्त होता है।

प्राचीन काल में गुरुकुलो में विद्यार्थियों को भारतीय संस्कृति एवं संस्कारो का ज्ञान दिया जाता था जिसके अंतर्गत नैतिक मूल्यों, सामाजिक दायित्वों, अधिकारों और कर्त्तव्यों की शिक्षा भी दी जाती थी। जो बालक को एक अच्छा नागरिक बनाने में महत्वपूर्ण योगदान देती थी। कहा भी जाता है कि बालक का दिमाग एक खाली स्लेट की भाँति होता है जिस पर जो लिख दिया जाता है वो अमिट रहता है। बचपन में सीखी बातें बच्चों में जीवनभर बनी रहती है, इसलिए परिवार, समाज और शिक्षा के द्वारा बालक को ईमानदारी, त्याग, बलिदान, साहस, अहिंसा, प्रेम, भाईचारा, अपनापन, बड़ो का सम्मान, छोटो से प्रेम, समानता, मानवता, देश प्रेम, विनम्रता, कर्त्तव्यनिष्ठा आदि सिखाया जाता है।

वैसे तो नैतिक मूल्य हमारे संस्कारों में ही समाहित रहते हैं। नैतिक मूल्य बचपन में ही परिवार और समाज के द्वारा बालक के चरित्र में समाहित कर दिये जाते है जो समय के साथ विकसित होकर बालक के व्यक्तित्व का अभिन्न हिस्सा बनकर उसके साथ जीपनपर्यंत बने रहते है तथा बालक को उसके सामाजिक दायित्वों, अधिकारों और कर्त्तव्यों की याद दिलाते रहते है। नैतिक मूल्यों के अभाव में बड़ी से बड़ी सफलता भी मूल्यहीन हो जाती है। ऐसे व्यक्ति को समाज भी एक दिन अकेला छोड़ देता है फिर ऐसी सफलता का क्या औचित्य जिसमें अपने, अपनों से दूर हो जाये।

शब्द कुंजी - नैतिक मूल्य, समाज, युवा, नैतिक पतन।

प्रस्तावना – नैतिक मूल्य व्यक्ति के आचरण और व्यवहार द्वारा समाज के समक्ष प्रकट होते है। ये मूल्य व्यक्तित्व निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते है। नैतिक मूल्य हमारे संस्कारों में ही समाहित रहते है। जिन्हें सीखने - सिखाने की आवश्यकता नहीं होती है क्योंकि परिवार में रहते हुए बच्चा इन्हे अर्जित कर लेता है। नैतिक मूल्य बचपन में ही परिवार और समाज के द्वारा बालक के चरित्र में समाहित कर दिये जाते है जो समय के साथ विकसित होकर बालक के व्यक्तित्व का अभिन्न हिस्सा बनकर उसके साथ जीवनपर्यंत बने रहते है तथा बालक को उसके सामाजिक दायित्वों, अधिकारों और कर्त्तव्यों की याद दिलाते रहते है। नैतिक मूल्यों के अभाव में बड़ी से बड़ी सफलता भी मूल्यहीन हो जाती है। ऐसे व्यक्ति को समाज भी एक दिन अकेला छोड़ देता है फिर ऐसी सफलता का क्या औचित्य जिसमें अपने, अपनों से दूर हो जाये।

शोध प्रविधि - किसी भी शोध कार्य को पूर्ण करने के लिए तथ्यों और सामग्री का होना अतिआवश्यक है। सामग्री संकलन के लिए मैंने इस क्षेत्र के जानकारों तथा बड़े बुजुर्गो से प्रत्यक्ष मिलकर उनका साक्षात्कार लिया तथा विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं से भी तथ्यों का संकलन किया। हम सब जानते हैं कि शोध प्रविधि का चयन विषयानुसार किया जाता है इसलिए मैंने इस शोध कार्य हेतु साक्षात्कार, सर्वेक्षण और आसन कार्य विधि का चयन किया है जो मेरे शोध कार्य के लिए उपयुक्त सिद्ध होगी।

नैतिक मूल्यों के पतन के कारण।

पश्चिमी संस्कृति का अंधानुकरण - आज का युवा पश्चिमी संस्कृति पर आंख मूंद कर चल पड़ा है जो नैतिक पतन का सबसे बड़ा कारण है। पश्चिमी संस्कृति के प्रभाव में आकर अति आधुनिक बनने के चक्कर में आज का युवा भारतीय मूल्यों को तिलांजली देने पर तुला है जो नि:संदेह हमें गर्त में धकेलेगा। वर्तमान समय में पश्चिमी संस्कृति ने समाज में विशेषकर युवा वर्ग में गहरी जड़े जमा ली है।

एकल परिवार - नैतिक मूल्यों के पतन का कारण कहीं न कहीं एकल परिवार प्रणाली है क्योंकि एकल परिवार में रहने से बच्चे को दादा-दादी, काका-काकी, ताऊ- ताई से समाज का एक अच्छा नागरिक बनने के लिए जो सामाजिक गुण और नैतिक मूल्यों की प्राप्ति होती थी, वो अब कहीं भी नजर नहीं आती है।

आर्थिक आजादी - अधिकांश परिवारों ने अपने युवा बच्चों को आर्थिक आजादी दे दी है और युवा इसी आजादी का नाजायज फायदा उठाते हुए नैतिक- अनैतिक कोई सा भी क्रियाकलाप करने से नहीं चुकता है क्योंकि परिवार द्वारा उसे संरक्षण प्राप्त होता हैं। इस आर्थिक आजादी के कारण ही नैतिकता का अवमूल्यन तेजी से हो रहा है।

समाज का खुलापन - आज समाज का हर वर्ग आधुनिकीकरण की चपेट में पुरी तरह से आ चुका है और हाल के कुछ वर्षो में समाज में इतना अधिक खुलापन आ गया है कि समाज में बड़ो का अपमान एवं नारी की मान मर्यादा का उल्लंघन खुलेआम हो रहा है। समाज का खुलापन गलत दिशा में जा रहा है जो निश्चित ही आनेवाले समय में और अधिक समस्याएँ उत्पन्न करेगा।

उपभोक्तावादी संस्कृति - आज समाज ने उपभोक्तावादी संस्कृति को अपना लिया है। आज प्रत्येक व्यक्ति सीमा से बाहर जाकर भौतिक वस्तुओं का उपभोग करना चाहता है और यही सोच नैतिक पतन का कारण बन गई

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय महाविद्यालय, धरमपुरी, जिला-धार (म.प्र.) भारत

है। क्योंकि व्यक्ति भौतिक वस्तुओं को क्रय करने के लिए आज नैतिक मूल्यों को ताक पर रखकर चोरी, डकैती, लूट खसोंट, हत्या, बेईमानी, हिंसा, रिश्वतखोरी करने से भी नहीं चुकता है।

व्यक्ति गौण और पैसा सर्वोपरी – आज के युवाओं के लिए घर, परिवार, समाज और देश गौण हो गया है तथा पैसा सर्वोपरी हो गया हैं। आज का युवा किसी भी कीमत पर पैसा कमाना चाहता है। पैसा कमाने का तरीका जायज हो या नाजायज वो इसके बारे में नहीं सोचता है। युवाओं की यही सोच समाज को गर्त में धकेल रही है। जो नि:संदेह हम सब के लिए घातक है।

कम्प्यूटर, इंटरनेट का चलन – कहते हैं कि विज्ञान से लाभ भी है और हानि भी, तो यह बात आज **नैतिक मूल्यों के पतन के संदर्भ में** सोलह आने सच साबित हो रही है। मेरा मानना है कि नैतिक मूल्यों के पतन में कम्प्यूटर और इंटरनेट का बढ़ता प्रयोग अधिक जिम्मेदार है। कम्प्यूटर, इंटरनेट के अत्यधिक चलन ने आज के युवाओं और बच्चों के सामने समाज की मान मर्यादा को तार-तार कर दिया है। आज बालिग, नाबालिग होने के कोई मायने नहीं है क्योंकि आज इंटरनेट ने उम्र के बंधन को समाप्त कर किया है। बिना रोक टोक आप चाहे जो देखें, करें, किसी भी प्रकार की कोई बंदिश नहीं है।

अहम् (मैं) की भावना – किसी भी चीज की अति अच्छी नहीं होती है क्योंकि अति हमेशा नुकसान ही देती है। आज की युवापीढ़ी में अहम् की भावना इतनी अधिक आ गयी है कि वे अपने अहम् के नशे में चूर होकर कई अनैतिक कार्य करने लगे हैं, जो नैतिक पतन का कारण बन रहा है।

मनोरंजन के बढ़ते साधन – नैतिक पतन का जिम्मेदार मनोरंजन के बढ़ते साधन भी है क्योंकि पहले घर परिवार के बडे बुजूर्गो जैसे दादा-दादी और नाना-नानी द्वारा बच्चों को वार्ताओं के माध्यम से नैतिक मूल्यों का पाठ पढ़ाया जाता था परन्तु मनोरंजन के आधुनिक साधनों ने बच्चों से दादा-दादी और नाना-नानी को तो दूर किया ही है, साथ ही नैतिक मूल्यों से भी दूर कर दिया है।

जीवन के हर क्षेत्र में बढ़ती प्रतियोगिताएँ – आज के युग को प्रतियोगी युग कहें तो कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी क्योंकि आज व्यक्ति को जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में प्रतियोगिता का सामना करना पड़ रहा है। ऐसे में व्यक्ति सफलता प्राप्त करने के लिए अनैतिकता का सहारा लेने लगा है।

माता-पिता का दबाव – मेरा मानना है कि युवाओं में नैतिक पतन के जिम्मेदार कुछ हद तक माता-पिता भी हैं। माता-पिता अपनी अधूरी ख्वाहिशें अपने बच्चों के जरिए पूरी करना चाहते हैं और बच्चों पर इतना अधिक दबाव डालते हैं कि बच्चे सफलता प्राप्त करने के लिए नैतिक मूल्यों को ताक पर रख देते हैं जिसमें उनके माता-पिता भी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से जिम्मेदार होते हैं।

ऐसे अनेक कारण हैं, जो नैतिक मूल्यों के पतन के जिम्मेदार है। हम सब समाज का एक हिस्सा है और चुप रहकर कहीं न कहीं प्रत्यक्ष, अप्रत्यक्ष रूप से समाज में नैतिक मूल्यों के पतन का कारण बन रहे हैं। चुप रहकर हम अपनी जिम्मेदारियों से मुख नहीं मोड़ सकते है और एक षिक्षक होने के नाते तो बिल्कुल भी नहीं। अत: हम सभी को ऐसी बुराईयों को मिटाकर एक आदर्श समाज के निर्माण में जुट जाना चाहिए।

नैतिक मूल्यों के उत्थान हेतु सुझाव –

उच्च आदर्शों की स्थापना – हमें अपने आचरण और व्यवहार के द्वारा समाज में उच्च आदर्शो की स्थापना करनी होगी। समाज के अधिक से अधिक लोगों को इन आदर्शो को अपनाने के लिए प्रेरित करना होगा तभी नैतिक मूल्य समाज में पून: स्थापित हो सकेंगे।

महापुरूषों की जीवनियों के द्वारा – शैक्षणिक संस्थाओं के पाठ्यक्रमों में महापुरूषों की जीवनियों को अनिवार्य रूप से शमिल करवाकर, उनका नियमित पठन-पाठन करवाकर नैतिक मूल्यों को समाज में स्थापित किया जा सकता है। युवा वर्ग इन प्रेरणास्पद जीवनियों से प्रेरणा लेकर अपने साथ-साथ समाज और देश का विकास करने लगेंगे।

मैं के स्थान पर हम की भावना विकसित करके – यदि बचपन से ही बच्चों के मन में मेरा, तेरा के स्थान पर हम, हमारी भावना का विकास किया जाये, तो नि:संदेह भाईचारा बढ़ेगा ओर समाज में एकता को भी बल मिलेगा।

समाज का महत्व – नैतिक मूल्यों को स्थापित करने के लिए युवाओ को बताना पड़ेगा वह एक सामाजिक प्राणी है। बिना समाज के उसका सर्वांगीण विकास असंभव है। उसे आगे बढ़ने के लिए कदम-कदम पर घर, परिवार और समाज की आवश्यकता पडेग़ी।

भारतीय संस्कृति का महत्व – भारतीय संस्कृति की विशेषताओं से युवाओं को रूबरू कराना होगा। उन्हें बताना होगा कि हमारी संस्कृति धर्म, कर्म, अध्यात्म, सहिष्णुता, सामंजस्य, एकता, सामाजिक विकास, भाईचारा, देश प्रेम को सर्वोपरी मानती है।

प्रेरणास्पद कार्यक्रमों का आयोजन – युवाओं के लिए विविध प्रेरणास्पद कार्यक्रमों का आयोजन करके बताना होगा कि नैतिक मूल्य होगें तभी हम अपनी आजादी को बचा पायेगें।

निष्कर्ष – उपरोक्त अध्ययन से स्पष्ट होता है कि आज समाज को नैतिक मूल्यों की अत्यधिक आवश्यकता है। आज देश में युवाओ की संख्या लगभग 65 प्रतिशत हैं। आज का युवा क्या कुछ नहीं कर सकता, बस उन्हें उचित मार्गदर्शन की आवश्यकता है। युवाओं को बताना होगा कि नैतिक मूल्यों के द्वारा ही सामाजिक व्यवस्था का सफल एवं सुचारू संचालन संभव है। तभी हम अपना और देश का विकास पर पायेंगे, वरना एक दिन अराजक तत्व अपने अनैतिक कार्यो को अंजाम देने के लिए देश की बलि चढ़ा देंगे। समाज में नैतिक मूल्यों को पुन: स्थापित करके ही हम पहले जैसा सौहार्दपूर्ण वातावरण स्थापित कर सकते हैं और तभी देश की एकता, अखण्डता, खुषहाली बनी रहेगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. राय, डॉ. शशि (2014) नैतिक मूल्य – परिचय एवं वर्गीकरण : म.प्र. हिंदी ग्रंथ अकादमी, भोपाल।
2. सिहं, सरदार पूर्ण (2014) आचरण की सभ्यता – म.प्र. हिंदी ग्रंथ अकादमी, भोपाल।
3. कोठारी, अतुल, (2009) 'मूल्यों की शिक्षा',शिक्षा संस्कृति उत्थान न्यास, नई दिल्ली।
4. इंटरनेट, जागरण (2015)
5. इंटरनेट, नवभारत टाईम्स (2015)
6. ई-लाईब्रेरी (2015)

****

आधुनिक जीवन और सामाजिक मूल्य

धनीराम प्रजापति *

शोध सारांश – मानव की उत्पति से लेकर वर्तमान तक मानव का विकास लगातार होता आ रहा है। आज मानव अपनी उत्कृष्ठ अवस्था में है, कहा जा सकता है। आदिकाल में भी मानव को मानव से कोई विशेष लगाव नहीं था मात्र आवश्यकता पूर्ति तक ही संबंध सीमित थे, वही स्थिति आज भी आ रही है मानव स्वार्थी होता जा रहा है जिस देश में परोपकार, परहित, सेवा, दान, धर्म, त्याग, संतुष्ठि, ईमानदारी जैसे मूल्य ये आज यही मूल्य स्वहित, स्वार्थी, संग्रह, असंतुष्ठि, बेईमानी में परिवर्तित हो गऐ है। आधुनिकता की चमक ने मनुष्य की आखो पर नकारात्मक मुल्यों की पर्त चढ़ा दी है उसे स्वयं के सिवाय कोई दुसरा दिखाई नहीं दे रहा और सभी इस अंधी दौड़ में शामिल हो रहे है, शहर तो पहले से इसके शिकार थे परन्तु अब गॉव भी इसकी गिरफ्त में आ रहे है। आधुनिक जीवन शैली ने मानव को एक मशीन बना दिया है और मशीन में न भावनाए, संवेदनाऐ, ईच्छाऐ होती है और न किसी के प्रति उत्तरदायी, आज मानव में सामाजिक मूल्य नहीं है व्यक्तिक मूल्य का समावेश है।

प्रस्तावना – आधुनिक जीवन एक जटिल जीवन हो गया है आज समाज जटिलता की ओर बढ़ता जा रहा है। पहले समाज को समझना सरल था पर यह अब उलझता जा रहा है । यह सामाजिक गतिशीलता है सामाजिक गतिशीलता को सामाजिक परिवर्तन के एक अंग के रूप में स्वीकार किया गया है। सामाजिक गतिशीलता आधुनिक औद्योगिक, नगरीय समाज की एक प्रमुख विशेषता बन गई है। यातायात व संचार के क्रांन्तिकारी साधनों ने सामाजिक गतिशीलता को हवा दी है। जिसके कारण व्यक्ति एक स्थान से दूसरे स्थान,ग्रामों से नगरों की ओर नगरों से महा नगरों, एक प्रदेश से दूसरे प्रदेश तथा एक देश से दूसरे देश में तथा एक व्यवसाय से दूसरे व्यसाय या व्यापार में सरलता से कभी भी आ जा सकते हैं। आधुनिक औद्योगिक नगरीय समाजों में चूकि अर्जित प्रस्थिति को अधिक महत्व दिया जाता है जिसके कारण जाति, धर्म, प्रथाएँ,परम्परा,तथा नातेदारी आदि को अधिक महत्व नहीं दिया जाता है। यहाँ विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के नवीन प्रयोग आये दिन होते रहते हैं जिसके फलस्वरूप यहां के जीवन में परिवर्तन होता रहता है। सामाजिक परिवर्तन का प्रत्यक्ष संबंध सामाजिक संरचना, सामाजिक संबंधों, प्रकार्यों तथा सगठनों में होने वाले परिवर्तन से हैं। इसी सामाजिक गतिशीलता ने आधुनिक जीवन में सामाजिक मूल्यों के ह्रास में भूमिका निभाई आज सामाजिक मूल्य टूटते जा रहे हैं हाथों में भौतिकतावाद लिए व्यक्ति नजर आ रहा है और जो कि मूल्यों को तिलांजली दे चुका है।

परिणाम एवं विवेचना – हम आज समाज के सामाजिक आदर्श, प्रतिमान, रीति, रिवाज, प्रथाएँ परम्पराएँ और सामाजिक संरचना की तुलना आज से दस वर्ष पूर्व की सामाजिक संरचना, आदर्श, प्रतिमान, रीति रिवाज तथा प्रथाएँ परम्पराओं से करे तो अत्यधिक अंतर दृष्टिगोचर होगा क्योंकि समाज सदैव गतिशील रहता है। इसे और भी स्पष्टत:समाज की मुख्य इकाई शक्ति के सम्पूर्ण जीवन के परिवर्तन से समझ सकते हैं। जन्म के पश्चात युवावस्था और प्रौढावस्था और अंत में मृत्यु हो जाती है इस प्रकार निरन्तर परिवर्तन होता रहता है। जिसके अंतर्गत जीवन की स्वीकृत विधियाँ तथा समाज द्वारा मान्यता प्राप्त सामाजिक संबंधों प्रतिमानों, संस्थाओं, तथा प्रक्रियाओं का स्वरूप इस प्रकार बढ़ता जाता है कि इनके साथ पुन: अनुकूलन करना अत्यंत कठिन हो जाता है। आधुनिक समाज का एक सकारात्मक पक्ष भी है इससे सामाजिक, सांस्कृतिक सम्यकों का क्षेत्र स्वत:ही बढ जाता है। क्योंकि नगरों , धर्म, प्रजाति, सम्प्रदाय के लोग यहां बसते हैं और उनकी विभिन्न प्रथा, परंपरा, रीति रिवाज, आदर्श, सामाजिक मूल्य से परिचित होते हैं। व्यक्ति अपने जीवन को आधुनिक के रंग में रंगने लगता है और उसका वास्तविक रंग ही बदल जाता है आज यही हो रहा है वह आधुनिकता में अपने असली सामाजिक मूल्यों को छोड़ नऐ मूल्यों की ओर मुड़ गया जिसमें अपनी ओर खिचने का आकर्षण व चमक तो है परन्तु स्थायित्व नहीं। आधुनिक सामाजिक मूल्यों के भवंर में ऐसा फँसा है कि व्यक्ति अपने आँखें खोल के देख भी नहीं सकता वह बस इस आँधी के साथ बहा जा रहा है जो रूकने वाली नहीं है। तेजी से बदलती जीवन शैली और भौतिकता की अंधी दौड़ के कारण आज व्यक्ति में धैर्य की कमी, आत्मकेन्द्रित, नशा, लालच, हिंसा और कामुकता आज के दौर के अधिकांश युवाओं के स्वभाव का अंग बन गया है। यह मूल्य हीनता के कारण ही हुआ है यदि परिवार में उन्हें सही मूल्यों की शिक्षा दी होती तो आज इस स्थिति में नहीं होते हैं इसका परिणाम युवाओं में तनाव, कुण्ठा, अवसाद का उत्पन्न होना है।

आधुनिक जीवन में व्यक्ति से अधिक रूपयों को महत्व दिया गया है, आज परिवार के मुख्य सदस्य रूपयों को संकलित करने में लगे वो सुबह होते ही घर से निकल जाते हैं और रात्रि उपरांत घर आते हैं उन्होंने कभी अपने बच्चों को न खेलते देखा, न पढ़ते देखा, न अन्य क्रियाकलापों को करते जब वो जाते हैं तो बच्चे सोए रहते हैं जब आते हैं तब तक वो सो जाते हैं। ऐसे में पिता का माता, पुत्र, पुत्री पर जैविक प्रभाव ही रहता है अन्य वैचारिक प्रभाव नहीं जब पिता से पूछा जाता है, कि आप घर पर ध्यान दीजिए बच्चो को दीजिए तब उनका जवाब रहता है ये पैसे भी तो मैं इन्हीं के लिए कमा रहा हूं। जब बच्चों को मूल्यों की आवश्यकता होती है तब इन्हें रूपऐ दिए जाते हैं ऐसे

* शोधार्थी (समाजशास्त्र) शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

में बड़े होकर उसका भविष्य क्या होगा यह आज हमारे सामने प्रत्यक्ष है। उच्च वर्गीय माताओं की बात की जाऐ तो यह पाया गया है कि माँ अपने सौंदर्य,पार्टियों में व्यस्थ रहती हैं वे घर में भोजन तक बनाने के समय नहीं निकालती तो बच्चों के लिए समय कहां होगा। कभी-कभी तो पत्नी सुबह के 4 बजे तक पार्टी से लौटी हो और दोपहर तक सोकर फिर पार्टी की तैयारी ऐसे में न पति को,न बच्चों को माता का प्रेम, वात्सल्य,शिक्षा मिलती है न ज्ञान दर्शन। जिनके माता पिता ऐसी जीवन शैली में लिप्त हैं वो बच्चे दाईयों, नौकरों,ड्राइवरों के बीच बड़े हो रहे हैं इन्हें जो माहौल मिलना था उसमें इन्हें भौतिक माहौल, तो मिलता है पर सामाजिक आदर्शात्म माहौल नहीं ऐसे में इनकी प्रवृति वैसी ही बनती जाती है जैसा ये देखते हैं अनियमित दिनचार्य, अनियमित आहार, मादक द्रव्यों का सेवन, यौन संबंधी, प्रेम संबंधी समस्याएँ, खर्चीली प्रवृति, इत्यादि व्याधियों को अपने जीवन का अंग बना लेते हैं। आधुनिक जीवन शैली ने युवाओं में नकारात्मक मानसिकता, तनाव, असंतुष्टि जैसी मनोवैज्ञानिक समस्या उत्पन्न कर दी है। इस समस्या के वे अपना संयम खो देते हैं क्योंकि उन्हें समझाने वाला कोई नहीं, परिवार भी एकांकी हैं बड़े बुजुर्ग नहीं ये तो संयुक्त परिवार का हिस्सा हैं। ऐसी स्थिति में अधिकांश युवा आत्महत्या का रास्ता चुन लेते हैं। आत्महत्या के आंकड़ों ने सर्वाधिक संख्या युवाओं की ही होती है। जिसने परिवार की अपेक्षाओं पर खरे न उतरने , परीक्षा में असफलता, नौकरी न मिलना, प्रेम में असफलता कारण होते हैं। यदि इन्हें जीवन का महत्व समझाया जाता, जीवन के अन्य रास्तों के बारे में बताया जाता, नई चूनौतियों के लिए तैयार किया जाता, अपने माता,पिता,परिवार के प्रति उत्तरदायित्व का बोध कराया जाता तो आज इन आत्महत्याओं ,की संख्या में इतनी न बढती और ये तभी संभव है जब हम आज की शिक्षा प्रणाली में नैतिक, मौलिक शिक्षा का समावेश करेंगे।

दूसरा पक्ष यह भी है कि आज की इस भागम भाग जीवन शैली में थोड़े ठहराव की आवश्यकता होती है जहां हम विश्राम कर सके वैसे हमारे प्राचीन भारतीय धर्म में चार आश्रम की बात कहीं थी ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ, सन्यास जिसके अनुसार जीवन को एक पड़ाव से दूसरे पड़ाव में जाने के लिए तैयार किया जाता था परन्तु आज कोई व्यवस्था नज़र नहीं आती व्यक्ति का कब ब्रह्चर्य समाप्त हुआ कब गृहस्थ में प्रवेश किया और अब तीसरा व चौथा आश्रम वानप्रस्थ व सन्यास अस्तित्व में ही नहीं है, वह पूरा जीवन गृहस्थ आश्रम में ही बीता देता है। बच्चों को आज धार्मिक, आध्यात्मिक, क्रियाकलापों और सामाजिक कार्यों के प्रति जागरूक करना तभी उनके अपनी सभ्यता, संस्कृति, मूल्यों के प्रति सम्मान की भावना आयेगी।

वर्तमान भौतिकवादी वातावरण में चरित्र निर्माण की चर्चा बिल्कुल गोंण है एक अध्ययन के अनुसार जिनका परिवार व सदस्य कठिनाईयों में जीवन व्यतीत करते हैं वो अपेक्षाकृत अधिक संयमी, मितव्ययी और अनुशासित होते हैं। जब कि सुविधा में बढ़े बच्चे की सफलता का अनुपात उनसे काफी कम हैं। आज युवाओं को दुनिया के साथ आगे बढ़ने के लिए सब आवश्यक है पर साथ-साथ नैतिक, सामाजिक, मूल्यों को भी अपने जीवन का अंग बना कर हमें जीवन में प्रवेश कराऐं तभी सम्पूर्ण रूप वैशविक प्रतिस्पर्धा में सबसे आगे रहा जा सकता है।

निष्कर्ष- आधुनिक जीवन में मनुष्य कितना भी आधुनिक क्यों न हो जाऐ वह मशीन नहीं बन सकता उसे इस समाज, सामाजिक संबंधों, रीतियों, प्रथाओं, संस्थाओं आदि का हिस्सा बना रहना होगा, पर मनुष्य को ध्यान रखना होगा, ये सामाजिक व्यवस्था मानव समाज का अंग है मषीनी समाज का नहीं आज आवश्यक है, कि हम अपनी नई प्रणाली में सामाजिक मूल्यों, को पुन:पोषित करें, ऐसी शिक्षा दे जो जीवन जीना व जीवित रहना दोनों सिखाऐ। ऐसे संस्कारों की शिक्षा दी जाए जो प्राचीन भारत की पहचान है जहाँ मातृ-पितृ, गुरू, अतिथि की तुलना देवताओं से की जाती थी। यह संभव तभी होगा जब माता-पिता, शिक्षक, व्यक्ति व राष्ट्र का हर एक सदस्य इसे अपना राष्ट्रीय कर्तव्य समझ कर करेगा तभी हमारा भारत पुन: संस्कारधानी बन पायेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. दोषी. एस.एस. एण्ड जैन. (2002) भारतीय समाज संरचना और परिवर्तन जयपुर - नेशनल पब्लिकेशन हाउस।
2. ओझा,एस,के (2013) समाजशास्त्र, मेरठ - अरिहन्त पब्लिकेशन।
3. श्रीवास्तव, ए.पी. (2014) समाजशास्त्र, भोपाल - राम प्रसाद एंण्ड संस।
4. गुप्ता, एम.एल. एवं शर्मा, डी.डी. (2006). समाजशास्त्र. आगरा - साहित्य भवन प्रकाशन।

****

नैतिक मूल्य एवं कौशल विकास

प्रो. अर्जुन गोरे *

शोध सारांश – भारत एक विशाल जनसंख्या वाला देश है, यहां अनेक प्रकार की जातियां, प्रजातियां एवं बोलियां पाई जाती है, परंतु यहां अनेकता में एकता का बोध होता है, क्योंकि भारत की संस्कृति अक्षुण है, जो, सभी मानवों को एक साथ बांधे हुए है। भारत की संस्कृति को जिन्दा रखने में समाज के नैतिक मुल्यों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। परंतु वर्तमान युग में जहां प्रौद्योगिकी का तेजी से विकास हुआ है, वहीं नैतिक मुल्यों का पतन होता जा रहा है। नैतिक मुल्यों का पतन होना समाज के लिए बहुत ही हानिकारक है, वर्तमान की शिक्षा में इस प्रकार का परिवर्तन किया जाना चाहिए, जिससे एक तरफ कौशल विकास व्यक्तित्व विकास को बढ़ावा देकर समाज के अधिक से अधिक लोगों सभ्य रोजगार की उपलब्धि कराई जाए, जिससे देश में आर्थिक संपन्नता उत्पन्न की जा सके, साथ ही नैतिक शिक्षा को बढ़ावा देकर राष्ट्र भावना जन कल्याणकारी भावना का विकास भी किया जा सके।

शब्द कुंजी – नैतिक मुल्य, कौशल विकास, प्रोद्योगिकी।

प्रस्तावना – भारत एक विशाल जनसंख्या वाला देश है, यहां अनेक प्रकार की जातियां, प्रजातियां एवं बोलियां पाई जाती है, परंतु यहां अनेकता में एकता का बोध होता है, क्योंकि भारत की संस्कृति अक्षुण है, जो, सभी मानवों को एक साथ बांधे हुए है। भारत की संस्कृति को जिन्दा रखने में समाज के नैतिक मुल्यों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। भारत में आज भी जहां बुजुर्गों का सम्मान किया जाता है, जहां अन्य देशों में लोक अपने माता पिता को बोझ समझकर अनाथालयों में छोड़ देते है, वहीं भारत में नैतिक मुल्यों के आधार पर माता पिता की सेवा को भगवान की सेवा से बड़ा दिखाया गया है।

नैतिक मुल्यों को विभिन्न विद्धानों ने अलग–अलग प्रकार से वर्गीकृत किया है, वैसे नैतिक मुल्य नकारात्मक एवं सकारात्मक होते है, जिसमें नकारात्मक मुल्य कुछ कार्यो को न करने के आदेश देते है, जैसे– **चोरी मत करो, झुठ मत बोलो, लड़ाई मत करो, गाली नहीं देना** चाहिए आदि वहीं सकारात्मक मुल्य कुछ कार्य करने के लिए प्रेरित करते है, जैसे **सदा सच बोलो, जीवों पर दया करो, बड़ों का आदर करो, राष्ट्र की सेवा करो** आदि।

परंतु वर्तमान युग में जहां प्रौद्योगिकी का तेजी से विकास हुआ है, वहीं नैतिक मुल्यों का पतन होता जा रहा है। आज के युवा वाट्सएप और फेसबुक पर समय बिताना अधिक पसंद करते है, जबकि परिवार से वह दुर होते जा रहे, है। वर्तमान में कुछ अखबारों में यह ख़बरे आ रही है, कि पति और पत्नियों के मधुर संबधों में फेसबुक एवं वाट्सएप के कारण खटास उत्पन्न हो रही है, बात यहां तक सीमित न होकर तलाक तक पहुँच रही है।

बढ़ती प्रौद्योगिकी के कारण एक तरफ जीवन जीना आसान होता जा रहा है, परंतु बढ़ती सुविधाओं के बीच व्यक्ति अपनो से ही दुर होता जा रहा है। सामान्यत: विद्यार्थी की प्रथम पाठशाला उसका अपना घर होता है, जहाँ उसे गृह संस्कार प्राप्त होते है, परंतु इस भागते दौड़ते युग में संयुक्त परिवार समाप्त हो रहे है, जहाँ बच्चों को दादा–दादी, नाना–नानी से अनेक प्रकार के नैतिक मुल्य प्राप्त होते थे, एकल परिवारों की बढ़ती संख्या से जहाँ मनोविकार कुण्ठा, जैसी मानसिक बीमारियों का आगमन हो गया है। वर्तमान में बढ़ती बेरोजगारी मंहगाई से बढ़ती हुई आवश्यकताओं को पूरा करना आसान नहीं हो रहा है। वहीं बेरोजगारी के कारण लोगों को रोजगार प्राप्ति हेतु शहरों की ओर पलायान करना पड़ रहा है, जहाँ उनके रहने खाने की उचित व्यवस्था नहीं होने के कारण गन्दी बस्तियों का निमार्ण हो रहा है, जिससे शहरों में नैतिकता का पतन प्रारंभ हो गया है, रोजगार की प्राप्ति बढ़ाने के लिए नैतिक शिक्षा के साथ–साथ कौशल विकास शिक्षा को भी बढ़ावा दिया जाना चाहिए।

कौशल विकास –वैश्विकरण के इस युग में तकनीकि ज्ञान की आवश्यकता बढ़ती जा रही है, बदलती प्रौद्योगिकी के साथ श्रम बाजार की मांग में भी परिवर्तन आ रहा है, वर्तमान में युवाओं, महिलाओं, विकलागों और अन्य वंचित वर्गो की भागीदारी बढ़ाने के लिए कौशल विकास का होना अत्यन्त आवश्यक हो गया है, अत: वर्तमान में, शिक्षा, स्वास्थ्य, कृषि, उद्योग व श्रम आदि को तकनीकि ज्ञान प्रदान कर वर्तमान ज्ञान की दक्षता में वृद्धि करना ही कौशल विकास है।

अध्ययन के उद्देश्य –

1. वर्तमान शिक्षा में परिवर्तन का अध्ययन करना।
2. शिक्षा पद्धिति नैतिक शिक्षा व कौशल विकास शिक्षा में परिवर्तन का अध्ययन करना।

अध्ययन की विधि – निम्न शोध अध्ययन विभिन्न पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित लेखों के आधार पर एवं इन्टरनेट से प्राप्त द्वितियक समंकों के अधार पर निष्कर्ष प्राप्त किये गये है।

निष्कर्ष – वर्तमान के प्रौद्योगिक युग में जहां सभी लोग, बदलते परिवेश में शहरी अर्थव्यवस्था में अंधाधुन्ध भागे जा रहे है, वह सिर्फ अपना भौतिक विकास ही चाहते है, जिससे आज समाज में भ्रष्टाचार, कालाबाजारी, मंहगाई, बेरोजगारी, मानसीक विकार जैसी बीमारियां उत्पन्न हो गई है। नैतिक मुल्यों का पतन होना समाज के लिए बहुत ही हानिकारक है, वर्तमान की शिक्षा में इस प्रकार का परिवर्तन किया जाना चाहिए, जिससे एक तरफ कौशल विकास व्यक्तित्व विकास को बढ़ावा देकर समाज के अधिक से अधिक लोगों सभ्य

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, धरमपुरी–धार (म.प्र.) भारत

रोजगार की उपलब्धि कराई जाए, जिससे देश में आर्थिक संपन्नता उत्पन्न की जा सके, साथ ही नैतिक शिक्षा को बढ़ावा देकर राष्ट्र भावना जन कल्याणकारी भावना का विकास भी किया जा सके।

समस्याऐं –

1. वर्तमान शिक्षा में नैतिक शिक्षा व कौशल विकास शिक्षा का नितान्त अभाव है।
2. नैतिक पतन के कारण भ्रष्टाचार व अपराधों की संख्या लगातार बढ़ रही है।
3. कौशल विकास शिक्षा की कमी से देश में बेरोजगारी में वृद्धि हो रही है।

सुझाव –

1. वर्तमान शिक्षा में नैतिक शिक्षा व कौशल विकास शिक्षा को बढ़ावा देना चाहिए।
2. नैतिक शिक्षा को प्राथमिक से लेकर उच्च शिक्षा तक के पाठ्यक्रम में अनिवार्य किया जाना चाहिए।
3. देश में कौशल विकास केन्द्रों को बढ़ाया जाना चाहिए।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अनुपम गोयल 2014 '**भारतीय अर्थव्यवस्था'** शिवलाल अग्रवाल एन्डं कम्पनी खजुरी बाजार इन्दौर पृष्ठ 49-50
2. प्रो. एम. एल. गुप्ता 2014 '**समाजशास्त्र का परिचय'** साहित्य भवन पब्लिकेशन आगरा पृष्ठ 153-155

****

वर्तमान शिक्षा को स्वदेशी, सार्थक और मूल्य आधारित बनाने के लिए विशेष पाठ्यक्रम एवं प्रयास की आवश्यकता

डॉ. अंजना जैन *

प्रस्तावना – सामान्यत: वैदिक काल से 18वीं शताब्दी तक भारतीय शिक्षण चिंतन का आधार धर्म तथा नैतिक जीवन मूल्यों का संरक्षण रहा। गुरू शिष्य के सात्विक गहरे संबंध, सामूहिक जीवन का बोध तथा पश्चिमी जीवन इसका मार्ग रहा। इसी पद्धति से कृष्ण सुदामा, अर्जुन अश्वत्थामा एक साथ पढ़े। कौटिल्य ने चन्द्रगुप्त मौर्य, विद्यारण्य ने हरिहर व बुक्काराय, रामानन्द ने अपने बारह शिष्यों को तैयार किया। कहीं भी अमीर गरीब, जात-पात प्रगति में बाधक नहीं बने। गत हजारों वर्षों से भारत के ऋषियों-मनीषियों ने अपने अध्ययन, अनुभवों, आचरण तथा अनुभूतियों से भारतीय जीवन मूल्यों के प्रतिमान स्थापित किये। शिक्षा में जीवन के चार पुरूषार्थों, धर्म के दस लक्षणों तथा संस्कारों की बृहद योजना को जीवन मूल्यों की शिक्षा का महत्वपूर्ण अंग माना गया। मूल्यपरक शिक्षा ने केवल भारत में बल्कि विश्व में उन्नत सभ्यता तथा संस्कृति का मार्गदर्शन किया।

अध्ययन के उद्देश्य –

1. शिक्षा दर्शन का अध्ययन करना।
2. मूल्य आधारित शिक्षा पर प्रकाश डालना।
3. भारत के वर्तमान परिप्रेक्ष्य में नैतिक शिक्षा की उपयोगिता को स्पष्ट करना।

अध्ययन प्रणाली एवं स्त्रोत – ऐतिहासिक विधि का प्रयोग करते हुए प्रस्तुत अध्ययन में प्राथमिक जानकारी ऋषि-मुनियों द्वारा लिखित पुस्तकों का अध्ययन कर प्राप्त की गई है तथा द्वितीयक स्त्रोत इस विषय पर विभिन्न विद्वानों द्वारा लिखी गई पुस्तकों तथा शोध कार्य का अध्ययन द्वारा।

सम्बन्धित साहित्य का अध्ययन – प्रसिद्ध राजनैतिक विचारकों **सुकरात** के अनुसार 'आत्मा का सौन्दर्य ही मानव की पहचान है। उनका मानना था कि एक अच्छा व्यक्ति अच्छे समाज में ही उत्पन्न हो सकता है। अच्छा व्यक्ति अच्छे समाज को बनाता है।'[1]

'**प्लेटो** ने कहा शिक्षा से मेरा अभिप्राय उस प्रशिक्षण से है जो उचित आदतों के निर्माण द्वारा गुणों को उत्पन्न करता है। प्लेटो के शिक्षा को नैतिक प्रशिक्षण की प्रक्रिया माना है।'[2]

विवेकानन्द ने कहा कि अपने लिये कुछ भी मत चाहो सब दूसरों के लिये करो यही सच्चा मानव धर्म है। विवेकानन्द के शब्दों में 'धर्म का अर्थ न गिरजे में जाना है न ललाट रंगना है न विचित्र ढंग का भेष धरना है। यदि तुम्हारा हृदय उन्मुक्त नहीं हुआ है यदि तुमने ईश्वर का साक्षात्कार नहीं किया है तब यह सब व्यर्थ है जिसने हृदय को रंग लिया यही धर्म का सच्चा अनुभव है।'[3] विवेकानन्द के अनुसार – जिसने राष्ट्रीय चरित्र खो दिया उसने सब कुछ खो दिया।

रविन्द्र नाथ टैगौर के अनुसार 'शिक्षा का मूल प्रयोजन केवल ज्ञान की पूर्णता के द्वारा अपने को समृद्ध करना मात्र नहीं है बल्कि मनुष्य और मनुष्य में प्रेम और मैत्री का बन्धन स्थापित करना है।'[4]

स्वामी दयानन्द के अनुसार – अंहकार मानव के अध:पतन का कारण है। जो सदगुणों से शून्य है वे न तो ब्रह्म लोग जा सकेंगे और नहीं ब्रह्म को पा सकेंगे। इसलिए वेदों में मानव के कल्याण पथिक होने की कामना की गई है।'[5] नैतिकता और आचरण ही मानव जीवन का आध्यात्मिक उन्नति का कारण है।

महात्मा गाँधी के अनुसार – बच्चों को दी जाने वाली प्रारम्भिक शिक्षा में मातृभाषा, ज्ञान, दस्तकारी नैतिक व आध्यात्मिक मूल्यों के शिक्षण को अत्यन्त महत्वपूर्ण मानते थे और कहते थे कि इसी शिक्षा की बुनियाद पर उच्च शिक्षा का भवन खड़ा होगा। (हरिजन, 31/07/1937)'[6]

पाश्चात्य विद्वान जे.एस. मेकन्जी ने लिखा है – धार्मिक व नैतिक शिक्षा के बिना इतिहास को समझना कठिन है।

विज्ञान में विवेक आवश्यक है – हमेशा याद रखना चाहिए कि विज्ञान ने सिर्फ सत्य की जानकारी देने का वादा किया है। उसने शांति और प्रसन्नता देने का वादा नहीं किया। इसलिए विज्ञान में विवेक आवश्यक है। आइन्स्टीन वैज्ञानिक ही नहीं एक आदर्श मानव भी थे उन्होंने विज्ञान की अच्छाई बुराई को समझा और तभी कहा कि विज्ञान के बिना धर्म अंधा है और धर्म के बिना विज्ञान लंगड़ा। यही वैज्ञानिक पुन: कहता है कि – When solution is single, god is answering.[7]

गुरू गोविन्द सिंह, श्री अरविन्द, दयानंद सरस्वती, स्वामी विवेकानंद, गाँधी, डॉ. राधाकृष्णन आदि के विचारों ने आजादी से पहले व बाद के भारत को अपने आदर्शों से अलंकृत किया। आजादी के दीवानों की लम्बी फेहिस्त है जिनके आदर्शों और नैतिक बल के चलते हम आज स्वतंत्रता की सांस ले रहे हैं। उस दौर में जन्मे लोग आज भी उन मूल्यों की याद करते हैं जो गुलामी के बावजूद भी उन्हें विरासत में मिले थे। बीते समय को याद कर अधिकाँष लोग यही मानते आये हैं कि उनके जीवन में संतोष, शान्ति और संघर्ष शक्ति को जीवंत रखने वाला मनोबल उन्हें तत्कालीन नैतिक ज्ञान से ही मिला था। बुजुर्गों व गुरूओं की भरपूर डांट, को भी तत्कालीन विद्यार्थी प्रसादस्वरूप मानते रहे हैं और आज भी अपने गुरूजनों का आभार प्रकट करते नजर आते हैं। मेरा मंतव्य यह नहीं कि विद्यार्थियों को सजा मिले अगर उस दौर के कड़क गुरूजनों को लोग आज भी भरपूर सम्मान देते हैं यह भी षोध का विषय है। आधुनिक शिक्षा पद्धति के दखल के बावजूद भी उन्नत संस्कारों की बुनियाद रहीम, कबीर, तुलसी, सूर, जायसी आदि अनेकों दार्शनिक और कवियों साहित्य तक सिमट कर रह गई।

* प्राध्यापक, शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

शिक्षा में तीन एच. अर्थात हैड (चिंतन), हार्ट (भावना) तथा हैण्ड (कर्म) अर्थात वर्तमान शिक्षा में भारतीय परिवेश के अनुसार परिवर्तन – शिक्षा स्वतंत्रता के पश्चात् भारतीय समाज के सर्वांगीण विकास का एक अनुपम मार्ग बन सकती थी। शिक्षा के विकास के लिए यद्यपि कुछ व्यक्तिगत प्रयास हुए। इसमें महात्मा गाँधी तथा प्रो. डी.एस. कोठार के प्रयास सर्वोपरि हैं। गाँधीजी ने बिना नैतिक मूल्यों के शरीर को आत्माविहीन कहा है। उन्होंने शिक्षा में तीन आर. अर्थात रीडिंग, राइटिंग तथा अर्थमैटिक की बजाय तीन एच. अर्थात हैड (चिंतन), हार्ट (भावना) तथा हैण्ड (कर्म) को महत्व दिया।'[8] वे भारतीय शिक्षा की जड़ों को भारतीय संस्कृति में पाते हैं। प्रो. कोठारी ने समाज की रचना में शिक्षा को सर्वोच्च स्थान दिया है। वे इसे राष्ट्रनिर्माण की कुंजी बतलाते हैं जिसमें वे विज्ञान-तकनीकी के साथ चरित्र निर्माण को प्रमुखता देते हैं। वे शिक्षा का लक्ष्य राष्ट्रीय विकास के लिए भी, चरित्र निर्माण के लिए शिक्षा पर बल देते हैं। वर्तमान शिक्षा की किलता को स्वीकार कर विगत दो दशकों से इसमें आमूल परिवर्तन की आवश्यकता की बात को अनेक विद्धानों, विचारकों एवं राजनेताओं ने उठाया है। चूंकि अब तक कोई विचारणीय, अनुकरणीय तथा स्वीकार्य विकल्प प्रस्तुत न हो सका इसलिए वर्तमान शिक्षा को अपनाना लोगों की मजबूरी है। विकल्प के अन्तर्गत दो प्रश्न उठते हैं। पहला यह कि वर्तमान सन्दर्भों में एक सम्यक भारतीय शिक्षा का स्वरूप क्या हो? इसके अलावा वर्तमान शिक्षा में भारतीय परिवेश के अनुसार क्या परिवर्तन हो?

आज जरूरत है वर्तमान शिक्षा को स्वदेशी, सार्थक और मूल्य आधारित बनाने की – इसके लिए भारतीय पद्धति से आधुनिक विषयों की शिक्षा दी जानी चाहिए। साथ ही गुरू एवं शिष्य के बीच भावनात्मक आत्मीय सम्बन्धों के निर्माण पर जोर दिए जाने की जरूरत है। गुरू के महत्व को बढ़ाकर प्रबन्ध तन्त्र के वर्चस्व को घटाना भी आवश्यक है। उच्च-शिक्षा को सर्व सुलभ बनाने के लिए आर्थिक दबाव को तो कम करना ही होगा। इसके अलावा चरित्र निर्माण के लिए विशेष पाठ्यक्रम एवं प्रयास की आवश्यकता है। शिक्षा के दो प्रमुख आयाम हैं विधि और विषय। शिक्षा की गुणवत्ता को 'गुरूकुल पद्धति के नाम से जाना जाता है। इस पद्धति में अध्यापक शिक्षा के केन्द्र में तथा विद्यार्थी परिधि पर अवस्थित रहा है। प्रत्येक विषय के अध्यापक अपने-अपने कक्ष में स्थिर रहते थे तथ हर स्तर के विद्यार्थी निर्धारित समयानुसार आकर शिक्षा ग्रहण करते थे। इस पद्धति में अध्यापक-विद्यार्थी के बीच आत्मीय एवं भावनात्मक सम्बन्ध बनता है तथा अध्यापक पर विद्यार्थी को अपने विषय की योग्यता प्रदान करने का दायित्व रहता है।

अध्यापक की भूमिका निर्णायक हो। प्रबन्ध तन्त्र का वर्चस्व कम हो – वर्तमान शिक्षा में अध्यापक विद्यार्थी को योग्य बनाने के दायित्व से रहित है। इसलिये शिक्षा के यान्त्रिक हो जाने के डॉक्टर, इंजीनियर जैसे कल-पुर्जो का निर्माण तो हो रहा है लेकिन मानव का निर्माण बाधित हो गया है। शिक्षा को स्वदेषी, भावनात्मक तथा सार्थक बनाने के लिए सबसे पहले कक्षाओं का निर्माण विषयवार हो और विषय के अनुसार कक्षाओं को सजाया जाए। प्रवेश में अध्यापक की भूमिका निर्णायक हो। प्रबन्ध तन्त्र का वर्चस्व कम हो। अध्यापकों पर विद्यार्थी को योग्य बनाने का भार हो। अध्यापकों के प्रशिक्षण एवं चयन में उनके गुण, शील, चरित्र तथा शिक्षण कार्य के प्रति उनके समर्पण भाव का आकलन हो। जल, जमीन, जंगल एवं जानवरों के महत्व का ज्ञान कराने वाले पाठ्यक्रम का निर्माण हो। मानवीय चरित्र निर्माण के लिए आवष्यक पाठ्यक्रम का विकास हो। साथ ही अपने राष्ट्र, संस्कृति, भाषा-भूषा, आहार-व्यवहार के प्रति स्वाभिमान एवं गौरव के भाव का विकास हो। इसके अलावा प्राथमिक एवं माध्यमिक स्तर पर किताबों का बोझ कम हो और डिग्री-सार्टिफिकेट से अधिक योग्यता के विकास को महत्व दिया जाए। परीक्षाओं का संचालन एवं नियंत्रण इस प्रकार हो कि विद्यार्थी निर्भय होकर उत्साह से परीक्षा में बैठे। निजी शिक्षण संस्थाओं द्वारा किए जा रहे आर्थिक शोषण पर तो अंकुश लगना ही चाहिए। शिक्षण संस्थानों में प्रवेश एवं नियुक्तियों के संदर्भ में राजनीतिक हस्तक्षेप समाप्त होना चाहिए। महाविद्यालयों-विश्वविद्यालयों के विद्यार्थियों एवं अध्यापकों को सक्रिय राजनीति में भाग लेने पर रोक लगे। क्योंकि इससे दोनों स्तर पर एकता एवं सद्भाव का विघटन होता है तथा दोनों विभिन्न राजनीतिक गुटों में बंटकर शैक्षणिक परिसर को राजनीति का अखाड़ा बना देते हैं, जिससे विद्यार्थियों का शैक्षणिक विकास बाधित होता है। विद्यार्थी संघ का चुनाव तो हो लेकिन उसमें राजनीतिक गुटबाजी का प्रवेश निषेध हो। विद्यार्थी संघ का मुख्य कार्य इनकी समस्याओं का समाधान एवं कल्याण हो। किसी भी राजनीतिक दल या नेताओं को उच्च शिक्षण संस्थानों में अपनी विचारधार के प्रचार की अनुमति न हो। सभी जातियों एवं सम्प्रदायों के विद्यार्थियों को सभी स्तर पर शिक्षा का समान अधिकार एवं अवसर प्राप्त हो।

निष्कर्ष – वर्तमान शिक्षा में यदि ये परिवर्तन किए जा सकें तो संभव है विद्यार्थियों के भटकाव पर काफी हद तक लगाम लग जाए। ये बदलाव छात्र में योग्यता का विकास करने में भी सहायक सिद्ध होंगे। इसके परिणामस्वरूप उत्पादक प्रतिभा एवं मानवीय चरित्र से युक्त युवा उत्तम नागरिक बनकर परिवार को सुख, समाज को समृद्धि एवं राष्ट्र को शान्ति प्रदान कर सकेंगे।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :-

1. दुबे रमाकान्त – विश्व के कुछ महान शिक्षा शास्त्री 2005, पृ. 24
2. दुबे रमाकान्त – विश्व के कुछ महान शिक्षा शास्त्री 2005, पृ. 25
3. विवेकानन्द साहित्य खण्ड द्वितीय, पृ. 200
4. थापलिया नन्दन – भारतीय नैतिक मूल्य – लेख नवम्बर 2012, पृ. 04
5. महर्षि दयानन्द स्वमन्तव्या प्रकाश, पृ. 406
6. भगवान सिंह – गाँधी का शिक्षा दर्शन – लेख – वैचारिक चिन्तन और विचार, वर्ष 2014, पृ. 10
7. वेदालकार रामनाथ – शिक्षा मूल्य और समाज 2010, पृ. 74
8. मित्तल सतीशचन्द्र – शिक्षा का भारतीयकरण आवश्यक – पान्चजन्य लेख 2015, पृ. 4
9. कोठारी अतुल – मूल्यों की शिक्षा – शिक्षा संस्कारिता उत्थान न्यास वेल्यू ऐजुकेशन, वर्ष 2009, पृ. 10

****

नैतिक मूल्य की वर्तमान दशा एवं दिशा

डॉ. प्रवीण चौधरी *

प्रस्तावना – मानव जीव जगत की सर्वोच्च विकसित प्रजाति है। मानव में समाजीकरण की प्रवत्ति पाई जाती है इस कारण मानव को सामाजिक प्राणी कहा जाता है। इस प्रकिया में मानव ने अपने लिये कुछ नियम बनाये तथा संयमित जीवन के लिए स्वंय को तैयार किया मानव जीवन में नियम एवं संयम का बहुत महत्व होता है। इसी से मानव की पहचान बनती हैं। मूल्य मानव जीवन को सार्थकता प्रदान करते है।मानव जीवन बहुत जटिल होता ळें भारत देश में आर्थिक सांस्कृतिक एवं सामाजिक विषमताऐं पाई जाती है तथा जाति धर्म एवं भाषा के आधार पर मानव कई खेमो में बटा हुआ है। मूल्यों का निर्वहन प्रत्येक व्यक्ति के लिए उसी अनुपात में आवश्यक है। मूल्यों की व्याख्या त्रिस्तरीय की जा सकती हैं। सामाजिक, व्यक्तिगत एवं राष्ट्रीय स्तर पर मूल्यों को निर्धारित करना तथा निर्वहन के लिए समग्र प्रयास करना स्वस्थ समाज एवं राष्ट्र की मूलभूत आवश्यक है।

समाज में परिवर्तन होते है। वैसे-वैसे मानव की जीवन शैली बहुत प्रभाावित होती है। लोगों की सोच बढलती रहती है हमारा समाज भौतिक रूप से तो उन्नत हो रहा है लेकिन नैतिक मूल्यों की दृष्टि से पतनशीलता की ओर गतिशील हो रहा है। स्वार्थी, असामाजिक एवं मूल्य रहित मानव प्रजाति कैसे समाज एवं राष्ट्र का निर्माण करने में समर्थ रहेगी यह एक चिन्तन का विषय है। जैसा कि हमे ज्ञात है कि व्यक्ति से समाज तथा समाज से राष्ट्र का निर्माण होता है। मूल्यों को अलग अलग संदर्भ से महत्व में लाये जाते है। जीवन मूल्य, नैतिक मूल्य तथा मानवीय मूल्य। मूल्य को किसी भी नाम से सम्बोधित किया जाये, वे गुणो की ओर इंगित करते है। भारतीय संस्कृति के अनुसार जीवन में मूल्य ही सत्य है। धर्म में शांति, प्रेम तथा अहिंसा समाहित रखते है। ये पॉच तत्व सत्य, धर्म, शांति, प्रेम एवं अहिंसा मानव मूल्य माने जाते है। मूल्यों का निर्धारण धर्म करता है। मूल्य उसे कहते है जिनसे मानव की इच्छाओ की तृप्ति होती है। मूल्य मानव व्यवहार के शुद्ध निर्धारक है। मूल्यों का संबध आवश्यकताओं, इच्छाओं तथा अभिप्रेरणाओ एवं आकांक्षा से होता है। जब हम अपने आचरण एवं व्यवहार को समाज के नीतिगत दायरे मे लाते हैं तो वह हमारे नैतिक मूल्य बन जाते है। समाज के नियमो एवं मानको के अनुरूप अपने आचरण, चरित्र तथा व्यवहार को ढालना नैतिक मूल्यों के संबध में एक सर्वमान्य अवधारणा है। नैतिक मूल्य ही मानव को सदाचारी या कदाचारी बनाते है। मूल्यों की सही पहचान ही तथा उनका अनुसरण हमें सामाजिक स्तर पर मान्यता प्रदान करता है।

नैतिक मूल्य की विशेषताऐ –

1.	ईमानदारी	2.	सत्यनिष्ठा
3.	विश्वसनीयता	4.	निष्पक्षता
5.	अन्य का सम्मान	6.	उत्तरदायी नागरिक
7.	उत्कृषटता की खोज	8.	वादा निभाना

नैतिकता का सामाजिक पहलू – इस पहलू के तहत किसी मानव का दूसरे मानव के साथ सम्बन्ध का विचार किया जाता है। यह नैतिकता का सर्वश्रेष्ठ पहलू है। प्राय: नैतिक मापदण्ड या मानक सामाजिक परिप्रेक्ष मे ही विकसित हुये है।

नैतिकता का व्यक्तिगत पहलू – इसके तहत मानव का स्वत: के प्रति कर्तव्य पर विचार किया जाता है। इस पहलू के अनुसार कोई व्यक्ति किसी विशेष नैतिक निर्णयों या कार्य इसलिये नहीं करता क्योंकि ईश्वर, धर्म या समाज कहलाता है बल्कि उसमें निहित मूल्य कहलाता है कि कौन सा कार्य सही है तथा कौन सा गलत।

नैतिकता के प्राकृतिक पहलू – इसके तहत मानव एवं प्रकृति के मानव पर विचार किया जाता है।

शोध के उद्धेश्य –

1. मूल्यों की अवधारणा का अध्ययन करना
2. नैतिक मूल्यों का अध्ययन करना
3. नैतिक मूल्यों की आवश्यकता का अध्ययन करना
4. नैतिक मूल्य मे परिवार के महत्व का अध्ययन करना
5. नैतिक मूल्य में शैक्षणिक संस्थाओ के महत्व का अध्ययन करना

मूल्यों का वर्गीकरण

दार्शनिक मूल्य	सामाजिक मूल्य	मनोवैज्ञानिक मूल्य	मानव मूल्य
1.भारतीय दर्शन	1.जैविक मूल्य	1.बौद्धिक मूल्य	1. सत्य
2.पाश्चात्य दर्शन	2.सामाजिक मूल्य	2.आर्थिक मूल्य	2.धर्म
	3.आध्यात्मिक मूल्य	3.सामाजिक मूल्य	3.शांति
		4.धार्मिक मूल्य	4.प्रेम
		5.सौन्दर्यानुभौतिक मूल्य	5. अंहिसा
		6. राजनैतिक मूल्य	

* अर्थशास्त्र विभाग, शासकीय नेहरू अग्रणी महाविद्यालय, अशोकनगर (म.प्र.) भारत

6. नैतिक मूल्य के माध्य से देश के निर्माण का अध्ययन करना
7. नैतिक मूल्य के रोपण मे समाज का अध्ययन करना।

शोध प्रविधि – शोध में द्वितीयक सामग्री का अध्ययन किया गया है साथ ही साथ पुस्तकें, जनरर्लस, पत्र, पत्रिकाऐं, पुस्तकालय एवं इंटरनेट तथा समाचार पत्रो का अध्ययन किया गया है।

नैतिक मूल्य के रोपण स्तर

नैतिक मूल्य का रोपण

परिवार | शैक्षणिक संस्थाऐ | समाज

किसी भी व्यक्ति के जीवन को संवारने मे तीनो संस्थाऐ महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है।

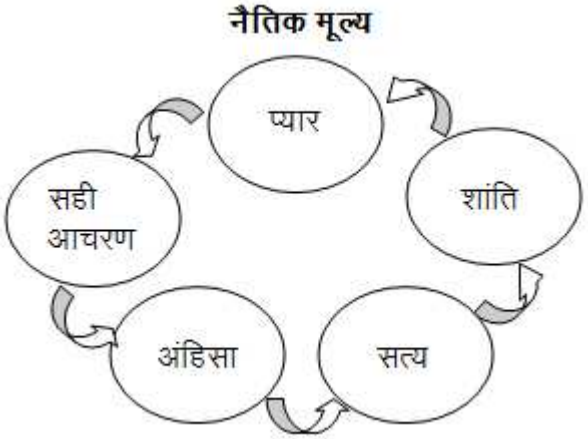

नैतिक मूल्य एवं परिवार – परिवार मानव जीवन का पहला महत्वपूर्ण पड़ाव है परिवार में पैदा होने के पश्चात भावात्मक सम्बंधो का आरम्भ होता हैं। मानवीय सम्बधों का महत्व समझ में आता है। परिवार की जीवन शैली को आत्मसात करते हुऐ बच्चे का विकास होता है। परिवार में रहकर बच्चा जीवन मूल्यों या नैतिक मूल्यों को आत्मसात करता है। परिवार से ही बच्चा अपनी प्रांरभिक औपचारिक शिक्षा ग्रहण करता है साथ ही बच्चे कई नैतिक मूल्यों से अवगत होते है। उदाहरण के लिये बड़ो का आदर, ईश्वर में विश्वास रखना, सच बोलना, देश के प्रति श्रद्धा रखना, दूसरो की सहायता करना आदि। परिवार द्वारा ही दिये गये संस्कार पूरी जिंदगी हमारे साथ रहते है। परिवार के संस्कारो की छाप हमारे व्यक्तित्व में दिखाई देती है। वैसे भी परिवार बच्चे की प्रथम पाठशाला होती है तथा मॉ बच्चे की प्रथम गुरू होती है। मूल्यों की पहचान परिवार एवं माता पिता के माध्यम से ही बच्चे तक पहुॅचती है । भारत एक परिवार प्रधान राष्ट्र माना जाता है। परिवार को एक छोटी इकाई माना जाता है क्योंकि परिवार से ही समाज की रचना होती है। यदि परिवार अपने सदस्यो के व्यवहार एवं आचरण की जिम्मेदारी ले तथा पूर्ण निष्ठा के साथ निभाए तो स्वरूप समाज का निर्माण हो सकेगा जो स्वरूप राष्ट्र की आधार शिला हो सकती है। आज संयुक्त परिवार से एकल परिवार, एकल परिवार से अलग होते हुए परिवार एवं निश्चित सुखद जीवन जीने वाले परिवारो से भौतिकवाद से ग्रसित समय के साथ भागते हुए अशांत परिवार। इस प्रकार कहा जा सकता है कि परिवार अपनी भूमिका वांछित रूप से नहीं निभा पा रहे है। इस कारण से माता–पिता, बडे भाई एवं बहिन के साथ समय बिताने के लिए पर्याप्त समय नहीं है इस प्रकार बच्चो के क्रिया कलापो पर माता पिता के अपने नैतिक मूल्य ही सही नहीं है। परिवार में भौतिक संसाधनो का महत्व भावनाओ से ऊपर हो चुका है। परिवार आज अपने मूल दायित्वो से भटक चुके है। नैतिक मूल्य के पतन के कारण में परिवार प्रमुख है। दूसरा उपाय परिवार को सशक्त बनाना एक सामाजिक एवं राष्ट्रीय दायित्व है। नैतिक मूल्यों के विकास की प्रथम कडी परिवार, ही कमजोर होगी तो आगे की कडी भी कमजोर होगी।

नैतिक मूल्य एवं शैक्षणिक संस्थाऐ – वर्तमान समय में व्यक्ति शिक्षित तो होता जा रहा है किन्तु वह अपने अन्दर के मूल्यों को समाप्त करता जा रहा है। शिक्षित व्यक्ति भी शिक्षा के सच्चे अर्थ को नही समझ पाते है। उनकी सारी शिक्षा भौतिक जीवन से जुडी हुई है सामाजिक एवं शीघ्र नष्ट होने वाली अवास्तविक होती है। आज आवश्यकता है नैतिक शिक्षा की जो समाज में नव जीवन प्रदान करते है। नैतिक शिक्षा में शैक्षणिक संस्थाए महत्वपूर्ण कडी के रूप में कार्य करती है। यह मनुष्य के जीवन का दूसरा पडाव होता है। परिवार के लोगों के अलावा उसका सम्पर्क अन्य व्यक्तियों से होता है जिसमें शिक्षक तथा मित्र उसके जीवन को प्रभावित करते है। नैतिक मूल्यों को प्रदान करने में शिक्षक तथा मित्र की महत्वपूर्ण भूमिका होती हैं। एक अच्छा शिक्षक अपने छात्र के लिए एक अनुकरणीय आदर्श व्यक्ति रहता है। शिक्षक के द्वारा कही गई बात छात्र के लिये महत्वपूर्ण होती है इसलिये जब भी नैतिक मूल्यों की बात होती है तो शैक्षणिक संस्थाओ की उपयोगिता चर्चा होती है। नैतिक मूल्य सैद्धान्तिक न होकर व्यवहारिक माध्यम से आती है। मित्रो के सम्पर्क मे आने वाले प्रत्येक का आचरण तथा जीवन शैली यदि मूल्यपरक है तो छात्र भी उन मूल्यों को अपने साथ आत्मसात करता जाता है। शैक्षणिक संस्थाऐ के व्यवहार का असर विधार्थी पर पड़ता है। इसलिए कहा जा सकता है कि एक आदर्श प्राध्यापक हमारे जीवन को बना देता है तथा एक खराब मित्र हमारे जीवन की दिशा को बदल देता है। स्वामी विवेकानन्द जी यह बात अनुभव की थी कि शरीर से स्वस्थ्य, बुद्धि से विकसित एवं अर्थ से सम्पन्न होने के साथ साथ मानव को चरित्रवान भी होना चाहिए। चरित्र ही मानव को सत्यनिष्ठ बनाता हैं शिक्षा के द्वारा ही मानव का चारित्रिक एवं नैतिक विकास सम्भव है।

नैतिक मूल्य एवं समाज की भूमिका – समाज सामाजिक सम्बंधो का जाल है। नैतिक मूल्यों के विकास में समाज की भी महत्वपूर्ण भूमिका है। व्यक्ति अपने समाज के दायरे में रहकर बहुत सी बाते सीखता है। समाज व्यक्तियों के जीवन यापन के लिये आधार तैयार करता है। समाज की अपनी मान्यताऐं एवं नियम है। तथा कई सामाजिक कुरीतिया है जो समाज को खोखला कर रही है। युवा पीडी समाज को एक नया रूप प्रदान कर सकती हैं। समाज के महत्व को बढ़ा सकती है। समाज को सामाजिक कुरीतियों से आजादी दिला सकती हैं इसके लिए युवा पीडी को स्वंय का चरित्र का निर्माण करना होगा तथा नैतिक मूल्यों का पालन करना होगा। नैतिक मूल्य हमें उन परिवारो की समस्याओ के प्रति संवेदनशील होना सीखाते है जिस परिवार को जैसी सहायता की आवश्यकता हो उसकी व्यवस्था समाज द्वारा की जानी चाहिए।

भारतीय समाज में वर्तमान में भी स्त्री एवं पुरूष में भेद करने की सामाजिक दृष्टि बनी हुई है। लड़कियों की शिक्षा का प्रतिशत वर्तमान मे भी कम है। यह लिंग अनुपात एक गम्भीर स्थिति है। स्त्रियों का स्वाभिमान एवं अस्तित्व दोनों ही खतरे में है। युवा पीढ़ी देश में स्त्रियों की स्थिति को अच्छा बनाने की दिशा में कार्य करे तथा स्वयं भी स्त्रियों को सशक्त होने का अवसर दे तो शायद वर्षो से चली आ रही विवेद की राजनीति कुछ हद तक दूर हो

सकती है। युवा पीढ़ी जिसमें ऊर्जा है नवीन सोचने के विचार हैं उनसे यह समाज को अपेक्षा होगी कि इस प्रकार के विवेद की कहीं न कहीं अंत होगा। यह एक सामाजिक नैतिक मूल्य हो सामाजिक स्तर पर नैतिक मूल्यों के प्रति गम्भीर न होने से तथा समाज के लोगों द्वारा संचालित होने से कई प्रकार कि सामाजिक विकृतियाँ उभर कर सामने आती हैं। आज परिवार प्रथा शिथिल होती जा रही है। आपसी सम्बंध समाप्त होते जा रहे है। पाश्चात्य संस्कृति धीर-धीरे देश में स्थान लेती जा रही है। आज हम सामाजिक व्यवस्था हो लेकर जिस आधुनिकता को अपनाना चाहते हैं वह हमें न तो संस्कार और न ही सामाजिक सुरक्षा प्रदान कर सकती है। नैतिक मूल्यों के माध्यम से परिवार प्रथक परिवार का महत्व, परिवार का सामाजिक उत्तराधिकार एवं परिवार प्रथा के माध्यम से प्राप्त सामाजिक मान्यता एवं सुरक्षा के प्रति युवा पीढ़ी को सर्तक करना बहुत आवश्यक है। नैतिक मूल्यों के पतन के कारण हम ऐसे समाज की ओर अग्रसर हो रहे हैं समाज के कई घटनाऐं प्रतिदिन बढ रही हैं। शिक्षा एवं स्वस्थ समाज के लिए एक उत्तम ढाँचा तैयार कर सकती है। समाज शिक्षा के व्यवस्था में प्रति गंभीर हो जिससे नैतिक मूल्यों को वचाया जा सके।

निष्कर्ष – उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट है कि नैतिक मूल्यों का महत्व समाज, व्यक्ति एवं राष्ट्र तीनों में ही मानव का व्यक्तिगत, सामाजिक एवं राष्ट्रीय जीवन मूल्यों पर आधारित होता है। नैतिक मूल्य ही उन्हें नियंत्रित एवं निर्देशित करते हैं। नैतिक मूल्यों के लिए सभी ग्रथों का ये उद्देश्य रहा है कि मानव के अन्दर नैतिक गुणों का विकास करना ताकि वह मानवता और स्वयं को सही रास्ते में ले जा सके। परिवार में रहकर बच्चा नैतिक मूल्यों से अवगत होता जाता है जैसे-जैसे उसकी शिक्षा का स्तर बढ़ता है तो उसे नये संसार से परिचय होता है यदि शिक्षा में नैतिक मूल्यों को महत्व दिया जाता है तो विद्यार्थी मूल्यों के बारे में जान सकता है। इसलिए शैक्षणिक संस्थाऐं बच्चे के मूल्यों को सवारने में मदद करते हैं। जिससे लोग ऐसे विद्यार्थियों को आदन करते हैं। साथ ही साथ शैक्षणिक संस्थाओं का नाम होता है। नैतिक मूल्य हमारे जीवन से धुंधले होते जा रहे हैं तथा हमारी शिक्षा प्रणाली से नैतिक मूल्यों का क्षरण होता जा रहा है। समाज में चोरी, डकैती बेईमानी बडो का अनादर गंदी आदतें नैतिक मूल्यों में आई कमी का परिणाम परिवार शैक्षणिक संस्थाऐं एवं समाज को युवा पीढ़ी को नैतिक मूल्य की वर्तमान दशा को बताते हुऐ दिशा प्रदान करना चाहिए। साथ ही साथ हमें चाहिए कि नैतिक शिक्षा के मूल्य को पहचाने एवं इससे अपने जीवन में विशेष स्थान प्रदान करना होगा। जिससे आने वाली पीढ़ी वर्तमान स्थिति की दशा को देखते हुए सही दिशा की ओर नैतिक मूल्य के माध्यम से बढ़ेगी और समाज के लोगों को बढ़ाने का प्रयास करेगी। जिससे समाज में उत्तम श्रेणी के लोगों का विकास हो सकेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. आर डी सेटटी – नैतिक शिक्षा – विविध आयाम।
2. डॉ. जे एस सिंहा – नीति शास्त्र जयप्रकाश नारायण एण्ड क. मेरठ।
3. प्रो. शुभा तिभारी – नैतिक मूल्य और भाषा म. प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल।
4. क्रोनिकल।
5. इंटरनेट।

****

नैतिक मूल्य और साहित्य

डॉ. पी.एन. फागना * कमलेश भार्गव **

प्रस्तावना – समाज और व्यक्ति के सामंजस्य का आधार नैतिकता है। व्यक्ति के सम्पूर्ण विकास के लिए समाज की भूमिका और समाज के उत्थान के लिए व्यक्ति का आचरण इन दोनों दिशाओं को साधने का लक्ष्य नैतिकता में अतंर्निहित है। साहित्य में युगानुरूप नैतिक मूल्य विद्धयमान रहता है।प्राचीनकाल से ही साहित्य में नैतिक मूल्यों से संबधित उक्तियाँ प्रस्तुत की है। हमारे धार्मिक ग्रंथों में भी नैतिक मूल्यों पर अधिक बल दिया गया है। देवगुरू बृहस्पति से लगाकर कबीरदास तुलसीदास,गिरधर कविराय, वृंद, रहीमदास, बिहारी आदि की परम्पराओ से होती हुई आधुनिककाल तक साहित्य में नैतिक मूल्यों पर अधिक बल दिया गया है।

जीवन को सहज,प्रभावशाली,सुखद,निरापद,एवं समग्रता के साथ जीने के लिए जो अनिवार्य एवं कल्याणप्रद सिद्धान्त है,उन्हें ही नैतिक मूल्य कहते है। प्राचीनकाल से साहित्य में अनेक नितियों का विवरण मिलता है जिन्होंने तर्क सम्मत नीतियों के बल पर एक बहुत बड़े समुदाय का प्रतिनिधित्व किया था। देवगुरू,बृहस्पति एवं दैत्यगुरू शुक्राचार्य ऐसे नीति वत्तों थें जिनकी याज्ञवल्क्य,अंगिरा,वशिष्ठ गार्गी मैत्रेयी आदि महर्षियों ने नैतिकता के संबध में जो कुछ कहा है,वह आज की भारतीय मनीषा के संस्कारों की दुर्लभ थाती है।

श्रीमद् भागवत गीता में कहा गया है कि 'कर्मण्येवाधिकारस्तें ' अर्थात मनुष्य जीवन में कर्म ही प्रमुख है। कर्म चेतना के सूत्र वर्तमान को महत्वपूर्ण मानने में छिपे है। अपने भीतर गुणो को विकसित करके समाज में सम्मान पाया जा सकता है।

इसी क्रम में तुलसीदास,कबीरदास,रहीमदास,वृंद गिरधर कविराय बिहारी, आदि से लगाकर भारतेन्दु हरिशचंद्र ने भी अपने काव्य में कई दृष्टांतो के माध्यम से नैतिक मूल्यों पर प्रकाश डाला है। जैसे कि तुलसीदास ने रामचरित मानस में एक सामान्य जन से लगाकर एक राजा, संत, नारी आदि के क्या – क्या नैतिक कर्त्तव्य होते है समझाया गया है। जैसे कि –

मुखियाँ मुख सो चाहिए, खान पान को एक।
पालइ पोसइ सकल अंग,तुलसी सहित विवक।।
सचिव वेद गुरू तीनि जो,प्रिय बोलहि भय आस।
राज धर्म तन नीति कर, होई बेगही नाश।।
सियाराममय सब जग जानी.....

इस प्रकार कई दृष्टातों,प्रतीकों के माध्यम से तुलसीदास ने यह स्पष्ट करना चाहा है कि चाहे घर का मुखियाँ हो, समाज का मुखियाँ हो, या देश का मुखियाँ हो उसे समानता का व्यवहार करना चाहिए तो कहीं पर भी विवाद या तनाव की स्थिति निर्मित नहीं होगी,संसार में प्राणीमात्र में सियाराम को समझकर उन्हें प्रमाण करना चाहिए तो किसी प्रकार की द्वेषता या ईर्ष्या की भावना उत्पन्न नहीं होगी।

रहीमदास ने भी नैतिकता की बात करते हुए परोपकार अनुशासन धैर्य, शिष्टाचार संयम आदि नैतिक मूल्यों पर अधिक जोर दिया है।

तरूवर फल नहि खात है, सरवर पियहि न पान।
कहि रहीम परकाज हित,संचाहि सुजान।।

अपने स्वयं के लिए पशु–पक्षी सभी भोजन तथा रहने की व्यवस्था करते है लेकिन दूसरों के लिए किया गया कार्य ही सच्चे अर्थो में मानवता की निशानी है। रहीमदास ने किसी एक कार्य को ईमानदारी लगन एवं निरन्तर अभ्यास करने पर जोर दिया है। उन्होंने कहा है कि किसी एक कार्य को तब तक करते रहों जब तक आपको लक्ष्य प्राप्त न हो,

एक साधै सब सधै,सब साधे सब जाय।
रहिमन मूलहिं सीचिबों,फूलै फलै अघाय।।

इसी प्रकार कबीरदास ने भी नैतिक मूल्यों से संबधित बातें अपने काव्य में की है– जैसे

शब्द सम्हारे बोलिये,शब्द के हाथ न पाँव
एक शब्द औषधि करे,एक शब्द करे घाव।।

कबीर ने इस पद के माध्यम से मनुष्य के लिए बहुत बड़ी बात कह दी है। मनुष्य वाणी से मित्रता बना लेता है और वाणी से ही शत्रुता बड़ा लेता है,वाणी वह शब्दभेदी बाण है जो मनुष्य को शीतलता भी प्रदान करता है तथा घाव भी करता है। जिस प्रकार तुलसी ने सभी जीव जन्तुओ में सियाराममय देखने की बात कही है,उसी प्रकार कबीर ने परस्पर प्रेम को महत्वपूर्ण बतलाया है। वे कहते है कि पौथा पढ़–पढ़कर तो संसार में लोग खत्म हो गये लेकिन जिसने ढाई अक्षर प्रेम का पढ़ लिया सही अर्थ में वहीं सबसे बड़ा पण्ड़ित और विद्धान है।

गिरधर कविराय ने भी अपने दोहों के माध्यम से मनुष्य को नैतिक ज्ञान दिया है। उन्होंनें अपने दोहों में ऐसी बात कही है जो आज भी प्रांसगिक है और आगे भी प्रांसगिक रहेगी जैसे–

बिना विचारे जो करे, सौ पीछे पछिताय।
काम बिगारे आपनों,जग में होत हंसाय।।
दोलत पायन न कीजिए,सपने में अभिमान
चंचल जल दिन चारि को,ठाउँ न रहत निदान।।

इसी प्रकार वृंद के दोहे जीवन शिक्षा के कोष है। उनका प्रत्येक दोहा

* हिन्दी विभाग, शासकीय महाविद्यालय, नलखेड़ा, जिला – आगर मालवा (म.प्र.) भारत
** अतिथि विद्वान (समाजशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, नलखेड़ा, जिला – आगर मालवा (म.प्र.) भारत

जीवन के किसी न किसी अमूल्य अनुभव से परिपूर्ण है। अवसर के अनूकूल कही गई बात ही महत्वपूर्ण मानी जाती है। व्यक्ति की पहचान उसकी वाणी से होती है। सरस्वती का भण्डार इस रूप में अपूर्ण है कि उसे जितना खर्च किया जाता है वह उतना बढता है। अच्छे लोग परोपकार के लिए ही संपत्ति इकट्ठी करते है। दीन बन्धु जैसा बनने के लिए दीनों की चिंता करना आवश्यक है। सबको बस में कर लेने की ताकत प्रेम में ही है। गुणीजन और राजा में समानता होती है।

इसी क्रम में रीतिकालीन कवि बिहारी ने भी तात्कालीन राजाओं का ध्यान राजकार्य से हटकर अन्य स्थान पर लगने से उन्होंने अन्योक्ति के माध्यम से राजा को समझाया है।

नहिं परागु नहिं मधुर मधु, महिं विकास इहि काल।
अली कली ही सौ बंध्यौं, आगे कौन हवाल।।

आधुनिक युग में भारतेन्दु हरिशचन्द्र ने भी नैतिक मूल्यों को यत्र-तत्र को महत्व दिया है। उन्होंने बताया है कि एकता का ही महत्व है,अपनी भाषा, अपना धर्म ही सुख देने वाले है। जहाँ योग्यता और अयोग्यता को समझने का विवके न हो वहाँ सुख और समृद्धि नहीं रह पाते।

निज भाषा निज धरम निज मान करम त्यौहार।
सबै बढ़ावहु बेगि मिलि पुकार पुकार।।
कोकिल वायस एक सम पण्डित मूरख एक।
इन्द्रायन दाड़िम विषय,जहाँ न नेक विवेक।।

छायावादी कवि जयशंकर प्रसाद ने व्यक्ति को निरन्तर आगे बढने कि सलाह देते हुए इन काव्य पक्तियों के माध्यम से बहुत कुछ कह दिया है।

इस पथ का उद्देश्य नहीं है,श्रांत भवन मे टिक रहना,
किन्तु पहुँचना उस सीमा तक,जिसके आगे राह न हो।

अत: साहित्य ने व्यक्ति और समाज के सार्थक और समुन्नत समन्वय की आधार भूमिका निर्मित करने वाले तत्वों को नैतिक मूल्यों के अन्तर्गत ग्रहण किया है। नैतिक मूल्य जीवन की जटिलताओं को सहज रूप से सुलझाने में सहायक होते है अनेक नैतिक कथन समाज में मुहावरों और लाकोक्तियों के रूप में प्रयुक्त हुए है। साहित्य में प्राय: सभी कवियों/लेखको ने अपनी रचनाओं में प्रसंगानुकूल नैतिक मूल्यों को स्थान दिया है।

वर्तमान में नैतिक मूल्यों की आवश्यकता बहुत अधिक है,क्योंकि जिस प्रकार समाज में चोरी, डकैती, अत्याचार, धोखा धडी, जालसाजी , बेईमानी, दूसरो का अनादर, गंदी आदते इसी नैतिक पतन का परिणाम है।

आज हर माता पिता अपने बच्चों को पढ़ा लिखाकर पैसा कमाने तक ही बच्चों की शिक्षा पर जोर देते है इसलिए तो वह बच्चे एक अच्छा पद और पैसा तो प्राप्त कर लेते है लेकिन उनमें नैतिक संस्कार की कमी होती है। नैतिक मूल्यों के विस्तार के लिए व्यक्ति को अपने घर से ही शुरूवात करनी होगी, छोटे बच्चों को घर में ही ऐसा वातावरण मिलना चाहिए कि वह बड़ा होने तक पूर्ण संस्कारित हो जाए । जैसे बच्चो को सुबह उठकर माता पिता,दादा-दादी एवं अन्य बड़ो को प्रणाम करने की आदत, चरण स्पर्श करना, छोटी-छोटी कहानियों के माध्यम से हमेषा सत्य बोलने की आदत, किसी असहाय एवं दूसरो पर निर्भर रहने वालों की सहायता करने की आदत,प्रकृति के उपादानों के माध्यम से नैतिक बातों को समझाने की शिक्षा बच्चों को शिशुकाल से मिलना जरूरी है। अगर बच्चों को बचपन से ही विद्यालयों में नैतिक शिक्षा को अनिवार्य कर दिया जाये तो धीरे-धीरे सहज में सुसंस्कारित व्यक्ति निकलेगे। जिसका प्रभाव समाज,देश,राष्ट्र और विश्व के लिऐ का कल्याणकारी होगा ।

मनुष्य में शिष्टाचार,विनम्रता,सहिष्णता,आचरण की शुद्धता, संयम, सहजता, सरलता, संकल्प के प्रति दृढ़ निश्चय आदि नैतिक मूल्यों की उपरोक्त विद्धानों द्धारा अनेक उत्प्रेक्षाओं और रूपकों के माध्यम से व्यक्त किया गया है। नैतिक साहित्य का उद्देश्य उच्च सामाजिक मूल्यों की स्थापना करना है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. दैनिक भास्कर ।
2. दैनिक जागरण ।
3. दैनिक नईदुनियां ।
4. योजना पत्रिका ।
5. कुरूक्षेत्र ।
6. रचना ।
7. नवीन शोध संसार, ISSN No. 2320-8767

****

नैतिक मूल्य और साहित्य

डॉ. संतरा चौहान *

प्रस्तावना – जहाँ साहित्य है वहाँ जीवन है व जहाँ जीवन है वहाँ उस काल के उलझे–सुलझे हुए जीवन मूल्य कुछ न कुछ प्रमाणों में अवश्य विद्यमान है। ऋत, सत्य, अमृतत्व तथा आनंदत्व को हमने वेदकालीन जीवन मूल्य इसलिए घोषित किये है कि उपनिषद के पुरूषार्थ चतुष्टय के पूर्व के साहित्य में भी जीवन मूल्य थे। जाहिर है कि साहित्य जीवन और मूल्य का संबंध मनुष्य के संदर्भ में प्राचीनकाल से है और वह अंत तक रहेगा भी। अंतर केवल इतना ही आयेगा कि संदर्भ बदलेंगे, मूल्य बदलेंगे, भाषा और मूल्य बदलेंगे, जीवन दर्शन बदलेगा, काल प्रवाह के अनुरूप पुराना टूटेगा, नया जुड़ेगा, नया भी कालातीत होगा– पुराना पड़ जायेगा, नए संदर्भ आयेंगे, नई व्याख्याएँ होगी परन्तु जीवन वही होगा, जीने का ढंग बदल जायेगा परन्तु तथ्य वही होगा, जीवन मूल्य साहित्य। स्पष्ट है कि साहित्य मूल्य व जीवन के बावजूद भी एक और घटक है– 'साहित्यकार' साहित्यकार के सम्पादित दृष्टिकोण व व्यक्तित्व से ही उसके साहित्य में जीवन के साथ मूल्याभिव्यक्ति होती है। कवि व साहित्यकार की, किसी व्यक्ति के जीवनकाल, परिस्थिति अथवा घटना के प्रति विशेष रूचि मूल्य रूप ग्रहण कर लेती है। यह विशेष भावना अतित व भविष्य के आधार पर साहित्य में वर्तमान में अभिव्यक्ति करती है। अभिव्यक्ति किस प्रकार हुई ? आदि प्रश्न परिस्थितिजन्य एवं साहित्यजन्य होते है और नये–नये आलोचकों का उत्पादन कर काल विशेष में बढ़ने लगता है। जैसे कि छायावाद में छायावादी आलोचक, प्रगतीवाद में प्रगतीवाद आलोचक, प्रयोगवाद में नये आलोचक आदि के द्वारा हर काल विशेष के जीवन मूल्यों का प्रत्याभिज्ञान हमें होता है।

वह साहित्य समाज द्रोही साहित्य होता है, जिसमें जीवन का मूल्यों से संबंध नहीं होता, उसमें मनुष्य होता है, परन्तु मानवता नहीं होती, उसमें प्रसंग घटनाएँ होती है परन्तु वे कल्पित होती है, अनुभवजन्य एवं अनुभूति के आधार पर नहीं होती। ऐसे साहित्य में जीवन नहीं होता। साहित्य का संबंध मूल्य के साथ साहित्य एवं साहित्य काल ही प्रामाणिक संवेदनशील अनुभूति को लेकर आता है। साहित्य मूल्यों को और मूल्य साहित्य को चेतनता की पृष्ठभूमि पर परखते है। किसी खोये हुए जीवन की तलाश की जाती है कभी मूल्य साहित्य को, तो कभी साहित्य मूल्य को ऐसी चेतन मानवता की पृष्ठ भूमि पर खरे रूप में उतरते है तथा साहित्य में सही समाज जीवन प्रतिबिम्ब करते है। उनका आपसी संबंध समन्वयात्मक है। अत: विध्वंसक नहीं है और एक प्रश्न है क्या मूल्य साहित्य के साथ होते है या साहित्यकार के साथ ? जब साहित्यकार साहित्य में मूल्याभिव्यक्ति करता है तब सर्वप्रथम उसे मूल्याधीन बनाना पड़ता है, या मूल्य उसके अधीन होते है स्पष्ट है, मूल्य समाजाधीन होते है और समाज मूल्याधीन होता है। साहित्यकार समाज का अंग होते हुए भी साहित्यकार के रूप में उसे अपना अलग स्वतंत्र अभिव्यक्ति रखना पड़ता है इसलिए वह मूल्याधीन होता है, न वह कि मूल्यों के लोभ में पड़कर अथवा अन्धश्रद्धावश किसी मूल्य के प्रति ललचाकर साहित्य में अभियक्ति देता है। किसी मूल्य के लोभ में पड़कर साहित्य रचना उपदेश मात्र होती है।

स्वातन्त्रोत्तर हिन्दी काव्य में उपलब्ध जीवन – मूल्य और मूल्य – स्थितियों का अपनी समग्रता में अब तक अनुशीलन किया जा चुका है जीवन – मूल्य और मानव – जीवन का पारस्परिक संबंध शरीर और प्राण की तरह अविच्छेद है। मानव–सभ्यता और संस्कृति इन्हीं जीवन – मूल्यों और स्थितियों से अक्षुण्ण बनी रहती है। जीवन – मूल्यों में परिवर्तन रहते है। परन्तु मानव – जीवन चिरंतन रूप अजर अमर है, इस लिये जीवन की सार्थकता और जिजीविषा अनेक संघर्षो के बावूजद युग–चेतना के साथ जीवन – मूल्यों का और मूल्य स्थितियों का निर्माण और परिवर्तन करती रहती है। स्वातन्त्रोत्तर हिन्दी काव्य में ये सारी चीजे दृष्टिगत होती है।

जीवन – मूल्यों को यदि उनके आयामों में देखना हो तो उनका विश्लेषण किए बिना उन्हें जानना संभव नहीं है। मूल्यों के आयामों पर विचार करते हुये आइन्स्टाइन के सापेक्षवाद को बिना समझे हम आगे नही बढ़ सकतें। दिक्–काल और गति की चिंतना को आधार बना कर देखा जा सकता है। यही नहीं कि मूल्य अपने आप में अमूर्त होते है। इसलिये उसकी लम्बाई चौड़ाई इत्यादि को हम अनुपातिक नहीं कर सकते। परन्तु मूल्य जब जीवन क्षेत्र में आ जाते है तब से मनुष्य के आचार एवं अनुभव में घुलमिल कर विशेष स्थिति में विशेष रूप धारण करते है।

परतन्त्र भारत में स्वातन्त्रय प्राप्ति की ओर जब ऐतिहासिक अभियान किया तब उसे कई सफल – असफल प्रयत्नों से गुजरना पड़ा है। ब्रिटिश – सत्ता धुर्तता, फरेबी, छल–कपट, विश्वासघात जैसे साधनों पर आधारित थी और इन्हीं साधनों के द्वारा स्वातन्त्रय आंदोलनों को कुचलने की उसने कोशिश की। भारतीय जनता स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए सन्नद्ध थी। राष्ट्रीय एकात्मकता या राष्ट्र–प्रेम जैसा जीवन – मूल्य एक प्रमुख जीवन – मूल्य था। दूसरा जीवन – मूल्य भारत की आजादी है। इस प्रकार कई जीवन – मूल्यों को साहित्य में अभिव्यक्ति मिली है। ऐतिहासिक घटनाओं के आधार पर जो स्वातन्त्रय अभियान चला उसका इतिहास यह बतलाता है कि इन मूल्यों में राष्ट्रीयता, बलिदान, जेल–निवास, फाँसी का फंदा इन्कलाब जैसे मूल्य जन–जीवन में समग्र संदर्भो में आते हैं। गांधीजी द्वारा प्रतिस्थपित जीवन–मूल्यों में अस्पृष्यता – निवारण, सत्य, अहिंसा आदि मूल्य इन आंदोलनों में उभरे है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद जिन मानवतावादी मूल्यों (सत्य, अहिंसा और धैर्य) की स्थापना गांधीजी ने की थी वे मूल्य गांधीजी की हत्या के साथ

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सेंधवा (म.प्र.) भारत

ही समाप्त हो गये। यह कहना गलत न होगा कि स्वतंत्रता के बाद मूल्यहीनता की भी स्थिति सामने आयी। परन्तु इसे न तो कवि पूर्ण रूप से सुलझा सके और न राजनीतिज्ञ। परिणामस्वरूप मूल्यहीनता की स्थिति में जो विषमता उत्पन्न हुई उसके प्रति आक्रोश के तीखे स्वर स्वातंत्र्योत्तर काव्य में झंकृत हुये है। इससे इन मूल्यों की स्थितियों को समझना सरल और सहज हो गया है।

स्वातंत्र्योत्तर काल में राजनीतिक सत्ता-विरोधी मूल्यों को भी जन्म दिया है, जिसका मूल कारण विकासवादी दृष्टिकोण है तथा जो अधिकतर विरोधों से पनपा है। सारा सामाजिक जन-जीवन इनकी उथल-पुथल से ओत-प्रोत दिखाई देता है। इसलिए साहित्य में अभिव्यक्ति संभव हुई। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद जिन आशाओं की कल्पना की गई थी, उनके स्थान पर सभी क्षेत्रों में एक घोर निराशा उदित हो गई। कई प्रकार के विरोध भी उमड़ आये, साहित्य को नये दृष्टिकोण से मूल्यांकित करने की आवश्यकता भी निर्मित हो गई। स्वातंत्र्योत्तर काल में राजनीतिक, सामाजिक एवं साहित्यिक सत्ता विरोधी मूल्यों का जोर अधिक प्रज्ज्वलित हुआ। जिसके विविध रूप काव्य में दिखाई देते है। स्वातंत्र्योत्तर कवियों के बुद्धिवादी दृष्टिकोण ने कविता में प्रेम, स्नेह, मानवता, आस्था, अनुभूति, करूणा आदि जीवन - मूल्यों को जितना जाना, जितना देखा और अभिव्यक्त किया है उतना स्वातंत्र्योत्तर पूर्व काल की कविता में भावुक्ता के अधिक्य के कारण नहीं हो पाया है।

स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी काव्य प्राचीन एवं आधुनिक का संघर्ष अपने समसामयिक परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत करता है अत: इसी परिप्रेक्ष्य में जीवन के वैज्ञानिक, आर्थिक, सामाजिक, दार्शनिक आदि संबंधों और संदर्भो को विविध आयाम-बद्ध रूपों में विश्लेषित किया जाने लगा है। स्वातंत्र्योत्तर काल किसी भी मूल्य को आदर्श रूप में स्वीकार नहीं करता जब तक कि वह मूल्य अभिनव पद्धति में परिवेश के साथ उस जीवन काल को नहीं करता। मानव प्रेम और मानवतावाद ये दो ऐसे आधार है जिन पर सारे नए मूल्य जी सकते हैं। जीवन - मूल्यों की यह ऐतिहासिक मूल्य विकास प्रक्रिया है, जो आर्थिक, सामाजिक, प्रवर्तित, वैयक्तिक, निर्गमनीय, चालु धारित, कालक्रम गति से निर्मित और अप्रभावित, मूल्य संदर्भो से जुड़ी हुई है। इसके साथ जीवन के अन्य संदर्भो में दार्शनिक, वैज्ञानिक गुणात्मक और यांत्रिक - मूल्यों का भी निर्देश सभ्यता, संस्कृति और संस्कार के काल क्रम से साहित्य में अभिव्यक्त हुए है। इससे यह स्पष्ट है कि ये मूल्य स्वातंत्र्योत्तर जीवन के केवल उपज ही नहीं है परन्तु साथ इसके रूप - स्वरूप परिवर्तित भी अवश्य हुए है जो मूल्य -स्थितियों का निर्माण करते है। स्वातंत्र्योत्तर काल में इन सब प्रकार के मूल्यों और मूल्य-स्थितियों को कवियों ने तथा भारतीय समाज ने जीवन में महसूस किया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. जीवन मूल्य स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी साहित्य - डॉ. बेचन।
2. मूल्य और मीमांसा - कुमार विमल।
3. साहित्य संदर्भ और मूल्य - रामदरश मिश्र।
4. ज्ञान मूल्य और सत् - संगमलाल पाण्डे।

****

मानव जीवन में नैतिक मूल्यों की उपादेयता

डॉ. किशोर सिंह सोलंकी *

प्रस्तावना – जीवन एवं मूल्य दोनों ऐसे शब्द हैं, जो अमूर्त है तथा साधारण प्रवृति को इंगित करते हैं, यही कारण है कि उनकी सही रूप में व्याख्या नहीं की जा सकती । संसार की कोई भी भाषा इन दोनों शब्दों को बाँध नहीं सकती। जीवन एक ऐसा शब्द है जिसका प्रत्येक आदमी सही अर्थ नहीं लगा पाता किन्तु विश्व का कोई ऐसा प्राणी नहीं है जो इसे महसूस करने में गलती करें, क्योंकि जीवन महसूस करने की चीज हैं । यही दृष्णिकोण मूल्य पर भी खरा उतरता हैं । जीवन एवं मूल्य दोनों ऐसी धारणात्मक वस्तुएँ हैं जिसको वस्तु पदार्थो के माध्यम से तथा परिस्थितियों के संदर्भ में मनुष्य समझ सकता हैं । जीवन और मूल्य दोनों के धारणात्मक और भावनात्मक होने के कारण व्यक्ति, स्थान एवं समय से तत्संबंधित धारणाएँ समयानुसार बदलते रहती हैं। यहाँ पर जीवन और मूल्य व्यक्ति, स्थान और समय के सापेक्ष की अनुभूति हैं। हमारे वेदर्षियों ने जन्म से मृत्यु पर्यन्त ऐसी वस्तु की खोज की, कि जिसके लिए उन्होंने अपनी पूर्ण आयु खर्च कर अंत में एक शब्द पाया– 'जीवन', जिसका रहस्य और मूल्य वेदोत्तर काल से आज तक हम समझने का प्रयत्न कर रहें हैं। इसे समझने की सही दिशा ही जीवन–मूल्यों की आरे संकेत करती हैं। हमारे प्राचीन ग्रंथ, वेद पुराण और उत्तरकालीन साहित्य भी इस बात का प्रमाण उपलब्ध कराते हैं।

आज तक जीवन की अनेक दृष्णिकोणों से व्याख्या करने का प्रयास किया गया हैं। ये सभी प्रयास धार्मिक, नैतिक, सामाजिक, भौतिक, आध्यात्मिक, आर्थिक, वैचारिक, जैविक, मनोवैज्ञानिक आदि पुरातन काल से लेकर अद्यतन तक अनेकानेक संदर्भ में विविधता लिये चले आ रहें हैं । किन्तु जीवन के सर्वमान्य मुलभूत सिद्धान्त इस प्रकार हैं – वह स्वाभाविक धर्म, जो वनस्पति प्राणी और मनुष्य में समान रूप से मिलता हैं तथा जो अन्य वस्तु से उसे अलग भी करता हैं, वह जीवन है। स्पष्ट ही हैं कि जीवन मनुष्य मात्र का ही नहीं मानवेत्तर प्राणी आदि का भी होता हैं।

परन्तु हमें यहाँ मनुष्य का तर्क प्रधान या विचान प्रधान जीवन अपेक्षित हैं, मानवेत्तर नहीं अत: जिस जीवन में तर्क, विचारादि द्वारा मौलिकता प्रदान नहीं की जाती वह जीवन मूल्यमयता की सीमा में नहीं आ सकता जैसे मानवेत्तर या पशुप्राणियों का जीवन हैं ।

इस दृष्टि से, जीवन के संदर्भ को हम इस प्रकार समझ सकते हैं–जब अन्य वस्तुओं के माध्यम से जीवन का अस्तित्व किसी घटना रूप में प्रस्तुत होने लगता हैं तब उस घटना या परिस्थिति से संबंधित निर्माण होने वाली अच्छी धारणा मूल्य के रूप में गृहीत की जाती हैं, जिसका महत्व जीवन विकास तथा जीवन सुख में परिवर्तित होता है ।

मूल्य एक दार्शनिक दृष्टिकोण हैं, और दार्शनिक दृष्टि से मूल्य का अध्ययन एवं विवेचन पाश्चात्य शास्त्रों में काफी किया है। वस्तुत: आज इनका मूल्य दर्शन की सभा में बद्ध नहीं रहा हैं । परन्तु अधिक स्पष्ट रूप से जीवन का अर्थ मूल्य की दार्शनिक शाखा द्वारा जितना अभिव्यक्त होता है उतना अन्य किसी के द्वारा नहीं । दर्शन में मूल्य–सिद्धांत ऐसी धारणाओं की अध्ययन करता हैं जो शुभ–अशुभ, सुन्दर–असुन्दर एवं अभीष्ट हैं।

मानव जीवन के संदर्भ में नीतिशास्त्र को इसलिए महत्व दिया जाता हैं, कि वह हमारे जीवन के आचार नियमादि का शस्त्र हैं । मानव जीवन में 'व्यवहार' शब्द को प्राचीन आदर्श आचार–विचार संहिता का रूप हमें मानना चाहिए। क्योंकि जीवन में नियम, तत्व, आदर्श शास्त्रीय दृष्टिकोण सभी कुछ 'व्यवहार' आचार–विचार तथा वर्तनादि की विस्तृत पृष्ठभूमि से बने है इसलिए 'शुभ–अशुभ' की चर्चा में लगा। नीतिशास्त्र क्या हैं ? का स्पष्टीकरण है जो हमारे वैचारिक एवं बौद्धिक कथा का शमन करता हैं । इसी विधेय से नीतिशास्त्र जीवन, आदर्श तथा जीवन–व्यवस्था में गांधी, बुद्ध, सुकरात, प्लेटो जैसे महान तत्वदर्शियों का निर्माण कर सका है । नीतिशास्त्र का सर्वांगीण अध्ययन करने पश्चात हमें प्रतीत होगा कि उसकी व्यवस्थित पद्धति जीवन तत्वदर्शन का विधायक शास्त्र हैं नीतिशास्त्र के नियम निमायक के साथ–साथ मान्यता मूलक भी होते हैं ।

नीतिशास्त्र का प्रमुख उद्देश्य और ध्येय मनुष्य को सुन्दर जीवन जीने के उच्चादर्श की स्थापना कर मनुष्य जीवन को अशुभ की खाई से बचाना तथा नये अभियान के लिए ऊपर उठाना तथा नैतिक मूल्यों की प्रतिष्ठा रखना हैं नीतिशास्त्र जीवन–मूल्यों को आँकता भी हैं, इसलिए नहीं कि उसका इतिहास बनाता हैं, बल्कि इसलिए कि वर्तमान मूल्यों को वह स्थापित करता हैं । नीतिशास्त्रीय मूल्यों की स्थापना हमारी दृष्टि से तीन प्रकार की होती हैं– 1 व्यक्तिगत नीति–मूल्य स्थापना, 2 पारिवारिक नीति–मूल्य स्थापना, 3 सामाजिक नीति मूल्य स्थापना। 'पाश्चात्य नीतिशास्त्र में अंतिम मूल्य और साधन रूप मूल्य इस प्रकार के भेद करते हैं, परन्तु इस सभी प्रकार के नैतिक–मूल्यों का स्पर्ष व्यक्ति से परिवार, परिवार से समाज, समाज से राष्ट्र, राष्ट्र से समस्त मानव जाति से होता हैं। जिसमें नीतिशास्त्र का आत्मिक संबंध है और इसी अर्थ पर 'वसुदैव–कुटुम्बकम्' की कल्पना सार्थक होती हैं।

नीतिशास्त्र का आचरण से संबंध हैं इसलिए उसे अचरण कला नहीं आचार–विज्ञान कहना उचित है..... क्योंकि किसी प्रयोजन कि सिद्धि इसका ध्येय नहीं हैं अर्थात नीतिशास्त कर्तव्य पथ का दीपक हैं, जो अंधेरे से परिचय प्राप्त करके स्वयं उससे अपना प्रकाश फैलाकर अंधकार का अस्तित्व नष्ट करता हैं । यह उसका कार्य अपने में निरपेक्ष है वह किसी व्यवस्था का अंष नहीं हैं। जीवन में पुनरूद्धार लाकर स्वयं व्यवस्था का रूप धारण करता हैं टूटे हुए खंडित एवं अशक्त निर्बल मूल्यों को बल देता हैं एवं उसकी पुष्टि करता हैं। हिमायती पक्ष में विश्वास कर जीवन को समृद्ध एवं पुष्ट बनाने का

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी)शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सेंधवा (म.प्र.) भारत

धैर्यसुन्दर एवं मूलयुक्त आचरण द्वारा ही नीतिशास्त्र को प्राप्त हुआ हैं। नीतिशास्त्र का मानव-जीवन में सबसे अधिक प्रशंसनीय एवं हिमायती काम यदि कोई हुआ है तो वह कल्पना और वास्तविकता, शुभ और अशुभ, पृथ्वी और स्वर्ग, सुन्दर और असुन्दर, सत्य-असत्य, शिव-अशिव, नैतिक-अनैतिक आदि में से अवास्तव जीवन को निकाल कर उसमें उचित समन्वय स्थापित कर नैतिक प्रवाह का जीवन कल्याण हेतु मानवता की ओर प्रवाहित करने का कार्य भारतीय एवं पाश्चात्य नीति-शास्त्रों में विशेष रूप से उल्लेखनीय हुआ हैं।

दूसरी बात, नैतिक या अनैतिक, अनिश्चित एवं अस्थायी, भी लगती हैं। नैतिकता का मनुष्य जीवन में प्रवेश पूर्वसूचित नहीं होता और पूर्व सूचना देकर नैतिकता का आगमन नैतिकता बनाम और कुछ होगा। नैतिकता का आगमन संयोग से होगा तभी वह धारणा जीवित रहेगी अन्यथा उसकी मृत्यु होगी और नये नियमों और सिद्धान्तों का जन्म होगा। नियम, सिद्धान्त स्थायी एवं विश्वसनीय होते हैं परन्तु नैतिकता बिल्कुल उल्टी हैं। और इसी अर्थ में नैतिक कर्म सदैव स्वान्त: सुखाय ही नहीं किये जाते हैं। प्रत्येक अवस्था में स्वयं साध्य है। इसीलिए नैतिक कर्म की महत्ता का माप दो प्रकार से किया जाता है। प्रथमत: यह देखा जाता है कि व्यक्ति विशेष ने कितना कष्ट सहकर दूसरों की भलाई की हैं और दूसरे यह देखना होता है कि जिस कष्ट से उसने दूसरों को बचाया, वह कितना बड़ा था और वह किस कोटि का था, इन कई पैमाने से हम बुद्ध, ईसा महात्मा गांधी जैसे नैतिक वीरों के महत्व का अनुमान कर सकते हैं।

वस्तुत: यदि नीतिशास्त्र की प्राचीन संकल्पनाओं के स्थान पर नई विचार धाराएँ जो बौद्धिक एवं तार्तिक आधारों पर प्रतिष्ठित होकर मानवीय अधितियों की तथ्य सामग्री प्रस्तुत करती हैं तथा वर्तमान समस्याओं के साथ जीवन को समझने-समझाने का प्रयत्न विकासात्मक दोनों दृष्टियों से उनके द्वारा किया जाता हैं।

वास्तविक रूप से मूल्य की सत्यता को नीतिशास्त्र तभी स्वीकार करता हैं, जब 'मूल्य सत्य' भौमिक सिद्धांतों एवं भौतिक प्रयोगों से जीवन को सुखी और समृद्ध बनाता है। मूल्य विषयक नीतिशास्त्र जीवन-संघर्ष अथवा जीवन-कलह में निर्णयात्मक काम करता है तथा जीवन को एक नई दिषा प्रदान करता है। इस प्रकार का मूल्य विषयक नीतिशास्त्र 'सत्य ज्ञान' निष्ठा की कसौटी है।

नियत या स्थिर जीवन-मान में निश्चित किए गये मूल्यों को हम मानक आदर्श मूल्य समझते है। जिन्हे समाज या व्यक्ति सहजता से जीवनादर्ष के रूप में ग्रहण करता है। इससे नि:श्रेयस और प्रयस की प्राप्ति मूल्यों के उन मानदण्डों को स्पष्ट करती है जो मानक मूल्य के लिए उपयोगी सिद्ध हुए है। मानक-मूल्य मानव-जीवन को अधिक से अधिक व्यवस्थित बनाते है अथवा किसी एक व्यवस्था की स्थापना करते है, जिसमें जीवन मूल्य जीवित रह सकते हैं। जीवन की महत्ता जिससे बढ़ती हैं, जीवन में जिससे रसमयता एवं पूर्णता आती है, वे मानक मूल्य में गिने जाते है। अर्थात मानक मूल्य सर्वोष्कृष्ट तथा उच्चतम ध्येय गुणों को लेकर चलते है। जिससे हम जीवन-साधन रूपों को शीघ्र ही पहचान लेते हैं। मानक मूल्यों को अपनाने का आग्रह तत्वदर्शियों एवं चिंतको द्वारा होता रहा हैं। मूल्यों कि मानक स्थिति असामन्य या विशेष व्यक्तियों के जीवन सिद्धांत या तत्व सिंद्धात द्वारा निश्चित होती हैं। सामान्य जन ऐसी बातें नीति-नियम के रूप में ग्रहण करते हैं। इन मूल्यों में अधिक रूप से अर्मूत-मूल्यों का समावेश रहता है- जैसे त्याग, बलिदान, अहिंसा, नि:स्वार्थ, सत्य, अनन्द, विश्वास, आस्था, क्षमा, सहनशीलता आदि मानव मूल्यों में मूल्यों का मूर्त रूप भी 'जीवन-मान' से निष्चित एवं विकसित किया जाता हैं, जैसे वस्तु का उपयोगितावादी सिद्धांत पर चुनाव तथा दीर्घक्षमता निवास, धन-वैभव, मालमत्ता आदि।

वस्तुत: मूल्यों का स्त्रोत मनुष्य जीवन की कार्य-प्रणाली, कार्य-निष्चिति तथा अनुभव परिणामों से निसृत है। यह जीवन में सुख की स्थापना नीति-उक्ति के माध्यम से करता हैं दूसरे शब्दों में मूल्य-स्त्रोत हमारे 'आचार-विचार', लोकाचार नीतिशास्त्र से हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. नीतिशास्त्र - शान्ति जोशी।
2. संस्कृति का दार्शनिक विवेचन -डॉ. देवराज।
3. समाजशास्त्र का मूल्य तत्व मराठी -डॉ. मेहेंदल।
4. नई कविता संस्कार और शिल्प -रमा शंकर मिस्त्र।
5. नीति-मीमांसा-पी.डी. चौधरी।
6. हिन्दी कहानी में जीवन मूल्य-रमेशचंद्र लवानिया।

****

नैतिक मूल्य और युवा पीढ़ी

डॉ. प्रकाश चन्द्र अलंसे *

प्रस्तावना – वर्तमान समय में हमारे समाज में नैतिक मूल्यों का पतन हो रहा है उसका मुख्य कारण है हमारी युवा पीढ़ी भौतिकवादी दौड़ में लगी हुयी है। और वे अपने माता पिता गुरूओं के प्रति आदर भाव मान सम्मान नही रखती है। क्योंकी हमारी शिक्षा व्यवस्था में नैतिकता पर विशेष बल नहीं दिया गया है। प्राचीन काल में भारतीय शिक्षा गुरूकुल में योग्य गुरूओं, द्वारा मौखिक रूप से दी जाती थी और नैतिकता का पाठ सबसे पहले पढ़ाया जाता था यह बात सही है कि उस समय समाज का हर वर्ग शिक्षा पाने से वंचित था क्योंकी उस समय वर्ण व्यवस्था प्रचलित थी नैतिक मूल्य एक तरह से भारतीय संस्कृति की पहचान पुरखों की विरासत में मिली अनमोल धरोहर है सम्पूर्ण विश्व में यह भारत की पहचान है। लेकिन आज युवा पीढ़ी हमारी बेश कीमती धरोहर नैतिकता को खोते जा रहे है।

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में युवा पीढ़ी में नैतिक मूल्यों की आवश्यकता – हमारी प्राचीन भारतीय संस्कृति में नैतिक मूल्यों को प्रतिस्थापित करने में रामायण काल महाभारत काल में कई ऐसे उदाहरण मिलते है जिससे नैतिक मूल्यों को मजबूती हमारे समाज में मिली। आज के युग में गुरूओं का आदर सत्कार नहीं किया जाता है जबकि रामायण काल महाभारत काल में राम अर्जुन जैसे महान् शिष्यो नें इस धरा पर जन्म लेकर गुरू शिष्य की मर्यादा की अनोखी सीख संसार को दी है जों आज भी संसार के लिये प्रेरणदायक है। लेकिन आज के युग में गुरूओं का अपमान किया जाता है जो कि सही नहीं है आज के युवा आदर्श उद्देश्य,ओर सिद्धांत भूल गये है ओर अनैतिकता की राह पर चल पडे है उसका परिणाम युवा वर्ग पतन की गहराईयों में जा रहे है यह भी नजर आ रहा है कि हमारे युवा वर्ग अक्सर गिरते नैतिक मूल्यों पर बड़े जोर षोर से सभाओं मे अखबारों, टेलिविजन, में चिंता जताते हुये देखे जा सकते है। वास्तविकता में कोई ठोस कदम नही उठाते है गिरते नैतिक मूल्यों कों ओर अधिक गिरानें में हमारे बड़ो का हाथ अधिक रहा है क्यों की उन्हीं के बताये गये रास्तों पर चलतें है। मॉ बाप अपने बच्चों को सही रास्ता दिखाने के बजाय उन्हें महॅगें फोन इन्टरनेट महॅगी गाड़िया आदि वस्तुऐ खरीद कर दे दी ओर अपने कर्तव्य की इति श्री समझ लेते है।

बालक एक कोरे कागज के समान होता है उस कागज पर नैतिक मूल्यों ओर अच्छी आदतों की इबारत लिखना चाहिये यह प्रत्येक मॉ बाप का कर्तव्य होना चाहिये लेकिन वे अपनी निजी जिंदगी में इतने व्यस्त हो गये कि वे अपना फर्ज भूल गये कि उनके बच्चों से ही अगली पीढ़ी को नैतिक शिक्षा मिलती है। प्राचीन भारतीय इतिहास पर दृष्टि डाले तो हमें पता लगता है कि अशोक ने अपनी प्रजा में नैतिक गुणों का विकास करने के लिये शिलालेख गढ़वाये उन पर यह खुदवाये कि प्राणवान जीवों वस्तुओं पर हिंसा नहीं चाहिये, माता पिता की सेवा,गुरूओं का सम्मान,मित्रों सम्बंधियों से अच्छा व्यवहार, दास सेवकों के साथ अच्छा व्यवहार करने को कहा गया था। लेकिन वर्तमान समय में नैतिक मूल्यों की हमारी युवा पीढ़ी को बहुत आवश्यकता है।

1. **समाज को शिक्षा देने हेतु** –युवा पीढ़ी में नैतिकता का सही तरीके से बीजारोपण हो जायेगा तो आने वाली जनरेशन में व्यापक सुधार हो जायेगा ओर समाज को शिक्षित करने में सहायता मिलेगी।
2. **नैतिकता से युवाओं को जीवन व्यापन का सही रास्ता मिलता है** –युवा पीढ़ी में नैतिकता के कारण ही क्या सही है और क्या गलत है इसकी पहचान करने की क्षमता आ जाती ओर जीवन व्यापन करने के लिये अनैतिक रास्तों को नहीं चुनते है।
3. **नैतिक मूल्यों के कारण ही भौतिक वादी युग में अपने संस्कारों को सुरक्षित रख पाये है** – भौतिक वादी युग में भी हमारी संस्कृति अभी तक ओर आगे भी अक्षुण बनी रहेगी उसमे नैतिक मूल्यों का ही योगदान है यह हमारी पुरखों की विरासत में मिली अनमोल धरोहर है
4. **युवा वर्ग मे नैतिकता से ही अपने सम्बंधो का महत्व समझ पाते है** – आज के युग में अपने रिश्तों को समझा पा रहे है तो उसका कारण सिर्फ यही है की युवा पीढ़ी में नैतिकता है अगर धुधलापन आ रहा है तों हमें यह समझ लेना चाहिये की हम अपनी नैतिकता को खो रहे है।
5. **जीवन जीने के उत्साह में वृद्धि होना** – नैतिकता ही हमे किसी शी विपरीत परिस्थितियों का सामना करने का बल देती है और साधान कम है फिर भी जीवन में निरसता नहीं देती है।
6. **नैतिक मूल्य से ही युवा वर्ग नशा प्रवृत्ति से दूर रहेगा** – आज पश्चिम के देशो में चरस कोकीन नशीलें पदार्थो का उपभोग सभी उम्र के लोग कर रहे है भारत भी इससे अछुता नही है लेकिन जिस परिवार में बच्चों को अच्छे संस्कार दिये है अर्थात नैतिकता का पाठ पढ़ाया है उस परिवार में नशा कोसों दूर रहता है।
7. **नैतिक मूल्यों से ही शिक्षा का मंदिर पवित्र ओर स्वच्छ बनता है** –वर्तमान समय में शिक्षा के मंदिर में रेंगिंग नशा खोरी जुआ ओर अनैतिक कार्यो को अजांम दिया जा रहा है लेकिन छात्रों कों प्रायमेरी कक्षा से ही नैतिक शिक्षा का पाठ पढ़ाना चाहिये ताकि आगे चलकर छात्रों के मस्तिष्क में यही बात सदैव बनी रहे और उक्त समस्याओं का सामना नही करना पढ़ेगा।
8. **नैतिक मूल्यों से ही युवा वर्ग में राष्ट्रीय चेतना जाग्रत होगी** – किसी भी व्यक्ति को जब तक अपने माता पिता परिवार की वेल्यू की समझ नही होगी तब तक वह राष्ट्र के लिये उसकी भूमिका क्या है यह

* सहायक प्राध्यापक (इतिहास) शासकीय कन्या महाविद्यालय, झाबुआ (म.प्र.) भारत

समझ नहीं पायेगा अर्थात नैतिक मूल्यों सें ही व्यक्ति के मन में राष्टीय भावना जाग्रत होगी।

9. **आने वाली पीढ़ीयों के पथ प्रदर्शक के रूप में** – नैतिक मूल्य माता पिता द्वारा अपने बच्चों में ओर उनके बच्चों में स्थान्नतरित होते रहते है।

नैतिक मूल्यों को युवा पीढ़ी में स्थापित करने के उपाय –

1. **शिक्षा से युवा वर्ग में नैतिकता का भाव पैदा करना –** शिक्षा का मुख्य उद्देश्य जीवन का सर्वांगीण विकास करना है ओर इससे युवा पीढ़ी में नैतिकता का विकास होगा।
2. **युवा पीढ़ी में नैतिकता के विकास के लिये प्रेरक प्रसंगों को प्रकाशित करवाना** – समाचार पत्रों पत्रिकाओं पुस्तकों नाटक मंचन के माध्यम से हमारे शरत की महान् विभूतियों के जीवन परिचय उनके द्वारा किये गये उल्लेखनीय कार्यो को युवा पीढ़ी के सामने इन माध्यमों से रखा जा सकता है। ताकि उनके अन्दर उनके जैसे बनने की प्रेरणा जाग सके।
3. **भौतिकवादी वस्तुओं से युवा पीढ़ी को दूर रखना –**युवा पीढ़ी को आधुनिक शैतिकवादी वस्तुओं से दुरी बनाना चाहिये क्योंकि मोबाइल लेपटाप नेट आदि विलासिता की वस्तुये नैतिक पतन की ओर ले जाती है।
4. **नशा प्रवृति से युवा पीढ़ी को दूर रखना –**नशा वर्तमान समय में युवाओं कों खोखला कर रहा है हर स्थान पर नशे का समान आसानी से उपलब्ध हो जाता है इसी कारण युवा वर्ग नशे के दल दल में फसते जा रहे है। सरकार को चाहिये की शिक्षण संस्थाओं के आसपास नशीली सामग्रीयों को प्रतिबंधित कर देना चाहिये।
5. **शिक्षक ओर छात्रों के बीच नैतिक आदर्शे का पुल बनाना –** गुरू द्रोण व एकलव्य के बीच सर्मपण का भाव प्रदर्शित किया गया है उस जैसा भाव शिष्यों में होना चाहिये।

निष्कर्ष – अंत में यही कहा जा सकता है कि युवा शक्ति को सही दिशा तब ही मिल सकती है जब हमारी शिक्षा व्यवस्था मे बदलाव हो शिक्षा का मुख्य उद्देश्य जीवन का सर्वांगीण विकास के साथ नैतिकता का भी विकास हो। इसके लिये गुरूओं को भी अपनी कार्य प्रणाली अपने विचारों में बदलाव लाना चाहिये।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. संस्कृति के चार अध्याय – रामधारी सिंह दिनकर लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद।
2. डॉ. एस.एल. वरे – भारत में राज्य कैलाश पुस्तक सदन भोपाल।
3 डॉ. सत्यनारायण दूबे –भारत का इतिहास शिवलाल अग्रवाल इंदौर।
4 सत्यकेतु विद्यालंकार भारत का प्राचीन इतिहास सरस्वती सदन दिल्ली
5 वेब साईट नैतिक मूल्य।

****

भारतीय युवाओं में गिरते नैतिक मूल्य

प्रो. आर. आर. पल्ले *

प्रस्तावना – नैतिकता शब्द कर्तव्य की आन्तरिक भावना पर बल देता है, इसका संबंध सद् और असद्, उचित और अनुचित से है, आचार संबंधी नियमों का पालन चरित्र की दृढ़ता और पवित्रता से संबंधित है, नैतिकता का पालन व्यक्ति इसलिए नहीं करता कि, उसके पुर्वज प्राचीन काल से ऐसा करते रहे है। वरन इसलिए करता है, कि इसके पीछे न्याय, पवित्रता और सच्चाई के भाव होते है। नैतिकता का संबंध व्यक्ति के स्वंय के अच्छे और बुरे महसुस करने पर निर्भर करता है। नैतिकता प्रथा की अपेक्षा आत्मचेतना से अधिक प्रेरित है। नैतिकता लोकाचारों के अधिक निकट है।क्योंकि उनमें भी उचित अनुचित के भाव होते है। गुरविच लिखते है, **'नैतिकता अत्याधिक गत्यात्मक, रचनात्मक तथा रूढ़िवादी तत्वों का विरोध करने वाली होती है।'** न्याय, इमानदारी, सच्चाई, निष्पक्षता, कर्तव्यपरायणता, अधिकार, स्वतंत्रता, दया, पवित्रता, आदि नैतिक धारणाऐं ही है।

नैतिक मुल्य भारतीय संस्कृति की पहचान है, पुर्वजों से विरासत में मिली अनमोल धरोहर है। संपूर्ण विश्व में भारत की पहचान का प्रतिक नैतिकता है। जहाँ बेटा (श्रवण कुमार) माता पिता की कावड़ अपने कंधो पर रखकर तीर्थाटन कराता है। जहाँ पिता की आज्ञा का पालन करते हुए (श्री रामचन्द्र जी) 14 वर्ष वन में निवास में करते है। जहाँ शिष्य (एकलव्य) गुरू दक्षिणा में अंगुठा दान कर देता है। जहाँ गुरू के आदेश पर शिष्य (अरूणी) खेत को बाढ़ से बचाने के लिए मेड़ पर स्वंय लेट जाता है, भारत ऐसा देश है, जहाँ जन्म से पहले ही गर्भाधान से ही व्यक्ति को संस्कार देने की व्यवस्था रही है। वर्ण, आश्रम, पुरूषार्थ, संस्कार आदि के द्वारा व्यक्ति को नैतिक बौद्धिक एवं भौतिक रूप से परिष्कृत किया जाता रहा है।

लेकिन बड़े दुख का विषय है, कि आज की हमारी नई एवं आधुनिक पीढ़ी जिसमें हम भी आते है, इस अनमोल धरोहर को खोते जा रहे है, युवाओं का रूष्ट और रूखा व्यवहार बड़ों के प्रति अनादर, कुर्तक, मनमानी यह सब दर्शाता है, कि युवाओं में नैतिक मुल्यों का स्तर गिरता जा रहा है और यह सब कुछ पांच, छ: दशकों के अन्तराल में अधिक हुआ है। आज से कुछ दशक पुर्व अपने बुजुर्गों का आदर करना, उन्हें उचित महत्त्व देना कर्तव्य माना जाता था, लोग मिलनसार थे रिस्तो में गर्माहट थी, लेकिन कहते हुए अफसोस होता है, जिन बुढ़े माता पिता ने पाल पोस कर बड़ा किया वही माता पिता आज बच्चों को बोझ लगते है, उन्हें मजबूरीवश धरमशालाओं या वृद्धाश्रमों में या सरकारी सहायता पर जीवन व्यापन करना पड़ रहा है। युवाओं का ध्यान मोबाईल, इन्टनेट, फेसबुक आदि पर है, संवेदनहीनता की हद तब होती है, जब सड़क पर तड़पते हुए घायल पर जान बचाने की बजाय युवा उसे अनदेखा कर आगे बढ़ जाते है, बच्चों, महिलाओं के प्रति अपराध को अपना अधिकार मानते है। आज के युवा कम समय में सबकुछ पाना चाहते है, जो ना ही उनके लिए उचित है, और ना ही उसका अभी वक्त आया है।

धूम्रपान, शराब, पैसा, अय्याशी, सबकुछ शार्टकर्ट से ऐशोआराम की महात्वकांक्षा ऐसी की जब उनसे पुछते है, कि **'तुम्हारा लक्ष्य क्या है'** तो जवाब मिलता है, पैसा जैसे जीवन में सबकुछ पैसा ही है। इसके लिए कुछ भी कर गुजरने की ललक उनके चेहरों पर साफ झलकती है, ना जाने कितने ऐसे उदाहरण है, जो रोज अखबारों में छपते है, और हमारे आस–पास घटीत होते है, जो दशति है, कि युवा किस हद तक खुद को भुला चुके है, गिर चुके है। और सबसे ज्यादा तकलीफ तो इस बात की होती है, कि ना तो उन्हें इसकी भनक है, और न ही अफसोस मदहोशियों और मदमस्ती में वे चले जा रहे है, किसी पागल हाथी की तरह अपने रास्ते में आने वाली हर चिज को रौंदते कुचलते हुए वे आसमान में उड़ रहे है, इस बात से बेखबर कि जब जमीन पर गिरेंगे तो क्या होगा।

कैसी विडम्बना है, यह? जिस भूमि पर मर्यादा पुरूषोत्तम श्रीराम एवं अर्जुन जैसे महान शिष्यों का जन्म हुआ उसी धरा पर आज हर दूसरे क्षण मर्यादा लांघी जा रही है, आए दिन गुरूओं को अपमानित किया जा रहा है, कितना दूर्भाग्यिपूर्ण है, यह सब कहते है– **' असफलता तभी आती है, जब हम अपने आदर्श, उद्देश्य एवं सिद्धांत भूल जाते है।'** और कड़वा सच तो देखिए हमारे आज के युवाओं को आदर्श, उद्देश्य एवं सिद्धांत का मतलब भी ज्ञात नहीं है, और उसकी इस अनैतिकता के चलते हर रोज समाज पतन की नई गहराईयां नाप रहा है।

बड़े जोर शोर से चारों तरफ गिरते नैतिक मुल्यों की चर्चा होती है, सभाओं में, टेलीवजन, अखबारों में बड़े–बड़े विद्धान प्रख्यात पंडित ज्ञान बाटते है, चिंता जताते है, और घर चले जाते है। वाह क्या बात है, आज तक सभी ने विचार ही किया लेकिन इस दिशा में कोई सार्थक कदम नहीं उठाया, अगर इमानदारी से सोचे तो पाऐगें, कि इस महान समस्या को फैलाने वाले कोई और नहीं अपितु हमारे बुजुर्ग ही है। समाज में गिरती नैतिकता केवल पतन का ही नहीं बड़ों की असफलता का भी प्रतिक है, असफलता विश्व की सबसे बड़ी कीमती धरोहर को अपनी नई पीढ़ी को न दे पाने की। अपने बच्चों को अच्छे संस्कार और शिक्षा देने के बजाय उनके हाथों में लेपटॉप इन्टरनेट थमा दिये जाऐं बड़े नहीं हुए कि मंहगे मोबालई और गाड़िया दिला दी और समझ लिया कि हमने हमारा फर्ज पूरा कर दिया। एक बच्चा कोरे कागज की तरत होता है, और इस कागज पर नैतिक मुल्यों और अच्छी आदतों की तहरीर लिखना माता पिता का फर्ज, पर माता पिता अपनी निजि जिन्दगीयों में ही इतने व्यस्त हो गए, कि वे यह भूल गए की वे किसी के माता पिता भी

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, धरमपुरी, जिला – धार (म.प्र.) भारत

है। अपनी व्यस्ताओं में इस बात का ध्यान ही नहीं रहा कि उनके बच्चों की देश की अगली पीढ़ी असली जरूरत क्या है। कल राष्ट्र की कमान युवाओं के हाथों में होगी, क्या संभालेगें देश को जो खुद ही को नहीं संभाल सकते गहरी नींद से जागने का वक्त आ चुका है, जरूरत है, युवाओं पर दोष मड़ने की बजाय बड़े इस ओर कुछ सार्थक कदम उठायें, ज्यादा से ज्यादा वक्त अपने बच्चों के साथ, युवाओं के साथ व्यतित करें, उन्हें उचित मार्ग दर्शन दें देश के सांस्कृतिक गौरव से अवगत करावें, और युवाओं को भी आवश्यकता है,समझने की अपने आप को, अपने देश को।

समाज सुधार कैसे हो – ' पहले स्वंय सुधरो, फिर दुनिया को सुधारना' एवं क्या करें दुनिया ही ऐसी है, वस्तुत: यह दोनों कथन विरोधाभाषी है। या यह दोनों कथन मायावी बहाने मात्र है। स्वयं से सुधार इसलिए नहीं हो सकता कि दुनिया में अनाचार फैला है, स्वंय के सदाचारी बनने से कार्य सिद्ध नहीं होते और दुनिया इसलिये सदाचारी नहीं बन पा रही है, कि लोग व्यक्गित रूप से सदाचारी नहीं है। व्यक्ति और समाज परस्पर दोनों सापेक्ष है। व्यक्ति के बिना समाज नहीं बन सकता और समाज के बिना व्यक्ति का चरित्र उभर नहीं सकता। ऐसी स्थिति में व्यक्तिगत सुधार के लिए सुधरे हुए समाज की अपेक्षा रहती है और समाज सुधार के लिए व्यक्ति का सुधार एक अपरिहार्य आवश्यकता है। ऐसी परिस्थिति में सुधार की हालत यह है, कि न नौ मन तेल होगा, न राधा नाचेगी। तो फिर क्या हो? उपदेश मत दो स्वयं को सुधार लो, दुनिया स्वत: ही सुधर जाएगी।

व्यक्ति अभी पूर्ण सदाचारी नहीं बन पाया हो, फिर भी नैतिकताओं को श्रेष्ठ व आचरणीय मानता हुआ लोगों को शिष्टाचार आदि के लिए प्रेरित क्यों नहीं कर सकता, नि:संदेह सदाचारी के कथनों का अनुकरणीय प्रभाव पड़ता है। लेकिन यदि कोई मनोबल की विवशता के कारण पूर्ण रूपेण सदाचरण हासिल न कर पाए, उसके उपरांत भी वह सदाचार को जगत के लिए अनुकरणीय ग्रहणीय मानता हो, नीतिमत्ता के लिए संर्घष रत हो, और दृढ़ता आते ही अपनाने की मनोकामना रखता हो, निश्चित ही उसे सदाचरण पर कहने का अधिकार है। क्यों ऐसे प्रयासों से नैतिकता का औचित्य स्थापित होते रहता है। वस्तुत: कर्तव्य निष्ठा और नैतिक मुल्यों के प्रति, आस्था और आशा का बचा रहना नितान्त ही आव6यक है।

समाज आदर्शो का विलुप्त होना, सदाचारों का खण्डित होना या नष्ट हो जाना व्यक्तिगत जीवन मुल्यों का भी विनाश है, और नैतिकता पर व्यतिगत आस्था सामाजिक चरित्र का पतन है, इसलिए सुधार व्यक्तिगत और समाज दोनों स्तर पर समानान्तर और समान रूप से होना बहुत ही जरूरी है।

बच्चों का व्यक्तित्व विकास कैसे हो –

1. बालक ईश्वर की सर्वोत्तम कृति है। उसके विकास के लिए घर में माता पिता, विद्यालय में शिक्षक और समाज की हर इकाई बाल सेवा संस्थाऐं तथा प्रेरक साहित्य की संयुक्त भूमिका है। इनमें से एक की भी भूमिका विघटित होती है, तो बालक का सामाजिक विकास अवरूद्ध हो जाता है, और व्यक्तित्व कुण्ठीत होगा।
2. हर बालक अनगढ़ पत्थर की तरह है, जिसमें सुन्दर मुर्ति छिपी है, जिसे शिल्पी की आंख देख पाती है, व उसे तराश कर सुन्दर मुर्ति में बदल सकता है। यही कार्य मता पिता और शिक्षक को करना है।
3. बच्चों के लालन पालन में कहीं कमी हो जाती है, तो कहीं हम उन्हें अति सुरक्षा प्रदान करके स्वतंत्र व्यक्तित्व के विकास में बाधक बन जाते है, तो कहीं जरा सी गलती पर उन्हें अपमानित, दण्डित और प्रताड़ित कर उनके आत्म विकास को खण्डित करने की भूल न करें।
4. परिवार अपनी व्यस्ताओं से घिरे होने से बच्चों की मानसिक, बौद्धिक रचनात्मक क्षमताओं को पहचानने की चेष्ठा नहीं करते, अपनी इच्छाओं और महत्वकांक्षाओं को उन पर थोपने की भारी गलती कर बैठते है, उनके विचारों और रूचियों को सम्मान नहीं देते, उनके बाल सुलभ क्रिया कलापों पर हर समय रोक लगाते है, कड़ा अनुशासन रखते है, हमें चाहिए कि बाल मनोविज्ञान को समझे और उन्हें एक सफल व्यक्तित्व का स्वामी बनाए।
5. परिवार बच्चे के व्यक्तित्व निर्माण की पहली पाठशाला है, उसमें माँ की भूमिका सबसे महत्वपूर्ण है, माता उससे स्नेह, प्रेम सहयोग सद्भावना आदि के द्वारा एक उत्तरदायी नागरिक बना सकती है।
6. बच्चों में नैतिक विकास उसके पारिवारिक एवं सामाजिक जीवन से संबंधित है, जन्म के समय उसका अपना कोई मुल्य, धर्म नहीं होता लेकिन जिस परिवार व समाज में वह जन्म लेता है, वैसे वैसे उसका विकास होता है। बच्चों में कठोरता के बीज ना बोऐ जाए।
7. विद्यालय के पर्यावरण का भी बालक के मानसिक स्वास्थ्य पर पर्याप्त प्रभाव पड़ता है, उसका अपने शिक्षक और सहपाठियों से घनिष्ट संबध होता है। अत: शिक्षक को बच्चों से प्यार करना चाहिए, उन्हें अपना हृदय अर्पित करता है, तभी उनमें वह अपने श्रम की खुशी, मित्रता व मानवीय भावनाऐं भर सकता है।
8. व्यक्तित्व विकास में वंशानुक्रमण तथा परिवेश दो प्रधान तत्व है। वंशानुक्रम व्यक्ति को जन्मजात शक्तियां प्रदान करता है, तो परिवेश उसे इन शक्तियों को सिद्धि के लिए सुविधाऐं प्रदान करता है। बालके व्यक्तित्व निर्माण एवं विकास के लिए सही परिवेश प्रदान किया जाए।
9. आज समाज में जो वातावरण बच्चों को मिल रहा है, वहाँ नैतिक मुल्यों के स्थान भौतिक मुल्यों को महत्व दिया जाता है, जहाँ एक अच्छा इन्सान बनने की तैयारी की जगह एक धनवान, सत्तावान, समृद्धिवान बनने की हर कला सिखने के लिए प्रेरित किया जाता है, ताकि समाज में उसका एक स्टेटस बन सके। इसके स्थान पर आत्म संयम, सेवाभाव, कर्तव्यबोध, श्रम, त्योग, समपर्ण आदि गुणों का विकास करना आर्दश है। बच्चों को सही प्रेरणा और मार्गदर्शन की आवश्यकता है।

युवाओं में नैतिक मुल्यों की गिरावट के लिए केवल युवा ही जिम्मेदार नहीं है, इसके लिए बुजुर्ग पीढ़ी, माता पिता एवं शिक्षक तथा समाज जिम्मेदार है, इन्हें अपनी भूमिकाओं को इनके सन्दर्भ में सकारात्मक निभाना होगा। समाज से आर्दशों का विलुप्त होना, सदाचारों का खंडित होना या नष्ट हो जाना व्यक्तिगत जीवन मुल्यों का भी विनाश है। और नैतिकताओं पर व्यक्तिगत अनास्था सामाजिक चरित्र का पतन है, इसलिए सुधार व्यक्तिगत और समाज दोनों स्तर पर समानान्तर और समान रूप होना बहुत ही जरूरी है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भारतीय युवाओं में गिरते नैतिक मुल्य (हास्मी अहतेशाम) हिन्दी निबंध।
2. बच्चों का व्यक्तित्व विकास कैसे हो (शकुन्तला कालरा)
3. समाज शास्त्र (गुप्ता एवं शर्मा)

****

नैतिक मूल्य के अभाव में भौतिक विकास घातक

प्रो. ऋचा एस. मेहता *

प्रस्तावना – जब एक पक्ष को भूलकर समाज आगे बढ़ता है तो वह विकलांग हो जाता है या फिर वह विकलांग होने की स्थिति में पहुँच जाता है। यह विदित है कि वर्तमान युग भौतिक विकास का युग हैं। सभी देश, जाति, वर्ग, समाज भौतिक विकास के पीछे अंधे होकर भाग रहे है। इस दौड़ में मनुष्य के नैतिक विकास को अनदेखा किया जा रहा है। स्वयं मनुष्य भी इसे अनदेखा कर रहा है। यही कारण है कि भौतिक विकास से लाभ कम और नुकसान अधिक हो रहा है। ईमानदारी से कहा जाए तो नैतिक मूल्य के बिना भौतिक विकास उचित नहीं है। जिस प्रकार मनुष्य को जीवित रहने के लिए हवा, पानी, भोजन की आवश्यकता होती है उसी प्रकार स्वस्थ्य समाज के लिए नैतिक मूल्यों की आवश्यकता होती है। आज अपराध, भ्रष्टाचार, कालाबाजारी और तमाम प्रकार की सामाजिक बुराईयों के लिए नैतिक मूल्यों का पतन ही उत्तरदायी है।

जीवन में नैतिक मूल्य का महत्व इस घटना द्वारा समझा जा सकता है। जीवन-मूल्यों पर एक सेमीनार चल रहा था। एक विद्वान मंच पर आए। उन्होंने अपनी जेब से एक हजार रूपये का नोट निकाला और ऊपर उठाते हुए श्रोताओं से कहा – यह एक हजार का नोट कौन लेना चाहता है ? एक साथ सभी ने अपने हाथ उठा दिए। वह बोले मैं यह नोट किसी एक को दे सकता हूँ लेकिन जरा ठहरिये। उन्होंने नोट को अपने हाथों से तोड़ मरोड़ दिया। नोट बदसूरत हो गया। उन्होंने फिर कहा – अब इसे कौन लेना चाहता है ? फिर सभी ने हाथ उठा दिये। इसके बाद वह फिर बोले जरा ठहरिये। उन्होंने नोट को नीचे गिरा दिया और आसपास की धूल समेटकर उसे कदमों से कुचलना शुरू कर दिया। नोट बिल्कुल गंदा हो चुका था। वह बोले क्या अब भी कोई इस नोट को लेना चाहता है ? सभी ने अपने हाथ उठा दिए।

अब वे मुस्कराए और बोले नोट देने की बात मैंने इसलिए की थी, क्योंकि मैं एक जरूरी पाठ सिखाना चाहता था। वो यह कि नोट के साथ मैंने कितना कुछ बुरा किया, लेकिन इसका मूल्य कम नहीं हुआ। उसी तरह हमारे जीवन में नैतिक मूल्यों का होना आवश्यक है यानि जो खरा हैं, वह खरा ही रहेगा, आप चाहे जितना भी उसे मलिन करने की कोशिश कर लीजिए। मनुष्य के नैतिक मूल्य इतने सुदृढ़ होने चाहिए कि उसका कोई भी भौतिक सुख डगमगा ना सके और जीवन में हमेशा प्रत्येक सुख के साथ-साथ मूल्यों की गुणवत्ता को भी बनाए रखा जा सके।

भौतिक विकास बाहरी है, जबकि नैतिक विकास आंतरिक क्रिया हैं। बाहरी विकास को साधने में नैतिक रूप से मजबूत एवं स्पष्ट होना जरूरी हैं। भौतिक विकास के कारण मनुष्य के हाथ में शक्तिशाली मशीनगन तो आ गई है परन्तु नैतिक मूल्यों के अभाव के कारण वह मशीनगन का सदुपयोग ही करेगा यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता। नैतिक मूल्यों के अभाव में वह मशीनगन से लोगों की हत्या कर सकता है। नैतिक मूल्य यदि सशक्त है तो हथियार के कई सदुपयोग हो सकते है, जैसे कुछ समय पहले की इस घटना को हम ध्यान में ला सकते है, कि नैतिक मूल्यों के अभाव में पाकिस्तान में स्कूल के निर्दोष बच्चों की हत्या कर दी गयी। यह घृणित आंतकवाद का एक उदाहरण है।

अब अल्ट्रासाउण्ड मशीन की बात करते है जिसका अविष्कार एक समस्या से निपटने के लिए किया गया था। गर्भावस्था में कई बीमारियों के कारण बच्चा मर जाता था, इस सोनोग्राफी से डॉक्टर माँ और बच्चे के जीवन के लिए जोखिम का पता लगा सकते थे और उनको मृत्यु से बचाकर एक स्वस्थ्य बच्चे को जन्म दे सकते थे। परन्तु नैतिक मूल्य के अभाव में एक सकारात्मक अविष्कार को मनुष्य ने भ्रूण हत्या का हथियार बना लिया। जन्म से पूर्व शिशु का लिंग परीक्षण किया जाने लगा और गर्भ में ही बालिकाओं की हत्या की जाने लगी। जिसके कारण आज कई राज्यों में लड़की की संख्या तेजी से घटने लगी है और पुरूष-महिला का अनुपात समाज के लिए चुनौती बनता जा रहा है जो स्त्रियों के विरूद्ध हिंसा के रूप में सामने आया है।

एक सर्वे के अनुसार मोबाइल फोन के अविष्कार के बाद से लोगों में झूठ बोलने की प्रवृत्ति में अधिक वृद्धि हुई है। इस आधार पर हम यह नहीं कह सकते है कि मोबाइल फोन का अविष्कार झूठ बोलने के लिए किया गया था। अपितु इसका अविष्कार इसके लिए तो कतई नहीं किया गया था बल्कि लोगों के बीच संवाद आसान, सुलभ करने के लिए इसका अविष्कार किया गया था। परन्तु आज मनुष्य भौतिक विकास की अंधी दौड़ में नैतिक रूप से पतित हो चुका हैं ऐसे में भौतिक वस्तुओं का वह उपयोग नहीं दुरूपयोग अधिक कर रहा है। समाचार पत्रों में प्रतिदिन पढ़ने में आता है कि इंटरनेट पर चलने वाले कुछ एप्स जैसे फेसबुक तथा वाटसएप के कारण वैवाहिक जीवन में स्त्री और पुरूष के संबंध तेजी से टूट रहे है। जिसके कारण तलाक की संख्या में भी वृद्धि हो रही है। मोबाइल का उपयोग बहुत अधिक होने से नैतिक पतन के साथ-साथ पारिवारिक विघटन ने भी जन्म लिया है।

कम्प्यूटर का अविष्कार कागज के दुरूपयोग को कम और समय, धन की बचत के लिए किया गया था जिससे कम समय में अधिक कार्य किया जा सके। परन्तु वर्तमान में इस यंत्र का चेटिंग तथा गेम्स के लिए अधिक उपयोग होने लगा। जिसके कारण आज की युवा पीढ़ी में नैतिक मूल्यों की कमी के साथ-साथ कम उम्र में विभिन्न प्रकार की बीमारियाँ जैसे मोटापा, शुगर, उच्च रक्तचाप आदि बढ़ती जा रही है। जो नौजवान पहले शारीरिक व्यायाम करता था तथा विभिन्न खेल खेलता था वह आज इन भौतिक साधनों का दास हो गया है।

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र)शासकीय संस्कृत महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत

एक बार बिड़ला जी ने अपने भाषण में कहा था कि मशीन मनुष्य के लिए बनी है। ना कि मनुष्य मशीन के लिए अर्थात् वर्तमान में मनुष्य को अपनी इच्छानुसार मशीन संचालित कर रही है। मनुष्य आज भौतिक साधनों का गुलाम हो गया है। जिसके बिना वह अपने जीवन को अधूरा मानता है।

देश, समाज तथा मनुष्य सभी के सर्वांगीण विकास के लिए केवल भौतिक विकास पर्याप्त नहीं है, इसके साथ-साथ नैतिक विकास भी जरूरी है। भारत के प्राचीन इतिहास के पृष्ठ पलटे तो हम देखते हैं कि यह देश सदैव से नैतिक मूल्यों को अधिक महत्वपूर्ण मानता रहा है। महान संत ऋषि लंबी तपस्या के बाद कोई सिद्धि प्राप्त करते थे। सरल शब्दों में वह लम्बे समय के शोध और मेहनत के बाद कोई बड़ा आविष्कार करते थे लेकिन कुछ स्वर्ण मुद्राओं की प्राप्ति के लिए अपने आविष्कार को बेचते नहीं थे और ना ही हर किसी के सामने उसको उद्घाटित करते थे। आविष्कार करने में वे जितना शोध और मेहनत करते थे उतनी ही मेहनत योग्य व्यक्ति को तलाशने में करते थे जो उस आविष्कार का उपयोग समाज हित में कर सके। दरअसल, उन्हें स्पष्ट था कि नैतिक रूप से पतित किसी व्यक्ति को अपना आविष्कार दे दिया तो न समाज बचेगा और न देश।

प्राचीन भारत भौतिक और आध्यात्मिक दोनों ही दृष्टि से समृद्ध राष्ट्र था तब भौतिक विकास के बावजूद नैतिक मूल्यों का बोलबाला था। जब-जब कोई भी भौतिक विकास में डूबा, उसका विनाश हो गया। आचार्य चाणक्य ने भी एक साधारण से बालक को महान सम्राट चन्द्रगुप्त बनाकर नैतिक मूल्य खो चुके मगध के राजा धनानंद का दंभ धूल में मिलाया।

महात्मा गाँधी, श्री अरविन्द, दयानंद सरस्वती, स्वामी विवेकानंद, डॉ. राधाकृष्णन आदि के विचारों ने आजादी से पहले व बाद के भारत को अपने आदर्शों से अंलकृत किया। आजादी के दीवानों की लंबी दास्ता है जिनके आदर्शों और नैतिक बल के चलते हम आज स्वतंत्र भारत में श्वास ले रहे है। उस दौर में जन्में लोग आज भी उन मूल्यों को याद करते है जो गुलामी के बाद उन्हें विरासत में मिले थे।

अन्त में यही कहना चाहूँगी कि आज भी हमारे पास समय है अपनी पीढ़ी को बचाने का। यदि वर्तमान में भटकती पीढ़ी को शिक्षा, नाटक, कहानी, उपलब्ध साहित्य, चलचित्रों के माध्यम से नैतिक मूल्यों का पाठ पढ़ाया जाए तो देश का भविष्य निश्चित रूप से सुरक्षित रहेगा एवं स्वस्थ्य समाज का निर्माण होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सामाजिक समस्याएँ - तेजस्कर पाण्डे, संगीता पाण्डे।
2. बुद्ध की करूणा - डॉ. सद्धा तिस्स।
3. अप्प दीपो भव - स्वामी श्रद्धांन्द।
4. समाचार-पत्र एवं पत्रिकाएँ ।

****

नैतिक मूल्यों के उत्थान में शिक्षक की भूमिका

सुबानसिंह टैगोर *

शोध सारांश – जितनी आवश्यकता जीवन में हवा और पानी की है, उतनी ही आवश्यकता जीवन में नैतिक मूल्यों की है। बच्चों को अच्छा नागरिक बनाने में नैतिक मूल्यों की नितांत आवश्यकता है और आज के इस दौर में संस्कारवान बनाते हुए बच्चों का सुरक्षित भविष्य तैयार किया जा सकता है। अच्छी शुरूआत समाज को नई दिशा दे सकती है। महज डिग्री लेने व शिक्षा ग्रहण करने से विद्यार्थी अच्छा नागरिक नहीं बन सकता, बल्कि उसमें संस्कार व आदर्श समाहित होने बहुत जरूरी है। जो नैतिक मूल्यों माध्यम से ही संभव है। किताबी ज्ञान के साथ नैतिक मूल्यों व संस्कार रूपी शिक्षा के माध्यम से एक गुरू ही शिष्य में अच्छे चरित्र का निर्माण कर सकता है।

शब्दकुंजी – नैतिक मूल्य, चरित्र विकास, शिक्षक और विद्यार्थी।

प्रस्तावना – ज्ञान वही श्रेष्ठ होता है, जो हमारे चरित्र को श्रेष्ठ बनाता है, मन को श्रेष्ठ व पवित्र बनाता है, जीवन को दिव्य बनाता है। ज्ञान को आचरण में लाने पर जीवन में प्रेम, शांति, सहयोग, ईमानदारी, सत्यता, विनम्रता, सहनशीलता, निर्भयता और साहस आदि मूल्यों का समावेश होता है। स्वामी विवेकानंद ने नव–विवाहित अमेरिकन दंपति से कहा था कि 'आपके देश में दर्जी किसी भी व्यक्ति को सभ्य और सुसंस्कृत बनाता है, जबकि भारत में उत्तम चरित्र ही किसी भी व्यक्ति को सभ्य और सुसंस्कृत बनाता है।' अंग्रेजी में एक कहावत है–

If wealth is lost, nothing is lost.
If health is lost, something is lost.
But character is lost, everything is lost.

अर्थात यदि धन गया, समझो कुछ नहीं गया। यदि स्वास्थ्य गया, समझो कुछ गया। लेकिन जिसका चरित्र गया, समझो सब कुछ गया। स्पष्ट है कि चरित्र खोने (नैतिक मूल्यों के पतन) के बाद मनुष्य के पास कुछ शेष नहीं रह जाता है। ऐसे मनुष्य के लिए भौतिक विकास भी सही मायने में निरर्थक हो जाता है। बच्चों को अच्छा नागरिक बनाने में नैतिक मूल्यों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है और नैतिक मूल्य बच्चों को संस्कारवान बनाते हुए उनके सुरक्षित भविष्य को तैयार करने में मदद करते हैं। अच्छी शुरूआत समाज को नई दिशा दे सकती है। महज डिग्री लेने व शिक्षा ग्रहण करने से विद्यार्थी अच्छा नागरिक नहीं बन सकता, बल्कि उसमें संस्कार व आदर्श समाहित होने बहुत जरूरी है। नैतिक मूल्यों के बिना विकास संभव नहीं है। मूल्यों की गिरावट के माहौल में मनुष्य अपनी पहचान कैसे बरकरार रखे, इस पर गहन चिंतन की जरूरत है। मूल्य विहीन शिक्षा स्वयं ही अर्थ विहीन हो जाती है। छात्र ऐसी शिक्षा लेकर जाये, जिससे वे समाज को नई दिशा देने में अहम् भूमिका अदा कर सके। नई पीढ़ी के उत्थान के लिए शिक्षकों को स्वयं में मूल्यों को समावेश करने के साथ निजी व सामूहिक तौर पर चिंतन करने की जरूरत है। समाज में दिखाई देती विसंगतियों को दूर करने के लिए वृहत स्तर पर जनजाग्रति की आवश्यकता है। अब समय आ गया है कि प्रत्येक शिक्षक इस बात को प्रभावशाली ढंग से सामने लाये कि नैतिक मूल्य शिक्षा बच्चों के भविष्य के लिए अनिवार्य है।

अध्ययन के उद्देश्य –

1. नैतिक मूल्यों में हो रहे पतन का अध्ययन करना।
2. नैतिक मूल्यों के उत्थान में शिक्षक की भूमिका का अध्ययन करना।
3. नैतिक मूल्यों को बनाये रखने हेतु सुझाव देना।

नैतिक मूल्यों के पतन के कारण – आधुनिक युग में शैक्षणिक विकास के साथ–साथ भौतिकवाद की दौड़ भी तेज हुई है। प्रत्येक व्यक्ति अधिक से अधिक सुख–सुविधाएँ प्राप्त करना चाहता है, जिसने गलाकाट प्रतिस्पर्धा को जन्म दिया है। वह झूठ, मक्कारी, धोखेबाजी, चापलूसी, हिंसा जैसे अवगुणों को अपनाने से भी गुरेज नहीं करता है अर्थात नैतिकता का अस्तित्व समाप्त होता जा रहा है। आधुनिक युग में नैतिक मूल्य गिरते जा रहे हैं। संस्कार देने का प्रथम केन्द्र परिवार होता है। पुराने जमाने में दादा–दादी कहानी आदि के माध्यम से बच्चों को नैतिक मूल्यों के पाठ पढ़ाते थे, किन्तु आज के युग में किसी को भी फुर्सत नहीं है। माँ अपने बच्चों के लिए टिफिन बनाकर ही अपना फर्ज पूरा हुआ समझ लेती है और बच्चों को स्कूल जाने, पढ़ने और होमवर्क करने से ही फुर्सत नहीं मिलती है। ऐसी स्थिति में दादा–दादी से कहानियाँ सुनने आदि का उनके पास समय ही नहीं है। ऐसा लगता है कि बच्चा केवल पढ़ने, बस्तों का बोझ उठाने व पढ़–लिखकर नौकरी करने के लिए ही पैदा होता है। न तो उसके पास खेलने का समय है, न हीं घर के बुजुर्गों आदि से बात करने का समय है। उसे आधुनिक युग की सोच ने मशीन बना दिया है। इतना ही नहीं कुछ लोगों को तो नौकरी से प्राप्त वेतन को खर्च करने तक का भी समय नहीं है। इसी कारण से आज के बच्चों में नैतिकता घटती जा रही है। रही–सही कसर आधुनिक तकनीकी ने पूरी कर दी है। उनको जब भी कुछ समय मिलता है, तो वे मोबाईल, इन्टरनेट, वाट्सएप, फेसबुक आदि में लगे रहतें हैं। फेसबुक पर हजारों दोस्त बना लेते हैं किन्तु आस–पास के दोस्तों से बात करने या मिलने का उनके पास समय नहीं है। पहले के जमाने में जब किसी को पत्र लिखे जाते थे, तब उसमें अपनापन झलकता था। बहुत से लोग अपने प्रिय लोगों के पत्रों को संभालकर स्मरण के रूप में रखते थे किन्तु आधुनिक तकनीकी के कारण हम उन नैतिक मूल्यों को पूरी तरह से भूल चुके हैं।

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय महाविद्यालय, धरमपुरी, जिला–धार (म.प्र.) भारत

नैतिक मूल्यों के उत्थान में शिक्षक की भूमिका –नैतिक मूल्यों के उत्थान में शिक्षक महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। शिक्षक उस माली के समान है, जो एक बगीचे को भिन्न–भिन्न रंग–रूप के फूलों से सजाता है। शिक्षक ही वह धूरी है, जो विद्यार्थी को सही–गलत व अच्छे–बुरे की पहचान करवाते हुए बच्चों की अंतर्निहित शक्तियों को विकसित करने की पृष्ठभूमि तैयार करता है। वह प्रेरणा की फुहारों से बालक रूपी मन को सींचकर उनकी नींव को मजबूत करता है तथा उनके सर्वांगीण विकास के लिए उनका मार्ग प्रशस्त करता है। किताबी ज्ञान के साथ नैतिक मूल्यों व संस्कार रूपी शिक्षा के माध्यम से एक गुरू ही शिष्य में अच्छे चरित्र का निर्माण करता है। एक बच्चे के सर्वांगिण विकास में शिक्षक अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, जिसमें वह उसका शैक्षणिक, मानसिक, भावनात्मक, सामाजिक व सांस्कृतिक विकास भी करता है। राष्ट्र निर्माण में छात्रों की भूमिका, शिक्षक द्वारा दिये गये मार्गदर्शन पर निर्भर करती है, जिसमें शिक्षक अमृत के समान होते हैं। छात्र और शिक्षक एक सिक्के के दो पहलू हैं, जिसके बिना मजबूत समाज और राष्ट्र की कल्पना नहीं की जा सकती है।

निष्कर्ष – निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि वर्तमान पीढ़ी में नैतिक मूल्यों का ह्रास होता जा रहा है। उनमें माता–पिता, बुजुर्गों, गुरूजनों तथा अपने से बड़ों के प्रति आदर लगभग समाप्त हो चुका है। उनमें नैतिक मूल्यों के उत्थान के लिए परिवार, शिक्षक व समाज, हम सबको ध्यान देनें की जरूरत है। सही–गलत, अच्छे–बुरे व नैतिक–अनैतिक को कदम–कदम पर समझाने की जरूरत है। यदि बच्चे परिवार के नियंत्रण में है तथा अपने माता–पिता व परिवारजनों की बातों को मानते हैं, तो उनमें नैतिक मूल्यों को बनाये रखना मुमकिन है। यदि बच्चा कोई गलत काम करता है, तो हमें तुरंत उसे रोककर उससे होने वाले दुष्परिणामों से अवगत कराना चाहिए तथा भविष्य में ऐसी गलती नहीं दोहराने के लिए समझाना चाहिए।

सुझाव –

1. आधुनिक तकनीकी माध्यमों का उपयोग केवल आवश्यकतानुसार तथा सही कार्यों के लिए किया जाना चाहिए।
2. शिक्षा पद्धति में प्राथमिक स्तर से नैतिक शिक्षा का अध्यापन अनिवार्य किया जाना चाहिए।
3. बच्चों को महापुरूषों की जीवनी व अच्छे ग्रंथ पढ़ने के लिए प्रेरित करना चाहिए।
4. बच्चों को गलत संगत से बचने की सलाह देना चाहिए।
5. नैतिक मूल्यों का ज्ञान देने के लिए पाठ्यक्रम में नैतिक शिक्षा को शामिल करना चाहिए।
6. किताबी ज्ञान के साथ ही उन्हें आदर्श व्यक्तित्व के निर्माण के लिए प्रेरित करना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. कोठारी, अतुल, (2009) 'मूल्यों की शिक्षा',शिक्षा संस्कृति उत्थान न्यास, नई दिल्ली।
2. गुप्ता, एम.एल. (2014) 'समाजशास्त्र का परिचय' साहित्य भवन पब्लिकेशंस, आगरा।

****

आधुनिक जीवन और सामाजिक मूल्य

साधना राज *

प्रस्तावना – सामाजिक मूल्य यह हमारी भारतीय संस्कृति की पहचान है, अनेको अनेक वर्षो से सहेजी गई हमारी पूरखो की अमूल्य धरोहर है। भारत की पहचान नैतिकता से है जो कि सामाजिक मूल्यों की जननी है। इतिहास इस बात का साक्षी है कि नैतिकता और सामाजिक मूल्यों की यदि बात करे तो भारत का एक महत्वपूर्ण स्थान है यहा विश्वबन्धुत्व की भावना जैसे विचार को प्राथमिकता की श्रेणी में रखा जाता है समान अधिकार, स्वतंत्रता भी इसके आगे के चरण है। इसी आधार पर सामाजिक प्रगति निर्भर करती है। इस विचार को अनेको प्रबुद्ध वर्गो द्वारा अपने अपने शब्दों में व्यक्त किया है जैसे आगस्ट काम्टे के अनुसार 'समाज साामजिक प्रगति का भी विज्ञान है समाज में कोई स्थिर व्यवस्था नहीं, बल्कि यह एक गतिशील व्यवस्था है। समाज परिवर्तनशील है यहा हर क्षण परिवर्तन होता रहता है। परिवर्तन प्रगति का द्योतक भी है। समाजशास्त्र उन भौतिक, बौद्धिक व नैतिक सिद्धान्तों की खोज और प्रतिपादन करता है जिनके द्वारा सामाजिक प्रगति को प्राप्त किया जा सके।'

उसी प्रकार गांधीजी का सम्पूर्ण सामाजिक दर्शन नैतिक धर्म पर आधारित है उनके अनुसार धर्म का दूसरा नाम ही नैतिकता है। गांधीजी के शब्दो में 'सत्य, धर्म और सच्ची नैतिकता एक–दूसरे से अपृथक् रूप से बंधे हुए हैं। धर्म का नैतिकता से वही संबंध है जो भूमि में बोए हुए बीज के साथ जल का है। ऐसा कोई धर्म नहीं होता जो नैतिकता पर अतिक्रमण कर सके।' इन्हीं को यदि आधुनिक जीवन से जोड़ा जाए तो यह तथ्य धीरे–धीरे कही धुमिल होते जा रहे है। इसका संपूर्ण दायित्व युवाओं पर है जो कि आधुनिकता की अंधी दौड़ में रूखे व्यावहार तथा पतन की गर्त में जाने की और अग्रसर है और इसकी शुरूआत वह अपने परिवार से ही करते है।

आधुनिक जीवन अनेको कठिनाईयों और समस्याओं से घिरा हुआ है, सामाजिक मूल्य की यदि समझ हो तो भी उसे सबसे अंतिम पंक्ति में रख अपना स्वार्थ सिद्ध करने के लिए तथा अंधी प्रतियोगिता के युग में सभी से आगे निकलने कि होड के लिए साम, दाम, दण्ड भेद की नीति से सफल होने में प्रत्येक व्यक्ति लगा है, फिर चाहे उसे अपने नैतिक मूल्य, संस्कार तथा सामाजिक मूल्यों से ही समझौता क्यों न करना पड़।

हम और आप वर्तमान के भागदौड़ में आधुनिक जीवन की आपाधापी के साथ सामंजस्य बैठाते हुए जीवन व्यतीत कर रहे है। इसमें अनेको सुविधाएँ है जो हमारे जीवन को सरल एवं सहज बनाती है इसके कई उदाहरण जैसे यातायात के साधनो में कार, स्कुटर, बाईक आदि है तो संचार के साधनो में मोबाईल, इंटरनेट, टीवी है, राशि हस्तातरण के लिए बैंक, नेट बैंकिग, एटीएम आदि, शॉपिग के लिए आनलाईन शॉपिग, होम शॉपिग है कुल मिलाकर वर्तमान में हमारी दैनिक दिनचर्या में हम अनेको सुविधाओं का लाभ लेते है जो कि ना सिर्फ समय की बचत करता है साथ ही हमें अनेको असुविधाओं से बचाकर हमारे समय को भी बचाता है।

यदि केवल उपरोक्त पैरेग्राफ के उदाहरण से प्रारंभ किया जाए तो भी ऐसे अनेको उदाहरण है जो कि आए दिन पत्र पत्रिकाओं में पढ़ने को मिल जाएगे कि किस व्यक्ति ने किस प्रकार दुसरे व्यक्ति को धोखा दिया इसमें वाहन चोरी, मोबाईल का गलत उपयोग या एटीएम कार्ड द्वारा तकनीकि का दुरूपयोग कर समाज में रहने वाले हमारे अपने लोगों को ही धोखा देने कि परंपरा बडी तेजी से अपना आकार ले रही है। इसके साथ ही आधुनिक जीवन में मेल मिलाप के लिए फेसबुक और मोबाईल होते है किंतु संवेदनहीनता अत्यधिक बढ गई है। यदि कोई दर्दनाक या भयंकर तस्वीर है तो सभी अपने स्मार्ट फोन के कैमरों में कैद करने को अधिक प्राथमिकता देते है। जिससे उसे फेसबुक पर अपलोड कर उसे बाकीयो को संवेदनशीलता का स्वांग रचाते हुए बडी फुर्ती से उस पर लाईक और कमेंट्स प्राप्त कर सके। कम आयु में ही युवा वह सबकुछ करना व पाना चाहते है जो उनके लिए उचित हो या न हो तथा उसका सही समय आया हो या न आया हो जैसे धूम्रपान, नशा, मंहगी गाड़िया एवं मोबाईल तथा इन आवष्यकता की पूर्ति के लिए अधिक पैसा कमाने के लिए शार्टकट अपनाना चाहते है। सभी को पैसा पाने की लालसा रहती है जिसके परिणाम आए दिन अखबारों और समाचारो में अपराध का रूप लेते है। इससे अनेको सामाजिक समास्याए उत्पन्न हो रही है तनाव, अवसाद, मानसिक बीमारी की समस्याएँ आदि।

युवाओं में सामाजिक मूल्यों तथा नैतिक मूल्यों का कारण प्रतिस्पर्धा की भावना तथा उसमें विजयी होना और इसके लिए किसी भी प्रकार के उपायो को अपनाना वर्तमान की जीवन में एक स्वाभाविक प्रकिया बन गई है। अपने को दूसरो से निचा दिखाना तथा अपने को सर्वत्र ऊँचा स्थान देना ही सभी चाहते है। अशिष्टता व असभ्यता मर्यादा लाघना ये सभी दुर्भाग्यिपूर्ण है। इसके पीछे अनेक कारणो के साथ एक कारण समाज में परिवारो की विघटन को भी माना जाना चाहिए क्योंकि पहले जब सभी एक साथ मिलजुल कर संयुक्त परिवारों में रहते थे तो सभी से सामंजस्या बैठाना, बड़ो का आदर करना, उनके अनुभवो से सिखना, संस्कारों शिक्षा पाना, सभी का ध्यान रखना तथा सभी से स्नेह के साथ–साथ सिख लेना एवं सुरक्षा की भावना में सभी एक साथ अपने सुख–दुख का साझा करते हुए बड़ी से बड़ी कठिनाईयों से विजय प्राप्त कर लेते थे परंतु जैसे–जैसे आधुनिकता, स्वतंत्रता, बेरोजगारी आदि के चलते परिवारों में विघटन होने से एक परिवार में केवल माता–पिता एवं बच्चे रह जाते है और उनकी सभी जरूरतो को पूर्ण करने के लिए माता–

* शोधार्थी, अटल बिहारी वाजपेयी हिन्दी विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

पिता दोनों को आय अर्जित करनी पडती है जिसके चलते बच्चों में संयुक्त परिवार में होने वाले परवरिश न होने से अनेको समस्याएँ उत्पन्न हो रही है इनमें सामन्जस्य न बैठा पाना, प्रतियोगिता, ईष्या आदि के कारण सामाजिक मूल्य समाप्त जैसे हो रहे है।

वर्तमान जीवनशैली अत्यंन्त व्यस्त हो गई है इस व्यस्तता के बीच परिवार, समाज, देश आदि के चिंतन पर विचार करना साथ ही वर्तमान में व्याप्त अनेको अपेक्षा एवं लालसा को पूर्ण करने में जो सामाजिक मूल्य का ह्रास हो रहा है उसके प्रभाव आने वाले समय में और अधिक घातक होगे। किस प्रकार आधुनिक जीवन और सामाजिक मूल्य के बीच सामंन्जस्य बैठाया जा सकता है यह प्रयास हमें आज से ही प्रारंभ करना होगा। अंतत: यही निष्कर्ष सामने आता है कि 'अति सर्वत्र वर्जयेत' अर्थात् किसी भी कार्य कि अत्यधिकता सदैव हानिकारक होती है। वही बात सामाजिक मूल्य पर भी लागु होती है यदि परिवार विघटित होने के पश्चात् भी आपसी तालमेल के तथा विचारो से एक होगे तो बच्चों पर इसका सकारात्मक प्रभाव पड़ेगा और वे समझ पाएगे कि आभाव से उत्पन्न अनेको समस्याओं कि ओर अपनी दृष्टि रखते हुए उन समस्याओं से किस प्रकार आधुनिक जीवन से सामन्जस्य स्थापित किया जाए तथा सामाजिक मूल्यो के माध्यम से इन समस्याओं को किस प्रकार कम करने में सहायता प्राप्त हो सकती है का प्रयास प्रारंभ किया जा सकेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. डी.एस.बघेल, 'समाजशास्त्रीय विचारों का आधार' मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी।
2. दैनिक समाचार पत्र एवं पत्रिकाएं एवं इन्टरनेट।
3. स्वामी विवेकानंद, द कम्पलीट वर्क्स ऑफ स्वामी विवेकानंद भाग पांच (कोलकाताए 1989)।
4. ए.आर.देसाई, सोशल बैकग्राउण्ड ऑफ इंडियन नेशनलिज़्म।

****

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में नैतिक मूल्यों की आवश्यकता, चुनौतियाँ एवं समाधान

स्वीटी शर्मा *

प्रस्तावना – नैतिक मूल्य के अर्थ से तात्पर्य वे सांस्कृतिक अवधारणा एवम आदर्ष है, जो व्यक्ति, परिवार व समाज से अनुग्रहित करता है अर्थात् ये व्यवहार के उन पैमाने को दर्शाते है, जिनके आधार पर मानव सही–गलत, वांछित–अवांछित आदि का निर्णय लेता है। आज सामाजिक जीवन के लिए अत्यंत आवश्यक नैतिक मूल्यों में मुख्यत: न्याय, स्वतंत्रता, अहिंसा, सत्य, समानता आदि आते है। एवम ये नैतिक मूल्य मानवीय भावनाओ से ओत–प्रोत होते है। क्योंकि ये उन बातो का प्रतिनिधित्व करते है, जिन्हें हम अच्छा मानते है, समाज द्वारा स्वीकृत होते है, तथा जिनकी रक्षा करना हम अपना कर्तव्य समझते है।

मानव जीवन में नैतिक मूल्यों की उपयोगिता सर्वाधिक है। इसकी प्रथम पाठषाला है परिवार, विद्यालय तथा महाविद्यालय। इनके माध्यम से ही मनुष्य नैतिक मूल्यों को प्राप्त करने का निरन्तर प्रयास करता रहता है। क्योकि नैतिक मूल्यों के विकास की उत्पत्ति बाल्यकाल अवस्था में ही प्रारंभ हो जाती है, जो जीवन पर्यन्त चलता रहता है। एवम इसका मुख्य उत्तरदायित्व परिवार का ही होता है व नैतिक मूल्यो से ओत–प्रोत व्यक्ति सर्वत्र सम्मानीय होता है। अत: नैतिकता को शिक्षा तक ही सीमित रखने की अपेक्षा उसे अपने आचरण में आत्मसात करना अत्यंत आवश्यक है। इसमें मुख्यत: दो प्रकार का उच्चतम दृष्टिकोण निहीत होता है– प्रथम बौद्धिक व द्वितीय स्नायुविक। इसलिए मनुष्य मे उच्च नैतिकता के गुण जैसे– स्वाभिमान, सहयोग, मेल–मिलाप, सहानुभूति, ईमानदारी, प्रेम, सहिष्णुता, एक मत मे निर्णय आदि का समावेश होना अति आवश्यक है। ये सभी गुण हमारे समाज व राष्ट्र के विकास के लिए आवष्यक है। क्योंकि इन मूल्यों के अभाव में व्यक्ति कर्तव्यहीन हो जाता है। तथा न तो उनमें समाज के हित के प्रति संवेदना होगी और न ही वह राष्ट्र हित के निर्माण के उत्तरदायित्वो का निर्वाह पूर्ण रूप से कर पाएगा। इस प्रकार नैतिक मूल्यों से एक ओर व्यक्तिगत उन्नित तो होती है, वही दूसरी ओर उच्च कोटि के समाज की स्थापना भी होती है। इस प्रकार आज नैतिक मूल्य व्यक्ति, परिवार, समाज व देश की आवश्यक्ता है।

बील्ड के अनुसार 'नैतिकता का अर्थ उपदेश, आचरण संहिता, सही–गलत, नैतिक आचरण तथा चरित्र आदि है।' इसका अर्थ है कि सामाजिक मानदंडो के अनुरूप व्यक्तिगत, सार्वजनिक व्यवहार तथा मानवीय अभिवृत्ति ही नैतिकता है तथा ये मूल्य सार्वकालिक तथा सार्वदेशिक होते है। इतिहास भी इस बात का साक्षी है कि जब भी इन मूल्यों की अवहेलना हुई है, हमारा देश व समाज पतन की ओर अग्रसर हुआ है। आज मनुष्य स्वार्थ की भावना से अत्यधिक ग्रसित है, जिसके फलस्वरूप व्यक्ति में चरित्र, समाज में व्यवस्था तथा देश में उचित नेतृत्व का अभाव दिखाई देता है। मनुष्य जन्म से नहिं अपितु कर्म से महान बनता है। तथा उसे महानता के उच्च शिखर पर पहुँचने के लिए इन मूल्यों की अत्यन्त आवश्यकता होती है।

इस समय भैतिक और शाश्वत सुख सुविधायुक्त वाली पश्चिमी संस्कृति व प्राचीन संस्कृति के मध्य टकराव की स्थिति बन गयी है। एवम इन दोनो के मध्य उत्पन्न संघर्ष ने नैतिक मूल्यों को कहीं ओर ही धकेल दिया है। आज समाज में काला बाजारी, नशाखोरी, रिश्वतखोरी आदि समस्याए व्याप्त है। एवम इन सभी विषमताओं ने युवावर्ग को जकड रखा है। इनका सबसे प्रमुख कारण है नैतिकता का ह्रास। नैतिकता के अभाव में न तो मनुष्य सदमार्ग पर चल सकता है, न ही देश। अत: हमे अपनी क्षमताओं को पहचान कर देश व समाज के प्रति हमारे कर्तव्यों व उत्तरदायित्वो का निर्वाह भली–भाँति करना चाहिए, जिसके फलस्वरूप हमारे देश का विकास हो। समाज मे फैली इन समस्याओ को समाप्त करने के लिए मानव मे शिक्षा के साथ ही नैतिक शिक्षा को भी आवश्यक अंग बनाना चाहिए एवम शिक्षा में नीति, धर्म व आध्यात्म को भी शामिल करना चाहिए। तथा हमे शिक्षा के साथ ही नैतिक शिक्षा के महत्व को भी समझने व समझाने की आवश्यकता है। क्योकि जिस प्रकार एक दीपक के द्वारा संपूर्ण अंधकार दूर हो जाता है, उसी प्रकार नैतिक शिक्षा के द्वारा राष्ट्र व समाज मे व्याप्त अनैतिकता को दूर किया जा सकता है।

प्राचीन धर्म में निहीत आदर्श ही नैतिक मूल्य है। सभी धर्म भी मुख्य रूप से चरित्र के आधारभूत गुणो पर बल देते है। एवम इन मूल्यों का हमारी भारतीय संस्कृति से निकट संबंध है। अर्थात संस्कृति ही नैतिक मूल्यों का दर्पण हैं। क्योकि मनुष्य जीवन की सार्थकता नैतिक मूल्यों मे ही निहीत है। अर्थात् हमारी मानसिकता मे विद्यमान व्यवहार, संकल्प, आत्मशासन, आत्माधिपत्य व चरित्र का पक्ष ही हमारे नैतिक मूल्यों का निर्माण करते है। नैतिकता के द्वारा ही मनुष्य के व्यक्तिगत तथा सामाजिक जीवन में अनुशासन बना रहता है। तथा सदाचरण व नैतिक मूल्यो से परिपूर्ण जीवन को ही वास्तविक जीवन की संज्ञा प्रदान की गई है। इसलिए वैदिक काल से वर्तमान तक नैतिक मूल्यों को ही सर्वोपरि स्थान दिया जाता है। महात्मा गांधी जी का कथन है कि सच्चे धर्म व सच्ची नैतिकता का एक दूसरे से अटूट संबंध है। जिस प्रकार भूमि में बीजारोपण के लिए जल अत्यंत उपयोगी है, उसी प्रकार धर्म का संबंध नैतिकता से है।

प्रकृति द्वारा निर्मित प्रत्येक वस्तु का अपना मौलिक गुण व प्रयोजन होता है। व उसका आचरण इस गुण धर्मिता के विपरित होने के फलस्वरूप वह अमंगलकारी हो जाता है। जैसे– सूर्य की गुणधर्मिता उसके तप में है,

* शोधार्थी, बानीस महू ,कृतज्ञ टावर, फ्लैट न.201, जानकी नगर एनेक्स, नौलखा चौराहा,ए.बी.रोड, इंदौर (म.प्र.) भारत

बादल की वर्षा के द्वारा तथा चंद्रमा की गुण धर्मिता उसके प्रकाश व शीतलता में है, उसी प्रकार मानव जीवन की गुणधर्मिता उसके श्रेष्ठ व रचनात्मक कार्यो में विद्यमान होती है। एवम जिस प्रकार सूर्य, चंद्रमा व बादल अपनी गुणधर्मिता छोड दे तो सृष्टि संकट में पड जाती है, उसी प्रकार यदि मानव अपनी गुण धर्मिता छोडकर अपना जीवन पतित, विघटनकारी कार्यो में लगा दे, तो उसका जीवन भी निरर्थक हो जाएगा व मानवता के लिए भी कलंक बन जाएगा। अत: हम कह सकते है कि प्राचीन काल से लेकर वर्तमान तक समाज मे नैतिक मूल्यों का हमेशा से महत्वपूर्ण स्थान रहा है। एवम इनके अभाव में मनुष्य जीवन निरर्थक है। अर्थात समाज सम्मत व्यवहार तथा आदर्शो का सम्मिलित रूप ही नैतिकता है। इन मूल्यों में मुख्यत: सत्य, अहिंसा, दया, परोपकार, नैतिकता, मानवता, सहिष्णुता, सामाजिकता, राष्ट्रीयता आदि आते है। इसका स्वरूप भी अत्यन्त जटिल होता है, जो कि समाज व देश के लिए अत्यन्त आवश्यक है।

वर्तमान में वैश्वीकरण व आधुनिकीकरण के कारण हमारे देश में नैतिकता का पतन हुआ है। एवम इन मूल्यों का स्थान आज समाज द्रोह, अधर्मता, पाखंडवाद, धर्मान्धता, राष्ट्रद्रोह, दयाभिचार एवम सांप्रदायिकता आदि ने ले लिया है। अत: हमारे लिए यह आवश्यक हो जाता है कि समाज कल्याण के लिए सम्यक् ज्ञान, सम्यक् दर्शन, सम्यक् चरित्र के प्रति प्रतिबद्धता को आत्मसात करे व हमारे राष्ट्र व समाज के हितार्थ हेतु प्रयत्नशील रहे। इन नैतिक मूल्यों को विभिन्न कारक जैसे-शिक्षा, परिवार, सामाजिक पृष्ठभूमि, विद्यालयीन वातावरण, परम्पराए, चारित्रिक गुण, धार्मिकता, सामाजिक प्रतिमानो के प्रति विचार आदि मुख्य रूप से प्रभावित करते है, क्योंकि मानव सर्वदा इनसे घिरा रहता है। आज पाश्चात्य संस्कृति के प्रचार-प्रसार के फलस्वरूप हम अपनी सभ्यता व संस्कृति को भूल चूके है। हमारी वेषभूषा, संस्कृति, व्यवहार, सोच, संस्कार आदि समय के साथ-साथ परिवर्तित हो गये है, अत: हमारा नैतिक कर्तव्य है कि हम अपने समाज की अखण्ड सभ्यता व संस्कृति की रक्षा दृढता के साथ करे।

समाज में नैतिक मूल्यों के प्रति लोगो को जागरूक करना अत्यंत आवश्यक हैं। इस दिशा में सकारात्मक प्रयास हेतु विद्यालयीन एवं महाविद्यालयीन स्तर पर अन्तर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय संगोष्ठियों को भी समय-समय पर संचालित करना अति आवश्यक हैं। क्योंकि नैतिक मूल्यों के विकास द्वारा ही हम समाज में व्याप्त अनेक समस्याओं का उन्मूलन कर सकते हैं व समाज में स्वच्छ व अनुकुल वातावरण का निर्माण कर सकते हैं। नैतिक मूल्यों के विकास से ही मानव में समाज के प्रति राष्ट्र के प्रति कल्याण की भावना का विकास संभव हैं एवं नैतिक मूल्यों से युक्त मानव ही एक होनहार व कुशल नेतृत्व कर समाज के प्रति अपने कर्तव्यों का पालन कर सकता हैं। अत: हमें इन मूल्यों की महत्ता को समझना अत्यंत आवश्यक हैं।

अंतत: नैतिक मूल्य शाश्वत एवम प्रांसगिक है। एवम वर्तमान में इनके लगातार हास होने से समाज व राष्ट्र के स्वरूप को अत्यन्त क्षति हो चुकी है, एवम इस क्षतिपूर्ति हेतु इस दिशा मे सार्थक प्रयास करना अति आवश्यक है। अन्यथा ये भी इतिहास के एक अंग के रूप मे परिलक्षित होगे। अत: हमे सचेत होकर इनकी अवहेलना को रोकना होगा व इनके महत्व को स्वीकार करते हुए इनको अपने आचरण मे आत्मसात करने की आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. शर्मा जे डी, (1968), 'सामान्य मनोविज्ञान', लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा, पृ. 172।
2. राजकिशोर, (2006), 'नैतिकता के नए सवाल', वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 65-69।
3. नेगी सुरेन्द्र सिंह, (1999), 'नैतिक मूल्यों की प्रांसगिकता', आदित्य पब्लिशर्स, बीना, पृ. 99-102।
4. पाल, (2010), 'बाल मनोविज्ञान', डिस्कवरी पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, पृ. 71-74।
5. पाण्डेय तेजस्कर, (2009), 'भारत मे सामाजिक समस्याए', मेक ग्रीव हिल एजुकेशन प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली।

****

वर्तमान शिक्षा पद्धति में नैतिक मूल्यों की आवश्यकता- एक अध्ययन

डॉ. अरूणा कुसुमाकर *

प्रस्तावना – शिक्षा मनुष्य जीवन के परिष्कार एवं विकास की कुंजी मानी गई है। वास्तव में जो व्यवहार मनुष्य के ज्ञान की परिधि को विस्तृत करें, प्रतिक्रियाओं को परिष्कृत एवं क्रियाओं को उत्तेजित करे अथवा किसी न किसी रूप में प्रभावित करे उसे शिक्षा कहते हैं। संक्षेप में शिक्षा मनुष्य की आंतरिक शक्तियों का सर्वांगीण अर्थात् शरीर, मन, बुद्धि तथा आत्मा का विकास है। डॉ. राधाकृष्णन् के अनुसार 'शिक्षा को मनुष्य एवं समाज का निर्माण करना चाहिए।'

अध्ययन के उद्देश्य-

- वर्तमान शिक्षा पद्धति का अध्ययन करना।
- नैतिक मूल्यों का अध्ययन करना।
- वर्तमान शिक्षा पद्धति में नैतिक मूल्यों की आवश्यकता का अध्ययन करना।
- शिक्षा पद्धति में नैतिक मूल्यों के समावेश हेतु सुझाव प्रस्तुत करना।

विश्लेषण – शिक्षा एक महत्वपूर्ण और सर्वव्यापी विषय है। प्रारम्भ में शिक्षा एक आवश्यकता के रुप में विकसित हुई। वास्तव में शिक्षा एक सामाजिक आवश्यकता है। आदिम शिक्षा में शिक्षा का स्वरुप जटिल एवं प्रक्रिया सतत् थी। उसका उद्देश्य चरित्र, प्रवृत्ति, कौशल और नैतिक गुणों का व्यक्ति में निर्माण करना था।

ऐतिहासिक दृष्टि से विद्यालय एक आवश्यक संस्था रही है। इसका प्रमाण इस बात से मिलता है कि सभी समाजों में, विभिन्न कालों में किंतु समान अवस्था के चरण में शालाओं का विकास हुआ। शिक्षा में शालाओं की व्यवस्था का सीधा संबंध लिखित भाषा में संगठन तथा प्रयोग के क्रमिक विकास के रुप में दृष्टि गोचर होता है।

ज्ञान और परम्पराओं का उत्तरोत्तर विकसित भण्डार हजारों वर्षो से गुरु से शिष्य को हस्तान्तरित होता आया है। गुरु और शिष्य के बीच सत्तावादी संबंध का ढाँचा इस प्रकार गढ़ा गया जो वर्तमान में भी विद्यमान है।

विश्व के सर्वप्रथम विश्वविद्यालय भारत में ब्राह्मणों द्वारा चलाए गए जिनमें दर्शन और धर्म पर आधारित शिक्षा प्रचलित रही। मध्यकालीन योरोप में उच्च शिक्षा की बड़ी संस्थाएँ, जिन्हें आधुनिक विश्वविद्यालय का महत्वाकांक्षी नाम दिया गया, निर्मित हुई। योरोप से आरम्भ होकर ये विश्वविद्यालय अमेरिका में फैल गए।

औद्योगिक क्रांति का प्रसार जैसे-जैसे अन्य देशों में हुआ, उससे शिक्षा प्रसार को बढ़ावा मिला। देश में अधिक आधुनिक वैज्ञानिक तथा तकनीकी परिवर्तनों के बाद जीवन शैली के ढंग, उत्पादन के तरीको, मनुष्य की आशाओं और आशंकाओं, उसकी चिंताओं और खुशियों में गुणात्मक परिवर्तन आ गया है क्योंकि शिक्षा की संभावनाओं में भी परिवर्तन एवं वृद्धि हुई है। तीव्र आधुनिकीकरण से समाज में प्राथमिक, व्यावसायिक तथा सामान्य शिक्षा में मूलभूत गुणात्मक तथा मात्रात्मक परिवर्तन हुए है।

भारत में शिक्षा व्यवस्था –

प्राथमिक शिक्षा – केन्द्र सरकार ने 14 वर्ष की उम्र के सभी बच्चों के लिए बुनियादी शिक्षा अनिवार्य घोषित कर दी है तथा संविधान में संशोधन करके बुनियादी शिक्षा को बच्चों का मौलिक अधिकार घोषित कर दिया है। वर्ष 2001 से सभी को प्राथमिक शिक्षा देने के उद्देश्य से सर्वशिक्षा अभियान योजना प्रारंभ की गई।

माध्यमिक शिक्षा – देश में स्वतंत्रता के पश्चात् सरकार के विभिन्न प्रयासों के कारण माध्यमिक शिक्षा के क्षेत्र में काफी प्रगति हुई है। माध्यमिक शिक्षा के क्षेत्र के विस्तार हेतु देश में निम्नलिखित संस्थाएँ कार्यरत है – 1. नवोदय विद्यालय 2. केन्द्रीय विद्यालय 3. राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्।

मार्च 2009 से राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान, माध्यमिक शिक्षा तक पहुँच में वृद्धि करने तथा इसकी गुणवत्ता में सुधार लाने के उद्देश्य से यह योजना प्रारंभ की गई। वर्ष 2017 तक माध्यमिक स्तर की शिक्षा को सर्वसुलभ बनाना तथा वर्ष 2020 तक सभी बच्चों को विद्यालय में भर्ती कराने का लक्ष्य है।

उच्च शिक्षा – 12वीं तक विद्यालय में शिक्षा प्राप्त करने के बाद उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए देश के महाविद्यालय एवं विश्वविद्यालय में विद्यार्थियों को उच्च शिक्षा ग्रहण करने की व्यवस्था है। देश में महाविद्यालयों तथा विश्वविद्यालयों को मान्यता प्राप्त करना कानूनी रुप से अनिवार्य कर दिया गया। उच्च शिक्षा के अंतर्गत देश में अनुसंधान सुविधाओं का भी विकास किया गया। देश में भारतीय सामाजिक अनुसंधान परिषद्, भारतीय उच्च अध्ययन संस्थान, शिमला भारतीय इतिहास अनुसंधान परिषद, भारतीय दर्शन अनुसंधान परिषद् तथा राष्ट्रीय ग्रामीण संस्थान परिषद् आदि संस्थाएँ अनुसंधान कार्य में संलग्न है।

तकनीकी, मेडिकल तथा कृषि शिक्षा – स्वतंत्रता के बाद देश में व्यावसायिक एवं तकनीकी शिक्षा के विकास पर बल दिया। वर्तमान समय में इस क्षेत्र में निजी क्षेत्र के विनियोग के कारण अधिक वृद्धि हो रही है।

ग्रामीण एवं प्रौढ़ शिक्षा – भारत गाँवों का देश है। अत: ग्रामीण क्षेत्रों में भी सरकार ने अनेक प्रयास किए। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए राष्ट्रीय ग्रामीण उच्च शिक्षा परिषद् की देश में स्थापना की गई। सरकार ने प्रौढ़ जनसंख्या में

* प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय संस्कृत महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

साक्षरता बढ़ाने के लिए प्रौढ़ शिक्षा का विशेष प्रबंध किया है। वर्ष 1998 में राष्ट्रीय साक्षरता मिशन की स्थापना वर्ष 1901 से की गई।

भारत में साक्षरता की स्थिति

साक्षरता दर 1901-2001

जनगणना वर्ष	कुल	पुरुष	स्त्री
1901	5.35	9.83	0.60
1911	5.92	10.56	1.05
1921	7.16	12.21	1.81
1931	9.50	15.59	2.93
1941	16.10	24.90	7.30
1951	18.33	27.16	8.86
1961	28.30	40.40	15.35
1971	34.45	45.90	21.97
1981	43.56	56.38	29.75
1991	52.21	64.13	39.29
2001	64.80	75.20	53.60
2011	73.00	80.90	64.60

स्त्रोत - समसामयिक वार्षिकी 2015, प्रतियोगिता दर्पण

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि वर्ष 1901 में साक्षरता दर 5.35 प्रतिशत थी जो कि वर्ष 2011 में बढ़कर 73.00 प्रतिशत हो गई है। अर्थात् साक्षरता दर में 13 गुना से अधिक वृद्धि हुई है।

चरित्र का दायरा बहुत ही व्यापक है। चरित्र वह पैमाना है जिसके आधार पर इंसान जाना व समझा जाता है। चरित्र बाहरी साज श्रृंगार से नहीं अपितु गुण, ज्ञान और आत्मअनुशासन से बनता है। वास्तव में चरित्र निर्माण में नैतिक मूल्यों की अहम् भूमिका है। जीवन में चरित्र के बल पर हर क्षेत्र में सफलता प्राप्त होती है। यदि विद्यार्थी नैतिक मूल्यों के आधार पर चरित्र निर्माण की शिक्षा को अध्यापन काल में जीवन में उतार लेते है तो उन्हें कभी समस्याओं का सामना नहीं करना पड़ता है तथा परिवार, समाज तथा देश का भी सर्वांगीण विकास संभव होता है।

अक्षर ज्ञान या पाठ्य-पुस्तक का विभिन्न विषयों के ज्ञान या अध्ययन को ही केवल शिक्षा समझना अनुचित होगा। शिक्षा का क्षेत्र वास्तव में अत्यंत व्यापक है। शिक्षा का रथ सभी दिशाओं में सदैव चलता रहा है। शिक्षा का रथ केवल विश्वविद्यालयों और पाठशालाओं में ही नहीं अपितु घर-घर तथा खेत-खलिहानों, कारखानों, दुकानों, कला भवनों, खेल के मैदानों और मल्लशाखाओं में भी निरंतर चलते रहना चाहिए। शिक्षा के अंतर्गत विद्यार्थियों को उनके धर्म का पाठ पढ़ाना अनिवार्य है क्योंकि शिक्षा प्राप्त करने के बाद व्यक्ति अपने कार्यों को करने में बिल्कुल संकोच नहीं करता है। पहले चिकित्सा धर्म थी, लोग चिकित्सक को ईश्वरीय भाव से देखते थे किन्तु आज चिकित्सा धर्म नहीं व्यवसाय बन गया है। सर्जरी की टेबल पर मरीज को रखकर, उसके उस भाग को खोलकर सर्जन उसके परिजनों से मनमानी फीस जमा करने के लिए कहता है अन्यथा सर्जरी संभव नहीं। चिकित्सा के क्षेत्र में चिकित्सक का शाश्वत धर्म डोलने लगा है, कुछ ऐसी ही स्थिति अन्य क्षेत्रों में भी है। शिक्षक, वकील, इंजीनियर, व्यवसायी तथा अन्य सभी उच्च शिक्षा प्राप्त कर बेईमानी, धोखाधड़ी तथा अनैतिक कार्यों के द्वारा धनोपार्जन कर अपनी आर्थिक शक्ति को बढ़ा रहे है। वास्तव में वर्तमान शिक्षा राष्ट्रवादी कम, अवसरवादी अधिक बना रही है। आज भी शिक्षा व्यक्ति को रोटी प्रधान बना रही है तथा चरित्र बल से दूर कर रही है। अर्थ की होड़ में अनर्थ करने की भी होड़ सी लगी है। कमजोर शिक्षा, पेशेवर शिक्षा, व्यावसायिक शिक्षा, रोटी दिलाऊ शिक्षा व्यवस्था की नींव रेत की तरह धीरे-धीरे ढहने लगती है। अत: व्यक्ति एवं समाज के समुचित विकास के लिए शिक्षा में संस्कारों एवं नैतिक मूल्यों का समावेश किया जाना अत्यंत आवश्यक है। भारतीय संस्कृति में शिक्षा को पवित्रमय प्रक्रिया माना गया है। अत: इस प्रक्रिया को सही दिशा में क्रियान्वित किया जाना होगा।

वर्तमान युग प्रतियोगिता का युग है। वैश्वीकरण के दौर में विकास की दौड़ में स्वयं को आगे लाने में शिक्षा एक महत्वपूर्ण कदम है। किन्तु आधारहीन, दिशाहीन शिक्षा पद्धति ने कदमों को विचलित कर दिया है। वर्तमान में शिक्षा को तथ्यात्मक स्तर पर आँका जाता है तथा इस स्तर पर प्राप्त वर्ल्ड बैंक, यूनेस्को तथा यूनीसेफ आदि के आँकड़ों से हम संतुष्ट हैं कि शिक्षा का विकास हो रहा है किन्तु दूसरी ओर गुणात्मक दृष्टि से हम बहुत पीछे हैं। आज का उच्च शिक्षा प्राप्त विद्यार्थी मूल्य विहीन जिंदगी जीने के लिए मजबूर है। इच्छा करो और मिलेगा जैसे सिद्धातों पर चल रहा है। उन्हें वास्तविकता का एहसास नहीं है। आज का शिक्षित युवा केवल पैसे के पीछे भाग रहा है। पैसा कमाना उसका मूल उद्देश्य है फिर वह पैसा किसी भी तरह से कमाया जाए। इसके पीछे मुख्य कारण जीवन में नैतिक मूल्यों का अभाव है। यदि बचपन से विद्यार्थी के मानसिक पटल पर नैतिकता का पाठ अंकित हो तो वह जीवन में किसी भी प्रकार का अनैतिक कार्य करने के पूर्व दस बार सोचेगा। अत: वर्तमान शिक्षा पद्धति में पूर्णत: परिवर्तन की आवश्यकता है जिसमें विशेषत: नैतिक मूल्यों का समावेश आज की परम आवश्यकता है।

सुझाव-

- सर्वप्रथम सम्पर्ण शिक्षा प्रणाली की समीक्षा कर नये सिरे से आज की आवश्यकताओं एवं परिस्थितियों के आधार पर शिक्षा प्रणाली का निर्माण किया जाना चाहिए।
- शिक्षा पद्धति में प्राथमिक स्तर से नैतिक शिक्षा का अध्यापन अनिवार्य किया जाना चाहिए।
- विद्यार्थियों पर अनावश्यक शिक्षा में भार को कम कर व्यवहारिक शिक्षा पर जोर दिया जाना चाहिए। जिससे विद्यार्थियों में तनाव कम हो।
- शिक्षा के विकास का तात्पर्य केवल अक्षर ज्ञान तक समिति न होकर शरीर, मन, बुद्धि तथा आत्मा के विकास अर्थात् व्यक्तित्व विकास से संबंधित होना चाहिए।
- शिक्षा पद्धति ऐसी होनी चाहिए जिससे चरित्र बल बढ़े, मानसिक बल बढ़े तथा मनुष्य स्वावलम्बी बन सके।
- आज की शिक्षा पद्धति केवल सैद्धान्तिक ज्ञान प्रदान करती है अत: वर्तमान समय में आवश्यकता है मूल्य आधारित व्यावहारिक शिक्षा पद्धति की।
- शिक्षा व्यवस्था में समान शिक्षा पद्धति एवं केन्द्र नियन्त्रित शिक्षा प्रणाली होना चाहिए।

निष्कर्ष-अध्ययन से स्पष्ट है कि वर्तमान शिक्षा जगत में मूल्यहीनता बढ़ी है परिणामस्वरूप नैतिकता एवं सामाजिक सरोकार का पूर्णत: अभाव है। आज का शिक्षित युवा मूल्यविहीन शिक्षा ग्रहण कर डिग्रीधारी बनकर केवल आर्थिक लाभ प्राप्त कर रहा है किन्तु उसके जीवन में सामाजिक मूल्यों का पूर्णत: अभाव है जिसके कारण देश में विभिन्न सामाजिक समस्याएँ बहुत तेजी से बढ़ रही हैं। उन समस्याओं का निराकरण कानून नहीं वरन् हमारे

संस्कार हमारी मनोवृत्ति ही कर सकती है। अत: शिक्षा पद्धति में नैतिक मूल्यों का समावेश हर स्तर पर करना होगा जिससे मन में सृजनात्मक व स्वस्थ विचार ही स्थायी रूप से अपना घर बना सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. त्यागी एवं पाठक, शिक्षा के सामान्य सिद्धांत, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा, यू.पी. ।
2. कल्पना राजाराम, भारतीय अर्थव्यवस्था, स्पेक्ट्रम बुक्स प्रा.लि., नई दिल्ली ।
3. राजेश राजन, भारत 2014, अरिहन्त पब्लिकेशन लिमि. मेरठ ।
4. महेन्द्र जैन, समसामयिक वार्षिकी 2015, प्रतियोगिता दर्पण, आगरा।
5. www.webnaidunia.com
6. कुसुमाकर अरुणा, भारतीय अर्थव्यवस्था, शिवा पब्लिकेशन, इंदौर।

****

नैतिक मूल्यों का उत्थान एक सतत् प्रक्रिया है

डॉ. अशोक ठाकुर *

प्रस्तावना – नैतिक मूल्यों के विवेचन पूर्व भली भॉति समझना होगा कि नैतिक का आशय क्या है ? नैतिक का अर्थ – नीति संबंधी। नीति युक्त है, जो कि नीति (संज्ञा) का विशेषण रूप है। नैतिक की विस्तृत व्याख्या तभी उचित प्रकार से होगी जब हम नीति शब्द की अर्थवत्त समझ सके। नीति का कोशगत अर्थ – ले जाने या चलने की क्रिया, भाव या ढ़ंग, व्यवहार की रीति। आचार पद्धति। व्यवहार की रीति जिसमें अपना हित हो तथा दूसरों को कष्ट अथवा हानि न पहुंचे। जनता अथवा समाज के हित के लिए निश्चित आचार–व्यवहार। अच्छा व्यवहार और चलन। लोक मर्यादा के अनुसार व्यवहार। राज्य तथा राष्ट्र की रक्षा तथा हित के लिए निश्चित रीति व्यवहार। राजविद्या। कोई कार्य ठीक ढंग से पूरा करने के लिए की जाने वाली युक्ति या उपाय। हिकमत। उपर्युक्त अर्थो को जानने पर प्रतीत होता है कि नीति से उत्पन्न नैतिक शब्द देखने, सुनने और पढ़ने मे छोटा है पंरतु उसकी व्याख्या वृहद है । महापुरूष, संत महात्मा एंव पुरूषोत्तम द्वारा किये जाने वाला लोक व्यवहार एंव लोक नीति जैसे– सदाचार, उत्तमकर्म, उच्च विचार, उच्चादर्श, परोपकार, मर्यादाएँ, कर्तव्यनिष्ठा एंव संपूर्ण सद्गुणो की विद्यमानता ही नैतिकता है। नैतिकता में नैतिक होने का भाव सराबोर है, अर्थात नैतिक मूल्यों पर बात करना तभी सार्थक होगा, जब आदमी वास्तव में पूरा का पूरा आदमी हो। असल मे तो इंसान, इंसान से कट रहॉ है आदमी आदमियत से दूर भाग रहा है।

मंदिरो में भजन, मस्जिदो में अजॉ
आदमी है कहॉ ?
.... निदा

मानव आधुनिक जीवन शैली में अपने नैतिक मूल्यों की पीठ पर पाँव रखकर बेअटक आगे बढ़ने की गलाकाट प्रतिस्पर्द्धा में दौड़ रहॉ है । उसे जीवन के लाल, हरे एवं पीले परिवहन के सॉकेतिक चिह्न भी नजर नहीं आ रहे है। अपनी परम्पराओ और संस्कृति को ढ़कोसला व जड़ता समझने लगा है – अच्छे परिधान – अच्छा खानपान , स्वच्छंद आहार–विहार, बडी गाड़ी, बड़ा बंगला, चारो और सिर्फ चकाचौंध, भोग विलास की सामग्रियॉ (प्राकृतिक एंव भौतिक) आकर्षणमय जीवन को ही नैतिक मूल्य समझ बैठा है। साहित्य का विद्यार्थी हूँ – छायावाद, प्रगतिवाद, प्रयोगवाद पढ़ा–लिखा कही आकर्षणवाद पढ़ने मे नहीं आया मुझे नहीं पता की इस प्रकार के किसी वाद का नामकरण हुआ की नहीं पंरतु आधुनिक वैभव–विलासिता के जीवन को मेरा मन आकर्षणवाद कहने का हुआ और मैनें कह दिया। नैतिकता के मायने बदल रहे है। व्यक्तित्व और नैतिकता को तोलने के समाज रूपी तराजू ने दो पलडे विकसित कर लिये है पहला पलडा आर्थिक संपन्नता का तो दूसरा आर्थिक विपन्नता का सभ्य या नैतिक उसे ही कहॉ जा रहा है जो पहले पलडे का माल है दूसरे पलडे के माल को गवार, असभ्य संज्ञाओ से अभिहित किया जा रहा है।

आधुनिकता की परिवारों के विखण्डन में वीभत्स साझेदारी है। परिवार की परिभाषाएँ बदल गई है, भारतीयता में परिवार की अवधारणा कुटुम्ब से की जाती रही है जिसमें – दादा–दादी, ताऊ–ताई, काका–काकी, जेठ–जेठानी एंव पोता–पोती इत्यादी पारिवारिक इकाई के घटक हुआ करते थे, पंरतु अब परिवार की अवधारणा का दायरा संकुचित हो गया है। परिवार में अब पति–पत्नि और बच्चे ही बचे है। नैतिक मूल्यों के ह्रास से हमारे मानवीय रिश्ते भी कमतर और बदतर होते जा रहे है। 'भारतीय संस्कृति में अपने से श्रेष्ठ को नमन करना, उनके चरण स्पर्श करना अतिथि सत्कार करना आदि संस्कार की अनिवार्यता माना गया है, कितुं अभी विगत कुछेक वर्षो से इस तरह के आचरण में गिरावट देखने को मिली है, आज व्यक्ति उसी के सामने झुकता है जिससे उसका स्वार्थ सिद्ध होता है और जिससे उसका स्वार्थ सिद्ध नहीं होता उसे वह उपेक्षित करता है।' भारतीय सभ्यता – संस्कृति में, गुरू–शिष्य के रिश्ते त्याग–समर्पण की मिसाल हुआ करते थे, पंरतु आज शिक्षक भी व्यावसायिक बन गये और बनते जा रहे है। छात्र भी शिक्षक को एक दुकानदार समझ रहा है जो ऊँचे–नीचे दामों पर अपनी वस्तु को बेचेगा ही। शिक्षा संस्थानों को उपाधि (डिग्री) मिलने की दुकान समझ लिया है। गुरू–शिष्य आत्मीय व मानवीय संम्बधों को दर किनार किया जा रहा है दोनों ही पक्षों की सहभागिता बराबर है, नैतिक मूल्यों का पतन तीव्र गति से हो रहा है क्योंकि रस्सी दोनों छोर से जल रही है एक छोर शिक्षक का है और दूसरा विद्यार्थी का। आदमी दिखता कुछ है और है कुछ उसकी कथनी–करनी में एकरूकता नहीं है। वह अपनी हित साधना के लिए मानवीय और नैतिक मूल्यों की बली चढ़ाने में जरा भी हिचकता नहीं है। आधुनिक मानव दोहरा चरित्र निर्मित कर जीवन यापन कर रहॉ है। यहॉ बरबस ही मुझे रहीम की पंक्तियॉ स्मरण आती है–

रहिमन प्रीत न कीजिए जस खीरा ने कीन।
ऊपर से तो दिल मिला, भीतर फांके तीन।

नैतिक मूल्यों के पतन के कारणो पर विचार करने पर पता चलता है कि नैतिक मूल्यों के पतन में कई प्रकार के अमानवीय व असामाजिक घटक क्रियाशील हैं। वर्तमान में नैतिक मूल्यों का जो बड़ा कारण दिख रहा है वह आकर्षणवाद ही है। मनुष्य अपनी भोग–विलासिता की पूर्ति की सामग्री जुटाने में नैतिक मूल्यों की पग–पग पर हत्या कर रहा है। मनुष्य आस पास की चकाचौंध भरी जीवन शैली देखकर लालायित हो उठा है और साम, दाम, दण्ड, भेद को अपना कर वह हर प्रकार के उपभोग का उपभोगक्ता बनने की कोशिश में लगा है अनैतिकता के मूल कारण मे तो मानवीय जीवन की मृग तृष्णा वाली युक्ति चरितार्थ हो रही है। वह अपने देश के संस्थानों मे पढ़ता–लिखता है, और रोजगार विदेशो में करता है उसमें अपने देश व देशवासियों की सेवा का जज्बा नहीं है, वह सिर्फ मोटी रकम पाना चाहता है। क्या भारत

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय महाविद्यालय, राजपुर (म.प्र.) भारत

की माटी में पढ़ना – बढ़ना और उत्कृष्ट सेवाऐं विदेशो में देना नैतिक मूल्यो का हनन नही है ? नैतिक पतन में पाश्चात्य संस्कृति की भी बड़ी हिस्सेदारी है, हम विदेशी जीवन शैली को आदर्श मानने की भूल कर बैठे और करते जा रहे है। शिक्षा–उच्च शिक्षा मानव के सर्वांगिण विकास का मूलाधार है, आज हम शिक्षा को केवल रोजगार प्रदात्ता के रूप में ही ग्रहण कर रहे है। नैतिक मूल्यों की शिक्षा पर बहुत कम सोचते है।

नैतिक मूल्यों के उत्थान पर आये दिन महाविद्यालयों/विश्वविद्यालयों में सेमीनार, संगोष्ठियॉ का आयोजन होता रहता है नैतिक मूल्यों के उत्थान के लिए, व्याख्यान सेमीनार तो आवश्यक है ही पंरतु नैतिक उत्थान की मूल प्रक्रिया हमारे अंतकरण में अंकुरित होने वाला बीज है और उसे विराट पेढ़ बनाने की भूमिका में अनुकूल जलवायु जैसे माता–पिता, घर परिवार, सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक एंव धार्मिक परिवेश या वातावरण है। नैतिकता का निर्माण आत्मिकबल, इच्छाशक्ति से होता है नैतिक बनने की प्रेरणा अंतस्थ में होनी चाहिये। नैतिकता कोई बाजार में मिलने वाली वस्तु नहीं है' नैतिकता एक निरंतर सतर्कता है, चिंतन, मनन, की एक निरंतर प्रकिया है। मनुष्य जाति के हित और अहित को पहचानने, अहितकारी का निषेध करने और हितकारी को बढ़ावा देने के विवेक का नाम नैतिकता है। इस तरह नैतिकता का फलक इतना विराट है कि उसमें सबकुछ समा जाता है। सब कुछ यानि संपूर्ण मानव जाति उसकी सारी क्रियाऍ–व्यवस्थाऍ उसका समूचा इतिहास समूचा ज्ञान और समूची भविष्य दृष्टि। इसलिए नैतिकता के आग्रह मनुष्य के वर्तमान और भविष्य की सुरक्षा के आग्रह है'। समग्र जीवन का सद्आचरण ही नैतिकता है।

अत: मनुष्य को नैतिक मूल्यों के उत्थान व संरक्षण के लिए आंतरिक हृदय में पूर्व से उपस्थित सद्तत्व को सम्पूर्ण रूप से प्रस्फुटित और विकसित करना होगा। आज संतान का जन्म होता है, जन्म क्या बालक गर्भ में ही रहता है और माता पिता उसके कॅरियर निर्माण के पहलू पर विचार करने लग जाते है उसे, डॉक्टर, इंजनीयर, वैज्ञानिक, चार्टर्ड अकाउन्टेंट , उद्योगपति , राजनेता, एंव फिल्म स्टार इत्यादि बनाने की सोचने लग जाते है, कभी इस पक्ष पर नही सोचते की पहले तो इसे संस्कारवान, संवेदनशील, सहिष्णु और सभ्य बनाकर पूरा का पूरा इंसान बनायेगे। हमे विचारों की दृढ़ता ही सामर्थ्यवान और शक्तिमान बनाती है। इसलिए हमें हमारी विचारशक्ति की पुण्य आहुति नैतिक मूल्यो के उत्थान और संरक्षण में समर्पित करनी होगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. नालन्दा विशाल शब्द सागर, प्रकाशन आदिश बुक डिपो, नई दिल्ली
2. रहीम के सुबोध दोहे – वियोगी हरि।
3. रचना (संपादकीय) अंक 109, जुलाई – अगस्त – 2014 म.प्र. शिक्षक ग्रथं अकादमी, भोपाल।
4. रचना (संपादकीय) अंक 107, मार्च – अप्रैल, 2014 म.प्र. शिक्षक ग्रथं अकादमी, भोपाल।

****

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में नैतिक मूल्यों की आवश्यकता चुनौतियाँ एवं समाधान

ब्रह्मप्रकाश शर्मा * सुहेल खान **

प्रस्तावना – नैतिक मूल्य क्या है ? यह प्रश्न अपने आप में मूल्यवान है, क्योंकि नैतिक मूल्य का विचार मानव को स्वत: उस जीवन दृष्टि की ओर ले जाता है जो यह देखती है कि जीने के लिए किसका महत्व है। जो यह खोजती है कि व्यक्ति और समाज के लिए क्या कल्याणकारी है इसलिए नैतिक मूल्य को परिभाषित करना दृष्टि को परिभाषित करने के समान ही दुष्कर कार्य है तथापि उसके कार्य व्यापारों के आधार पर नैतिक मूल्य के स्वरूप को स्पष्ट करने का प्रयास किया जाता है।

नैतिक मूल्य वह है जो मानव इच्छा की तृप्ति करें, जो व्यक्ति तथा उसकी जाति के संरक्षण में सहायक हो। केवल वही परम् रूप से और साध्य रूप से मूल्यवान है जो आत्माओं के विकास या आत्म साक्षात्कार की ओर ले जायें। मूल्यों में मानव की जैविक से लेकर आध्यात्मिक तक सभी आवश्यकताओं का समावेश हो जाता है, जिनका मानव जीवन के लिए महत्व है एवं जिसके पाने के लिए व्यक्ति चेष्टा करते है। जिसके लिए वे जीवित रहते है तथा बडे से बडे त्याग करते है। इस प्रकार नैतिक मूल्य वह सत्य है जिसके लिए व्यक्ति जीता है और आवश्यकता पड़ने पर वह संघर्ष करने, दु:ख सहने तथा मृत्यु को भी स्वीकार करने के लिए तत्पर रहता है।

कई महापुरूष जैसे ईसा मसीह एवं गाँधीजी के नाम इसी सन्दर्भ में श्रद्धा से लिए जाते है, क्योंकि ये नैतिक मूल्य के लिए ही जिए और नैतिक मूल्य के लिए ही मृत्यु का वरण किया। वस्तुत: नैतिक मूल्य परिवर्तनशील समाज की वह धुरी है जिसके कारण समाज का अस्तित्व है । क्योंकि उपयोगिता या कल्याणकारिता की भावना ही समाज को स्थिर रखती है। व्यक्ति के आचरण और व्यवहार को समाज के समक्ष प्रस्तुत करने का कार्य नैतिक मूल्य ही करते है। नैतिक मूल्यों का अति गहरा सम्बन्ध व्यक्ति के व्यक्तित्व से होता है। नैतिक मूल्यों में दया, ममता, समता, करूणाशील, विवेक विनम्रता, क्षमा, बलिदान, त्याग, तपस्या जैसे गुणों का समावेश होता है। नैतिक मूल्य ऐसी आचरण संहिता या सद्गुण है, जिससे व्यक्ति अपने लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु जीवन पद्धति का निर्माण करता है तथा अपने व्यक्तित्व का विकास करता है। इसमें मनुष्य की धारणाएँ विचार, विश्वास, मनोवृत्ति, आस्था, आदि समाहित है। ये नैतिक मूल्य एक ओर व्यक्ति के अन्त:करण द्वारा नियमित होते है तो दूसरी ओर उसकी संस्कृति एवं परम्परा द्वारा क्रमश: सम्बल एवं परिपोषित होते है। यह भी कहा जा सकता है कि नैतिक मूल्य मनुष्य के अन्त:करण में जगती हुई वह शक्ति है जो उसे एक विशिष्ट प्रकार से कर्म करने के लिए प्रेरित करती है और उसके आचरण केा शासित करती है।

नैतिक मूल्यों का पतन – नैतिक मूल्यों में समय के साथ अन्तर आ रहा है। उदाहरण के लिए कलयुग के जीवन मूल्यों से हम प्राचीन मूल्यों सतयुग, त्रेता, द्वापर आदि की तुलना करें तो काफी अन्तर प्रतीत होगा। प्राचीन समय से देखे तो जो जीवन मूल्य सतयुग में थे। वे त्रेता में नहीं थे, जो त्रेता में थे वे द्वापर में नहीं थे तथा जो द्वापर में थे वे कलयुग में पूर्णत: समाप्त हो चुके है।

वर्तमान समय में हमारे व्यक्तिगत, पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, राष्ट्रीय एंव अन्तरराष्ट्रीय जीवन में तनाव के कारण दिन – प्रतिदिन घुटन बढ़ती जा रही है परिवार में छोटे – बडों का आदर नहीं करते है। पति – पत्नी के सम्बंध तनावपूर्ण है। भाई – भाई से प्रेम नहीं करता, सामाजिक जीवन में सहयोग की भावना समाप्त होती जा रही है। सामाजिक नियम एवं व्यवस्थाओं का उल्लंघन करते हुए हम संकोच नहीं करते है। प्रदर्शन, घेराव, तोड़ – फोड़, हिसांत्मक विद्रोह एवं आतंक हमारे जीवन में हर समय तनाव या भय पैदा करते रहते है। भ्रष्टाचार , कालाबाजारी, रिश्वतखोरी, तस्करी, मिलावट एवं काला धन आदि से सम्बन्धित गतिविधियाँ हमें दिन – प्रतिदिन व्याकुल करती रहती है। मानव जाति का स्वर्णिम युग समाप्त होता जा रहा है। समाजिक जीवन अस्त – व्यस्त हो रहा है। पारिवारिक जीवन दु:खद हो रहा है। गरीबों असहायों का शोषण बढ़ रहा है, व्यक्ति स्वार्थी, अवसरवादी, भोगी, चाटुकार एवं कर्तव्य विमुख हो रहा है। जीवन की शान्ति न जाने कहाँ भागी जा रही है। ये सभी बातें नैतिक मूल्यों का पतन नहीं है तो और क्या हैं ? वर्तमान समय में नैतिक मूल्य इतने गिर गये हैं कि जीने का अर्थ ही बदल गया है। हर काम में स्वार्थ भरा पड़ा है। वर्तमान समय में मनुष्य अत्यधिक स्वार्थी हो गया है। इसी कारण नैतिक मूल्यों का पतन हो रहा है। नैतिक मूल्यों के पतन के लिए काफी हद तक जिम्मेदार है हमारा समाज, हमारी शिक्षा। क्योंकि कोई भी मनुष्य जन्मजात खराब नहीं होता है, उसे वातावरण खराब बनाता है। जब बालक पैदा होता है तो वह सबसे प्रेम करता है। उसका हृदय पवित्र होता है। उसमें जाति – पाँति का भेदभाव नहीं होता। उसमें मानवीय मूल्य होते है। धीरे – धीरे वह बड़ा होता जाता है तो झूठ, स्वार्थ, लोभ, हिंसा एवं घृणा आदि जैसे अवगुण पनपने लगते हैं, वह इनके वशीभूत हो जाता है। कल तक हम जिन नैतिक मूल्यों को गिरा हुआ समझते थे। आज हम उन्हीं के पीछे भाग रहे है। शिक्षाविद, अधिकारी, राजनैतिक नेता, प्रेस आदि सभी नैतिक मूल्यों में गिरावट की बात करते है। जिसके कारण ही आज राष्ट्रीय, सामाजिक, राजनैतिक पारिवारिक तथा वैयक्तिक

* निर्देशक, जीवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी, धामनोद, जिला – धार (म.प्र.) भारत

जीवन में अनेक कठिनाईयाँ आ गई है। यह सार्वजनिक समस्या बन गई है। इसी प्रकार कई असामाजिक तत्व है जो हमारी राष्ट्रीय सम्पत्ति को नुकसान पहुँचातें है, इसे नष्ट करते है। उपर्युक्त सभी नैतिक मूल्य ऐसे है जो आधुनिक समाज में गिरते जा रहे है। सतयुग से कलयुग की ओर बढ़ते – बढ़ते हम देख रहे है कि प्राचीन नैतिक मूल्यों मे धीरे – धीरे कमी आ रही है। परिणाम स्वरूप नैतिक मूल्यों का ह्रास हो रहा है।

शिक्षा एंव गुणवत्ता – शिक्षा व्यक्ति की अन्तर्निहित शक्तियों को उजागर करती है, उसके देवत्व का दर्शन कराती है, मानवीय मूल्यों की अनुभूति का उसे अवसर प्रदान करती है और स्वानुभूति का मार्ग प्रशस्त करती है। शिक्षा द्वारा ऐसे वातावरण की सर्जना अभीष्ट है जिससे व्यक्ति अपनी नैसर्गिक क्षमताओं का पूर्णतया विकास करने की ओर अग्रसर हो सके। परन्तु इस कार्य को करने में वर्तमान शिक्षा प्रणाली की असफलता जगजाहिर है। वर्तमान भारतीय शिक्षा प्रणाली से बहुतों को असंतोष है। शिक्षा जागत में व्याप्त प्रवृतियों में से अधिकांश से हम असंतुष्ट ही नहीं क्षुब्ध है। स्वतंत्रता के पश्चात् भारत में शिक्षा का प्रसार अत्यन्त तीव्र गति से हुआ है। प्राथमिक विद्यालयों से लेकर विश्वविद्यालय तक के सभी स्तरों की शिक्षण संस्थाओं मे भारी वृद्धि हुई है। फलत: प्रमाणपत्र एवं उपाधिधारियों की संख्या में भी अप्रत्याशित बढ़ोतरी हुई है। किन्तु यह परिणाम गुणात्मक की कसौटी पर अपेक्षानुसार खरा और संतोषप्रद नहीं उतरा है। आज वस्तुत: आवश्यकता इस बात की है कि छात्र सोचने, समझने और आचार – विचार के क्षेत्र में संस्कारित एवं उन्नत स्तरों के प्रतिनिधि बने। षिक्षित व्यक्तियों में कदाचारों एवं हीन भावना के स्थान पर मानवता के श्रेष्ठ गुण 'वसुधैव कुटुम्बकम्' आचार, उदार धार्मिकता एवं वैचारिक उच्चता और जीवन में सरलता के गुण प्रतिष्ठित हो।

विश्व में ही नहीं स्वतन्त्रोतर भारत में भी नैतिक मूल्य ह्रास तेजी से हो रहा है। परिणाम स्वरूप राष्ट्रीय जीवन, सामाजिक जीवन आदि में प्रदूषण व्याप्त हो गया है। नैतिक मूल्यों की यह संकट ग्रस्त स्थिति जिस प्रकार जीवन के अन्य क्षेत्रों में व्याप्त है उसी प्रकार विद्यालयों, महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों के छात्रों शिक्षकों एवं अन्य कर्मचारियों में व्याप्त है। विकास एवं शांति प्रिय जीवन के लिए यह स्थिति अत्यंत घातक है। आवश्यकता इस बात है कि शिक्षा की प्रक्रिया का पुन: अभिविन्यास किया जाए और उसके माध्यम से ऐसे उदात्त नैतिक मूल्यों की शिक्षा दी जाए जिससे शिक्षित युवक राष्ट्र की अमूल्य सम्पत्ति बन सके। शिक्षा जीवन से अलग नहीं है। शिक्षा जीवन का एक पक्ष है और इस रूप में शिक्षा के प्रमुख प्रश्न जीवन के प्रश्नों से स्वत: जुड़ जाते है। जीवन के इन मूलभूत प्रश्नों की व्याख्या दर्शन करता है। अतएव दर्शन और शिक्षा दोनों सहज भाव से एक – दूसरे से जुड़ जाते है। शिक्षा दर्शन शिक्षा की समस्याओं पर तर्कपूर्ण चिन्तन करता है और उनका तर्क सम्मत समाधान खोजता है। दर्शन स्पष्ट करता है कि वस्तुत: हमारी शिक्षा के उद्देश्य क्या हो, हमारा पाठ्यक्रम क्या हो और कैसा हो, शिक्षण विधियाँ क्या हों और वे कहाँ, कैसे प्रयुक्त की जाए। इन सभी शैक्षिक प्रश्नों का तार्किक समाधान दर्शन प्रस्तुत करता है। स्पष्टत: शिक्षा दर्शन शैक्षिक आदर्शो एवं नैतिक मूल्यों का निर्धारण करता है साथ ही यह बतलाता है कि शिक्षा का मापदण्ड क्या हो। नैतिक मूल्यों को कायम रखने के लिए सर्वप्रथम तो शिक्षा नीति में सुधार अपेक्षित है। वर्तमान समय में गिरते हुए नैतिक मूल्यों से समाज को बचाना है। वर्तमान समय के नैतिक मूल्यों को ऊपर उठाने के लिए शिक्षा को ऊपर उठाना आवश्यक है। वर्तमान समय में छात्र ही भावी समाज के निर्माता है। अत: छात्रों को ऐसी शिक्षा दीक्षा देनी चाहिए जिनसे उनके नैतिक मूल्यों का समुचित विकास हो तथा शाश्वत मूल्यों का संरक्षण हो। छात्रों को इसके लिए मूल्यपरक शिक्षा देनी चाहिए । नैतिक मूल्यों की गिरावट को रोकने के लिए सर्वप्रथम छात्रों की गिरावट को रोकना होगा। छात्रों में गिरावट का मुख्य कारण है शिक्षा में गिरावट। अत: शिक्षा में गिरावट को रोकना होगा। शिक्षा समाज की वह सीढ़ी है। जिस पर पाँव रखकर व्यक्ति अपने संस्कारों को सँवारता है और शिक्षा को दिशा प्रदान करता है।

वर्तमान शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जिसके अन्तर्गत बालक सत्य के आधार पर अहिंसा द्वारा प्रेमपूर्वक जीवन यापन करना सीखे। हमें ऐसा मनुष्य बनाना है जो स्वयं स्वेच्छा से शाश्वत नैतिक मूल्यों के पालन का प्रयास करें, जिससे व्यक्ति समाज सभी का कल्याण संभव हो। इसके लिए शिक्षा द्वारा व्यक्ति की आत्मा को जाग्रत करना आवश्यक है, जिसके लिए आध्यात्म की आवश्यकता है । वर्तमान समय में विज्ञान ने आध्यात्म की जडे लगभग उखाड़ फैकी है। शिक्षा में आध्यात्म को भी स्थान दिया जाना चाहिए। तभी नैतिक मूल्यों का धाराशायी वृक्ष पुन: खड़ा हो सकता है।

हमारा संविधान नैतिक मूल्यों की अमूल्य निधि है। भारतीय संविधान की प्रस्तावना में जो मूल्य बताए गए है उन्हें शिक्षा द्वारा छात्रों के जीवन में उतारा जा सकता है। वे मूल्य है – प्रजातंत्र, समाजवाद धर्म निरपेक्षता, न्याय, सहिष्णुता, व्यक्ति की गरिमा, विचार एवं अभिव्यक्ति आदि। ईमानदारी, उपकार, विनम्रता, निस्वार्थता, समभाव, तन, मन, कर्म, वचन की एकता के गुण इन्हीं नैतिक मूल्यों को अपने छात्रों के जीवन में उतारना है। बालक को मूल्यपरक शिक्षा देनी चाहिए। मूल्यपरक शिक्षा में शिक्षार्थी को अधिक से अधिक अनुभव से जोड़ना चाहिए तथा विद्यालय में महापुरूषों की जयंतियाँ, धार्मिक उत्सवों का भी आयोजन करना चाहिए। विद्यालय में समय–समय पर भाषण, संगोष्ठी, निर्देशन आदि को अपनाया जा सकता है।

उपदेश से उदाहरण श्रेष्ठ है। अत: शिक्षक को व्यवहार में श्रेष्ठता लानी होगी। उसका व्यवहार छात्रों के लिए अनुकरणीय बन जाये। युवकों को यह महसूस कराया जाये की वह किस तरह से शोषण असुरक्षा को रोक सकते है। शिक्षा ऐसी दी जानी चाहिए जिससे छात्र में सत्य, सहयोग, कर्तव्यपरायणता आदि का विकास हो।

निष्कर्ष – वर्तमान में पश्चिमी संस्कृति ने मानवीय व नैतिक मूल्यों को पतन की कगार पर लाकर खड़ा कर दिया है। आज संयुक्त परिवारों की परम्परा टूटती जा रही है, इन्सान ही इन्सान के खून का प्यासा बन बैठा है जो नैतिकता एंव मानवता मनुष्य के हदय में विराजित होती थी वह आज कहीं देखने को नहीं मिलती । इसलिए समाज सुधार व व्यक्तिगत निर्माण में नैतिक मूल्यों की पुन: स्थापना पर अत्यधिक बल दिया जाना चाहिए। इस सन्दर्भ में हम निम्न बिन्दुओं का अध्ययन कर सकते है।

1. चरित्र निर्माण में सहायक।
2. उच्च आदर्शो की स्थापना।
3. धर्म एवं आध्यात्म की भावना।
4. समाज एवं राष्ट्र का चहुँमुखी विकास।
5. देश मे शांति सुरक्षा एवं सौहार्द्रपूर्ण वातावरण का निर्मित होना।
6. समाज में हिंसक घटनाओं को रोकते हुए स्वस्थ समाज की स्थापना हेतु महत्वपूर्ण।

उपरोक्त के आधार पर यह कहा जा सकता है कि नैतिक मूल्य ही व्यक्ति के चरित्र का निर्माण करते हुए उसे संस्कारों का प्रणेता बनाने की दिशा में अग्रसर होते हैं। समाज के अनैतिक तत्वों द्वारा कि जाने वाली हिंसक घटनाएँ नैतिक मूल्यों के पतन के कारण ही जन्म ले रही है, जिसपर नियंत्रण पाना

वर्तमान युग में आवश्यक प्रतीत होता है। धर्म और आध्यात्म की ओर प्रवृत्ता करने में भी नैतिक मूल्यों की भूमिका अहम् होती है। नैतिक संस्कारों के संरक्षक कहलाने वाले मनुष्य ही समाज और राष्ट्र के विकास में अपनी भागीदारी दे सकते है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. शिक्षा के दार्शनिक और समाज शास्त्रीय आधार (रमन बिहारी लाल)
2. उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक (रामशकल पाण्डेय) श्री विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा।
3. नैतिक शिक्षा शिक्षण (के सी मलैया) आर.एस.ए. इन्टरनेशनल आगरा।
4. स्थानीय समाचार पत्र आदि।

****

वर्तमान परिपेक्ष्य में नैतिक मूल्यों की आवश्यकता, चुनौतियाँ एवं समाधान

तृप्ति नेगी * डॉ. धीरज नेगी **

प्रस्तावना – मनुष्य एक सामाजिकरण प्राणी है। सामाजिकरण की इस प्रक्रिया में मनुष्य ने अपने लिये कुछ नियम बनाये और एक संयमित जीवन के लिये स्वयं को तैयार किया। मनुष्य के जीवन में इन नियमों और संयमन का बहुत महत्व है। इनसे ही मनुष्य की अपनी पहचान बनती है। किसी का अच्छा या बुरा होना उसके द्वारा इन नियमों और संयमन के पालन के स्तर से निर्धारित होता है। इन्हें ही हम जीवन के मूल्य मानते हैं। नैतिक मूल्य एक तरह से भारतीय संस्कृति की पहचान है जो पुरखो से हमे विरासत में मिली अनमोल धरोहर है। ये सम्पूर्ण विश्व में भारत की पहचान का प्रतीक है।

भारतीय जीवन मूल्यों की विशेषता आदर्श और यथार्थ, बाह्य और आंतरिक, धर्म और कर्म, भोग और त्याग, समाज और देश, बुद्धि और हृदय, लोक और परलोक, कर्तव्य और अधिकार, अर्थ और काम, मानव और प्रकृति में सुतुलन और समन्वय का भाव रखना है। भारतीय जीवन मूल्यों में कर्म की प्रधानता रही हैं। मूल्यों की आवश्यकता व्यक्ति, समाज तथा राष्ट्र तीनों को है। व्यक्ति व्यक्तिगत, सामाजिक तथा राष्ट्रीय जीवन मूल्यों पर आधारित होता है। मूल्य उन्हें नियंत्रित तथा निर्देशित करते हैं। मूल्यों की व्यवस्था और निर्वहन परिवार से प्रारंभ होता है, जो समाज में स्थापित मानक मूल्यों पर आधारित होता है।

एक सशक्त राष्ट्र का निर्माण उस राष्ट्र में रहने वाले लोगों के माध्यम से ही संभव है। सम्पूर्ण विश्व में शिक्षा को राष्ट्र निर्माण की चारित्रिक गतिविधि के रुप में मान्यता प्रदान की गई है। शिक्षाविदों का मानना है कि शिक्षा ज्ञान रुपी आलोक और आध्यात्मिक शक्ति का एक स्त्रोत है, जो हमारे शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक और आध्यात्मिक विकास यात्रा के लिये हमारी अन्तर्हित प्रकृति में आवश्यक परिवर्तन लाती है। इसके लिए समाज में शिक्षा का स्तर, उसकी गुणवत्ता और व्यवस्था का उत्तम होना अपरिहार्य है। अच्छी शिक्षा केवल ज्ञान और हुनर ही प्रदान नहीं करती अपितु मूल्यों को प्रतिष्ठापित भी करती हैं। शिक्षार्थी की नैसर्गिक प्रवृत्तियों को प्रशिक्षित करते हुये सही दुष्टिकोण और आदतों का निर्माण करती है। हमारे देश में शिक्षा को हमेशा मूल्यों को प्रतिष्ठापित करने की प्रक्रिया के रुप में मान्यता दी गई है। इसलिए नैतिक और मानवीय शिक्षा हमारी शिक्षा व्यवस्था का एक अभिनव अंग है। वर्तमान परिवेश में वैश्विक अर्थव्यवस्था ज्ञान पर आधारित है। इसी संदर्भ में ज्ञान प्रदान करने वाली इकाई के रुप में शिक्षा किसी देश के विकास की मुख्य धारा से जुड़ी हुई एक महत्वपूर्ण कड़ी है।

मनुष्य के समाजीकरण की दूसरी कड़ी के रुप में शैक्षणिक संस्थाएं विशेष महत्व रखती हैं। यह मानव जीवन का दूसरा पड़ाव है जहाँ पारिवारिक अनौपचारिक शिक्षा के बाद व्यक्ति औपचारिक और संस्थागत शिक्षा की ओर कदम रखता है। परिवार के लोगों के अलावा उसका संपर्क अन्य संवर्ग के व्यक्तियों से होता है जिनमें शिक्षक और सहपाठी प्रमुख रुप से उसके जीवन को प्रभावित करते हैं। नैतिक मूल्यों को प्रदान करने में इन दोनों की भूमिका परिवार के समान ही बहुत महत्वपूर्ण होती हैं। विशेष रुप से बच्चों के बाल मन पर शिक्षक का प्रभाव गहरा और लगभग स्थायी रहता है। शिक्षक की कही गयी हर बात विद्यार्थी के लिए ग्राह्य और अंतिम होती हैं। यही कारण है कि नैतिक मूल्य शिक्षा के बिना अधूरा सा जान पड़ता है।

शिक्षा मनुष्य के समाजीकरण और नागरिकों के निर्माण को सषक्त आधार प्रदान करती हैं। शिक्षा समुदाय के आत्मसातीकरण, समाकलन और विकास का ठोस माध्यम भी है। ऐसा समुदाय ही देश में मूल्य और संस्कृति को सहेज कर रख पाता है। सही शिक्षा जीवन के प्रत्येक पहलू तक पहुंच रखती हैं। अच्छी शिक्षा वह होगी जो हमारे भूतकाल से उत्तम बातों को ग्रहण कर सके, वर्तमान का श्रेष्ठ उपयोग कर सके, साथ ही भविष्य की दिशा भी निर्धारित कर सके।

व्यक्ति के निर्माण और समाज के उत्थान में शिक्षा का अत्यधिक महत्वपूर्ण योगदान होता है। प्राचीन काल की भारतीय गरिमा ऋषियों द्वारा संचालित गुरुकुल पद्धति के कारण ही ऊँची उठ सकी थी। व्यक्ति का बौद्धिक और चारित्रिक निर्माण उपलब्ध शिक्षा पर निर्भर करता है। व्यक्तियों का समूह ही समाज है। जैसे व्यक्ति होंगे वैसा ही समाज बनेगा। किसी देश का उत्थान या पतन इस बात पर निर्भर करता है कि इसके नागरिक किस स्तर के है और यह स्तर वहाँ की शिक्षा पद्धति पर निर्भर रहता है। हमारे देश में शिक्षा पद्धति कुछ अजीब है। यहाँ नौकरी भर कर सकने में समर्थ बाबू लोग ढाले जाते हैं। हर वर्ष डिग्री लेकर निकलने वाले इन लाखों छात्रों को नौकरी कहाँ मिल पाती हैं। वे बेकार घूमते है और लंबी चौड़ी जो महत्वाकांक्षाएँ संजोकर रखी गई थी उनकी पूर्ति न होने पर संतुलन खो बैठते है और तरह–तरह के उपद्रव करते है। हमारे यहाँ शिक्षित वर्ग, अशिक्षितों की अपेक्षा देश के लिए अधिक सिर दर्द बनता जा रहा है। इसमें बहुत बड़ा दोष शिक्षा पद्धति का है, जिसमें चरित्र गठन, भावनात्मक उत्कर्ष, विवेक का तीखापन तथा आर्थिक स्वावलंबन की दृष्टि से खोखलापन ही दीखता है।

किसी भी राष्ट्र के समाज के उच्चतम विकास में शिक्षा विशेषकर उच्च शिक्षा व तकनीकी शिक्षा अहम् होती है क्योंकि किसी भी देश की आर्थिक प्रगति व विकास को उसकी विश्वस्तरीय उच्च शिक्षा के साथ जोड़कर ही परखा जाता है। गुणवत्ता पूर्ण शिक्षा व प्रबन्धन अर्थात् शिक्षा की जटिलता

* शोधार्थी (रसायन शास्त्र) माँ नर्मदा डिग्री कॉलेज, धामनौद, जिला–धार (म.प्र.) भारत
** शोध निर्देशक (ऐकेडमिक डीन) माँ नर्मदा डिग्री कॉलेज, धामनौद, जिला–धार (म.प्र.) भारत

और अवधारणाओं को दक्षता एवं प्रभावशीलता के साथ व्यक्त करना क्योंकि शिक्षा एक ऐसा अभिकरण है जो समाज का निर्माण करती है एवं ऐसा सशक्त यंत्र है जो समाज में परिवर्तन की क्षमता रखती है। इससे विद्यार्थियों में चारित्रिक दृढ़ता द्वारा विश्व पटल पर एक नई पहचान का सबब बनती है।

शिक्षा व्यक्ति के जन्म से आरंभ होकर उसकी मृत्यु तक अनवरत् चलती है। शिक्षा के द्वारा ही समाज अपनी भावी पीढ़ी को उच्च आदर्शो, अभीष्ट आशाओं व सनातन मूल्यों, विश्वासों, प्राचीन परम्पराओं से युक्त अपनी सांस्कृतिक धरोहर को हस्तांतरित करता है, परन्तु वर्तमान शिक्षा का एक उद्देश्य धन अर्जन करना भी है। वर्तमान भारतीय परिप्रेक्ष्य में व्यक्ति की आशंका व उद्देश्य उसकी शिक्षा की दशा व दिशा को निर्धारित करती है। भारत में जैसे-जैसे जनसंख्या बढ़ रही हैं, बेरोजगारी की समस्या आम होती जा रही हैं। भारत की वर्ष 2011 की जनसख्या के अनुसार आने वाले वर्षो में भारत में 15 से 60 वर्ष तक के आयु की जनसंख्या का प्रतिशत 67 प्रतिशत होगा। विशेष रुप से ऐसे समय में जब विश्व के कई विकसित देशों में कार्यशील जनसंख्या का प्रतिशत कम होगा, भारत में यह सर्वाधिक होगी।

वर्तमान समय में सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न मानव मूल्यों के विघटन, संरक्षण और उनके मूल्यांकन पर पुर्नविचार से संबंधित है। संपूर्ण परिवेश में मानवीय संकट तीव्र रुप से दुष्टिगोचर हो रहा है। यदि हम नैतिक मूल्यों की स्थापना को राष्ट्रीय आवश्यकता निरुपित करते हैं तो सर्वप्रथम हमें अपनी शिक्षा व्यवस्था पर ध्यान देना होगा और इसमें अधिकतम निवेश भी करना होगा। राजनैतिक इच्छा शक्ति के बिना कोई भी नीति सही रुप से क्रियान्वित नहीं हो पाती है, चाहे नीति किसनी ही अच्छी क्यों न हो। देश के राजनैतिक व्यवस्थापकों के लिये शिक्षा के महत्व को समझना बहुत ही जरुरी है। शिक्षा से तात्पर्य केवल देश में शिक्षित लोगों का प्रतिशत बढ़ाना मात्र नहीं है बल्कि शिक्षा के प्रचार-प्रसार और उसकी उपयोगिता का पैमाना भी आवश्यक है। ऐसे में शिक्षा में सही समय पर पर्याप्त निवेश कर सम्पूर्ण व्यवस्था को सुनियोजित करना राष्ट्र की प्राथमिकता होनी चाहिए।

वर्तमान शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार की आवश्यकता है इस लक्ष्य को पाने के लिए शिक्षकों के प्रशिक्षण पर और अधिक बल देने की आवश्यकता है क्योंकि प्रारंभिक शिक्षा का व्यापक प्रभाव उच्च शिक्षा पर पड़ सकता है। शिक्षाविदों के अनुसार आधुनिक ज्ञान, विज्ञान और तकनीकी अनुरुप हमें शिक्षा को बनाना चाहिये। आज युवा वर्ग का रुझान व्यावसायिक पाठ्यक्रमों की ओर अधिक है। अत: हमारी शिक्षा पद्धति एवं शिक्षण प्रणाली में व्यापक सुधार की आवश्यकता है। इसके लिए आवश्यक है कि शिक्षा के क्षेत्र में नित्य नव प्रयोग न कर ऐसी शिक्षण विधियाँ व पाठ्यक्रमों का समावेश किया जाये जो विद्यार्थियों की आवश्यकतानुसार व रोजगारोन्मुखी हो।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. तिवारी, प्रो. शुभा (प्रधान सम्पादक) - नैतिक मूल्य और भाषा, मध्यप्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, 2014
2. नाजिरुद्दीन, बशीर शेख - हिंदी साहित्य में नैतिक मूल्य, आधार पब्लिकेशन, अमरावती, महाराष्ट्र, 2013
3. रचना, पत्रिका - सितंबर-अक्टूबर 2011, मध्यप्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, म. प्र.
4. कोठारी, अतुल - आलेख, शिक्षा संस्कृति न्यास, नई दिल्ली
5. विकीपीडिया।

****

वर्तमान परिवेश और नैतिक मूल्य

डॉ. कल्पना कोठारी *

प्रस्तावना – 'वर्तमान परिवेश में नैतिक मुल्य एक ऐसी ताकत है जो मनुष्य को अपनी अज्ञात अपरिमित शक्तियों के प्रति जागरूक बनाती है।'

अच्छी शिक्षा केवल ज्ञान और हुनर ही प्रदान नहीं करती अपित मूल्यों को प्रतिष्ठापित भी करती है। किताबी ज्ञान एवं उच्च डीग्रियां हमारी शैक्षणिक योग्यता और पद को बढाने में सहायक होती है। जबकि हमारे आदर्शात्मक व्यक्तित्व का निर्माण तब तक अधूरा है जब तक इन तमाम उच्च डीग्रियों या शैक्षणिक योग्यता के साथ नैतिक मुल्य या नैतिक आचरण न जुड़ा हो। मनुष्य का उच्च शिक्षित एवं नैतिक आचरण ही अन्य लोगों को भी सशक्त करेगा। और देश को किसी भी अप्रत्याशित गंभीर सामाजिक, राजनैतिक संकटों से मुक्त कराने में प्राथमिकता के आधार पर सहायक होगा। यही मूल्य नैतिकता से जुड़कर वर्तमान परिवेश में मनुष्य की इच्छाओं को तृप्त कर उसे तनाव मुक्त जीवन प्रदान करते है।

भारतीय संस्कृति के अनुसार जीवन में मूल्य ही सत्य होते है चाहे वे नैतिक हो या मानवीय। किन्तु आधुनिक परिवेश में मानव इन मूल्यों से दूर होता जा रहा है, क्योंकि उस पर आधुनिक सभ्यता का प्रभाव दिखाई दे रहा है। आज मनुष्य अपनी अधिकांश आवश्यकताएं आधुनिक एवं विकसित यंत्रों के माध्यम से पूर्ण कर लेता है। जिसमें भावनात्मक या संवेगात्मक का अभाव होता है और यही अभाव आज हमारे आपसी अपनत्व के संबंधों को कमजोर कर रहे है। एवं अपनेपन की जगह परायेपन को बढावा दे रहे है। नैतिक मूल्यों का अहसास अपनी मानवीयता एवं आपसी घनिष्ठता से होता है न कि भौतिक सुख सुविधाओं से ।

जिस प्रकार मनुष्य को जीवित रहने के लिए रोटी, कपड़ा और मकान तथा हवा और पानी आवश्यक है। उसी प्रकार आदर्श व्यक्तित्व निर्माण हेतु नैतिक एवं संयमी आचरण आवश्यक है। केवल अच्छे वस्त्र, महंगा मोबाईल एवं महंगी विलासिता की (भौतिक) वस्तुओं को अपनाने से अपने को आदर्श एवं उच्च पदाधिकारी साबित नहीं कर सकते।

जीवन में संयमी आचरण सदैव सर्वोपरी रहा है, क्योंकि यह संयमी आचरण व्यक्ति के जीवन में संतुलन बनाने में मदद्गार होता है एवं व्यक्ति को अनेकों समस्याओं से बचाकर सुरक्षित करता है। हमारे देश में बढते अपराधों पर नियंत्रण में भी संयमी आचरण एवं नैतिक मूल्य योगदान देते है। एक महान विद्वान ने कहा है **'राजा तो अपने देश में पूजा जाता है किन्तु नैतिक मूल्य तो सर्वत्र ही पूज्यनीय है'।**

आचरण का महत्व किसी से छिपा नहीं है। आचरण लिखकर बताया नहीं जा सकता। वह तो हमारे जीवन की जीवन्त अभिव्यक्ति है। इस अभिव्यक्ति में संयम और नैतिकता का प्रभाव झलकता है।

जैसे-जैसे इतिहास आगे बढता जाता है परिवर्तन आते ही रहते है। वैसे-वैसे मनुष्य की जीवनशैली भी अधिक प्रभावित होती है। लोगों की रूचि सामर्थ्य और दशाएं बदलती रहती है। आर्थिक, सांस्कृतिक परिस्थितियां भी इस दौर में शामिल हो जाती है। ऐसे अवसरों पर जीवन मूल्य संक्रमण काल से गुजरते है। ऐसे समय में हम कहीं न कहीं सुकुन भरे वातावरण को खोजते है और सोचते है कि तनाव भरे जीवन से कैसे मुक्ति मिलेगी ? नैतिक प्रेरणा व्यक्ति के अंदर का कार्य व्यापार है जो किसी व्यवहार को पूरा करने, लक्ष्य प्राप्ति के लिए निरन्तर उसे प्रेरित करती है। यही प्रेरणा हमारे जीवन को सही मार्ग पर चलने की प्रेरणा देती है, जो हमारे जीवन का लक्ष्य है।

हमारे यहां आर्थिक सामाजिक एवं सांस्कृतिक विषमताएं है। भाषा, धर्म और जाति के आधार पर मनुष्य कई खेमों में बटा है। वह अलग-अलग व्यवस्थाओं में जीता है। परमेश्वर के भिन्न रूपों को पूजता है और अलग-अलग भाषाएं बोलता है। उसमें एक ही बात समान रूप से लागू होती है। वह है जीवन के मूल्य। जो हर परिस्थिति में एक समान है। जिनका निर्वाहन प्रत्येक व्यक्ति के लिए उसी अनुपात में आवश्यक है। अन्यथा जीवन असुरक्षित ही है। इस परिवर्तित परिस्थिति जिससे विकास के साथ-साथ गंभीर अपराधों एवं असुरक्षित वातावरण को भी बढावा दे रहे है। इन सब पर नियंत्रण एवं सुरक्षित जीवन जीने हेतु नैतिक मूल्य को अपनाना अनिवार्य आवश्यकता हो गयी है। तभी हम देखते है कि शिक्षा जगत में भी नैतिक मूल्यों को पाठ्यक्रम में अनिवार्यता के आधार पर जोड़ा गया है। जिससे विद्यार्थी नैतिक शिक्षा द्वारा इसके मूल्यों को समझ सके एवं जीवन में उतार सके। स्वामी विवेकानंद के अनुसार **'विद्यार्थी का चरित्र ही उसके देश का नींव का पत्थर है।'** मन में छिपी असीम शक्ति ही मनुष्य को उन्नति की ओर ले जाती है। और यह मानसिक शक्ति शारीरिक शक्ति पर राज करती है। क्रोध, मोह, घृणा, अहं और आसक्ति ऐसे भाव है जो मनुष्य की सोचने समझने की शक्ति को समाप्त कर देती है, और मनुष्य खुद अपने विनाश का कारण बन जाता है। इस विनाश से बचने के लिए मनुष्य को नैतिक मूल्य के साथ आत्ममंथन करना चाहिए। तभी वह वर्तमान परिवेश से आत्मसात कर आपसी संतुलन बना पायेगा। तभी आदर्श व्यक्तित्व का निर्माण होगा। महान विद्वान रिचर ने कहा है **'व्यक्तित्व की सभी जगह रक्षा और सम्मान करना चाहिए क्योंकि यह सभी अच्छाईयों का आधार है।'**

चरित्रता का आधार सत्यता, सदाचार, नि:स्वार्थ, त्याग, उदारता एवं समस्त जिम्मेदारियों के प्रति ईमानदारी है। यह सारे मूल्य नैतिक मूल्यों से कही न कही जुड़े है। इसी कारण वर्तमान परिवेश में नैतिक मूल्यों को अनिवार्य आवश्यकताओं में से एक आवश्यकता महसूस किया जा रहा है।

* विभागाध्यक्ष (समाजशास्त्र) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सेंधवा (म.प्र.) भारत

नैतिक मूल्य की कड़ी में कुछ शक्तियां उसकी सहायक होती है – सुझबूझ, कर्मठता, लगन, निर्णय लेने की क्षमता, व्यवस्था प्रबंध, प्रशासकीय क्षमता, व्यक्तिगत संबंध शक्ति, वाक पटुता, वाणी की मधुरता, संयम, धैर्य, आत्मविश्वास आदि। ये नैतिक मूल्यों से जुड़ी ऐसी शक्तियां है जो किसी भी व्यक्ति को सफलता के शिखर पर पहूंचा देती है। और यह काबिलियते उसी व्यक्ति के पास हो सकती है जो आंतरिक तौर पर जागा हुआ है अर्थात सदैव अपने आचरण के प्रति सजग हो। जैसे प्रकृति की आज्ञा मानकर हम उसका नेतृत्व करते है। आप कुछ भी करे किसी भी क्षेत्र में कार्य करे तथा कैसी भी स्थिति क्यों न पेश आये आप आशा का दामन कभी न छोड़े। एक क्षण के लिए भी निराशाा को स्वयं पर हावी न होने दे। एक पल के लिए भी यदि आपने निराशा को अपने मन में स्थान दिया तो समझिए की आपके पतन की शुरूआत होने में देर नहीं लगेगी। अत: आशावादी बने। आशावादी वही बनते है जो धैर्यवान होते है और यह धैर्यवान बगैर नैतिक आचरण के संभव नही। इन सबके बगैर प्रभावशाली व्यक्तित्व संभव नही। फैशनेबल कपड़े पहनने से, किसी की हेयर स्टाईल चूरा लेने से, किसी की बोलने की स्टाईल की नकल करने से आपका व्यक्तित्व एक तमाशा तो बन सकता है मगर नैतिक प्रभावशाली व्यक्तित्व नही।

'गुण न हो तो रूप व्यर्थ है,
विनम्रता न हो तो ज्ञान व्यर्थ है,
उपयोग न आवे तो धन व्यर्थ है,
साहस न हो तो शस्त्र व्यर्थ है,
नैतिक आचरण न हो तो जीवन व्यर्थ है।'

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मौलिक।
2. चुन्नीलाल सलूजा – बच्चो की प्रतिभा कैसे उभारे – पुस्तक महल, खारी बावड़ी, दिल्ली ।
3. धरम बारिया – भागो मत जागो – साधना पब्लिकेशन।
4. डॉ. शुभा तिवारी – नैतिक मूल्य और भाषा – मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल।

****

नैतिक मूल्यों के विकास में राष्ट्रीय सेवा योजना की भूमिका

डॉ. ज्योति ढोले * डॉ. बी.एस. निगवाले * *

शोध सारांश – मानवीय जीवन के साथ नियम व कानून उसके साथ जुड़ गए थे। समय बीतने के साथ ही इन मूल्यों में भी परिवर्तन होने लगे। उचित अनुचित की परिभाषाएं बदलने लगी। विकास के नये आयाम व वैज्ञानिक प्रगति ने नैतिक मूल्यों के गिरावट में महत्वपूर्ण योगदान दिया। जैसे–जैसे विकास होता गया नैतिक मूल्य गिरते चले गए। नैतिक मूल्यों की अति गिरावट ने इस विषय पर मानव का ध्यान आकर्षित किया। समाज को जीवित रखने के लिए व्यक्तित्व के सर्वोच्च मूल्यों की पूर्णता का प्रयास किया जाना चाहिए। इसी ध्येय की पूर्ति के लिए राष्ट्रीय सेवा योजना की स्थापना की गई और इसके उद्देष्यों में सामाजिक सहयोग, कमजोर वर्ग की सहायता, विद्यार्थियों में लोकतान्त्रिक नेतृत्व, कार्यक्रम संरचना एवं विकास के क्षेत्रों में दक्षता–निपुणता का विकास, आत्मानुशासन की भावना आदि को शामिल किया गया। राष्ट्रीय सेवा योजना के यही उद्देश्य सामाजिक नैतिक मूल्यों बढ़ाने के औजार साबित हो सकते है।

शब्द कुंजी– नैतिक मूल्य, राष्ट्रीय सेवा योजना।

प्रस्तावना – मनुष्य का जीवन प्रारम्भ होने के साथ ही उनके दायित्व व कर्त्तव्यो का निर्धारण हो गया था। इन कर्त्तव्यो व दायित्वों के निवर्हन के लिए उसे नैतिक जिम्मेदारियां दी गई। मनुष्य प्राकृतिक व शारिरिक व्याधियों को दैवीय प्रकोप मानता था और इन प्रकोपों से बचने के लिए वह प्राकृतिक व मानवीय नियमों का पालन करता था। वास्तव में देखा जाए तो यही नियम कालान्तर में नैतिक मूल्य कहलाए गए। यह नैतिक मूल्य ही है जो मानव के कार्य व व्यवहार को निर्धारित करते है। कुछ नैतिक मुल्य हमें बताते है कि हमें माता पिता की सेवा करना है, झुठ नहीं बोलना चाहिए, गुरूजनों का आदर करना चाहिए, छोटो का ध्यान रखना चाहिए आदि। देखा जाए तो हम इन नियमों का पालन किसी कानूनी शक्ति के दबाव में नहीं करते, बल्कि यह हमारी आत्मा की पुकार होते है।

नैतिकता क्या है, साधारण शब्दों में कहे तो जिस चीज को करने से आपको बुरा लगे और जिस काम को करने से आत्मा प्रसन्न हो वही नैतिकता है। गांधी जी ने अपनी आत्मकथा में नैतिकता को परिभाषित करते हुऐ कहा कि, नैतिकता आत्मा की पुकार है। इसी नैतिकता के आधार पर गांधी जी ने पुरे विश्व में अपना सिक्का चलाया।

सामान्य व्यक्ति नैतिकता का दायरा स्वयं निर्धारित करता है चाहे व समाज के डर से हो या स्वयं के विवेक से। नैतिकता जीवन को सूचारू रूप से चलाने के आधार है, परन्तु आज हम नैतिक पतन की दुहाईयां दे रहे है। सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक आदि क्षेत्रों में मूल्यों के ह्यास को समझने की कोशिश्र कर रहे है।

शोध उद्देश्य–

1. नैतिक मूल्यों के पतन के कारण जानना।
2. नैतिक मूल्यों के विकास में राष्ट्रीय सेवा योजना की भूमिका बताना।
3. समाज में नैतिक मूल्यों को बढ़ाने हेतु सुझाव।

नैतिक पतन के कारण – नैतिक मूल्यों का गिरना कोई आकस्मिक घटना नहीं बल्कि समय बीतने के साथ ही इन मूल्यों में भी परिवर्तन होते गये। कई कारण इन परिवर्तन में शामिल हुए, उनमें से कुछ इस प्रकार है–

1. **प्रथम विश्वयुद्ध –** प्रथम विश्वयुद्ध नैतिक मूल्यों के पतन कि शुरूआत थी जब एक देश ने दुसरे देश पर आधिपथ्य के लिए खून की नदियां बहा दी। सभी लोग सुख–विलास के पीछे भागने लगे और उन पर अमीर बनने का जुनून सवार हो गया। ऐसे हालात में जितने भी पुराने उसूल और नैतिक सिद्धांत थे, उन सबको ठुकरा दिया गया। उनके बदले लोग 'सब चलता है' रवैया अपनाने लगे।
2. **द्वितीय विश्वयुद्ध –** द्वितीय विश्वयुद्ध नैतिकता कि गिरावट का भयंकर स्वरूप था। इस समय महामंदी का दौर था कई देश विस्फोटक हाथियार बनाने लगे थे। इन हाथियारो के उपयोग से कई देश व शहर खाक हो गऐ थे। जापान के शहरो को ध्वस्त कर दिया गया। इस युद्ध में करीब 50 लाख स्त्री–पुरूष और बच्चे मारे गए।
3. **औद्योगिक क्रांति –** औद्योगिक क्रांति विकास की प्रथम सीढ़ी थी। जिसमें उद्योगो के चहुमुखी विकास के साथ वैज्ञानिक पद्धति को बढावा दिया। औद्योगिक क्रांति ने संसाधनो के उपयोग को तो प्रथमिकता दी परन्तु पर्यावरण के प्रति मानव के नैतिक मूल्यों को धूमिल कर दिया।
4. **मनोरंजन के साधन–** सिनेमा, साहित्य, टीवी आदि मनोरंजन के साधनो ने नैतिकता के पतन को तेज हवा दी। कुछ साहित्य व टीवी प्रोग्राम मानवीय निजता को सबके सामने परोसने लगें। जो चीजे पर्दे के पीछे थी व सामूहिक रूप से देखी जाने लगी।
5. **इन्टरनेट–** इन्टरनेट ने मानव को एक सुपर ह्यूमन बीइंग बना दिया। जिसके लिए पवित्र लगने वाले आर्दश खोखले हो गये है। माता–पिता से बात करने के लिए भी वह इन्टरनेट का उपयोग करते है गुरूओं की परिभाषा भी इन्टरनेट ने बदलकर रख दी है।

इन नैतिक पतन के कारण समाज में आये विपरित प्रभाव को दूर करना आज की महत्वपुर्ण आवश्यकता है और इनमें राष्ट्रीय सेवा योजना के माध्यम से बदलाव लाये जा सकते है।

राष्ट्रीय सेवा योजना – जीवन को उन्नतिशील व प्रजातंत्र को मजबूत बनाने के लिए आवश्यक है कि लोगों के में विश्वास का भाव उपजे। यह

* सहायक प्राध्यापक (भूगोल) शासकीय महाविद्यालय धरमपुरी, जिला–धार (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय महाविद्यालय धरमपुरी, जिला–धार (म.प्र.) भारत

विश्वास जनसमुदाय में आपसी सहयोग से आता है। सामाजिक एकता व देश प्रेम की इसी भावना को ध्यान में रखकर राष्ट्रीय सेवा योजना की नींव रखी गई। उच्च शिक्षा व स्कूली शिक्षा से इसे जोड़ने का उद्देश्य विद्यार्थियों में सामाजिक जिम्मेदारी से अवगत करना था।

महात्मा गाँधी के जन्म शताब्दी वर्ष 1969 उनके सपनों को साकार करने के उद्देश्य से राष्ट्रीय सेवा योजना की स्थापना की गई। ग्रामीण विकास, समाज सेवा, व्यक्तित्व विकास अनुशासन इस योजना के मुख्य ध्येय थे।

राष्ट्रीय सेवा योजना के उद्देश्य–इस योजना का मुख्य उद्देश्य विद्यार्थियों में व्यक्तित्व विकास व चरित्र निर्माण (नैतिक मूल्यों) करना था।

1. लोगों के साथ मिल जुलकर सहयोग की भावना से कार्य करना।
2. समाज के कमजोर वर्ग की अनुभूत आवश्यकता की पूर्ति करना।
3. समाज सेवा के माध्यम से विद्यार्थियों में लोकतान्त्रिक नेतृत्व, कार्यक्रम संरचना एवं विकास के क्षेत्रों में दक्षता–निपुणता का विकास करना।
4. सृजनात्मक तथा रचनात्मक कार्यों में विद्यार्थियों को प्रवृत करना।
5. विद्यार्थियों में आत्मानुशासन की भावना जागृत करना।
6. वास्तविकता के आधार भूमि पर कार्य करते हुए विद्यार्थियों तथा समाज के सदस्यों का ज्ञान वर्धन करना।
7. शिक्षा समुदाय, विशेष रूप से विद्यार्थी एवं शिक्षक वर्ग में परस्पर घनिष्ठता, प्रेम और सद्भावना जागृत करना।

नैतिक मूल्यों के विकास में राष्ट्रीय सेवा योजना की भूमिका– राष्ट्रीय सेवा योजना इकाई से जब स्वयंसेवक जुड़ता है तो यह शुरूआत होती है उसके नैतिक मूल्यों के विकास की। विद्यार्थियों के लिए राष्ट्रीय सेवा योजना एक पंथ दो काज का कार्य करता है। एक ओर तो वह राष्ट्रीय सेवा योजना के उद्देश्यों की पूर्ति करता है, और दुसरी ओर स्वयं के व्यक्तित्व का विकास भी करता है। स्वयंसेवक नियमित गतिविधियों एवं ग्रामीण शिविरों के माध्यम से ऐसे कार्य करता है, जो समाज में मिसाल के रूप में प्रस्तुत किए जाते है। बेटी बचाओ अभियान, मद्यपान के कुप्रभाव आदि सामाजिक बुराईओं से स्वयंसेवक समाज को अवगत करते है। मतदाताओं को मतदान के लिए प्रोत्साहित करना, वृक्षारोपन करना, शिक्षा का प्रसार करना आदि के माध्यम से स्वयंसेवक व्यक्तियों को उनके सामाजिक कर्तव्यों का बोध करवाते है। वह ग्रामों में बोरी बांध निर्माण, हेंड पम्प के सोखते गड्डे व साफ–सफाई के द्वारा स्वच्छ वातावरण का निर्माण करते है।

आम व्यक्ति अपने घर के आसपास की नालियों को साफ करने में शर्मिंदगी महसूस करता है, परन्तु वही व्यक्ति जब राष्ट्रीय सेवा योजना इकाई से जुड़कर स्वयंसेवक के रूप में कार्य करता है तो उसे गर्व महसूस होता है। वह समाज में नैतिक जिम्मेदारी का बोध करवाता है।

निष्कर्ष–यहां यह कहना अतिश्योक्ति नहीं होगी कि विद्यार्थी जब राष्ट्रीय सेवा योजना के माध्यम से समाज की सेवा करता है व समाज में अच्छे कार्य करने के भाव को जगाता है, तो स्वयं में भी अच्छे भाव अथवा नैतिक मूल्य जन्म लेगें। 'यदि कोई व्यक्ति ऐसा कार्य करें जिससे समाज को प्रेरणा मिले अथवा समाज उस कार्य को करने हेतु प्रेरित हो तो इसे नैतिक मूल्यों में विकास मानेगें'।

राष्ट्रीय सेवा योजना का अपना एक सिद्धांत वाक्य (मोटो) है मुझको नहीं, तुमको (नॉट मी बट यू) यह सिद्धांत वाक्य इस बात का प्रतीक है कि राष्ट्रीय सेवा योजना का स्वयंसेवक नि:स्वार्थ सेवा की आवश्यकता का समर्थन करता है। यह वाक्य समाज मे नैतिक विकास का आधार बन सकता है।

सुझाव–

1. मोबाइल एवं इन्टरनेट की शैक्षणिक उपयोगिता से स्वयं सेवकों को अवगत करवाना चाहिए, ताकि वह समाज में इस विचार को प्रसारित कर सके।
2. राष्ट्रीय सेवा योजना सात दिवसीय ग्रामीण शिवरों में नैतिक मूल्यों पर आधारित नुक्कड़ नाटक करवाए जाने चाहिए।
3. राष्ट्रीय सेवा योजना के उद्देश्य सामाजिक विकास के आधार है अत: प्रत्येक व्यक्ति को इनका पालन करना चाहिए।
4. विद्यालय व महाविद्यालय में नैतिक मूल्यों पर स्वयंसेवक परिचर्चा का आयोजन कर सकते है।
5. प्रदूषित हो रहे पर्यावरण को बचाने के लिए स्वयं सेवकों को आगे आना चाहिए। पर्यावरण को बचाने की नैतिक जिम्मेदारी प्रत्येक की होना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. गुप्ता, एम.एल. (2014) 'समाजशास्त्र का परिचय', साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा।
2. कुमार, अरूण (1997) 'राष्ट्रीय सेवा योजना संहिता', म.प्र. शासन उच्च शिक्षा विभाग, भोपाल।
3. वार्षिक प्रगति प्रतिवेदन, (2011–2012) राष्ट्रीय सेवा योजना, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर।
4. www.google.com

****

वर्तमान समय में नैतिक मूल्यों की आवश्यकता - एक अध्ययन

डॉ. ओंकार सिंह परिहार *

प्रस्तावना – नौतिक मूल्य एक तरह से भारतीय संस्कृति की पहचान है पुरखों से विरासत में मिली अनमोल धरोहर हैं ये। **'नैतिकता'** सम्पूर्ण संसार में भारत की पहचान का प्रतीक हैं, परन्तु कहते हुए बेहद अफसोस होता है कि हमारी नई पीढ़ी, इस बेश कीमती धरोहर को खोती जा रही है। युवाओं का बड़ो के प्रति अनादर, कुतर्के, रूखा व्यवहार, मनमानी, यह सब दर्शाता है कि युवाओं में नैतिक मूल्यों का स्तर किस हद तक गिर चुका है। कुछ दशक पूर्व अपने बड़ों का आदर करना, उन्हें उचित प्रेम देना कर्तव्य माना जाता है, लोग मिलन सार थे, लेकिन यह कहते हुए भी लज्जा आती है जिन बुढ़े माँ-बाप ने पाल-पोस कर बड़ा किया वही माँ-बाप आज बच्चों पर' बोझ है। मोबाईल फोन पर युवा इतने ध्यान मग्न है कि मेल-मिलाप के लिए वक्त ही कहाँ है? और रिश्ते तो आज-कल फेसबुक पर बनते हैं तो गर्मजोशी का कोई सवाल ही नही उठता।

आज युवा पीढ़ी संवेदनहीन हो गए है। सड़क पर तड़पते हुए घायल की जान बचाने की बजाय उसकी दर्दनाक तस्वीर अपने स्मार्ट फोन पर कैमरों में कैद करने को ज्यादा प्राथमिकता देते हैं ताकि उसे फेसबुक पर अपलोड़ कर सकें। छोटी-सी उम्र में ही युवा पीढ़ी वह सब-कुछ पाना चाहती हैं, वह सब कुछ करना चाहते हैं, जो ना ही उसके लिए उचित है, और न हीं उसका अभी वक्त आया है। **धुम्रपान, शराब, बीड़ी, सीग्रेट, पैसा, अय्याशी** सब कुछ और वह भी तुन्रत शार्टकट में। आज युवा किस हद तक खुद को भुला चुके हैं, गिर चुकें हैं,जो हम रोज अखबारों में छपते हुए देखते हैं कैसी विड़म्बना हैं यह? जिस भूमी पर **'मर्यादा पुरूषोत्तम' श्री राम और कृष्ण तथा अर्जून** जैसे महान शिष्य का जन्म हुआ उसी धरा पर आज दूसरे क्षण मर्यादा लांधी जा रही हैं। आये दिन गुरूओं को अपमानित किया जा रहा है। कड़वा सच तो यह है कि आज के युवा पीढ़ी को **'आदर्श'** सिद्धान्त और **'उद्देश्य'**का मतलब भी ज्ञात नहीं और इसी अनैतिकता के चलते आज समाज पतन की नई गहराईयाँ नाप रहा है।

इस महान समस्या को फैलाने वाले और कोई नहीं अपितु हमारे बड़े ही हैं। अपने बच्चों को अच्छे संस्कार देने के बजाय उनके हाथों में लैपटॉप और इंटरनेट थमा दिए, मंहगे मोबाईल और गाड़ियां दिला दी। एक बालक कोरे कागज की तरह होता है और उस कागज पर नैतिक मूल्य और अच्छी आदतों की तहरीर लिखना माता-पिता का फर्ज होता हैं, परन्तु अपनी व्यस्तताओं में इस बात का ध्यान ही नहीं रहता है कि उनके बच्चों की देश की आगली पीढ़ी की वास्तविक जरूरत क्या हैं? कल सम्पूर्ण राष्ट्र जी कमान युवाओं के हाथों में होगी। क्या संभालेगें देश को जो खुद ही को नही संभाल सकते। अब वक्त आ चुका है गहरी नींद से जागने का । आज जरूरत है युवाओं पर दोष मढ़ने के बजाय कुछ सार्थक कदम उठाए जाए। ज्यादा से ज्याद वक्त अपने बच्चों के साथ,युवाओं के साथ व्यतीत करे। उन्हें उचित मार्गदर्शन दे। हमारे देश की सांस्कृतिक गौरव से अवगत कराएँ और युवाओं को भी आवश्यकता है समझने की, अपने आप को और अपने देश को। पाश्चात्य संस्कृति में रंगने की बजाए अपनी पहचान बनाने के प्रयत्न करने होंगे।

सुझाव-

1. सबसे पहले स्वयं माता-पिता को संस्कारी बनना चाहिए। बच्चों को यदि सुधारना है तो पहले माता-पिता को जिम्मेदारी लेनी होगी।
2. जैसे माता-पिता के गुण होंगे, बच्चे वैसा ही सीखेंगे। यदि आप सिगरेट पीते होंगे तो वे भी सिगरेट पीना सीखेंगे। यदि आप शराब पीते होंगे तो वे भी शरब पीना सीखोगे। हसलिए पहले मात-पिता को संस्कारी बनना पडेगा।
3. शिक्षा-शिक्षक और विद्यार्थी के बीच में पारस्परिक, वैचारिक आदान-प्रदान का माध्यम बनें।
4. समाज में नैतिक मूल्यों को प्रोत्साहित करने वाली लधुकथा, लेखन, पोस्टर निर्माण, डिजिटल सामग्री तथा अन्य दृश्य/श्रव्य आदि व्यावहारिक स्वरूप हो सकता है।
5. विद्यार्थियों पर अनावश्यक शिक्षा में भार को कम कर व्यावहारिक शिक्षा पर जोर दिया जाना चाहिए, जिससे छात्रों में तनाव कम हो।
6. प्राथमिक स्तर से ही नैतिक शिक्षा का अध्यापन अनिवार्य किया जाना चाहिए।
7. वृद्धाश्रम, अनाथाश्रम, गंदी बस्तियों का भ्रमण करना चाहिए जिससे विद्यार्थियों में उपेक्षित वर्गों के प्रति मानवीयता एवं संवेदनशीलता जागृत हो।
8. परिवार में नैतिक मूल्यों की गिरावट के कारणों का पता लगाने हेतु आस-पड़ोस में लघुस्तरीय सर्वेक्षण किया जाना चाहिये।
9. शिक्षा व्यवस्था को सुदृढ़ करने के लिए सुरक्षा व्यवस्था (छात्राओं हेतु) को मजबूत करना जरूरी है। छात्राओं को चाहिए कि वह विद्यालय/महाविद्यालय की प्रत्येक गतिविधियों की जानकारी शिक्षक उन्हें फैल करने की धमकी दे रहा हो, अनुचित या अमर्यादित बातें करता हों, अनुचित व्यवहार करता हो तो इसकी जानकारी घर पर भी देनी चाहिए इससे समय रहते समस्या का समाधान किया जा सकता हैं। मर्यादाविहीन शिक्षकों को सबक सिखाया जा सकता है। शिक्षा में नैतिकता का खास महत्व होना चाहिए। प्रत्येक शिक्षक को अपनी सभी छात्राओं को बेटी की नजर से देखना चाहिए।

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय महाविद्यालय, मण्डलेश्वर (म.प्र.) भारत

10. नैतिक मूल्यों के अध्ययन-अध्यापन की व्यवस्था बिलकुल भिन्न प्रकृति की होनी चाहिए। एक समसत्र में इसकी अधिकतम दस कक्षाएँ लगनी चाहिए।

आज भौतिकता की चकाचौंध में नैतिक-मूल्यों में गिरावट आती जा रही हैं। लाल बहादुर शास्त्री, अटलविहारी बाजपेयी ऐसे नेता थे जो नैतिक-मूल्यों को महत्व देते थे। आज अन्तरात्मा की आवाज सुनकर केवल भौतिक सुविधाओं की ओर ध्यान दिया जा रहा है। प्रतिदिन देखने-सुनने में, समाचार-पत्रों में पढ़ने से यह अनुभव हो रहा है कि आज मंत्री से लेकर आई.ए.एस. अधिकारी भ्रष्टाचार में डूबे हुए है। आजा नैतिक मूल्यों के अभाव में परिवार टुट रहें हैं। अपने स्वयं के बच्चे, पत्नी के अलावा अन्य सदस्यों पर ध्यान नहीं दिया जा रहा है। यदि जीवन में उच्च आदर्शों को, नैतिक मूल्यों को महत्व दिया जाय तो परिवार से लेकर समाज एवं समाज से लेकर राष्ट्र हर क्षेत्र में चँहुमुखी विकास कर सकता है। वर्तमान में न्यायालय भी नैतिक मूल्यों के अभाव में सही निर्णय देने में असमर्थ होते जा रहे हैं। नैतिक मूल्यों की कमी के कारण व्यक्ति के चरित्र में गिरावट आती जा रही है। वर्ममान में अपराधों का ग्राफ प्रतिवर्ष बढ़ता जा रहा है। व्यक्ति स्वयं के जीवन में उच्च आदर्शों, नैतिक मूल्यों को जीवन में स्थान नहीं दे पा रहा हैं जिससे कि चोरी, बलात्कार, डकैती, हत्याएँ इत्यादि हो रही है। इसलिए बच्चों को नैतिक मूल्यों की नितान्त आवश्यकता हैं, हमें अपने चरित्र से,व्यवहार से, बच्चों के सामने नैतिक मूल्यों के उदाहरण प्रस्तुत करें। यदि राष्ट्र में स्वार्थ लोलुपता, पद लोलुपता बनी रहेगी तो परिवार भी टुटेगा, राष्ट्र भी अंहभाव त्यागकर, स्वार्थ त्यागकर, प्रलोभनों से दूर रहकर अपने व्यक्तिगत जीवन में विनम्रता, त्याग, परोपकार को जीवन में स्थान देना होगा तभी हम एक आदर्श परिवार का सजृन कर सकतें है। **कन्फ्यूशियस के अनुसार-** 'यदि आपका चरित्र अच्छा है तो आपके परिवार में शांति रहेगी, यदि आपके परिवार में शांति रहेगी, तो समाज में शांति रहेगी, यदि समाज में शांति रहेगी तो राष्ट्र में शांति रहंगी।'

शिक्षा में समाहित हो नैतिकता-शिक्षा मानव-जीवन के परिष्कार एवं विकास की कुंजी मानी गई है। सम्पूर्ण संसार में शिक्षा को राष्ट्र निर्माण की चारित्रिक गतिविधि के रूप में मान्यता प्रदान की गई है। अच्छी शिक्षा केवल ज्ञान और हुनर ही प्रदान नहीं करती अपितु मूल्यों को प्रतिष्ठापित भी करती है। शिक्षा मानव की आंतिरक शक्तियों का सर्वांगीण अर्थात **मन, बुद्धि, शरीर तथा आत्मा** का विकास हैं।

कलंकित होती गुरू-शिष्य परम्परा-'गुरू का दर्जा भारतीय संस्कृति में हमेशा सर्वोपरि रहा है। लेकिन अब पुरातन काल से चली आ रही गुरू-शिष्य परम्परा अब कलंकित होने लगी हैं। गुरू और शिष्य के बीच केवल शाब्दिक ज्ञान का ही आदान-प्रदान नहीं होता था, बल्कि गुरू अपने शिष्य के संरक्षक के रूप में कार्य करता था। उनका उद्देश्य होता था कि शिष्य का समस्त विकास हो। वर्तमान समय में इसका उल्टा हो रहा है। गुरू-शिष्य परम्परा को एक व्यवसाय का रूप दिया जा रहा है। राजधानी के गोमती नगर स्थित केन्द्रिय विद्यायल के शिक्षक ने गुरू और शिष्य के रिश्ते को कलंकित करने का काम किया है। फैल करने के नाम पर लगातार छात्रा से दुराचार करता रहा।..... मुद्दा इतना संवेदनशील है कि इसमें गुरू के प्रति शिष्य का चला आ रहा विश्वास घटेगा। शिक्षकों की समाज में प्रतिष्ठा गिरेगी। जागरूक शिक्षकों की जिम्मेदारी बनती है कि वह अपने आस-पास के ऐसे कुकर्मी पर नजर रखें ताकि उनका आस्तित्व न बना रहें। इस पुरे घटनाक्रम में गुरू की परिभाषा को हि बदल दिया है। कभी गुरू अपने विद्यार्थियों के आदर्श हुआ करते थे लेकिन बदलतें दौर में गुरू भी बदल गए। भौतिकता की सोच गुरू-शिष्य के पवित्र रिश्ते पर चोट किया गया है। आज के युग में ज्ञान से अधिक धन को महत्व दिया जा रहा है। अध्यापन भी नि:स्वार्थ नहीं बचा है। यह एक व्यावसाय का रूप लेता जा रहा है। छात्र और शिक्षक का संबंध उपभोक्ता और सेवा प्रदाता का होता जा रहा है। यह विचारणीय हैं कि गुरू शिष्य के संबंधों में आ रही गिरावट को कैसे रोका जाए।'

'गुरू एवं शिष्य के संबंधों की सजल संवेदना देवसंस्कृति का परिचय है। उद्गम-बिंदू से लेकर वर्तमान एवं भावी व्यापकता में प्रकट होते संस्कृति सिंधु में इन्हीं संवदेनाओं की सजल सरिताओं का मेल छलकता है। उपनिषद शब्द का तो भावार्थ ही गुरू और शिष्य की समीपता है। इस समीपता से ही ज्ञान की सार्थकता प्रकट होती है। केनोपनिषद में शिष्य की जिज्ञासाएँ, प्रश्नोपनिषद में आचार्य पिप्पालाद एवं सुकेशा आदि शिष्यों के संबंधों की प्रगाढ़ता, तैतिरीयों पनिषद में आचार्य वरूण एवं उनके शिष्य भृगु के संबंधों की संवेदना इसी सत्य को मुखर को प्रकट करती हैं। शिष्य की श्रद्धा गुरू द्वारा किए जाने वाले ज्ञानवर्षण के लिए चुंबक का काम करती है। श्री मद्भगवदगीता के चतुर्थ अध्याय के उनतालीसवें श्लोक में कहा गया है- श्रद्धावाँल्लभते ज्ञानं (श्रद्धावान:ज्ञान का लाभ पाते हैं) महर्षि पंतंजलि योग सूत्र के समाधिपाद के बीसवें सूत्र में कहतें हैं- श्रद्धावीर्य स्मृति समाधि प्रज्ञापूर्वक इतरेषाम्।'

मनोवैज्ञानिक रूप से श्रद्धा हमारी विधेयात्मक भावनाओं का शिखर बिंदु है। मनोवैज्ञानिक जगत में जितने भी आधुनिक शोध-पत्र किए गए है,उस सभी में इसके महत्व को स्वीकारा गया है। मनोवैज्ञानिक आई.एल.बेन्सन ने अपने शोध-पत्र **साइफों न्यूरो इम्यूनोलॉजी एंड अस्पेक्टस ऑफ पॉजिटिव इमोशन्स'** में इसकी पर्याप्त व्याख्या। की उनके अनुसार हमारी भावनाएँ जितनी अधिक विधेयात्मक एवं प्रगाढ़ होती है, उतनी ही हमारी मानसिक प्रतिरोधक क्षमता मजबूत होती है।

निष्कर्ष-नैतिक मूल्य मानव के सुखी संयमित समाज उपयोगी जीवन के लिए सशक्त आधार प्रदान करती है। नैतिक मूल्य में कमी सामाजिक विघटन की ओर संकेत करती हैं। देश को संस्कारित, सभ्य, संवदेनशील, और सशक्त नागारिकता प्रदान करना शिक्षण संस्थाओं का मुख्य कर्तव्य है। शिक्षा का उद्देश्य यह होना चाहिए कि बच्चे जब जीवन-क्षेत्र में प्रवेश करने योग्य हो तो वे स्वावलंबी और सुसंस्कारी अवश्य हो। सुसंस्कारिता संवर्द्धन के लिए अलग से प्रयास किए जाए। स्कूल/कॉलेजो का वातावरण और अनुशासन ऐसा हो, जिस ढाँचे मे ढ़लकर शिक्षार्थी नीतिवान और पराक्रमी बनकर निकले। छात्रों के व्यक्तित्व को परिस्कृत करने की विधि-व्यवस्था भी हमारे पाठ्यक्रम का अविच्छिन्न अंग होना चाहिए। इस प्रयोजन में शिक्षकों एवं अभिभावकों का मिला-जुला प्रयास चलना चाहिए। पाठ्य पुस्तकों में ऐसे विषय हो जो भावी जीवन की समस्याओं को स्वरूप और समाधान समझने के काम आएँ। उनका व्यवहार में उपयोग हो सकें। इसके लिए वर्तमान और भविष्य संबंधी परिस्थितियों का ज्ञान कराया जाना चाहिए। विशेषज्ञ बनने वालों के लिए अलग से एकेडेमियां हो, किन्तु सामान्य स्तर के छात्रों को जिन विषयों का कभी काम नहीं पड़ने वाला है, उनका बोझ उन पर लादने से क्या फायदा? इससे तो कहीं अच्छा यह है कि इन्हें शारीरिक, मानसिक, पारिवारिक, आर्थिक, सामाजिक और धार्मिक, विषयों की ऐसी जानकारी दी जाए, जिसके आधार पर उन्हें भावी जीवन के समाधान में कुछ सहायता मिले सके। वह अपने कर्तव्यों और अधिकारों की परिधि में भली प्रकार अवगत होकर सुयोग्य नागरिक बन सकें। ऐसा अनुमान हो कि हमारे देश की आबादी का लगभग 70 प्रतिशत अंश युवापीढ़ी का है। युवा पीढ़ी ही देश का भविष्य

निर्धारित करती है। यदि युवाओं में देश के प्रति प्रेम न हो, समाज के प्रति दायित्वबोध न हो और उनका अपना व्यक्तिगत आचरण, व्यवहार संयमित न हो तो लेवें किस प्रकार अपना और राष्ट्र का हित कर पाएंगे।

शिक्षको के लिए इतना ही पर्याप्त न हो कि वे अच्छे नंबरों से उत्तीर्ण कराते रहें। उन्हें यह भी अनुभव कराना चाहिए कि वे उस नई पीढ़ी के निर्माता है, जिसे अगले दिनों देश की बागडोर सँभालनी है। शिक्षको को इस तथ्य पर भी ध्यान रखना चाहिए कि विद्यालयों एवं महाविद्यालयों के वातावरण को उस सुसंस्कारिता का भरपूर समावेश हो जो कच्ची आयु के बालकों का स्वभाव एवं व्यक्तित्व उत्कृष्ट बनाने के लिए आवश्यक है स्कूल- कॉलेजो मे नैतिक शिक्षा के साथ-साथ विद्यार्थियों को खेलकूद,शारीरिक, मानसिक विकास का भी अवसर मिलना चाहिए। संगीत वक्तृत्व जैसे विषयों का पाठ्य-पुस्तकों में अनिवार्य सम्मिश्रण हो। इन सबकी समुचित उपलब्धियों के लिए शिक्षकों को प्रशिक्षण कराया जाना चाहिए और उन्हें तभी काम सौंपा जाना चाहिए, जब वे सर्वतोमुखी प्रतिभा सम्पन्न होकर छात्रों को परिष्कृत, व्यक्तित्व प्रदान करने की योग्यता प्राप्त कर सकें।

संदर्भ ग्रथंसूची :-

1. नैतिक मूल्य और भाषा - प्रों शुभा तिवारी, म.प्र. हिन्दी ग्रथं अकादमी भोपाल
2. माता-पिता और बच्चों का व्यवहार - डॉ.नीरू बहन अमीन, प्रकाशन- अजीत सी.पटेल महाविदेह फाउन्डेशन, दादा दर्शन,5 ममता पार्क सोसायटी (आमदाबाद गुजरात)
3. युग निर्माण योजना - आर.एन.आई/-13636, 558, मथुरा/024/2012/2014, सितम्बर 2014
4. शिक्षा में समाहित हो नैतिकता - ज्ञानेन्द्र मिश्र, विश्लेषक, दैनिक दबंग दुनिया, पृ0 06
5. धर्मयुग, खुलती खिड़की या सांस्कृतिक हमला, सम्पादक, गणेश मंत्री, पत्रिका, 31 दिसम्बर 1991 अंक -3

****

भारतीय समाज में नैतिक मूल्यों का औचित्य

डॉ. आर. सी. पन्टेल *

प्रस्तावना – नैतिकता का अर्थ – नैतिकता शब्द मनुष्य के कर्तव्य की आंतरिक भावना पर विशेष बल देता हैं। नैतिकता का संबंध सद् और असद्, उचित और अनुचित से होता हैं। आचार संबंधी नियमों का पालन, चरित्र की दृढ़ता और पवित्रता से संबंधित होता हैं। सामान्यत: नैतिकता का पालन व्यक्ति इस कारण नहीं करते हैं कि उसके बुजुर्ग भी प्राचीन समय से ऐसा करते रहे हैं या आस–पास के लोग भी उसका पालन करते रहे हैं बल्कि इस कारण करता हैं कि उसके पीछे न्याय, पवित्रता और सच्चाई के भाव होते हैं। सामान्यत: नैतिकता का संबंध व्यक्ति के स्वयं के अच्छे और बुरे महसूस करने पर निर्भर करता हैं। प्राचीन काल से लेकर वर्तमान वैज्ञानिक समाज में भी नैतिकता आत्म चेतना से अधिक प्रेरित होती हैं। हमारे समाज में न्याय, ईमानदारी, सच्चाई, निष्पक्षता, कर्तव्यपरायणता, अधिकार, स्वतंत्रता तथा दया के भाव दृढ़ रूप में नैतिक धारणाएं हैं। गुरवीच का मत हैं– 'नैतिकता अत्यधिक गत्यात्मक, रचनात्मक तथा रूढ़ीवादी तत्वों का विरोध करने वाली होती हैं तथा साथ ही जनरीतियों व लोकाचारो की अपेक्षा अधिक स्थाई होती हैं।' नैतिकता का संबंध मात्र सामान्य न होकर किसी विशिष्ट वर्ग के सामाजिक प्रतिमानों से भी होता हैं जैसे न्यायाधीश एवं डॉक्टर की नैतिकता। सामान्य तौर पर बौद्धिक एवं दार्शनिक स्तर पर नैतिकता आचारशास्त्र या नीतिशास्त्र बन जाती हैं। नैतिकता का संबंध सामाजिक मूल्यों से भी हैं, प्रत्येक समाज के मूल्यों में भिन्नता के कारण नैतिकता के नियमों में भी अंतर पाया जाता हैं। कई विद्धानों ने कहां है कि, सामाजिक विरासत का अभौतिक पक्ष ही नैतिक मूल्य होते हैं। समाजशास्त्री भाषा में नैतिक मूल्यों को सामाजिक प्रतिमान, सामाजिक मानदण्ड या सामाजिक आदर्श नियम भी कहां जाता है। मनुष्य का ऐसा आचरण जिसे सामाजिक स्वीकृति प्राप्त हो नैतिक मूल्य कहलाते हैं।

वर्तमान में मनुष्य सामाजिक प्राणी के साथ ही एक सभ्य एवं वैज्ञानिक प्राणी हैं। मनुष्य को अन्य प्राणियों की तुलना में श्रेष्ठ साबित करने में नैतिक मूल्य और विज्ञान दोनों का योगदान रहा हैं। आज का मनुष्य नैतिकता की अपेक्षा वैज्ञानिक प्राणी ज्यादा होने के कारण भौतिकता की ओर आकर्षित होता जा रहा हैं। निश्चित ही उसके वैज्ञानिक दृष्टिकोण में वृद्धि हो रही हैं लेकिन उसकी यह वैज्ञानिकता उसके नैतिक मूल्यों को प्रभावित किये बिना नहीं रह सकती। भारतीय समाज में प्रारंभिक समय से ही नैतिक मूल्यों का अधिक महत्व रहा हैं। सामाजिक विरासत इस बात का प्रमाण देती हैं कि भारतीय मनुष्यों को श्रेष्ठ बनाने में नैतिक मूल्य अधिक कारगर हैं।

यदि भारत में नैतिक मूल्यों की कमी होती जायेगी तो भारत विश्व का श्रेष्ठ गुरू बनने में ज्यादा सफल नहीं हो पायेगा आज अधिकांश समस्याओं का जन्म नैतिक मूल्यों के विघटन के कारण हो रहा हैं। साधारणत: खान–पान से लेकर जीवन विधि के क्षेत्र में मनुष्य एक–दुसरे से आगे निकलने की होड़ में हैं फिर चाहे उसे किसी भी रूप में प्राप्त क्यों न किया जाये? नैतिक मूल्य व्यक्ति के लिए आदर्श हुआ करते थे, लेकिन इस भौतिकवादी युग में मात्र औपचारिक रह गये हैं क्योंकि जिनका पालन न करने पर दण्डित करने की कोई विधि नहीं हैं। नैतिक मूल्यों के विघटन ने अंतरपीढ़ी संघर्ष को जन्म दे दिया हैं। माता–पिता सम्मान में मधुर संबंध के स्थान पर संघर्ष को जन्म दिया हैं जहां परिवार में ही शांति नहीं हैं तो ऐसे व्यक्तियों से समाज के सामाजिक विकास की कल्पना नहीं की जा सकती हैं। विकास के लिए प्रथम मनुष्य का सुसंस्कारित होना आवष्यक है।

यह प्रश्न बड़े महत्व का हैं कि वर्तमान में हम किधर जा रहे हैं इस पर गंभीरता पूर्वक विचार करने की न तो फुर्शत हैं और न ही इस पर विचार करने की हम आवश्यकता समझते हैं। क्योंकि हमने यह दृढ़ता से मान लिया हैं कि वर्तमान वैज्ञानिक तथा सभ्य युग में हम जो कुछ कर रहे हैं, जो सोच–समझ रहे हैं वही ठीक हैं। दूसरो तथा अनुभवी जनों की बात या शास्त्री बातें हम क्यों माने इस प्रकार का दूराचार उत्पन्न हो गया हैं आपकी सभ्यता और शिक्षा की देन हैं। विश्व के साथ ही साथ हमारी जो स्थिति हैं वह अत्यंत ही शोचनीय, दुखद और विडम्बनापूर्ण हो गई हैं।

हमारे वर्तमान समाज में विकास के नाम पर जो मूल्य तथा मानदण्ड प्रतिष्ठित हो रहे हैं यह अत्यंत चिंता का विषय हैं। प्रगतिवादी मनोरंजन तथा तकनीकी ज्ञान के नाम पर जो दृश्य एवं श्रृव्य सामग्री हमें प्राप्त हो रही हैं वह मनोरंजन तथा ज्ञान नहीं बल्कि एक अभिश्राप के रूप में भारतीय समाज के सामने हैं। जिसका प्रभाव समाज पर तथा विशेषकर युवा पीढ़ी एवं कोमल हृदय बच्चों पर जो दूरगामी प्रभाव पड़ेगा वह अत्यंत भयावह एवं विनाशकारी होगा। आज के समाज में अनैतिकता पूर्ण आचरण में हो रहे हैं हम अपने आप में गौरान्वित महसुस कर रहे हैं। युवा पीढ़ी में अर्थलिप्सा और प्रगति के नाम पर ईर्ष्यापूर्ण, प्रतिस्पर्धा की दौड़ दीगभ्रमित हो रही हैं। इस अर्थलिप्सा ने हमारा सुख, चैन छिन लिया हैं, प्रगति होनी चाहिए, उत्थान होना चाहिए किन्तु हमें इसकी परीभाषा को ठीक से समझना होगा। खेद इस बात का हैं कि पाश्चात्य विचार धारा ने हमें इतना अधिक आकर्षित कर रखा हैं कि मॉडर्न कहलाने के लिए हमने अपने शाश्वत जीवन मूल्यों तथा मानदण्डों, आदर्श नियमों को रूढ़ीवादिता का जामा पहनाकर उनसे मुह मोढ़ लिया हैं और इसमें हम अपने आप को सच्चा, शिक्षित और सभ्य मान रहे हैं।

पूराने मूल्यों का विरोध करना, धर्म और ईश्वर की सत्ता पर विश्वास न करना, सदग्रंथों पर अनास्था रखना, अपने से बड़ो के मान मर्यादा का उल्लघंन करना, अपने कर्तव्य भूलकर मात्र स्वार्थपूर्ति अहंम की संतुष्टि के लिए अपने

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, धामनोद, जिला–धार (म.प्र.) भारत

अधिकारो को दुहाई देना तथा शास्त्रिय नियमों की अवमानना ही आज की प्रगति हैं।

अत: ऐसी प्रस्तुती में हम किधर जाना चाहिए, इस पर कोई अधिक चिंता नही कर रहे हैं। वर्तमान चकाचौंध की कामयाबी से भारतीय समाज को अधिक कुछ प्राप्त होने वाला नही हैं। आज की भौतिकवादी प्रगति ने हमें ह्रदय शून्य, संवेदन शून्य बना दिया हैं। परम्परागत रिश्तें नाते टूट रहे हैं।

अत: समाज में जितनी भी विसंगतियां, अपराध, विवाद, घटनाओं पर काबू पाना हैं तो परम्परागत नैतिक मूल्यों की शिक्षा को प्रचार-प्रसार के माध्यम से बढ़ावा देना हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची : -

1. दैनिक समाचार-पत्र, पत्रिका।
2. ओसो वर्डस मेगजीन।
3. दुबे रमाकांत विश्व के महान शिक्षाशास्त्री।
4. कोठारी अतुल मूल्यों की शिक्षा।
5. संस्कारिता उत्थान न्यास वेल्यू 2009-10
6. डॉ.बैचन जीवन मूल्य।
7. कुमार विमल मूल्य और मिमांशा।
8. रचना पत्रिका सितम्बर-अक्टूबर 2011
9. नैतिक मूल्य और भाषा डॉ.शुभा तिवारी
10. युग निर्माण योजना।
11. डॉ.निरूबहन अमीन माता पिता और बच्चों का व्यवहार
12. स्वयं का अनुभव।

****

शैक्षणिक विकास में पाठ्योत्तर गतिविधियों का योगदान नैतिक मूल्यों के संदर्भ में

डॉ. टी. एम. खान *

प्रस्तावना – म.प्र. शासन उच्चशिक्षा विभाग द्वारा विद्यार्थियों के सर्वांगीण विकास हेतु पाठ्योत्तर गतिविधियों में व्यक्तित्व विकास, अभिव्यक्ति प्रोत्साहन, स्वामी विवेकानंद कॅरियर मार्गदर्शन योजना, गुणवत्ता विस्तार योजना, राष्ट्रीय सेवा योजना, रेडक्रास , एनसीसी, खेलकुद गतिविधी, युवा उत्सव आदि शामिल है इन विधाओं के माध्यम से विद्यार्थियों को पढ़ाई के साथ साथ इन विधाओं में हिस्सेदारी सुनिश्चित की जाती है, ताकि ये विद्यार्थी मजबूत राष्ट्र की परिकल्पना में सहभागी बन सके ।

नैतिक मूल्य सभ्यता की पहचान होते हैं व्यक्ति अपने व्यक्तित्व से पहचाना जाता हैं, नैतिक मूल्य मनुष्य के आभूषण होते हैं जिसे तरह से आभूषण धारण किया हुआ व्यक्ति सुन्दरता को प्राप्त करता हैं उसी प्रकार नैतिक मूल्य व्यक्ति के व्यक्तित्व में चार चाँद लगाते हैं। नैतिक मूल्य का शाब्दिक अर्थ संस्कार होता हैं, जन्म से माता–पिता, गुरू, परिवार व समाज से मिलते हैं संस्कारी बालक अपने परिवार, कूल, समाज व देश का नाम रोशन करता हैं।

राष्ट्रीय सेवा योजना – लोगों के जीवन को उन्नतशील बनाने हेतु जब उन्हें उत्तरदायित्व सौंपते हो– जब तुम उनमें आत्मविश्वास उत्पन्न करते है तब वे कठिन परिस्थितियों से भी जुझकर उनका समाधान कर सकते है, तब ओर उनमें आत्मविश्वास जागृत करने के लिए यह आवश्यक है कि तुम्हें उनकी राष्ट्र निर्माण की शक्ति पर पूरा भरोसा है। विश्वास उपजता है और प्रजातंत्र तब पनपता है, जब समस्त जनसमुदाय विशेषकर समाज के कमजोर वर्गो के लोग पूरी तरह तथ्य को स्वीकर करें। स्वामी विवेकानंद के इन्हीं सिद्धान्तों को 'राष्ट्रीय सेवा योजना' ने भारत सरकार के खेल एवं युवा कल्याण मंत्रालय एवं राज्यों के माध्यम से 'उच्च शिक्षा एवं स्कुली शिक्षा से जुड़े विद्यार्थियों में सामाजिक दायित्व,चेतना, स्वप्रेरित अनुशासन के साथ श्रम की भावना उत्पन्न हो। विधार्थी समाज सेवा के माध्यम से अपने व्यक्तिव का विकास करें,।

'राष्ट्रीय सेवा योजना' स्थापना महात्मा गांधी के उन सपनों को साकार करने के उद्देश्य से उनके जन्म शताब्दी वर्ष 1969 में किया गया, जिसमें उच्च शिक्षा प्राप्त करने वाले विद्यार्थियों को ग्रामीण विकास एवं समाज सेवा से जोड़ने के लिए प्रारंभ किया गया। इस योजना के माध्यम से विद्यार्थियों के व्यक्तित्व का समग्र विकास के साथ–साथ वे ग्रामीण जीवन से परिचित हो एवं उन परिस्थियों से लड़ने के लिए सक्षम हो सके जो आम आदमी अपना जीवन में लड़ता है। स्वयंसेवकों को शिविरों के माध्यम से ग्रामीणों की सेवा पूर्ण लगन से कार्य करने के लिए प्रेरित करता है एवं यह संदेश देता है कि लोगों को सेवा करने से उनके दुख दर्द को कम किया जा सकता है और एवं विभिन्न सम्स्याओं से मुक्ति मिल सकती हैं। ममता, प्रेम अहिंसा व सेवाभाव से संपूर्ण जगत पर विजय प्राप्त की जा सकती है। सुन्दर, पवित्र,सद्विचारों व नि:स्वार्थभाव से की गई सेवा, समाज में जागरूकता पैदा कर रचनात्मक व क्रांतिकारी परिवर्तन ला सकती है।

'राष्ट्रीय सेवा योजना' के माध्यम से स्वयंसेवकों को न केवल सामाजिक दायित्व बोध कराता है बल्कि उसका सम्पूर्ण व्यक्तित्व का विकास भी करता है। राष्ट्रीय सेवा योजना का सिद्धान्त वाक्य (मोटो) 'मैं नहीं तू, नाहं वै भवान् (Not me but you) यह सिद्धान्त वाक्य वसुधैव कुटुम्बकम का सार बताता है, नि:स्वार्थ सेवा की आवश्यकता का समर्थ करता है। यह बताता है कि हम एक दुसरे के दृष्टिकोण की सराहना करने वाले बनें तथा प्राणी मात्र के लिये सहानुभूति रखें। स्वयं सेवक नियमित गतिविधियों के माध्यम से सामाजिक चेतना हेतु महत्वपूर्ण सप्ताह एवं दिवस जैसे– राष्ट्रीय युवा दिवस, युवा सप्ताह, विश्व वानिकी दिवस, सद्भावना दिवस, एन, एस.एस. दिवस,स्वैच्छिक रक्तदान दिवस, विश्व एड्स दिवस, विश्व मानव अधिकार दिवस आदि आवसरों पर सहभागिता करता है, जिससे वह समाज को समझने की शक्ति मिलने के साथ–साथ वह अपने नैतिक मूल्यों मे सुधार तथा देश एवं समाज के प्रति अपने कर्त्वयों का पालन करने के लिए हमेशा तत्पर रहता है।

रेडक्रास – इसमें रक्त परिक्षण किया जाता है, तथा किसी व्यक्ति को आकस्मिक रक्त की आवश्यकता होने पर उसकी सहायता हेतु विद्यार्थियों को प्रेरित किया जाता है। विद्यार्थी रक्तदान के माध्यम से असहाय एवं जरूरतमंदो की सेवा करते हैं जो नैतिक मूल्यों की भावना को साकार करते हैं।

व्यक्तित्व विकास – इसमें विषय विशेषज्ञों को आमंत्रित कर विद्यार्थियों को लाभान्वित किया जाता है । यह विषय विशेषज्ञ विभिन्न विधाओं के विशेषज्ञ होते है। जिसके द्वारा विद्यार्थियों को अपना भविष्य बनाने में मदद मिलती हैं एवं विद्यार्थी अपनी मेहनत, परिश्रम से अपने लक्ष्य को हासिल कर सकता है।

गुणवत्ता विस्तार – इसके अन्तर्गत विद्यार्थियों के आंतरिक एवं बाहरी गुणों की पहचान कराई जाती है । तथा उन्हें विकसित कर, सकारात्मक दिशा में प्रभावी बनाई जाती है। गुणवत्ता नैतिक मूल्यों की ऐसी कड़ी हैं जिसके द्वारा विद्यार्थी अपने जीवन में सफलता की सीढ़ी चढ़ सकता हैं जिससे अपना एवं अपने परिवार का नाम रोशन कर सकता हैं एवं राष्ट्र विकास में अपना सहयोग दे सकता हैं।

स्वामी विवेकानंद कॅरियर मार्गदर्शन योजना – इसमें विभिन्न कंपनियों से बातचीत कर उनकी अनुकुल मांग के अनुरूप विद्यार्थियों को तैयार कर प्रशिक्षण देकर, प्लेसमेंन्ट करवाया जाता है। साथ ही समय समय पर कॅरियर मार्गदर्शन मेले का भी आयोजन किया जाता है । जिसमें विद्यार्थियों के साथ उनके पेरेन्टस, विभिन्न कंपनियों के प्रतिनिधि भी एक साथ शामिल होते है

* प्राचार्य, शासकीय महाविद्यालय, धामनोद, जिला–धार (म.प्र.) भारत

और वर्तमान परिस्थितियों पर चर्चा कर उन्हें रोजगार की जानकारी दी जाती है। इनके अतिरिक्त ओर भी कई अन्य विधाए है। जिनके माध्यम से उच्च शिक्षा विभाग द्वारा विद्यार्थियों का सर्वांगींण विकास किया जाता है। यह नैतिक मूल्यों के द्वारा संभव हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. रासेयो संहिता।
2. समाचार पत्र, पत्रिकाएं।
3. कोठारी अतुल मूल्यों की शिक्षा।
4. प्रो. शुभा तिभारी – नैतिक मूल्य और भाषा म. प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल।

****

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में नैतिक मूल्यों की आवश्यकता, चुनौतियां एव समाधान

प्रो. अभय सिंह मंडलोई *

प्रस्तावना – संपूर्ण ब्राहाण्ड में पृथ्वी ही एक ऐसा ग्रह हैं जिस पर जीवन पाया जाता हैं। जिसे अनेक जीव–जन्तु निवास करते हैं जिसमें से एक हैं मनुष्य। मनुष्य ईश्वर की श्रेष्ठ कृति हैं। जिसमें अन्य प्राणियों की अपेक्षा अधिक विकसित मस्तिष्क पाया जाता हैं। मनुष्य जब अविकसित अवस्था में था उस समय कोई भी नैतिकता जैसे विचार न थे लेकिन समय के साथ मनुष्य की संख्या में भी वृद्धि हुई। जनसंख्या में वृद्धि के साथ ही नैतिकता की आवश्यकता महसूस हुई और मनुष्य अलग–अलग समूहों में बटा और सामाजीकरण की प्रक्रिया का आरंभ हुआ। सामाजीकरण की इस प्रक्रिया में अपने लिये कुछ नियम बनाये और एक संयमित जीवन के लिए स्वयं को तैयार किया। मनुष्य के जीवन में इन नियमों और संयमन का बहुत महत्व हैं। किसी का अच्छा या बुरा होना उसके द्वारा इन नियमों और संयमन के पालन के स्तर से निर्धारित होता हैं। इसी को जीवन के मूल्य कहां जाता हैं।

हमारा समाज नैतिक रूप से तो उन्नत हो रहा हैं परन्तु नैतिक मूल्यों की दृष्टि से पतन की ओर अग्रसर हैं। ऐसे में नैतिक मूल्यों की आवश्यकता सबसे अधिक हैं। आज आए दिन अखबारो या टेलीविजन के माध्यम से समाज में हिंसक और विभत्स घटनाएं सुनने और देखने को मिल रही हैं। यह समाज या राष्ट्र किस नैतिकता की दिशा में अग्रसर हैं उसका अनुमान लगाना कठिन हो रहा हैं एक सशक्त राष्ट्र का निर्माण उस राष्ट्र में रहने वाले लोगों के माध्यम से ही हैं। राष्ट्र के प्रति निष्ठा और प्रेम, आपसी सद्भाव, अनुशासन और स्थापित नियमों के अनुसार अपना आचरण रखना अच्छे नागरिक की पहचान हैं।

समाज में गिरते नैतिक स्तर पर समाज तथा राष्ट्र दोनों के लिए चुनौती हैं। इस चुनौती के समाधान के लिये बड़े स्तर पर प्रबुधजनों, विद्धानों, राजनीतिज्ञों तथा संतो, महापुरूषों को आगे आना होगा। समाज में ऐसे वातावरण का निर्माण करना होगा जिससे कि समाज में व्याप्त इस नैतिकता के मूल्य को बनाये रखा जा सकें ।

समाज में गिरते नैतिक स्तर समाज तथा राष्ट्र दोनों के लिये चुनौति हैं। इस चुनौति के समाधान के लिये बड़े स्तर पर प्रबुद्धवान विद्धानों, राजनीतिज्ञो तथा संतो, महापुरूषो को आगे आना होगा। समाज में ऐसे वातावरण का निर्माण करना होगा जिससे कि समाज में व्याप्त इस नैतिकता के मूल्य को बनाये रखा जा सके।

ईसा मसीह ने कहा था स्वयं को पहचानो मोहम्मद साहब ने भी कहा स्वयं को पहचानो। आपके अंदर वैभव निहित हैं। जिनका ज्ञान नहीं हैं। एक बार आप सब स्वयं को पहचान जाएंगे। तो आप में आत्सम्मान जाग जाएगा। आप गलत कार्य नहीं करेंगे। आपको क्रोध नहीं आएगा। तब आप सबसे प्रेम करेंगे और नैतिक मूल्य में सुधार होगा। मेरे विचार में आज आज कल बहुत भयानक दिन हैं। जैसा लोग कहते हैं ये घोर कलियुग हैं। ठीक हैं, लेकिन इस काल में आप सही क्यों हैं।

अब्राहम लिंकन जैसे लोगों के जीवन पर अत्यंत युवावस्था में ही उन्हें ये बाल समझ आ गई थी कि अपने उदाहरण द्धारा अपनी मूल्य प्रणाली उन्हें अल्य लोगों को समझानी होगी।

नैतिक मूल्य के आचरण, व्यवहार, भाषा, शैली से हैं। जिससे जीवन सुचारू रूप से चलता हैं। यदि जीवन में नैतिकता का अभाव हैं तो जीवन की गाड़ी सही दिशा में नहीं होगी और कदम–कदम पर ठोकरे खानी पड़ेगी। समाज या परिवार में तिरस्कार की भावना भी रहेगी। यदि मनुष्य में नैतिकता हैं तो किसी भी घर या परिवार में जायेंगे तो सम्मान मिलेगा। यदि नैतिकता का अभाव हैं तो किसी भी घर या परिवार में जायेंगे तो बेईज्जत या असम्मान का सामना करना पड़ेगा। वास्तव में नैतिकता यदि लाना हैं तो छोटे–छोटे स्तर पर परिवार या समाज को जागृत करना पड़ेगी। बच्चो या युवाओं में नैतिकता को जाग्रत करना होगा। अन्यथा नैतिकता के अभाव में समाज या परिवार गर्त में चला जाएगा।

नैतिकता ही सम्पूर्ण मानवता का श्रृंगार है। लेकिन वर्तमान समय में लगातार नैतिक मूल्यों का विघटन हो रहा है। आज पूरे विश्व में सभी क्षेत्रों में उन्नति व नित नये अविष्कार हो रहे है, आर्थिक रूप से तो हम बहुत आगे है लेकिन नैतिक पतन की ओर निरंतर अग्रसर हो रहे है वर्तमान में देश में लगातार बढ़ रहें अपराध भ्रष्टाचार, आगजनी,लूटमार,बलात्कार, नशा एवं अन्य अपराध नैतिकता के अभाव की ही परिणति है। हमारी वर्तमान पीढ़ी इतनी अनैतिक व चरित्रहीन हो चुकी है कि भावी पीढ़ी की हम सहज ही कल्पना कर सकते है।

विज्ञान के अविष्कार, आधुनिकीकरण, नगरीकरण इन सबका हमारे देश के विकास में योगदान अवश्य है किन्तु हर वस्तु का सदुपयोग विकास लाता है और उसी वस्तु का दुरुपयोग विनाश भी करता है अर्थात् भौतिक सुख के पीछे भागने के कारण हम नैतिक आचरण एवं अपनी जिम्मेदारियों के प्रति लापरवाह भी होते जा रहे हैं जिसके कारण आपसी सहयोग, आत्मीयता, नियंत्रण एवं संबंधों में घनिष्ठता की कमी दिखाई देती है और यही कमी हमें अपराधिक प्रवृत्ति का शिकार भी बना सकती हैं अर्थात् नैतिक मूल्य वह ताकत है जो हमें समाज में अच्छा आदर्श बनाये रखते में मदद करती हैं।

हमें दूसरो की आलोचना कतई नहीं करनी चाहिए– अपने दृष्टिकोण (नजरिया) को बदले। दूसरो की अच्छाई देखने का प्रयत्न करें। 'दूसरो के दोषो की गणना से हमारे अपने दोषो में वृद्धि होती हैं।'
सुनहरे नियम का पालन जी जान से करें – 'अपने पड़ोसी को भी वैसे ही प्रेम करें जैसे स्वयं को करते हैं।'

समाधान – नैतिक मूल्य के उत्थान हेतु संपूर्ण समाज के लोगो के हृदय परिवर्तन करना होंगे। तभी नैतिक मूल्य में सुधार होगा। साथ ही शैक्षणिक संस्थाओं में नैतिक शिक्षा भी अनिवार्य की जानी चाहिए। नैतिक शिक्षा हेतु

* सहायक प्राध्यापक (भूगोल) शासकीय महाविद्यालय, धामनोद, जिला–धार (म.प्र.) भारत

जनसंचार के साधनो जैसे समाचार पत्र, पत्रिकाएं, टेलीविजन आदि साधनो द्वारा व्यापक प्रचार प्रसार की जानी चाहिए। शोध संगोष्ठी भी नैतिकता को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकेगी। नैतिकता को बढ़ाने में व्यक्तियों के हृदय परिवर्तन को आवश्यकता हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. दैनिक समाचार–पत्र, पत्रिका।
2. सिंह, अशोक, श्याम –सामाजिक नियंत्रण एवं सामाजिक परिवर्तन मिश्रा ट्रेडिंग कार्पोरेशन वाराणसी।
3. मुखर्जी, डॉ.रविन्द्रनाथ, विवेक प्रकाशन, जवाहर नगर दिल्ली।

****

वर्तमान समय में नैतिक मूल्यों की आवश्यकता

डॉ. सुनील शर्मा *

प्रस्तावना – 'मूल्य हमारी आस्थाओं और सामाजिक मर्यादाओं पर आधारित आचरण के सिध्दांत है। मानवीय मूल्य भारतीय संस्कृति की पहचान है। पूर्वजों से विरासत में मिली अनमोल धरोहर है। जो संपूर्ण विश्व में भारत की पहचान का प्रतीक है।'

नैतिक मूल्य मानव जीवन की रीढ है। जिस पर बडी-बडी इमारतें खडी की जा सकती है। भारतीय सभ्यता के इतिहास पर दृष्टिपात किया जाए तो रामायणकाल की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट होता है। जिसमें उस काल के नर नारि नैतिकता के आचरण से परिपूर्ण रहे थे। मर्यादा पुरूषोत्तम राम स्वयं नैतिकता की पराकाष्ठा के सशक्त उदाहरण है, जिन्होनें पिता के वचन के लिए बिना अपराध के ही 14 वर्षो का वनवास सहर्ष स्वीकार किया था। साथ ही जीवन पर्यन्त नैतिकता का आचरण करते रहे वहीं उनके अनुज भरत ने 14 वर्ष बाद राम के वनवास से लोटने पर राज्य राम को वापस किया।

भगवतगीता में 26 मानवीय मूल्यों की विवेचना है जो कि वाल्मिकी रामायण के समान ही है। मानवीय मूल्यों के संबंध में गया है कि मानवीय मूल्य हिमालय के समान दृढ, विष्णु के समान शूरवीर, चंद्र के समान सोम्य तथा आनंददायक है। जो पृथ्वी के समान धैर्यवान, कुबैर के समान दानी भी है। इसी प्रकार महाभारत काल में भी आपसी युध्द के बावजूद भी मर्यादाओं का तथा नैतिकता का आचरण किया जाता रहा। युध्द के अपने नियम थे, धोखेबाजी नहीं थी तथा समय का पालन होता था।

देश के इसके बाद का इतिहास भी बेहतर नैतिकता के आचरण से परिपूर्ण रहा है। किंतु 20 सदी के अंत तथा 21 वी सदी के बाद से आचरण में निरंतर परिवर्तन हो रहे परिलक्षित होते है। आज भाई-भाई का शत्रु बनकर कार्य कर रहा है। पुत्र का माता- पिता के प्रति ऐसा आचरण हो रहा है कि पीडित अभिभावकों को वृद्धाश्रमों को अपनी शरण स्थली बनाना पड रहा है। वहीं लगातार चोरी, डकैती, बलात्कार, योन अपराधों, हत्या, आत्महत्या आदि की घटनाओं में लगातार वृद्धि हो रही है। यह नैतिकता के पतन की पराकाष्ठा ही है। आज टी.वी. चैनलों में ऐसे कार्यक्रम दिखाए जा रहे है जो परिवार के समस्त सदस्य एक साथ बैठकर नहीं देख सकते। मादक पदार्थों का बेरोक तरीको से सेवन बढता जा रहा है। वहीं साइबर अपराध और दूषित वेवसाईट इनको बढावा दे रही है। आज बाजार में नैतिक आचरण को सकारात्मक बनाने का साहित्य भी नदारद होता जाता जा है।

आज समाचार पत्रों में प्राय: ऐसी घटनाऐं प्रकाशित होती रहती है कि जिस पढकर पालको के मुख से ये शब्द स्वत: ही निकल पडते है कि समाज कितना गिर गया है। नैतिकता नाम की कोई चीज नहीं रह गई है। जब कही कोई गलत या अनुचित घटना घटती है तो लोग नैतिक मूल्यों की दुहाई देने लगते है। आधुनिक परिवार में पति-पत्नी में भी परस्पर समर्पण की भावना का अभाव स्पष्टत: परिलक्षित हो रहा है। दोनों के अपने -अपने अहंकार है और इसीलिए तलाक आदि के मामले बढ रहे है, जिनसे से परिवारों का विघटन हो रहा है। समर्पण की कमी और अहंकार की अधिकता ने चारित्रिक पतन को भी विस्तार दिया है। प्रगति की इस अंधी दौड में बराबरी करने के लिए युवा वर्ग किसी भी मर्यादा को नष्ट करने की स्थिति में हैं। जब माता-पिता ही बच्चों को समय नहीं दे पाते है तो बच्चों में नैतिकता का विकास कैसे और क्यों होगा!

आज यह अवधारणा बन गई है कि धनवान और दबंग व्यक्ति ही सामाजिक प्रतिष्ठा प्राप्त करता हैं सफलता और सफल जीवन के पैमानों पर परिवर्तन आ चुका है। भारत की 65 प्रतिशत आबादी युवावर्ग की है। युवा अनेक क्षेत्रों जैसे-खेल, विज्ञान, अंतरिक्ष तथा आर्थिक एवं राजनैतिक तथा समाजसेवा के क्षेत्र में कीर्तिमान बना रहा है। वहीं नैतिकता पीछे छूटती जा रही है।

समाज में सहयोग नहीं शोषण पनप रहा हैं दिन – दिन अनैतिकता, अवांछनीयता, उच्छंखलता, अदूरदर्शिता, एवं असामाजिकता की विघटनकारी प्रवृत्तियाँ बढ़ती जा रही है और भीतर ही भीतर अपनी संघ शक्ति खोखली होती जा रही है। न इस सामाजिक स्थिति में व्यक्ति को उत्साह मिल रहा है और न व्यक्ति मिलजुल कर समाज का स्तर उठा रहे है। विनाश और विघटन बढ़ रहा है और भविष्य का क्षितिज अंधकार से घिरता चला जाता है। इसको रोकने के लिए ऐसी तीव्र विचार पद्धति का विकास आवश्यक है जो जनमानस को झकझोर कर रख दे और विनाश की ओर बढ़ते कदमों को रोक कर उन्हें निर्माण की दिशा में अग्रसर करे। ऐसा शिक्षण, शिक्षण संस्थाओं में भी चलना चाहिए सरकार को ऐसे कदम उठाने चाहिए। पर वर्तमान स्थिति में सरकार जिस दलदल में फँसी है, उससे उबरना ही उसे कठिन पड़ रहा है। ऐसे मौलिक सूझबूझ के साहस भरे कदम उठाने की फिलहाल तो उससे आशा नहीं करना चाहिए। यह कार्य जन स्तर पर आरंभ किया जाए तो ही उसमें कुछ प्रगति हो सकती है। आरंभ यदि सही दिशा में किया जाए और उसका स्वरूप छोटा हो, तो भी अपनी उपयोगिता के कारण उसके आगे बढ़ने की आवश्यकता है।

कुल मिलाकर नैतिकता पतन के चरम पर पहुँच चुकी है। आवश्यकता है कि भारतीय संस्कृति और सभ्यता को पुनर्जीवित किया जावे। इसके लिए नैतिक मूल्यों को पुन: स्थापित किये जाना है। इसके लिए टी0वी0 चैनल, साहित्य आदि को सकारात्मक बनाने की आवष्यकता है। साथ ही पाठयक्रमों में नैतिक शिक्षा को अनिवार्यत: शामिल किये जाने की आवश्यकता है। इस संदर्भ में सब टीवी पर प्रसारित होने वाला सीरियल 'तारक मेहता का उल्टा चश्मा' युवा पीढी को आधुनिक परिवेष में जीने के साथ ही नैतिकता एवं बढों के प्रति आदर भाव के साथ ही नैतिकता का पाढ पढाने में सफल रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. नैतिक मूल्य और भाषा- प्रो शुभा तिवारी, मध्यप्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी, भोपाल।
2. प्रभा नैतिक शिक्षा बुक- अरविंद प्रकाशन, मेरठ।
3. नैतिक शिक्षा स्वरूप, समस्या और निदान, पं. मनमोहनलाल दवे, एबी पब्लिकेशन, दिल्ली।
4. नैतिक शिक्षा, श्रीराम शर्मा, भारतीय साहित्य संग्रह, मथुरा।
5. समाचार पत्र, पत्रिकाऐं।

* प्राध्यापक, शासकीय महाविद्यालय, बड़वाह, जिला – खरगौन (म.प्र.) भारत

वर्तमान शिक्षा में नैतिक मूल्यों की भूमिका

डॉ. अभय मुंगी *

प्रस्तावना – शिक्षा और शिष्टाचार (नैतिकता) दो सगी बहनों के समान है वर्तमान शिक्षा प्रणाली से बच्चों में नैतिक मूल्य गायब सी हो गई है। प्राय: देखने में आता है कि अधिकांश विद्यार्थी स्कूल कॉलेज से शिक्षा लेकर घर लौटते हैं किन्तु अपनी बहन शिष्टाचार को घर में प्रवेश नहीं करने देते हैं, यही कारण है कि बच्चे घर में जिद, अमर्यादित व्यवहार, या कभी कभी बद्तमीजी की हद पार कर जाते हैं। आज का युवा पढ़ा लिखा होकर आधुनिक बनने की होड़ में परम्परा और नैतिक मूल्यों से कटता जा रहा है। आज के बच्चे संस्कारित होने के लिए नहीं बल्कि धन कमाने के गुर सिखाने के लिए पढ़ाए जाते हैं। नैतिक मूल्य जीवन की नींव के पत्थर हैं, इसी पर मनुष्य का स्वस्थ्य शरीर खड़ा है, यदि नींव ही कमजोर होगी तो ढांचे को धराशायी होने में समय नहीं लगेगा। युवा आगे तो बढ़ा किन्तु अपनी पारम्परिक नैतिकता को दाव पर लगा कर, क्योंकि यही नैतिक मूल्य शिक्षित व्यक्ति के सुखी संयमित जीवन का आधार होते हैं।

वर्तमान शिक्षा प्रणाली – भारत में मैकाले की शिक्षा प्रणाली 1860 से ही लागू है। लेकिन यह शिक्षा प्रणाली में गुरूकुल के प्रति जो छात्र और समाज में सम्मान हुआ करता था, वह प्राय: समाप्त कर दिया है और शिक्षक केवल वेतनभोगी नौकर बनकर रह गया है। क्योंकि शिक्षा को आज एक उद्योग का दर्जा मिल चुका है। जिसमें मनुष्य को चरित्रवान और योग्य बनाने की बजाए, पैसा कमाने के योग्य बनाया जाता है। चाहे उसमें नैतिकता ना हो। यानि आज की वर्तमान शिक्षा मानव को रूपया कमाने की चलती फिरती मशीन बनाने का गुर सिखाती है और इस पैसा कमाने की चकाचौंध में मनुष्य के सारे रिश्ते तार तार हो गए हैं और माता–पिता, दादा–दादी के प्रति बड़ों के प्रति सम्मान की भावना खत्म हो चुकी हैं। हो भी क्यों ना ? क्योंकि उसके पास इस भागमभाग में अपने परिवार के लिए समय ही नहीं बचा है। दुसरा उसका खाना पीना संतुलित और समय पर ना होने से कई प्रकार की शारीरिक और मानसिक बीमारी का सामना करना पड़ता है।

प्राय: इस प्रतिस्पर्धी समय में माता–पिता अपने बच्चों को पढ़ाई के लिए प्रेरित कर रहे हैं तथा प्रतिस्पर्धी परीक्षाओं के बारे में विद्यार्थियों को सफल होने हेतु प्रेरित किया जाता है। किंतु इस पूरे वातावरण में विद्यार्थियों को कहीं भी नैतिक मूल्यों के बारे में नहीं बताया जाता है और वही विद्यार्थी प्रतिस्पर्धी परीक्षाओं में अच्छे अंकों से उर्त्तीण होकर या तो विदेश चला जाता है या किसी निजी संस्थान में नौकरी प्राप्त कर अपने स्वयं का ही विकास करता है, चूंकि उसे बचपन से ही नैतिक मूल्यों के बारे में नहीं बताया गया है। इस कारण वह परिवार, समाज और देश के बारे में भी सकारात्मक सोच नहीं रखता है। अमेरिका में कुल चिकित्सकों में से 30 प्रतिशत भारतीय चिकित्सक हैं। ऐसे कई देश हैं जहाँ कई भारतीय कार्य कर रहे हैं। यानि हमारे यहाँ ब्रेड ड्रेन हो रहा है, यदि नैतिक मूल्य उन्हें सिखाया जाता तो ये उच्च शिक्षित युवा अपने देश में ही रहकर देश की सेवा करते।

ऐसा भी नहीं कि सारे युवा एक जैसे हैं कुछ उदाहरण ऐसे भी हैं, जिन्होंने अपने देश में ही रहकर विदेशी कंपनियों के करोड़ों के ऑफर को ठुकराया है और यहाँ हजारों लोगों को रोजगार दिया है।

नैतिक मूल्यों की भूमिका – इस हेतु नैतिक मूल्य देने का प्रारंभिक प्रयास परिवार को भीतर से ही करना होगा, क्योंकि परिवार किसी भी विद्यार्थी की प्रथम पाठशाला होती है, इस पाठशाला के वरिष्ठ सदस्य जो दादा–दादी, माता–पिता, या बड़े भाई–बहन भी हो सकते हैं। सभी मिलकर संयुक्त रूप से कृतज्ञता का और शिष्टाचार का मिलाजुला आचरण प्रस्तुत करें, तभी विद्यार्थियों के जीवन में दोनों बहने शिक्षा और नैतिक मूल्य ठीक ढंग से आयेंगी। छोटा सा भी काम हो तो प्रशंसा अवश्य करें। घर में जो भी सदस्य रहते हैं वे जो भी काम कर सकते हैं वे वह काम अवश्य करें, इससे वह सम्मानित महसूस करेगा।

दूसरों के प्रति शिष्ट होने में मन बड़ी बाधा पहुँचाता है मन सक्रिय हो, भरापुरा हो तो कभी भी सही काम नहीं करेगा। मन निष्क्रिय हो या अनुपस्थित हो तो अच्छे काम होगें। इन दोनों के बीच एक कोरा मन भी है जिसे देखकर कृतज्ञ होना, शिष्ट होना बड़ा ही आसान है।

आज जरूरत वर्तमान शिक्षा को मूल्य आधारित बनाने की है। साथ ही गुरू और शिष्य के बीच आपसी संबंधों पर जोर दिए जाने की जरूरत है। चरित्र निर्माण के लिए विशेष पाठ्यक्रम स्कूली पाठ्यक्रम में शामिल करने की भी जरूरत है। उच्च शिक्षा में तो इसे इस वर्ष प्रथम सेमेस्टर के आधार पाठ्यक्रम में शामिल कर लिया गया है, जो कि स्वागत योग्य है। इस प्रकार जिस देश में सर्वाधिक युवाशक्ति हो, पूरे विश्व की नजरें आज भारत के युवाओं पर हैं, यदि उन्हें अच्छे संस्कार दिए जाए, बड़ों के प्रति सम्मान, दया, करूणा, क्षमा तथा समाज और देश के प्रति देशभक्ति का पाठ समझाया जाये तो कोई कारण नहीं कि यहाँ का युवा अपनी मातृभूमि को छोड़ दे।

अत: यदि हमें देश का संर्वागीण विकास करना है तो माता–पिता, समाज, शिक्षक, समाज सुधारक, चिंतक, सभी की सामुहिक जिम्मेदारी है कि वे समय समय पर बच्चों को संस्कारवान बनायें, ताकि ये बच्चे युवा होकर अपने राष्ट्र के विकास में मानवीय मूल्यों तथा भौतिक मूल्यों को प्रभावी बनायें।इसलिए घर के सभी सदस्य पूजा पाठ के साथ कुछ समय योग भी जरूर करें, यदि अब भी हमने विलम्ब किया और युवाओं को कर्त्तव्य बोध करने में सफल नहीं हो पाये और शिक्षा के माध्यम से नैतिकता नहीं सीखा पाये तो आने वाली पीढ़ी हमें कभी माफ नहीं करेगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. विभिन्न पत्र पत्रिकाएं।
2. विभिन्न वेब साईट्स।
3. आधार पाठ्यक्रम – नैतिक मूल्य एवं भाषा, बीकॉम प्रथम सेमिस्टर।

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय महाविद्यालय बड़वाह, जिला–खरगोन (म.प्र.) भारत

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में नैतिक मूल्यों की आवश्यकता, चुनौतियां एवं समाधान

डॉ. गुलाब सोलंकी * प्रो. वीणा बरडे **

प्रस्तावना – मानव जीवन बहुत जटिल हैं। भारत में सब का जीवन एक समान नहीं हैं, यहां आर्थिक, सामाजिक, संस्कृतिक विषमताएं हैं तो धर्म, जाति और भाषा के आधार पर मानव खेमों में बटा हुआ हैं। वह अलग-अलग आस्थाओं में जीता हैं ईश्वर को भिन्न रूपों में पूजता हैं, और अलग-अलग भाषा को बोलता हैं। उनमें एक ही बात समान रूप से लागू होती हैं, वह हैं नैतिक मूल्य, जीवन मूल्य जो हर परिस्थिति में एक समान हैं, जिसका निर्वहन प्रत्येक व्यक्ति के लिए आवष्यक हैं।

'नैतिक मूल्य भारतीय संस्कृति की पहचान हैं, पुरखों से विरासत में मिली अनमोल धरोहर हैं, वे संपूर्ण विश्व में भारत ही पहचान का प्रतीक हैं।'

जब हम अपने आचरण और व्यवहार को समाज के नीतिगत दायरे में लाते हैं तो हमारे मूल्य नैतिक मूल्य बन जाते हैं। समाज के नीतिगत मानको के अनुसार अपने आचरण, व्यवहार और सिद्धातों को ढ़ालना नैतिक मूल्य हैं।

भगवत गीता में 26 मानवीय मूल्यों की विवेचना हैं तो वाल्मीकि रामायण में भी मानवीय मूल्यों पर विस्तार से प्रकाश डाला गया हैं, नैतिक मूल्यों के संबंध में कहा गया हैं कि नैतिक मूल्य हिमालय के समान दृढ़, विष्णु के समान शूर वीर, चंद्र के समान सौम्य, आनंददायक हैं, जो पृथ्वी के समान धैर्यवान, कुबेर के समान दानी भी हैं। मूल्य हमारी आस्थाओं और सामाजिक मर्यादाओं पर आधारित आचरण के सिद्धांत हैं।

जैसे-जैसे इतिहास आगे बढ़ता हैं, सामाजिक परिवर्तन होते हैं। मनुष्य की जीवन शैली प्रभावित होती हैं। तो लोगों की सोच सामर्थ्य औंर दक्षताए बदलती हैं। ऐसे अवसरो पर नैतिक मूल्य संक्रमण काल से गुजरते हैं।

नैतिक मूल्यों के आधार तत्व परिवार, समाज और शैक्षणिक संस्थाएं। परिवार मानव जीवन का महत्वपूर्ण अंग हैं। परिवार की जीवन शैली को आत्मसाथ करते हुए बच्चा बड़ा होता हैं। बच्चा नैतिक मूल्यों को भी आत्मसाथ करता हैं परिवार के संस्कारो की छाप उसके जीवन में दिखाई देती हैं इसलिए कहा जाता हैं कि बच्चे की प्रथम पाठषाला परिवार होता हैं।

समाज मनुष्य के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता हैं मनुष्यो के रहन सहन को बच्चा देखता हैं औंर अनुसरण करता हैं।

शैक्षणिक संस्थाएं ज्ञान के साथ-साथ में संस्कारो को आगे बढ़ाने में महत्वपूर्ण होती हैं। नैतिक मूल्यों की शुरूआत सही आचरण, सत्य, प्यार, शांति, अनुशासन से होती हैं। जो बच्चा पाठशाला में अपने गुरू एवं सहपाठियों से सिखता है।

वर्तमान में प्रत्येक व्यक्ति, समाज और राष्ट्र अपने परिवेश और अपनी आवश्यकताओं के अनुरूप नैतिक मूल्यों को परिभाषित कर रहा हैं। चारो ओर एक विरोधाभास उत्पन्न हो रहा हैं, जिसके कारण नैतिक मूल्य संकट के दौर से गुजर रहे हैं।

हमारा समाज नैतिक रूप से तो उन्नत हो रहा हैं, किन्तु नैतिक मूल्यों की दृष्टि में पतनशीलता की ओर अग्रसर हैं।

नैतिकवाद ने मानवीय संवेदना को संकुचित कर दिया हैं। स्वहित के आगे राष्ट्रहित गौण हो गया हैं। नैतिक मूल्यों में गिरावट के कारण व्यक्ति के मूल्य बदल गए हैं। सच्चाई, वफादरी, ईमानदारी, शिष्टाचार, सदाचार, त्याग, मर्यादा, अनुशासन आदि का त्याग करते जा रहे हैं।

नैतिक मूल्यों के समक्ष अनेक चुनौतियां अपना सीना ताने खड़ी हैं। जिसमें पाश्चात्य संस्कृति, भ्रष्टाचार, चकाचौंध, बेरोजगारी, दिखावा प्रदर्शन, राजनीति और राजनैतिक वातावरण सम्मिलित हैं। नैतिक मूल्यों मे गिरावट के लिए दूरदर्शन, मोबाईल आदि भूमिका भी महत्वपूर्ण हैं।

नैतिक मूल्यों के अभाव के कारण व्यक्ति के चरित्र में गिरावट, चोरी, डकैती, बलात्कार, हिंसा, हत्या जैसी प्रकृतियां पनप रही हैं।

भारतीय संस्कृति में जीवन मूल्यों को अत्याधिक महत्व दिया जाता हैं। मूल्यों के आधार पर ही आदर्श राष्ट्र और आदर्श समाज की स्थापना की जा सकती हैं।

नैतिक मूल्यों के अवमूल्यन ने संस्कृति को उस चौराहे पर लाकर खड़ा कर दिया हैं, कि हमारी युवा पीढ़ी ने सारे बंधन तोड़ दिए हैं, गुरू का सम्मान, माता-पिता की सेवा, अतिथि सत्कार, मर्यादा, महिलाओं का सम्मान सब भुला दिया हैं।

विवेकानंद के अनुसार बाल्यकाल से नैतिक मूल्यों पर जोर दिया जाना चाहिए अगर ऐसा नहीं किया तो गरीबी और बेरोजगारी तो मिट जायेगी, लेकिन वेश्यावृति, भ्रष्टाचार, आतंकवाद नहीं मिट पायेंगे।

वर्तमान में बच्चों को अच्छे संस्कारो की आवष्यकता हैं हम अपने चरित्र से, व्यवहार से बच्चों के समक्ष नैतिक मूल्यों का उदाहरण प्रस्तुत कर सकते हैं। हर कार्य अपनी अंतरात्मा शुद्ध आचरण, मर्यादापूर्ण आचरण, व्यवहार से करे तो निश्चित ही परिवार, समाज, राष्ट्र को नैतिक मूल्यों से श्रृंगारित कर पायेंगे।

'युवा पीढ़ी में नैतिक मूल्यों में कमी नजर आ रही हैं। आज नैतिक मूल्यों का अमूल्यन हो रहा हैं। जो संस्कार हमारे पूर्वजों के थे वे संस्कार हम अपनी नई पीढ़ी को देने में कामयाब नहीं हो रहे हैं।'

नैतिक मूल्यों के अभाव में परिवार टूट रहे हैं, व्यक्ति के चरित्र में गिरावट आ रही है। शिक्षा के स्तर में गिरावट हैं तो अधिकारी भ्रष्टाचार में लिप्त हैं, नेता

* प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय महाविद्यालय, धामनोद, जिला-धार (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय महाविद्यालय, धामनोद, जिला-धार (म.प्र.) भारत

अपने जेब भरने को लालायित हैं, ऐसी परिस्थिति से छुटकारा नैतिक मूल्यों की स्थापना से ही संभव हो सकता हैं।

नैतिक मूल्यों की पुनः स्थापना समाज, परिवार, राज्य एवं राष्ट्र के लिए एक चुनौति हैं। नैतिक मूल्य कानून बनाकर या कठोरता से लागू नहीं किया जा सकता जैसे महिलाओं पर होने वाले अत्याचार, भ्रूणहत्या, बलात्कार जैसी घटनाओं पर कठोर कानून बने, कठोरता से लागू करने का भाव भी व्यक्त किया लेकिन क्या? सफलता मिली जवाब नहीं में मिलता हैं। घटनाओं में दिनों दिन बढ़ोतरी होती जा रही हैं। कानून भी मजबूर दिखाई देता हैं समाज कानून की ओर निगाहे लगा रहा हैं।

नैतिक मूल्यों की स्थापना समाज की सोच, लोगों के भावों, विचारो में परिवर्तन से ही संभव हैं। नैतिक शिक्षा से ज्ञान ज्योति जगाकर आम लोगों के मूल्यों को जगाना या जाग्रत कराना होगा और यह मानव की सकारात्मक सौच से ही संभव हैं। अपराध रहित समाज की शुरूआत ही नैतिक मूल्यों से की जा सकती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. प्रो. शुभा तिभारी – नैतिक मूल्य और भाषा म. प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल।
2. दैनिक भास्कर।
3. दैनिक नईदुनियां।
4. योजना पत्रिका।
5. कुरूक्षेत्र।

****

नैतिक मूल्यों के विकास में राष्ट्रीय सेवा योजना की भूमिका

डॉ. आर. के. रावत *

प्रस्तावना – नैतिक मूल्य सभ्यता की पहचान होते हैं व्यक्ति अपने व्यक्तित्व से पहचाना जाता हैं, नैतिक मूल्य मनुष्य के आभूषण होते हैं जिसे तरह से आभूषण धारण किया हुआ व्यक्ति सुन्दरता को प्राप्त करता हैं उसी प्रकार नैतिक मूल्य व्यक्ति के व्यक्तित्व में चार चाँद लगाते हैं। नैतिक मूल्य का शाब्दिक अर्थ संस्कार होता हैं, जन्म से माता–पिता, गुरू, परिवार व समाज से मिलते हैं संस्कारी बालक अपने परिवार, कूल, समाज व देश का नाम रोशन करता हैं।

आधुनिक समय में हमारे युवाओं ने नैतिक मूल्यों को आधुनिकता से जोड़ दिया हैं युवाओं को पश्चिमी संस्कृति ने अपने रंग में इस तरह से रंगा हैं कि वह युवा हमारी प्राचीन संस्कृति को पश्चिमी संस्कृति मान बैठा हैं यही से हमारे नैतिक मूल्यों को भूलाया नहीं हैं बल्कि उसे पाष्चात्य संस्कृति से जोड़ दिया हैं। प्राचीन काल के गुरूकुल शिक्षा में विद्यार्थी विद्या अर्जन के साथ नैतिक मूल्यों को सिखाता था और उसे व्यवहार में लाता था वह अपने गुरू को दो हाथ जोड़ कर करता था। गुरू के समक्ष अपने आप को अनशासित होकर पेष होता था। गुरू–शिष्य का एक पवित्र रिश्ता था।

जहां शिष्य का अपने गुरू के प्रति अपार सम्मान का भाव होता था वही गुरू अपने शिष्य को पूर्ण निष्ठा व आत्मभाव से विद्या ज्ञान के साथ नैतिक शिक्षा प्रदान करता था। आधुनिक समय में गुरू–शिष्य का रिश्ता बदला सा गया हैं आधुनिक शिक्षा में नैतिकता कम व्यावसायिकता ज्यादा प्रतीत होती हैं न शिश्य का अपने गुरू के प्रति समर्पण का भाव रहा हैं और नहीं गुरू अपने मूल उद्देश्य को पूरा कर पा रहा हैं।

नैतिकता एक वृक्ष की जड़ो की भांति होती हैं जो अपने जड़ो की मजबूत पकड़ से वृक्ष को सीधे खड़ा रखता हैं। मजबूत जड़ो वाला वृक्ष धुप, छाव, आंधी, तुफान, बारिश हर परस्थिति से निपटकर सदा लहलाते रहता हैं उसी प्रकार नैतिक मूल्यों से परिपूर्ण व्यक्ति जीवप के हर क्षेत्र में अपनी सफलता के झण्डे गाड़ता हैं।

नैतिकता में कमी को लेकर केवल युवाओ को दोष देना उचित न होगा। बालक वही सिखता हैं जिसे वह बचपन से देखता और जो उसे सिखाया जाता हैं अत: बालको में नैतिकता में कमी हेतु मैं सर्वप्रथम माता–पिता को दोषी मानता हूँ। माता–पिता अपने बच्चों को करने के लिए कुछ कहते हैं जबकि स्वयं करते कुछ और बच्चे से कहते हैं झुठ नहीं बोलना चाहिए लेकिन कभी उन्हे कोई ढुढते हुए घर आता हैं वही माता पिता बच्चों से यह कहलवाते हैं कि बेटा बोल दो की पापा घर पर नहीं हैं यहीं से बच्चा झुठ की राह पकड़ लेता हैं। इस बात पर जब माता पिता कायम नहीं रहते हैं तो बच्चे सच्चाई की राह पर कैसे चलेंगे। माता पिता बचपन से ही बच्चों को सिखाते हैं कि बेटा यह मेरा हैं बच्चा भी यह रट लगाता हैं और वह फिर परिवार के अन्य सदस्यों से दूरी बनाते चला जाता हैं बड़ो के प्रति आदर भाव को वह महत्वहीन मानने लगता हैं नैतिक मूल्यों में गिरावट का दूसरा प्रमुख कारण वर्तमान शिक्षा पद्धति हैं आज जो शिक्षा पद्धति हमारे देश में विद्यमान हैं उसमें कई खामियां हैं हम कहते तो यह हैं कि शिक्षा की गुणवत्ता को सुधार रहे हैं लेकिन वास्तविकता उससे दूर हैं आज शिक्षा केवल व्यावसायिक होती जा रही हैं आज हम केवल एक डॉक्टर, इंजीनियर, प्रशासनिक अधिकारी बना रहे हैं। जो पैसा जो कमा सकता हैं परन्तु हम एक अच्छा इंसान बनाने में कामयाब नहीं हो पा रहे हैं जो इंसानियत के साथ धन कमाए।

नैतिक मूल्यों के विकास में राष्ट्रीय सेवा योजना की महत्ती भूमिका हैं रासेयो की स्थापना का आश्य ही यही था कि छात्र में स्वप्रेरित अनुशासन दायित्व बोध, चेतना के साथ व्यक्तित्व का विकास हो और व्यक्ति का व्यक्तित्व ही नैतिक मूल्य को प्रदर्शित करता हैं रासेयो इस संदर्भ में अपनी महत्ती भूमिका निभा रहा हैं।

स्कूल शिक्षा हो या महाविद्यालय शिक्षा, शिक्षा के साथ शिष्टाचार अर्थात नैतिक मूल्यों का विशेष महत्व है। प्राय: यह कार्य समाज सेवा एवं राष्ट्र सेवा का भाव पैदा करता है। और इसी बात को ध्यान में रखते हुए भारत सरकार द्वारा राष्ट्रपिता महात्मा गॉधी के जन्म शताब्दी वर्ष 1969 में राष्ट्रीय सेवा योजना को स्कूल शिक्षा एवं उच्च शिक्षा से जुड़े विद्यार्थियों में सामाजिक दायित्व , चेतना, स्वप्रेरित, अनुशासन के साथ श्रम के प्रति सम्मान की भावना उत्पन्न करने के लिए राष्ट्रीय सेवा योजना का प्रारंभ किया है जो निष्चित रूप से विद्यार्थियों एवं शिक्षकों को अपने अपने व्यक्तित्व एवं ज्ञान को समाज की वास्तविकताओं की कसौटी पर जाँचने का अवसर प्रदान करता है। क्योंकि राष्ट्रीय सेवा योजना ईकाई के माध्यम से व्यक्तित्व विकास संबधी विभिन्न उल्लेखनीय कार्य एवं नवाचार किये जाते हैं जिनकी नैतिक मूल्यों के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका होती है। चूकि हम जानते है कि भविष्य की संम्भावनाएँ युवा शक्ति में निहित होती है। युवाओं में उच्च आदर्शो एवं सामाजिक दायित्व के शाष्वत मूल्यों की स्थापना आवश्यक है और राष्ट्रीय सेवा योजना के माध्यम से यह कार्य सफलता पूर्वक संम्पन्न किया जा रहा है क्योंकि हमारी युवा शक्ति स्कूल शिक्षा एवं महाविद्यालयीन शिक्षा से होकर ही आगे बढ़ती है।

सामान्यत: विद्यार्थियों की प्रथम पाठशाला उसका अपना घर होता है। जहाँ उसमें संस्कार रूपी बीज अवतरित किये जाते है। किन्तु वर्तमान प्रतिस्पर्धा के युग में संयुक्त परिवार प्रथा समाप्त सी हो गई है और एकल परिवार प्रथा का चलन हो गया है। जिसमें मंहगाई का सामना करने एवं अपनी बढ़ती आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए माता–पिता दोनों ही किसी न किसी व्यवसाय में लगे होने के कारण बच्चों को पर्याप्त समय ही नहीं दे पा रहे है। तो बच्चों में नैतिक मूल्य एवं शिष्टाचार की स्थापना कैसे संभव है? ऐसे में भारत सरकार ने नैतिक मूल्यों के विकास के दायित्व को समझा और स्कूल शिक्षा एवं महाविद्यालय शिक्षा में राष्ट्रीय सेवा योजना इकाई लागू कर नैतिक मूल्यों के विकास भली भॉति पूरा कर रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. रासेयो संहिता।
2. समाचार पत्र, पत्रिकाएं।
3. कोठारी अतुल मूल्यों की शिक्षा।
4. डॉ.बैचन जीवन मूल्य।

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय महाविद्यालय, धामनोद, जिला–धार (म.प्र.) भारत

समाज में नैतिक शिक्षा की आवश्यकता

डॉ. भूपेन्द्र सिंह डावर *

प्रस्तावना – समाज के वर्तमान भविष्य के द्वारा समाज के युवा पीढ़ीयों को शिक्षा के महत्व को ध्यान में रखते हुये समाज के बदलाव के लिये युवाओं को शिक्षा से परिवार प्रारंभ कर शिक्षाप्रद विचार से समाज में अधिक–अधिक समाज के महत्व की आवश्यकता होगी। समाज के मूल्यों को परिवर्तन कर समाजजिक व्यवहारों को प्रेरणा देने का काम करना है। नैतिक मूल्य में निरंतर गिरावट को रोकने कि आवश्यकता समाज में होनी चाहिये। साथ ही युवाओं को आदर्श विचारों से तथा साहित्य समाज पत्र–पत्रिकाओं से युवा पीढ़ी को बदलना आवश्यक है। भारत में नैतिक मूल्यों को ह्रास तेजी हो रहा है आज के युवा समाजिक आचरण को बदलने के लिये समाज में नवाचारों को लाने का प्रयास कर समाजिक कुरूतियों में अपहरण, हत्या, भ्रष्टचार, बलात्कार जैसे अपराधों से युवा पीढ़ी को बचाव कर समाज के मुख्य धारा में जोड़ने का प्रयास कर समाज में नैतिक मूल्यों को बनाये रखने कि आवष्यकता होगी। इन नैतिक मूल्यों को समाज में अच्छाईयों को लाकर समाज कि जागरूकता लाकर समाधान करना है। नैतिक मूल्यों की शिक्षा का बीड़ा हमारे समाज में माताओं को दे रखा है जो कि सरासर अनैतिक है। बच्चों को नैतिक शिक्षा देने के लिये माता –पिता के साथ परिवार के प्रत्येक सदस्य दायित्व है। जो कि पारिवारिक माहौल के आचरण, व्यवहार से बच्चों में नैतिक गुणों का विकास होता है। एवं नैतिक मुल्यों जीवन पर्यन्त काम आता है।

समाज में सदियों से नैतिक शिक्षा चली आ रही सामाजिक अवस्थाओं को वर्तमान में सामाजिक अवधारणा तैयार कर समाज को बदलाव लाने कि आवश्यकता है। जिनसे समाज में सुधार वादी प्रयास कर छोटे–बडे .सभी तथ्यों को जोड़कर नैतिक शिक्षा को बढ़ावा देने कि आवश्यकता है।

समाज विज्ञान आज अपने इतिहास के ऐसे चौराहे पर खड़े हैं जहां उन्हे अपनी पहचान बनाये रखना कठिन हो गया हैं। विश्वयापीकरण को एक ऐसी प्रक्रिया चला गयी हैं जो संपूर्ण सामाजिक दूनिया को अपनी छोटी सी मुटठी में सारी दुनिया को कैद कर लेना चाहती है। यह दुनिया विशाल होकर भी प्रतिदिन छोटी होती जा रही हैं। सभी देश के समाजशास्त्र को विश्व स्तर पर लाने के प्रयास करने में मुझे हुए हैं। ऐसा अवस्था में जो आसान भय हमारे सामने हैं वह यह हैं कि हम एक ओर तो समाज में नैतिक मूल्यों को अन्य देशो के समाज के समक्ष लाना चाहते हैं और दूसरी ओर यह भी चाहते हैं कि समाज का विषय स्थानीय क्षेत्रिय समस्याओं का मुकाबला कारगर ढंग से कर समाज को एक साथ दो रास्तो पर चलना हैं। एक रास्ता अन्तर्राष्ट्रीय स्तर का हैं और दूसरा स्थानीय स्तर पर समाज में युवा पीढ़ी मे नैतिक मूल्यों को परिवार ही प्रथम पाठशाला से प्रारंभ होकर युवाओं में बदलाव करने के स्तर पर लाने का प्रयास करना चाहिए इसमें समाज में नैतिक मूल्यों के ह्रास को बनाये रखने के लिए साहित्य जगत, बुद्धिजीवी, प्रिन्ट मीडिया, इलेक्ट्रानिक मीडिया एवं राजनीतिक जगत से आरंभ करने पर ही नैतिक पतनों को दूर करने का प्रयास करना होगा।

सामाजिक मापदण्ड और मूल्य व्यक्ति के व्यवहार के मार्गदर्शक हैं। मापदण्ड व्यक्ति के व्यवहार पर नैतिक मूल्यों को एक सांचे में ढालना हैं। किसी समाज में मनुष्य को देखा जा सकता हैं लेकिन मानदण्ड और मूल्य देखने की वस्तु नहीं हैं। इनकी अभिव्यक्ति सामाजिक संबंधों के माध्यम से नैतिक मूल्य दिये जा सकते हैं। हजारो वर्ष पहले बच्चे अपने माता–पिता का सम्मान, आदर करते थे आज यह सम्मान, आदर में गिरावट बरकरार हैं। जब सभ्यताएं थी तब भी शिष्य–गुरू के प्रति श्रृद्धा के साथ देखते थे औंर आज आधुनिक युग की चकाचौंध में भी एक सीमित मात्रा में नैतिक मूल्य रूपी श्रृद्धा रखते हैं। प्रतिदिन हम दर्जनों लोगो से मिलते हैं हमारी बातचीत होता हैं, गपषप लड़ाते हैं इनमें से बहुत से लोग हमारे परिचय के आव–भाव से नैतिक मूल्यों की झलक दिखलाई पड़ती हैं। समाज में सांस्कृतिक मूल्यों को व्यवहार के अनुसार मानदण्ड, मूल्य औंर कुछ न होकर सांस्कृतिक के अंग हैं। दूसरे शब्दों में हम नैतिक मूल्यों की स्थिति अपनी दिन प्रतिदिन की गतिविधियों में काम करता हैं।

इस दृष्टिकोण से सामाजिक शोध का अर्थ किसी सामाजिक, नैतिक मूल्यों को सुलझाने या किसी प्रकल्पना की परीक्षा करने, नवीन घटनाओं को खोजने का कतिपय घटनाओं के बीच नवीन समाज ने युवाओ अपने परिवर्तनकारी मूल्यों का उपयोग हैं जिसकी सहायता से युवा पीढ़ी को नैतिक मूल्यों की निहित प्रक्रियाओं का अध्ययन, विश्लेषण एवं निरूपण किया जाता हैं। दुर्खीम का मत था कि 'प्रत्येक समाज में नैतिक मूल्य के कुछ निश्चित विचार, विश्वास, दृष्टिकोण, आदर्श मानक एवं मूल्य होते हैं। जिनसे उस समाज के सभी व्यक्ति समान रूप से प्रभावित होते हैं। प्रत्येक व्यक्ति की भूमिका होती हैं कि नैतिक पतनो को दोषारोपण न कर इसमें समस्याओं निवारण के रूप में मान कर समाज में नैतिक मूल्यों को बनाये रखने का प्रयास होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. दोषी एवं जैन, एम.एल.पी.सी –समाजशास्त्र नई दिशाएं, नेशनल पब्लिशिंग हाउस जयपुर नई दिल्ली।
2. सिंह, अशोक, श्याम –सामाजिक नियंत्रण एवं सामाजिक परिवर्तन मिश्रा ट्रेडिंग कार्पोरेशन वाराणसी।
3. मुखर्जी, डॉ.रविन्द्रनाथ, विवेक प्रकाशन, जवाहर नगर दिल्ली।

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय महाविद्यालय, धामनोद (म.प्र.) भारत

नैतिक मूल्य और वर्तमान शिक्षा - एक अध्ययन

प्रो. अंजना सेठिया *

प्रस्तावना – व्यक्ति के जैसे नैतिक मूल्य होते है वैसा ही उसका जीवन में प्रगट होता है इसमें शक की कोई गुंजाइश नहीं है कि इक्कीसवीं सदी में मूल्य आधारित शिक्षा को बेहद आवश्यकता है। दुनिया में कोई व्यक्ति किसी को नहीं निकालता उसकी विचारधाराएं जब टकराती है तो अलगाव उत्पन्न होता है और जब यही विचारधारा आपस में मेल खा जाती है तो जुड़ाव बन जाता है जबकि व्यक्ति के नैतिक मूल्य अच्छे होते है तो सारा संसार ही अच्छा हो जाता है किसी के सामने हम तभी झुकते है जब उसके विचार अच्छे होते है। अन्यथा अनैतिक मूल्य एवं दूषित विचार वालों से दूरी ही रखी जाती है। वर्तमान समय में नैतिक मूल्य का विघटन हो रहा है। दया, ममता, परोपकार, त्याग, भाईचारा आदि शब्दों को हम नैतिक मूल्य कहते है, परंतु वर्तमान समय में इन सभी मूल्यों का विघटन हो रहा है ऐसे समय उम्मीद की एक ही किरण है वह है मूल्य आधारित शिक्षा। आज सभी तरफ अविश्वास का माहौल बना हुआ हैं जिससे मानव में नकारात्मक सोच ज्यादा निर्मित हो रही है। ऐसे नकारात्मक माहौल को सकारात्मकता में परिवर्तन करने में शिक्षा ही कारगर साधन है, मूल्यों पर आधारित शिक्षा प्रदान करने से ही व्यक्ति की सोच में बदलाव आएगा।

आज भारतीय सामाजिक परिदृश्य में बहुत सारे बदलाव आए है। समाज में तेजी से परिवर्तन होने के कारण परम्परागत मूल्य तेजी से परिवर्तित हो रहे है। मूल्यों के परम्परागत ढांचे के चरमरा जाने के कारण युवा के समक्ष मूल्यों का संकट एवं आकुलता बहुत बढ़ गई है।

वर्तमान समय में नैतिक मूल्यों में गिरावट आने के कारण वर्तमान शिक्षा प्रणाली की भूमिका प्रभावी साबित नहीं हो रही है। शिक्षा ही एक ऐसा माध्यम है जिसके द्वारा किसी भी समाज का पुनर्गठन संभव है। प्राचीनकाल से ही हमारे पूर्वजों के द्वारा ज्ञान के संचित भंडार को शिक्षा के माध्यम से ही आगे की पीढ़ियों को दिया जाता था जिसके माध्यम से भावी पीढ़ी चरित्र निर्माण एवं पारम्परिक मूल्यों को ग्रहण करती थी।

वर्तमान शिक्षा रोजगार प्रदान करने के साथ ही पढ़े-लिखे बेरोजगारों की फौज खड़ी कर रही है। हमें वर्तमान शिक्षा में ऐसे तत्वों का समावेश करना पडेगा जिसमें ज्ञान एवं कौशल के विकास साथ ही नकारात्मकता से सकारात्मकता की दिशा में आगे बढ़े। वर्तमान शिक्षा में मूल्य आधारित शिक्षा हो जिनमें निम्न तत्वों का समावेश हो –

1. **सकारात्मक दिशा –** शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जो व्यक्ति के विकास को सकारात्मक दिशा में ले जायें जिससे वह आर्थिक स्वतंत्रता, स्वसमझ एंव आत्मविश्वास पैदा कर सके।

2. **पाठ्यक्रम चयन करने में स्वतंत्रता –** आज बच्चों पर पाठ्यक्रम थोपे जाते है जबकि बच्चों को अपनी रूचि, क्षमता, योग्यता के अनुसार पाठ्यक्रम चुनने की स्वतंत्रता हो।

3. **व्यक्तिगत तार्किकता विकसित करना –** पाठ्यक्रम ऐसे होने चाहिए जो बच्चों की अज्ञानता को दूर कर व्यक्तिगत तार्किकता विकसित कर सकें, क्यों कि अज्ञानता विकास में सबसे बड़ी रूकावट है। अज्ञानता के अभाव में ही हम अपने अधिकारों का प्रयोग नहीं कर सकते। एवं जो हमारे अधिकार नहीं है उनका प्रयोग करते है। दोनों ही स्थितियां खराब है अत: अज्ञानता को दूर करके व्यक्तिगत तार्किकता विकसित करना होगी।

4. **व्यावसायिक एवं तकनीकी पाठ्यक्रम –** विद्यार्थियों को ज्यादा से ज्यादा व्यावसायिक एवं तकनीकी पाठ्यक्रम चुनने के लिए प्रोत्साहित किया जाए ताकि बेरोजगार न रहकर अपनी जीविका आसानी से अर्जित कर सके।

5. **चारित्रिक गुणों का विकास –** वर्तमान शिक्षा ऐसी हो जो केवल भौतिकता की ओर भागना ही नहीं सिखाए बल्कि हमारे नैतिक मूल्य दया, ममता, परोपकार, त्याग आदि चारित्रिक गुणों का भी विकास करें।

6. **आत्मविश्वास जागृत करना –**शिक्षा ऐसी हो जो बच्चों में आत्मविश्वास जागृत करें क्यों कि खाली बोरी कभी खड़ी नहीं रह सकती तकिये से कभी कील ठोकी नहीं जा सकती। बच्चों में नैतिक मूल्य आत्मविश्वास से ही जागृत होंगे।

भारत में नैतिक मूल्यों का हास तेजी से हो रहा है। नशाखोरी, अपहरण, भ्रष्टाचार, बलात्मकार और हत्या जैसे अपराध तेजी से बढ़ रहे है। इनकी वजह से व्यक्ति डरा सहमा है एवं विकास नहीं हो रहा है।

सदियों से भारत की संस्कृति नैतिक मूल्यों व गुणों से परिपूर्ण है। हमारी संस्कृति नैतिक आचार विचार व व्यवहार का पालन करने के लिए सदैव प्रेरित करती है परंतु आज समाज और जीवन के हर एक क्षेत्र में नैतिक मूल्यों का हास तेजी से हो रहा है उसको रोकने का सबसे कारगार तरीका है वर्तमान शिक्षा ऐसी हो जिससे व्यक्ति बुराइया, चापलूसी और चालबाजी से दूर रहकर मूल्य परक शिक्षा प्राप्त कर सकारात्मक सोच के साथ अपना जीवन यापन करें।

अंत में, हमारे नैतिक जीवन में भी उच्चतम स्थिति पर पहुँचने के लिए अन्तर्ज्ञानात्मक दृष्टि अनिवार्य है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :-

1. नैतिक मूल्य ओर भाषा - म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल।
2. रिसर्च लिंक - Issue – 25 Vol – IV (8) JAN - Special - 2006
3. संबोधि धाम - 1 अगस्त 2011
4. इंटरनेट से प्राप्त जानकारी के आधार पर।
5. व्यक्तिगत विचार।

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय संस्कृत महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

वर्तमान समय में नैतिक मूल्य की आवश्यकता (नैतिक मूल्य एवं वर्तमान शिक्षा)

डॉ. यशोदा चौहान *

प्रस्तावना – मानव जीवन का हर पक्ष विविधता से भरा पड़ा है। हमारा प्रारम्भिक कालखण्ड सरलतम था लेकिन जैसे–जैसे हमारी आवश्यकता बढ़ी उसके समाधान के वैज्ञानिक तरीके बढ़े वैसे ही समाज की संरचना भी बदलती गयी। वर्तमान में नैतिक मूल्यों का ह्रास सबसे बड़ा संकट है। नैतिक मूल्य जीवन का नींव का पत्थर है, जिस पर शरीर रूपी भवन खड़ा होता है। आधुनिक सुख सुविधाओं और साधनों को बटोरने की आपाधापी में नैतिक मूल्यों का ह्रास सबसे बडा संकट है। यूवा वर्ग आधुनिक बनने की होड़ में परम्परा और मूल्यों से कटता जा रहा है, जिसके कारण उसके अंदर अनेक तरह के दुर्गुण आ गये है। आज समाज में जीवन जीने के प्रतिमान बदल रहे है। अब बच्चे संस्कारित होने के लिए नहीं बल्कि धन कमाने के गुर सिखाने के लिए पढ़ने जाते है।

जब भी मूल्यों की बात होती है, कई शब्द अलग–अलग संदर्भ में उपयोग में लाये जाते है, जैसे जीवन मूल्य ,नैतिक मूल्य और मानवीय मूल्य संभवत: इन सभी शब्दों के अर्थ और अभिप्राय एक ही है। मूल्य को किसी भी नाम से क्यों न पुकारा जाए वे उन गुणों की ओर इंगित करते है जिन्हें व्यक्ति महत्वपूर्ण मानता है भारतीय संस्कृति के अनुसार जीवन में मूल्य ही सत्य होते है। जीवन की शुद्ध क्रियाएं धर्म कहलाती है, धर्म में शांति , प्रेम और अहिंसा समाहित रहते है,ये पांच तत्व सत्य, धर्म, शांति, प्रेम और अहिंसा मानव मूल्य माने जाते है।

नैतिक मूल्यों के बारे में सामान्य अवधारणा है कि इन्हें औपचारिक रूप से सिखाया या पढ़ाया नहीं जा सकता। मूल्य हमें सही जीवन की अनुभूति प्रदान करते है, इन्हें केवल महसूस किया जा सकता है और यह व्यक्ति के आचरण के माध्यम से परिलक्षित होते है। शाश्वत होते हुए भी इनका कोई स्वरूप नहीं है, यही कारण है कि नैतिक मूल्यों की शिक्षा एक कठिन चुनौती है। किसी भी व्यक्ति के जीवन को संवारनें की तीन संस्थाओं की महत्वपूर्ण भूमिका होती है परिवार, शिक्षण और समाज।

परिवार – परिवार व्यक्ति के जीवन का प्रथम पड़ाव है परिवार जन्म लेने के बाद भावनात्मक संबंधों का प्रारम्भ होता है, मानवीय संबंधों का महत्व समझ में आता है पारस्परिक संबंधों की ऊर्जा प्राप्त होती है और परिवार की जीवन शैली को आत्मसात करते हुए बच्चे का विकास होता है। विकास की यह यात्रा मनुष्य के जीवन में सबसे महत्वपूर्ण और स्थायी भूमिका निभाती है अपने परिवार के जीवन मूल्यों को बच्चा आत्मसात करता है अपनी शैशव अवस्था में बच्चा अपने पारिवारिक वातावरण से अपनी प्रारम्भिक अनौपचारिक शिक्षा ग्रहण करता है। कई नैतिक मूल्यों से बच्चे का परिचय होता है जैसे सच बोलना, बड़ों का आदर करना, ईश्वर में विश्वास रखना, देश के प्रति श्रृद्धा रखना, पारिवारिक संसाधनों का मिल कर उपयोग करना, दूसरों की सहायता करना, गलत करने से बचना आदि। परिवार द्वारा दिए गए संस्कार पूरी जिन्दगी हमारे साथ रहते है, और परिवार के संस्कारों की छाप हमारे व्यक्तित्व में स्पष्ट दिखाई देती है।

भारत एक परिवार प्रधान देश है हमारे यहां सामाजिक व्यवस्था में परिवार को सबसे छोटी लेकिन महत्वपूर्ण इकाई मानी गई है, परिवारों से ही समाज बनता है अत: समाज के निर्माण में परिवार की भूमिका सर्वोपरि है। यदि परिवार अपने सदस्यों के व्यवहार और आचरण की जिम्मेदारी ले और इस राष्ट्रीय दायित्व को पूरी निष्ठा के साथ निभाएं तो स्वस्थ समाज का निर्माण होगा जो स्वस्थ राष्ट्र की आधार शिला होगी।

सुप्रसिद्ध अर्थशास्त्री और नोबल पुरस्कार विजेता श्री अमृत्य सेन शिक्षा को राष्ट्र के विकास की आधारभूत इकाई मानते है, उनके अनुसार शिक्षा वास्तव में दक्षता विकास की एक प्रक्रिया है, जो व्यक्तियों के विकल्प को विस्तारित करते हुए राष्ट्र को सशक्त बनाती है।

नैतिक मूल्यों के पतन की शुरूआत समाज में परिवर्तनशील व्यवस्था से है,क्योंकि समय और काल के साथ बदलाव आता गया, जो परिवार व्यवस्था से है। संयुक्त परिवार से एकल परिवार में टुटते हुए परिवार निश्चित रूप से सुखद जीवन जीने के लिए मिला परन्तु इसके कारण बच्चों के क्रियाकलापों पर माता–पिता का नियंत्रण कम होता जा रहा है। परिवार में भौतिक संसाधनों का महत्व भावनाओं से ऊपर हो चुका है ऐसी स्थिति में परिवार अपने मूल दायित्व से भटक चुके है। वे समाज को अच्छे नागरिक देने का उत्तरदायित्व पूरा नहीं कर पा रहे । नैतिक मूल्यों के पतन का यह मुख्य कारण है।

शैक्षणिक संस्थाएं – वर्तमान समय में नैतिक मूल्यों की दूसरी सिढ़ी शैक्षणिक संस्थाएं होती है जहां पर अनौपचारिक शिक्षा के बाद व्यक्ति औपचारिक और संस्थागत शिक्षा की आवश्यकता होती है। जहां परिवार के बाद अन्य लोगो के सम्पर्क में आना है और उनके जीवन से प्रभावित होता है नैतिक मूल्यों को प्रदान करने में इन दोनों की भूमिका परिवार के समान अहम भूमिका रहती है। विशेष रूप से बच्चों के बालपन पर शिक्षक का प्रभाव गहरा रहता है। एक अच्छा शिक्षक अपने विद्यार्थी के लिए एक अनुकरणीय आदर्श व्यक्ति रहता है। यही कारण है कि जब भी नैतिक मूल्यों की बात होती है। शैक्षणिक संस्थाओं की उपयोगिता और उपादेयता अवश्य होती है।

नैतिक मूल्य कक्षा में पढ़ाई के माध्यम से बच्चों तक नहीं पहुंचाये जा सकते। इसके लिए आसपास घटने वाली विभिन्न प्रकार की गतिविधियों के माध्यम से आती है विद्यार्थी के सम्पर्क में आने वाले प्रत्येक व्यक्ति का व्यवहार,

* सहायक प्राध्यापक एवं अध्यक्ष (भूगोल विभाग) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सेंधवा, जिला–बड़वानी (म.प्र.) भारत

आचरण और जीवन शैली यदि मूल्यपरक है तो विद्यार्थी भी उन मूल्यों को अपने आत्मसात करता जाता है। शैक्षणिक संस्था के प्रधानाध्यापक, कक्षा में पढ़ाने वाले शिक्षक, साथ में पढ़ने वाले सहपाठी इन सभी के आचरण व्यवहार का असर विद्यार्थी पर पड़ता है।

शालेय स्तर पर नैतिक मूल्यों को पढ़ाना – नैतिक मूल्यों स्थापित करने के लिये छोटी कक्षाओं से नैतिक मूल्यों को समझाना होगा तभी यह लाभप्रद सिद्ध होगा। क्योंकि बच्चा पाठशाला में प्रवेश लेता है तो परिवार द्वारा दिये गये मूल्यों के अतिरिक्त कोई भी जानकारी नहीं होती, उसका अपरिपक्व मस्तिष्क जो भी बताया उसे स्वीकार करने के लिए तैयार रहता है उसकी अपनी समझ अभी विकसित होना बाकी है। ऐसे में संस्कारों का सही रोपण संभव होता है। अत: पाठशालाओं में नैतिक मूल्यों के स्थापन संवर्धन और अनुवीक्षण के लिए सघन प्रयास होना चाहिए।

नैतिक मूल्यों के अध्ययन–अध्यापन के लिए शिक्षण शैली का भिन्न होना आवश्यक हो, तभी बच्चों को रूचि आयेगी। इसके लिए पढ़ाने के लिए कुछ कहानियां, वास्तविक जीवन की घटना को बताया जाय तो नैतिक मूल्यों को ग्रहण करने में विद्यार्थी अधिक रूचि दिखाएगा प्रतिदिन हमारे जीवन में कई घटनाएं घटती है। विद्यार्थियों को भी ऐसी घटनाओं का सामना करना, उनकी विवेचना करना और उनसे शिक्षा प्राप्त करना सिखाया जाना चाहिए। ये सीख नैतिक को सही समझने में सहायक होगी।

नैतिक मूल्यों के पठन–पाठन के लिए पृथक कालखण्ड होना चाहिए शिक्षाप्रद कहानियों का वाचन, महापुरूषों की जीवनी के अंश और छोटे–छोटे प्रेरक प्रसंगो का नाटकीय मंचन विद्यार्थियों के जीवन में घटित किसी प्रेरणादायक प्रसंग का प्रस्तुतीकरण, पर्यावरण और परिवेश को बचाने के लिए किए जाने वाले विभिन्न कार्यो की जानकारी, सभी के प्रति प्रेम उत्पन्न हो इसके लिए उपयुक्त गतिविधि का आयोजन और अन्य विधाओं के माध्यम से नैतिक मूल्य विद्यार्थियों तक पहुँचाये जा सकते है।

महाविद्यालय /विश्वविद्यालय स्तर पर नैतिक मूल्यों का पढ़ाना – जब नैतिक मूल्यों की पढ़ाने की बात उच्च शिक्षा व्यवस्था के संदर्भ में करते है तो पूरा परिदृष्य बहुत भिन्न प्रकार का हो जाता है। उच्च शिक्षा में प्रवेश लेने वाले छात्र पूर्ण रूप से विकसित मस्तिष्क और विचारधारा के साथ महाविद्यालयों में प्रवेश लेते है। जीवन के दो पड़ाव परिवार और पाठशाला पर करने के बाद वे उच्च शिक्षा के क्षेत्र में आते है। परिवार और प्रारम्भिक शिक्षण संस्थाओं से संस्कार और मूल्य की शिक्षा प्राप्त करने के बाद उनका उच्च शिक्षा में प्रवेश होता है। उनकी मानसिकता, विचारधारा और मूल्यों के प्रति आस्था निश्चित आकार ले चुकी होती है। अत: उच्च शिक्षा के विद्यार्थियों के लिए नैतिक शिक्षा पूर्णत: अनौपचारिक और अवलोकन पर आधारित होना चाहिए। देश के प्रति जिम्मेदार नागरिक के रूप में स्वीकृत युवा पीढ़ी को नैतिक मूल्यों के प्रति संवेदनशील बनाने पर ज्यादा जोर देना चाहिए। अपने चारो ओर घटने वाली अच्छी बुरी घटनाओं का सही विवेचन कर सके। उनमें मूल्यों का विकास पारिवारिक , सामाजिक और राष्ट्रीय संदर्भ में किया जाना चाहिए । उनकी सामाजिक उपयोगिता और उनकी शक्ति का राष्ट्र निर्माण में उपयोग, मूल्यों के माध्यम से समझाया जा सके, यदि उच्च शिक्षा को इन उद्देश्यों की पूर्ति करना है, और संस्कारवान व्यक्तियों का निर्माण करना है तो नैतिक शिक्षा की एक अलग दृष्टिकोण से पाठ्यक्रम का अंश बनाते हुए समाज और राष्ट्र के संदर्भ में नैतिक मूल्यों की व्यवस्था स्थापित करना होगा।

निष्कर्ष – नैतिक मूल्य मनुष्य के सुखी और संयमित जीवन के लिए सशक्त आधार प्रदान करते है। नैतिक मूल्यों की कमी सामाजिक विघटन की ओर ले जाती है, समय के साथ नैतिक मूल्यों की परिभाषाएं बदलती रहती है लेकिन कछ मूल्य ऐसे है जो शाश्वत है प्रत्येक काल और समय के साथ उनका अस्तित्व अनिवार्य है। अत: ऐसे मूल्यों की रक्षा करना, उनका संवर्धन का प्रयास करना और उनकी कमी को पूरा करने के लिए उन्हें पुन: स्थापित करना, प्रत्येक परिवार , समाज और राष्ट्र का कर्त्तव्य है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. प्रो. शुभा तिवारी – नैतिक मूल्य और भाषा (म.प्र.हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल)
2. पाटिल, अशोक डी. – भारतीय समाज (म.प्र.हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल1992)
3. इंटरनेट से प्राप्त जानकारी।

****

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में नैतिक मूल्यों की आवश्यकता, चुनौतिया एवं समाधान

डॉ. श्यामबिहारी मिश्रा * रवीन्द्र उपाध्याय**

प्रस्तावना – किसी राष्ट्र या समाज का महत्वपूर्ण साधन मानव मात को माना जाता है। परम्परागत रूप में माता – पिता ही पूर्ण रूप से बालक के जीवन के प्रारम्भिक वर्षो में उसके विकास के उत्तरदायी होते है। शारीरिक विकास के साथ ही संवेंगात्मक सामाजिक, आध्यामिक विकास की नींव रखी जाती है। मानव को सीखने के लिए शिक्षण की आवश्यकता होती है। शिक्षण करना, कराना एक शिक्षक का कार्य होता है। शिक्षक दर्शन और मनोविज्ञान की सहायता से व्यक्तित्व विकास अर्थात नैतिक विकास में योगदान देता है। शिक्षक अपने बालको के सम्बंध में जानकारी रखते हुए शिक्षा के उद्देश्य को स्पष्ट करता है। दर्शन एवं मनोविज्ञान की सहायता से बालक की अभिवृत्तियों, रूचियों व्यक्तित्व, (नैतिक विकास) बौद्धिक योग्यता एवं शारीरिक विकास का निर्देशक होता है।

नैतिक शिक्षा नीति पालन की शिक्षा है। नैतिक शिक्षा का अर्थ है कर्माकर्म विवेक अर्थात समाज में व्यक्ति परिवार जाति वर्ग राष्ट्र इत्यादि विभिन्न प्रकार के घटक होते है उसमें व्यक्ति जाति संस्था को कैसा व्यवहार करना चाहिए इस संबंध में कतिपय विशेष नियमों की शिक्षा ही नैतिक शिक्षा है जो मानव मास के लिए नैतिक मूल्य निर्धारित करती है।

शत् प्रतिशत सदाचरण, सारासारविवेक, अहिंसा, सहिष्णुता, सत्य, अस्तेयादि, दया, परोपकार, औचार्य, मातृ–पितृ, गुरूभक्ति बंधुबान्धव भाव, मनोनिग्रह, जितेन्द्रियत्व, निर्लोभ वचनबद्धता, समंबुद्धि, त्याग – बलिदान, तपस्या, क्षमा इत्यादि नैतिक गुणों से सम्बन्ध व्यक्ति ही समाज में पूजनीय वन्दनीय माना जाता है। नैतिकता के तत्वों का जीवन के व्यवहार में समावेश आवश्यक है। नीति पालन का तात्पर्य यह है कि परिवार, स्वसमाज एवं स्वराष्ट्र के उस पार वैश्विक स्तर पर अखिल मानव जाति प्राणिमात से प्रेम का व्यवहार हो। विश्व बन्धुत्व का उदातभाव सबके अन्दर जागृत हो, एक नैतिक मूल्य का निर्धारण हो जो समाज को सुव्यवस्थित चलाने में सहयोग प्रदान करे।

परिवार एवं राष्ट्र सम्पूर्ण जगत के कल्याण एवं अखंडता के लिए स्नेह सद्भाव सहकार्य संघटन समता सद्चारित्य मनोनिग्रह है जो नैतिक मूल्यों की अवधारणा करते है जो समाज के लिए नितान्त आवश्यक है। नैतिक सदाचरण का प्रमुख उद्देश्य है परहित साधन जन कल्याण तथा लोक कल्याण। मनोविज्ञान की सहायता से समाज के अन्दर एकसुव्यवस्थित सुसम्पन्न समाज की कल्पना की जा सकती है। चूँकि मनोविज्ञान का शिक्षा से अनुनाश्रय संबंध है महान वैज्ञानिकों ने भी इसे स्वीकार किया है।

सीवुडवर्थ के शब्दों में – 'मनोविज्ञान वातावरण के अनुसार व्यक्ति के कार्यो का अध्ययन करता है।'

ई.वाट्सन के शब्दों में – 'मनोविज्ञान व्यवहार का शुद्ध विज्ञान है।'

मनोविज्ञानिक पील के शब्दों में – शिक्षा मनोविज्ञान अध्यापको को सहायक है ताकि वह अपने विद्यार्थियों के विकास उनकी क्षमताओं के क्षेत्र उनके सीखने की प्रक्रिया तथा उनके सामाजिक सम्बन्धों को समझ सके। मन की एकाग्रता व्यक्ति को दृढ़ निश्ची बनाती है। नीति पालन ही व्यक्ति को नैतिक बनाता है संतुलित व्यक्तित्व देता है। दर्शन ध्यान केन्द्रित करने में व्यक्ति की सहायता करता है। यम, नियम संयम प्राणायम धारणा द्धारा चितवृत्तियों का निरोध करना संभव है। इस कार्य में दर्शन सहायक होता है। भारतीय दर्शन और प्राचीन भारत में शिक्षा के उद्देश्य सदा से ही नैतिक मूल्य निर्धारण करने में निहित रहे है। बुद्धि का परिष्कार और बौद्धिक विकास तप और साधना से जीवन को सधा हुआ बनाना आचार शिक्षा और चरित्र निर्माण का उद्देश्य प्रमुख रहे। व्रत और श्रद्धा , विद्या बुद्धि का समन्वय, ज्ञान और कर्म का समन्वय, प्रगतिशील कर्मठ एवं सतत् संघर्षशील बनाना शिक्षा का लक्ष्य है जिसे प्राप्त करने में दर्शन अध्यात्मवाद और भौतिकवाद का समन्वय कर बालक के व्यक्तित्व निर्माण में शिक्षक की सहायता करता है। (भुण्डकोपनिषद ने इसी बात को 'परा' अपरा विद्या की संज्ञा दी है। अपरा विद्या भौतिक जीवन को सफल बनाती है। और परा विद्या अध्यात्म जीवन के लक्ष्य अमरत्व या ब्रम्ह की प्राप्ति कराती है) अथर्ववेद ने तप अनुशासन और दीक्षा को राष्ट्रीय उन्नति का आधार माना है व्यक्ति का नीति पालक होना स्वयं, व्यक्ति, समाज और राष्ट्र की उन्नति का कारक है। ज्ञान ज्योति प्रज्जवलित कर शिक्षक अज्ञान रूपी अंधकार को दूर करता है, निष्क्रिय और निश्चेष्ट व्यक्ति को सकारात्मक दिशादेकर संक्रिय और सचेष्ट बनाता है। नैतिक भावों शुद्ध आचरण और उत्तम एवं विकासशील विचारवाले लोग चारित्रिक तथा नैतिक होते हुए समाजिक भावों की प्रधानता रखते है। नैतिक एवं चारिन्त्रिक व्यक्तित्व में निम्न गुणों का होना आवश्यक है –

1. त्याग की भावना, समाज के लिए कष्ट का सहन करना।
2. सबके सुख– दुख में सहभागी होना।
3. अहिंसा
4. आत्म नियंत्रण
5. सत्य
6. प्रेम
7. दया
8. संवेदनशीलता

* प्राचार्य, माँ नर्मदा कॉलेज ऑफ एजुकेशन, महेश्वर रोड़ धामनोद, जिला – धार (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी, कुमार मंदिर विद्यालय, खलई, जिला – धार (म.प्र.) भारत

9. साहस, औदार्य
10. उच्च आदर्श, परिश्रम
11. उत्तरदायित्व की भावना आदि।

घर के अतिरिक्त स्कूल ही ऐसी संस्था है जहाँ बालक के चरित्र का निर्माण होता है। शिक्षकों से यह आशा की जाती है कि वे अपने कर्तव्यों का पालन करेंगे।

हेविगहर्स्ट के अनुसार – 'बालक की शिक्षा में चरित्र का विकास सबसे महत्वपूर्ण एवं एवं सर्व प्रथम ध्यान देन । योग्य विषय है।' चारित्रिक शिक्षा नैतिक शिक्षा शिक्षक के लिए महत्वपूर्ण है। दर्शन एवं मनोविज्ञान का ज्ञाता शिक्षक बालकों में मूल्यवान नैतिक भावों के लिए प्रयत्नशील रहता है। आदर्श जन नायकों के जीवन और कार्यो के विषय में बताकर इतिहास और साहित्य के पाठ पढ़ाकर स्वयं के प्रति आदर की भावना का सृजन कर बडों का सम्मान करना सिखाना देशभक्ति की भावना उपजाना शिक्षकों का कार्य है। अध्यापक प्रत्येक विद्यार्थी को बोलने का अवसर प्रदान करे, उसके आत्म सम्मान को मान दे, तो ही चरित्र का विकास सम्भव होगा। एक व्यक्ति जिसमें आत्म सम्मान की भावना नहीं है, वह दृढ़ संकल्प वाला नीति पालक नहीं बन सकेगा। विद्यालयों, महाविद्यालयों में नियम पालन खेल की नीतियों का पालन उच्च नैतिक विकास के लिए परम आवश्यक है बालको को शैशव तथा बाल्यावस्था से ही नैतिक मूल्यों की शिक्षा दी जानी चाहिए। ईमानदार , सच्चरित व्यक्तियों के प्रति आदर की भावना विकसित की जानी चाहिए।

शिक्षा के उद्देश्य एवं दर्शन – भारत में आध्याम्मिक, धार्मिक लक्ष्य मोक्ष प्राप्त करना रहा है। चरित्र निर्माण शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य माना जाता है आज शिक्षा का उद्देश्य सफल नागरिक का निर्माण करना है जो व्यक्तिगत स्वतन्त्रता के साथ सामाजिक, आर्थिक, आध्यात्मिक शारीरिक तथा मानसिक विकास भी कर सके।

उचित शिक्षण विधियों द्वारा ही जीवन के लक्ष्य को प्राप्त किया जा सकता है। मानव जीवन एवं समाजापयोगी उत्पादन प्रधान, कर्मप्रधान शिक्षण विधियाँ "Learning by Doing" करके सीखने पर बल देती है। कृषि उद्योग, विज्ञान भाषा सभी विषयों में देशकाल की दार्शनिकता शिक्षा को प्रभावित एवं प्रेरित करती है। देशकाल के अनुसार अनुशासन का सिद्धान्त अपनाया जाता है। बड़ों का सम्मान आत्मानुशासन असक्त के प्रति सुरक्षा भाव अप्पि सम्मान इत्यादि व्यक्ति को अनुशासित रखते है।

शिक्षा तथा दर्शन का आपस में बहुत घनिष्ठ सम्बन्ध होता है। एक योग्य शिक्षक के दर्शन का ज्ञान होना अति आवश्यक है। बालक पर शिक्षक की दार्शनिक विचारधारा का प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है। शिक्षक अपने आदर्शो के अनुकूल ही शिक्षा देते है। शिक्षा दर्शन का मार्ग अपनाते हुए शिक्षक शिक्षा दर्शन के कार्यो से लाभ लेते हुए बालक के व्यक्तित्व निर्माण में सहयोग करते हुए सुव्यवस्थित समाज की कल्पना कर सकते है। बालकों के व्यक्तित्व निर्माण के अन्तर्गत मानव जीवन के विभिन्न उद्देश्यों का ज्ञान करवाना। दर्शन के सहयोग से मानव जीवन के अनेक पक्षों पर चिन्तन किया जाता है और फिर जीवन के उद्देश्यों का निर्धारण किया जाता है। शिक्षा दर्शन जीवन के उद्देश्यों का ज्ञान करवाकर शिक्षा के लक्ष्य निर्धारित करवाने में सहायक होती है। एतदर्थ एक सफल शिक्षक को नैतिक मूल्य निर्धारण करने हेतु दर्शन का ज्ञान आवश्यक है।

शैक्षिक सिद्धान्त मानव जीवन के परिपेक्ष्य में निश्चित किये जाते है। शिक्षा दर्शन का ज्ञान होने पर शिक्षक इन सिद्धान्तों को भली प्रकार समझ सकता है। समयानुसार शिक्षा में कई दोष भी उत्पन्न हो जाते है जिनके कारण ऐसी शिक्षा जीवन लक्ष्यों की प्राप्ति में सहायक नहीं हो पाती है। शिक्षा दर्शन इसके गुण अवगुणों की विवेचना करके शिक्षा शास्त्रियों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करता है। अत: एक सफल शिक्षक के लिए शिक्षा दर्शन का अत्यन्त ही महत्व है। शिक्षा दर्शन के बिना वर्तमान शिक्षा में नैतिक मूल्यों का निर्धारण करना असम्भव है।

दर्शन के कार्यो पर अगर विचार करे तो हम पाते है नैतिक मूल्यों के निर्धारण में दर्शन का महत्वपूर्ण स्थान है।

1. दर्शन व्यक्ति के ध्यान को केन्द्रित करने में सहायता करता है। यम नियम संयम, प्राणायाम, ध्यान धारणा तथा चितवृत्ति का विरोध करना संभव है तथा जब तक चितवृत्ति पर अंकुश नहीं लगता छात्र अपने लक्ष्य तक नहीं पहुँच सकता तथा उस लक्ष्यहीन बालक से एक सुव्यवस्थित समाज की कल्पना करना असंभव है। एतदर्थ इस कार्य में दर्शन द्वारा सहायता प्राप्त होती है।
2. दर्शन जीवन जगत सतस्थित आनंद आत्मा – परमात्मा से संबन्धित प्रश्नों के हल ढूँढने में सहायता करता है।
3. दर्शन व्यक्ति को स्वतंत्र चिन्तन की प्रेरणा प्रदान करता हैं
4. जीवन में आने वाली नवीन समस्याओं का समाधान दर्शन द्वारा ही संभव है।
5. दर्शन व्यक्ति की जिज्ञासा एवं उत्सुकता को शान्त कर ज्ञान प्राप्त करने में सहायता प्रदान करता है।
6. दर्शन द्वारा व्यक्ति के आन्तरिक दशा में सुधार होता है। व्यक्ति के राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक नैतिक जीवन की समस्याओं का समाधान भी दर्शन द्वारा ही संभव है।
7. दर्शन जीवन के वास्तविक सत्य की खोज करता है।
8. दर्शन मास तथ्यों का संग्रह नहीं करता वरन् प्रत्येक वस्तु के वास्तविक स्वरूप को देखने का प्रयास करता हैं।
9. दर्शन मानव जीवन के आदि अन्त पर विचार करके जीवन को सोद्देश्य पूर्ण बनाता है तथा विभिन्न विज्ञानों द्वारा प्राप्त सत्यों में अन्तर्विरोधों को दूर करके जीवन की विभिन्नताओं और विसंगतियों की स्थितियों में सामजंस्य लाने का प्रयत्न करता है।

दर्शन शास्त्र के मूल्य मीमाँसा के नीति शास्त्र के अन्तर्गत मूल्य विषयक समस्याओं का अध्ययन होता है। जिसका संबन्ध व्यक्ति के आचरण से होता है। मनुष्य को क्या करना चाहिए क्या नहीं यह नीति शास्त्र में निहित है। दर्शन सही दृष्टिकोण प्रदान करता है। मनोविज्ञान किसी व्यवहार के कारणों को खोजता है। शिक्षा में शिक्षा मनोविज्ञान द्वारा व्यवहार का सुधार या वांछनीय व्यहार परिवर्तन का कार्य करती है इस प्रकार नैतिक शिक्षा में निपुण नागरिकों के व्यक्तित्व के निर्माण का कार्य शिक्षा करती है। एतदर्थ दर्शनशास्त्र एवं शिक्षा मनोविज्ञान की सहायता से बालकों को सामाजिक, व्यावहारिक, आर्थिक मजबूती प्रदान करके समाज के प्रति पूर्ण रूप से समर्पित बनाया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. नैतिक शिक्षा शिक्षण (के सी मलैया) आर.एस.ए. इन्टरनेशनल आगरा।
2. शिक्षा के दार्शनिक और समाज शास्त्रीय आधार (रमन बिहारी लाल)
3. उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक (रामशकल पाण्डेय) श्री विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा।

मुक्तिबोध के काव्य में मूल्य चेतना

डॉ. मीना भावसार *

प्रस्तावना – मुक्तिबोध ने रचना प्रक्रिया की व्याख्या करते समय मूल्य–चेतना के प्रस्थापन की और संकेत किया है । उनकी धारणा है कि केवल विचार धारागत मूल्य ही उसके अपने नहीं हो जाते बल्कि उसके अन्तर्गत अंतप्रेरणाओं तथा संवेदनात्मक अनुभवों से भी मूल्य विवके का विकास होता है तथा जीवन यथार्थ के बदलाव की प्रक्रिया में निरन्तर गतिशील रहता है।

जीवन आभ्यांतरीकरण प्रक्रिया में ही व्यक्ति अपनी जीवन दृष्टि और मूल्य – दृष्टि को भी विकसित कर लेता है। वर्ग अथवा समाज की विश्व – दृष्टि बन जाती है। धरातल पर निजी दृष्टि बन जाती है। एक वर्ग के भीतर अपनी विशेष जीवनयापन प्रणाली की आवश्यकताओं के अनुसार व्यक्ति अपने जीवन मूल्य बना लेता है। मुक्ति बोध ने जीवन मूल्यों के साथ मूल्य संवेदना का उल्लेख भी किया है।

मूल्यों की चर्चा मुक्ति बोध ने तीन दृष्टियों से की है प्रथम में उसकी दृष्टि कामायनी सरीखी कृतियों के संदर्भ में समकालीन समीक्षक के रूप में, द्वितीय उसकी अपनी रचनाओं में एक चिन्तक के रूप में सिध्दांत प्रतिपादन तथा तृतीय पक्ष उसके सर्जनात्मक साहित्य विशेषकर कविता में प्रतिपादित मूल्य दृष्टि ।

मुक्तिबोध जिन मान्यताओं धारणाओं एवं मूल्य पक्षों को एक समीक्षक के रूप में व्यवस्थित अथवा प्रतिस्थापित करते है उन्हें सर्जनात्मक धरातल पर अपनी रचनाओं में यथास्थान संयोजित करने का सहज प्रयास भी करते है । इसलिए उनकी मूल्य चेतना दोहरा–दायित्य निर्वाह कर रही है ।

मुक्तिबोध एक ऐसे कवि है जिसमें मूल्यों के प्रति सही दृष्टि है जो अपने व समाज के प्रति पूर्णत: सजग है विवेक उसके समस्त साहित्य का आधार है सृजन क्षण की सही पहचान संवेदनात्मक ज्ञान और ज्ञानात्मक संवेदना के द्वारा करना चाहता है । ऐसा कवि हमारी दृष्टि में मूल्य सृष्टा कवि है तथा मूल्यान्वेषण की इस चिन्तन प्रक्रिया से गुजरना चाहते हैं । यही कारण है कि इनके समस्त काव्य को पढ़ने के बाद यह कहा जा सकता है कि मुक्तिबोध मूल्यों का आधार विवेक को स्वीकार करता है तथा सफलता की अपेक्षा जीवन की कार्यकर्ता को मूल्यों का प्राणतत्व स्वीकार करता है । इसलिए उनकी दृष्टि में सबसे बड़ी बात सही अर्थो में आदमी होना तथा बने रहना ह। उनकी सभी कविताएँ मूल्य चेतना की विभिन्न विजातियों पक्षों संदर्भो को अपने में संजोये है । उनकी कुछ कविताएँ तो उसके मूल्य पक्ष का स्पष्ट रूप जिसे दूसरे शब्दों में प्रतिरूप कहा जा सकता है ।

वस्तुत: ऐसी कविताएँ उसकी जनवादी विचारधारा चिन्तन तथा प्रत्यक्ष परिवेशगत समझ तथा सामाजिक दायित्व को परिचय करवाती है और ऐसे संदर्भो में कवि कहीं–कहीं अपने अन्तरण की समझ को भी वाणी प्रदान करता है । हमारी दृष्टि में कवि भी मूल्य चेतना संदर्भ पर आधारित है यह संघर्ष बाह्य तथा आन्तरिक दोनों दृष्टियों का है ।

मुक्तिबोध की मूल्य चेतना का आधार प्रत्यक्ष ज्ञात है । जिस तरह वह समाज में आपाधापी छीना छपटी सामाजिक धरातल पर देखता है । उसे कविता में प्रतिकों बिम्बों तथ फंटेसी के शिल्प में प्रस्तुत करता है यह संदर्भ पूरे भारत की स्याही को प्रस्तुत करता है उसका यह प्रत्यक्ष अनुभव व्यक्ति विशेष के प्रति केन्द्रित भी करता है । इसमें विशेषकर वे लेखक,साहित्यकार कवि भी शामिल है जो घटिया हथकंडो से सब कुछ प्राप्त कर चुके है उनका जीवन में सफलता पाना ही सबसे बड़ा लक्ष्य है । इसके लिए वह अपनत्व को बेच सकते है अस्तित्व का हनन कर सकते है । ऐसे कई प्रसंग कवि की निजता का सुचक है इन सबको वैयक्तिक अभिरूचियों के अन्तर्गत मानते कवि ऐसे लोगों का उल्लेख भी संकेत रूप में करता है जो सफलता की बस में जगह न होने पर भी धकापेल से चढ़ जाते है परंतु वह अपने मूल्यों की रक्षा के लिऐ अपने अस्तित्व को बनाए रखने के लिए जीवन की उन सफलताओं को न पा सकने के लिए पिछड़ा हुआ मानता है वस्तुत: उसके जीवन का आधार सार्थकता पर केंद्रित है और यही उसके मूल्यों की सबसे बड़ी पहचान है ।

कवि के संपूर्ण चिन्तन का आधार अनुभव है और यही जीवन अनुभव उसे कभी आत्मसंघर्ष की स्थिति में ले जाता है, कभी ऐसे रूप में भी परिचित करवाता है जिसमें वह अपनी पहचान करता है । वास्तव में यही आत्मविश्लेषण और साक्षात्कार है जो मूल्यों का बहुत बड़ा आधार है । उसकी वैयक्तिक मूल्य चेतना सामाजिक मूल्य–चेतना का व्यापक अर्थ ग्रहण किये है । ब्रह्मराक्षस कविता में कवि वैयक्तिक मूल्यों का एक दूसरा धरातल प्रस्तुत करता है । जिसमें दो तरह की शक्तियॉ काम कर रही है । पहली सद्कृति की नैतिक आचरण की मूल्य परख दृष्टि की तथा दूसरी दुष्ट वृति की स्थायी आपाधापी से सब–कुछ पाने की और शोषण की । वस्तुत: यह कविता समग्र रूप में मध्यवर्गीय बुद्धिजीवी की छटपटाहट की कविता है जिससे वह निरन्तर अपनी पहली पहचान करना चाहता है । वैयक्तिक मूल्यों मे आत्मसंधर्ष का विशेष महत्व है यही कारण है कि स्वयं का मूल्य जानना चाहता है उनकी ऐसी अनेक प्रारम्भिक कविताऍ भी उल्लेखनीय है जिसमें उनकी दृष्टि मूल्य चेतना और जीवन के प्रति निश्चित दृष्टिकोण प्रतीत होता है ।

इसलिए मुक्तिबोध के जीवन और काव्य की सही पहचान के लिए उनकी कविताओं में संयोजित सभी संदर्भो, प्रतिकों और शब्दों की पृष्ठभूमि का परिचय पाढकों को होना चाहिए । इनकी कविताओं को गहरे में समझने की चेष्टा इसी प्रकार की जा सकती है इसलिए हमें मुक्तिबोध की कविताओं पर समग्र दृष्टि से प्रस्तुत कथन अधिक उपर्युक्त एवं सटीक प्रतीत होता है ।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. मुक्तिबोध की काव्य चेतना और मूल्य संकल्प–हुकुमचंद राजपाल ।

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी)शासकीय महाविद्यालय, सेंधवा (म.प्र.) भारत

शिक्षा में नैतिक मूल्यों का योगदान

डॉ. पुष्पलता खरे *

प्रस्तावना – शिक्षा व नैतिक मूल्यों का सदैव से घनिष्ठ संबंध रहा है। वर्तमान में शिक्षा व नैतिक मूल्यों के संबंधों को जानने से पहले यह आवश्यक है कि नैतिक शब्द का अर्थ जान लिया जाये। नैतिक शब्द नीति से बना है जिसका तात्पर्य है व्यवहार हेतु तय आचार, सदाचार व व्यवहार आदि संबंधी नियम व रीतियाँ। नैतिक शिक्षा मानव के विकास के लिये आवश्यक है क्यों कि यह मानव को संस्कारित करती है। नैतिक शिक्षा में वाछनीय मानवीय गुणों का समावेश होता है व इस के माध्यम से विद्यार्थी सफलता प्राप्त कर सकतें है।

वैसे भी शिक्षा का उद्देश्य केवल ज्ञान प्राप्त करना ही नहीं वरन् विद्यार्थियों के व्यक्तित्व व चरित्र का निर्माण कर के उनका मानसिक व आध्यात्मिक विकास करना भी है। यद्यपि वर्तमान दौर में सामाजिक व आर्थिक उन्नति का निश्चित महत्व है परन्तु मानव अपनी तथकथित उन्नति या प्रगति करने की धुन में उचित या अनुचित का भेद नहीं कर पा रहा है। केवल साध्य पर दृष्टि गडाये हुए मनुष्य उसे प्राप्त करने के लिये साधन की शुचिता पर गौर नहीं करता। यह मनुष्य का नैतिक पतन है। हर जगह संबंधों में नैतिकता समाप्त हो रही है तथा इसका स्थान अनैतिक तरीको ने ले लिया है। लोग आपसी व्यवहार में छल, कपट, आडम्बर, भ्रष्टाचार, विश्वासघात, कुटिलता, चोरी, धोखाधड़ी करने में कोई संकोच नही करते हैं। और तो और इन अनैतिक कामों को करने में माहिर लोग नैतिकता के रास्ते पर चलने वालों को मूर्ख मान कर उनका उपहास करते हैं।

आज वैष्वीकरण के दौर में शिक्षा व्यवसाय का रूप लेती जा रही है। अनेक स्थानों पर शिक्षा की दुकाने खुल गई है जहां शुल्क लेकर विद्यार्थियों को प्रमाण पत्र बाँटे जा रहे हैं। वर्तमान की शिक्षा अब नैतिकता विहीन केवल नौकरी देने वाली, आयु बढाने वाली व बाजार की संस्कृति विकसित करने वाली हो गई है। इस तरह नैतिक मूल्यों की गिरावट से समाज में विकट समस्याएं पैदा हो रही हैं। यह अत्यंत चिंता का विषय है ऐसी परिस्थिति में यह नितान्त आवश्यक हो गया है कि शैक्षणिक पाठ्यक्रमों में नैतिक शिक्षा को स्थान दिया जाये।

अब प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि यह नैतिक शिक्षा विद्यार्थियों को किस स्तर से दी जाये इसका सरल उत्तर यही होगा कि विद्यार्थियों को उनकी शिक्षा के हर स्तर पर नैतिक शिक्षा दी जाये। चूँकि छोटे बच्चे कच्चे घडे के समान होते हैं अत: इस अवस्था में उन पर जो संस्कार डाले जाते हैं उसका प्रभाव उन पर आजीवन बना रहता है। यदि अनौपचारिक विधि से रूचिकर कहानी व कविताओं के माध्यम से बच्चों को सबक दिये जाते हैं तो वे उन्हें बोझिल प्रतीत नहीं होंगे तथा खेल खेल में ही वे सद्गुण ग्रहण कर सकेंगे। युवा विद्यार्थियों को उच्च शिक्षा देते समय नैतिक शिक्षा औपचारिक विधि से भी दी जा सकती है तथा इसे अनिवार्यत: आधार पाठ्यक्रम का भाग बनाना लाभकारी सिद्ध होगा। इससे विद्यार्थियों में ईमानदारी, निष्ठा, उदारता, सहयोग सहानुभूति, आदर, त्याग, परोपकार आदि गुण विकसित हो सकेंगे।

जब नैतिक शिक्षा देने का प्रश्न आता है तो स्वाभाविक रूप से यह प्रश्न उपस्थित होता है कि नैतिक शिक्षा के अंतर्गत विद्यार्थियों को क्या पढ़ाया जाये चाहे यह शिक्षा औपचारिक हो या अनौपचारिक? इस प्रश्न के उत्तर में हमारा ध्यान भारतीय नीति ग्रंथों की ओर जाता है ये नीति ग्रंथ पुरातन काल से ही भारतीय जन मानस हेतु प्रकाश स्तंभ का काम कर रहे हैं। साहित्य के इन बहुमूल्य ग्रंथों से मानव सदाप्रेरित होता रहा है। ये ग्रंथ आज भी भारतीय संस्कृति की अमूल्य धरोहर है। वेद, पुराण, उपनिषद, रामायण, गीता, भागवत, स्मृति, ग्रंथ, चाणक्य नीति, पंचतंत्र, इस नीति, तेनाली, राम की कहानियाँ, हितोपदेश की कहानियाँ कबीर, रहीम आदि के दोहे, मुंशी प्रेमचंद की रचना आदि ग्रंथों की विशाल श्रृंखला है जिसमें मानव जीवन को उच्च सरल सात्विक बनाने तथा देवत्व प्राप्त करने हेतु दिशा दर्शन किया गया है। विविध दृष्टांतों को प्रस्तुत करते हुए सारगर्भित, सुन्दर तथा बोधगम्य उक्तियाँ कही गई हैं। इन रचनाओं के दोहों, छन्दों, गद्यों व सुक्तियों में नीति से परिपूर्ण शब्दावली का प्रयोग किया गया है। यदि इस साहित्य से विद्यार्थियों का परिचय करवाया जाता है तो इनमे वर्णित नैतिक गुण उनके जीवन पथ का मार्गदर्शन कर उनके जीवन को आलोकित करेंगे। इस साहित्य के चिंतन, मनन, वाचन व अनुशीलन से वे सच्चरित्र व्यक्ति बन सकेंगे। उनमें सही गलत की समझ तथा ग्राहय व त्याज्य गुणों की समझ विकसित हो सकेगी।

अत: यह नितांत अनिवार्य हो गया है कि शैक्षणिक पाठ्यक्रमों में नैतिक शिक्षा सम्मिलित की जाये। यदि समय रहते नैतिक शिक्षा देने की व्यवस्था नही की जाती तो हमारे हाथ फिर पछतावे के सिवाय कुछ भी नही रहेगा जब हमे पता चलेगा कि हमारी आने वाली विद्यार्थियों की पीढ़ियाँ नैतिक मूल्यों व संस्कारों से विहीन हैं। 1986 ई. में शिक्षा की मूल्य विहीनता से चिंतित राष्ट्रीय शिक्षा नीति में कहा गया है कि मूल्यों में निंरतर कमी के कारण पाठ्यक्रम में परिवर्तन आवश्यक हो गया है ताकि शिक्षा के माध्यम से सामाजिक व नैतिक मूल्यों को विकासित किया जा सके। जो सलाह राष्ट्रीय शिक्षा नीति में दी गई भी उसे अब तो हमें पूर्णत: लागू करना चाहिये जिससे कि विद्यार्थियों का चरित्र व बौद्धिक विकास उत्तम हो तथा विद्यार्थी अपने पैरों पर खडे हो सके।

अंत में कहा जा सकता है कि एक बार पुन: प्राचीन भारतीय शिक्षा पद्धति जैसी व्यवस्था लागू की जाये जो दर्शन व नैतिकता से प्रभावित है। इसी तरह की शिक्षा व्यवस्था के माध्यम से मानव जीवन की व्यक्तिगत सामाजिक, पारिवारिक, राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय समस्याओं का समाधान करना संभव है। यह शिक्षा मानव को अंधकार से प्रकाश की ओर, असत्य से सत्य की ओर, तथा बंधनों से मुक्ति की ओर ले जाने का मार्ग प्रशस्त करेगी व ऐसी नैतिक शिक्षा के माध्यम से जो विद्यार्थी तैयार होंगे वे निश्चित ही राष्ट्र को भौतिक व आध्यात्मिक उन्नति की ऊँचाइयों पर पहुँचायेगें। वास्तव में शिक्षा जगत मे नैतिक शिक्षा का महत्व सदैव से रहा है तथा आगे भी बना रहेगा।

* प्राध्यापक (इतिहास) शहीद भीमा नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय,बड़वानी (म.प्र.) भारत

वर्तमान समय में नैतिक मूल्यों की आश्यकता

डॉ. विक्रम सिंह चौहान *

प्रस्तावना – व्यक्ति के आचरण एवं व्यवहार को समाज के समक्ष लाने का कार्य नैतिक मूल्य ही करते हैं। इसका बहुत गहरा संबंध मनुष्य के व्यक्तित्व से होता है। नैतिक मूल्य में दया, करूणा, ममता, क्षमता, शील, विवके, विनम्रता, कर्तव्य निष्ठा जैसे गुणों का समावेश समय-समय पर होता रहता है। इसीलिए नैतिक मूल्य सामूहिक एवं व्यक्तिगत भी होते है। वर्तमान नैतिक मूल्यों को इस प्रकार आसानी से समझा जा सकता है जैसे- चरित्र निर्माण में सहायक होते है। समाज में हिंसक घटनाओं को रोकते हुए स्वस्थ्य समाज की स्थापना हेतू महत्वपूर्ण योगदान देते हैं। समाज व राष्ट्र का चहुँमुखी विकास उच्च आदर्शो की स्थापना। देश में शांति, सुरक्षा, सोहार्द्रपूर्ण वातावरण का निर्मित होना धर्म एवं अध्यात्म की भावना रखना आदि।

मानव एक ऐसा सर्वोत्कृष्ट प्राणी है जो संस्कृति का निर्माता है और संस्कृति द्वारा ही कुछ नियम, व्यवहार, लक्ष्य, उद्देश्य आदि निर्धारित होते है। जिनके आधार पर कार्य करने पर व्यक्ति सामाजिक प्राणी बनता है यही आदर्श मूल्य कहलाते है। जो बताते है कि क्या अच्छा है? क्या बूरा है? क्या करना चाहिए? क्या नहीं करना चाहिए? इस प्रकार सामाजिक मूल्य वे आदर्श होते हैं जो सामाजिक व्यवस्था को सूचारू रूपेण चलाने में सहायक होते है। यदि इन आदर्शो की परिपालना न कि जायेगी तो सामाजिक व्यवस्था अमर्यादित व अव्यवस्थित हो जायेगी। समाज में नैतिक मूल्यों का संकट पैदा हो जायेगा। यह व्यवहार का एक मानदण्ड कहा जा सकता है जो किसी समाज में उचित-अनुचित, कर्तव्य-अकर्तव्य को तय करते है जैसे- पर निन्दा न करों, सब जीवों पर दया करों, असत्य व मिथ्या भाषण न करों आदि समाज के सामान्य नियम होते है। जिनका पालन करना हमारा कर्तव्य होता है साथ ही नैतिक मूल्य व्यक्ति के व्यवहार को नियन्त्रित करने के तरीके बताते हैं कि क्या सही है? ओर क्या करना अपेक्षित है? इनका उल्लघन होने पर नैतिक मूल्यों पर संकट पैदा होना तय है।

आज के दौर में नैतिक मूल्य सामाजिक जीवन को मनोवैज्ञानिक आधार प्रदान करते है। इसका कारण यह है कि सामाजिक मूल्यों का संबंध व्यक्ति की आंतरिक भावनाओं पर आधारित होता है। नैतिक मूल्यों की सहायता से व्यक्ति समाज में एक दूसरे से नजदीक आते है और परिणाम यह होता है कि सामाजिक व्यवस्था व संगठन बना रहता है। सामाजिक जीवन में व्यक्ति अनेक सामाजिक घटनाओं और समस्याओं के संपर्क में आता हैं। इनमें से कुछ सामाजिक घटनायें ऐसी होती हैं जो समाज को संगठित करती है। समाज में व्यक्ति कुछ ऐसी घटनाओं के संपर्क में आता है जिससे सामाजिक जीवन का विघटन होता है। नैतिक मूल्य इन सामाजिक घटनाओं और समस्याओं का मूल्यांकन करते है तथा व्यक्ति के व्यवहारों को निर्धारित करते है जिसके परिणाम स्वरूप सामाजिक जीवन में शांति और व्यवस्था बनी रहती है। नैतिक मूल्य समाज में सामाजिक एकरूपता का विकास करते है और इसे दृढ़ता प्रदान करते है। नैतिक मूल्यों के द्वारा व्यक्ति के व्यवहार निर्धारित होते है। और समाज अपने सदस्यों से ऐसी अपेक्षा करता है कि वे इस प्रकार का व्यवहार करेगें जिससे सामाजिक मूल्य और प्रतिमानों को आघात नहीं पहुँचेगा।

डॉ.राधाकमल मुकर्जी के अनुसार व्यक्ति के सामाजिक व्यवहारों को समझने के लिए मूल्यों का ज्ञान अनिवार्य है इसके साथ ही यदि हम सामाजिक जीवन और घटनाओं के बारे में भविष्यवाणी करना चाहते है तो मूल्य अनिवार्य शक्ति है मूल्य ही वह शक्ति है जिसके द्वारा हम व्यक्ति के व्यवहारों को स्वाभाविक और व्याधिशास्त्रीय कहते है। समाज व्यवस्था के अस्तित्व के लिए मूल्य का ज्ञान अनिवार्य है। इसके साथ ही सामाजिक मूल्य सामाजिक प्रगति के मापने का कार्य करते है। इस प्रकार सामाजिक प्रगति के मापक पैमाने के निर्माण में सामाजिक मूल्य, आदर्श और नैतिकता की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। सामाजिक यांन्त्रिकता मूल्यों के इस पैमाने को परिवर्तित करती रहती है इसके साथ ही समाज में नई विधियॉ, प्रतीकों और नियंत्रण के साधनों को जन्म देती है। इस औद्योगीकरण तथा नगरीकरण के परिणाम स्वरूप प्राचीन संस्थाएँ समाप्त होती जा रही है। ऐसी अवस्था में यदि हम सामाजिक यांन्त्रिकता के ऊपर नहीं रहेगें तो हमारे लिए सामाजिक प्रगति की दिशा का निर्धारण करना कठिन होगा।

नैतिक मूल्यों का संबंध क्षेत्र विशेष से होता है यही कारण है कि मूल्यों के भिन्न-भिन्न अर्थ लगाये जाते है। व्यक्ति को प्रकृति द्वारा स्थापित संतुलन को भंग नहीं करना चाहिए। व्यक्ति और समूह के बीच बौध्दिक और नैतिक दृष्टि से संबंधों का एक स्तर पाया जाता है मानवीय संबंधों के गुण एवं आकार उसके नैतिकता एवं बौद्धिक गुणों को सिध्द करते है। इसके साथ ही भारतीय संस्कृति गतिशील है और इस गतिशीलता में व्यक्ति और समुदाय के द्वारा की जाने वाली भूमिकायें महत्वपूर्ण अदा करती है। नैतिक मूल्यों के द्वारा ही समाज में नव-निर्माण की प्रेरणा मिलती है। जिसके परिणाम स्वरूप व्यक्ति सामाजिक पुन: निर्माण के लिए अग्रसर होता है। वर्तमान में पश्चिमी सस्कृति ने मानवीय व नैतिक मूल्यों को पतन की कगार पर लाकर खड़ा कर दिया आज संयुक्त परिवारों की परम्परा टूटती जा रही है। इन्सान ही इन्सान के खून का प्यासा बन बैठा है। जो नैतिकता एवं मानवता मनुष्य के हृदय में विराजित होती थी वह आज कहीं देखने को नहीं मिलते है। इसलिए समाज सुधार व व्यक्तिगत निर्माण में नैतिक मूल्यों की पुन: स्थापना पर अत्यधिक बल दिया जाना चाहिए। क्योंकि नैतिक मूल्य ही व्यक्ति के चरित्र का निर्माण

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय कन्या महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

करते हुऐ उसे संस्कारों का प्रेरणा बनाने की दिशा में अग्रसर होते है। समाज के अनैतिक तत्वों द्वारा कि जाने वाली हिंसक घटनायें नैतिक मूल्यों के पतन के कारण ही जन्म ले रही है जिस पर नियंत्रण पाना वर्तमान युग में आवश्यक प्रतीत होता हैं धर्म और अध्यात्म की ओर प्रवृत करने में भी नैतिक मूल्यों की भूमिका अहम होती है। नैतिक संस्कारों के संरक्षक कहलाने वाले मनुष्य ही समाज ओर राष्ट्र के विकास में अपनी भागीदारी दे सकते है। समाज में एकरूपता उत्पन्न करने हेतु नैतिक मूल्यों प्रयत्नशील सिद्ध होते है व्यक्ति की समाज में क्या वास्तविक स्थिति है। इसका अनुमान भी नैतिक मूल्यों द्वारा ही लगाया जा सकता। सामाजिक व्यवस्था के सफल एवं सुचारू रूप से संचालन के लिए नैतिक मूल्यों की आवश्यकता को नकारा नहीं जा सकता है। क्योंकि नैतिक मूल्यों एक अमूर्त गुण है, जो किसी वस्तु में निहित, उसके महत्व को दर्शाता है।

प्रसिद्ध विद्वान पैरी के अनुसार नैतिक मूल्य जैसे– जो मूल्य समाज में किसी कार्य को ना करने की ओर प्रेरित करते है वे नकारात्मक मूल्य होते है। और जो मूल्य सुखद वातावरण निर्मित करने वाले यह मूल्य आचरण की दृष्टि से सकारात्मक माने जाते है। इसी प्रकार ऐसे मूल्य पालन करने से समाज का विकास होता है वे विकासवादी मूल्य कहलाते है तथा जो मूल्य समाज में व्यवस्था एवं संतुलन की स्थिति निर्मित करते है वे वास्तविक मूल्य होते है। इसके अलावा सास्कृतिक मूल्य ,बौध्दिक ,सामाजिक, विशिष्ट, आर्थिक, मनोरंजक मूल्य आदि होते है। जो समय–समय पर समाज के निर्माण में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करते हुऐ समाज में व्यक्ति के चरित्र निर्माण पर बल देते है। सी.गेलाइटली के अनुसार–नैतिक मूल्य के अंतर्गत अनिवार्य मूल्य जैसे चोरी नहीं करना, हमेशा सत्य बोलना एवं पाप नहीं करना शामिल है। इसका पालन समाज के समस्त सदस्यों के लिए अनिवार्य है। इसी कड़ी में व्यवहारिक मूल्यों में गुरू का आदर, छोटों के प्रति स्नेह जैसी बातों का समावेश किया है। इन मूल्यों का प्रयोग मनुष्य अपने दैनिक जीवन में करता है।

मूल्यों के संकट का प्रथम कारण जैविकीय है। जब व्यक्ति अपनी आवश्यक आवश्यकताओं जैसे भोजन, आवास और वस्त्र आदि की भी पूर्ति नहीं कर पाता अर्थात् शारीरिक कष्ट, कुपोषण, सुविधाओं का अभाव अभिवृध्दि में बाधा, वस्त्र व आवास की अपर्याप्तता तथा, बीमारी व सुरक्षा का अभाव आदि असुविधाओं के कारण एवं मानसिक आवश्यकताओं की समुचित पूर्ति न होने पर भी मूल्य संकट की उत्पत्ति होती है। जब व्यक्ति की प्रेम, प्रतिष्ठा, परिस्थिति, एवं सुरक्षा विषयक् मौलिक आवश्यकताओं की पूर्ति में बाधा उत्पन्न होती है तो उस स्थिति में वह मानसिक तनाओं एवं संघर्षो का शिकार हो जाता है क्योंकि मनोवैज्ञानिक आधार पर आत्मसंतोष के लिए इनकी पूर्ति आवश्यक होती है। इसके अभाव में व्यक्ति में कृत्रिम एवं विकृत मूल्य विकसित हो जाते है जो इसकी इच्छाओं और आकांक्षाओं के पथभ्रष्ट तरीके से पूर्ति करते है। साथ ही सामाजिक आवश्यकओं की पूर्ति न होने पर भी मूल्य संकट की उत्पत्ति होती है। जब व्यक्ति के समक्ष संघर्षात्मक स्थितियॉ उत्पन्न हो जाती है तो वह उनको सहन करने अथवा भूलाने के लिए गलत रास्ते अपनाता है। जैसे शराब पीना, पारिवारिक संतुलन में बाधा डालना आदि स्थितियॉ समाज में विघटन पैदा करती है

इन सभी परिस्थियों को देखते हुवे वर्तमान समय में नैतिक मूल्यों की आवश्यकता महसूस की गई है। जो वर्तमान परिप्रेक्ष में नितान्त आवश्यक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. दैनिक भास्कर।
2. योजना पत्रिका।
3. कुरूक्षेत्र।
4. दैनिक जागरण।
5. दैनिक नईदुनियां।
6. रचना।

****

नैतिक मूल्य एवं सामाजिक विकास

डॉ. निशा जैन *

प्रस्तावना – वर्तमान सामाजिक अव्यवस्था एवं बढ़ते हुए अपराधों के लिए सांस्कृतिक पतन उत्तरदायी है। भारतीय संस्कृति उच्च नैतिक मूल्यों के लिए विश्वभर में सराही जाती रही है। वैदिक परम्परा में नैतिक मूल्यों एवं आदर्शों को चरित्र के आवश्यक अंग माना गया है। आश्रम व्यवस्था में जीवन के प्राम्भिक पच्चीस वर्ष व्यक्ति के व्यक्तित्व विकास में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करते थे। व्यक्ति शिक्षण के साथ-साथ उच्च नैतिक गुणों की शिक्षा भी ग्रहण कर समाज का योग्य नागरिक बनता था। धीरे-धीरे सामाजिक व्यवस्था में बदलाव आता गया। आधुनिकीकरण एवं वैज्ञानिक उन्नति ने व्यक्ति के सोच को प्रभावित किया। वैश्वीकरण के परिणामस्वरूप पाश्चात्य सभ्यता एवं संस्कृति ने भारतीय संस्कृति पर हमला किया। हम अपनी मूल संस्कृति को भूलकर विदेशी संस्कृति को अपनाने की होड़ में लगे हुए हैं। जिसमें व्यक्ति अति महत्वाकांक्षी, आत्मकेंद्रित एवं स्वार्थी होता चला जा रहा है। प्रतिस्पर्धा बढ़ रही है इसमें व्यक्ति स्वउन्नति के दौड़ में नैतिक मूल्यों को भूलता जा रहा है। भौतिकवाद का चरम वर्तमान सामाजिक व्यवस्था में दिखाई दे रहा है न केवल महानगर अपितु ग्रामीण एवं छोटे-छोटे नगर भी आधुनिकता की दौड़ में आते हैं। सर्वाधिक प्रभाव समाज के युवा वर्ग पर पढ़ रहा है। वे परिवार के आदर्शों एवं नैतिक मूल्यों की परवाह न करते हुए धन कमाने की अंधी दौड़ में शामिल हो रहे हैं। जीवन के वास्तविक उद्देश्य एवं लक्ष्यों को भूलकर विलासीता पूर्ण जीवन जीना ही एकमात्र लक्ष्य मान बैठे हैं। जिसका परिणाम कई सामाजिक समस्याओं के रूप में दिखाई दे रहा है जैसे महिलाओं की असुरक्षा, युवाओं में नशाखोरी, परिवार व्यवस्था का टूटना, बढ़ती हुई तलाक की दर, लिव इन रिलेशनशिप इत्यादि।

संयुक्त परिवार में बुजुर्गों का नियंत्रण युवापीढ़ी को बांधे रखता था वहां नैतिक मूल्यों का पालन अनिवार्यत: किया जाता था। व्यक्तिगत स्वच्छदंता न के बराबर थी इसका प्रभाव समाज व्यवस्था पर भी दिखाई देता था। सामाजिक **संगठन** दिखाई देता था। अपराध नियंत्रित थे किन्तु वर्तमान महानगरीय सभ्यता में संयुक्त परिवार का पालन सामाजिक मूल्यों में गिरावट का प्रमुख कारण दिखाई दे रहा है। महिलाओं के प्रति सम्मान में कमी दिखाई दे रही है। पुरूषों की निगाहों में नारी केवल भोग्या बन कर रह गई है। पुरूषों का व्यवहार नारी के प्रति पाशिवक होता जा रहा है। महिलाओं के प्रति जघन्य व्यवहार इन नैतिक मूल्यों के अभाव में किये जा रहे हैं। उच्च चारित्रिक गुणों के अभाव में युवा वर्ग भटक रहा है। नशे की अवस्था में वह विवके शून्य हो विकृत मानसिकता का परिचय देता है।

बढ़ते हुऐ अपराधों एवं नैतिक मूल्यों के पतन में सोश्यल मीडिया ने भी बढ़ावा दिया है। कच्ची उम्र के बच्चों के सामने नेटवर्क के जरिये समस्त सामग्री सहज उपलब्ध है जिससे बच्चा जिज्ञासावश उन सभी जानकारियों को प्राप्त कर लेता है जो उसे परिपक्व उम्र में लेना चाहिए। इस दूषित पर्यावरण में विकसित बच्चे का सामाजिक एवं मानसिक विकास भी दूषित हो रहा है। बाल सुलभ सहजता समाप्त होती जा रही है। बाल्यावस्था में ही परिपक्व होता जा रहा बचपन नैतिक मूल्यों से दूर होता चला जा रहा है।

सामाजिक विकास में बाधक आर्थिक अपराध भी चरम स्तर पर दिखाई दे रहे हैं। समाज में बढ़ता हुआ भ्रष्टाचार भी नैतिक पतन के लिए उत्तरदायी है। उच्च पद से लेकर चपरासी एक नैतिक मूल्यों को ताक में रखकर निहित स्वार्थों की पूर्ति में लगा हुआ है। किसी भी काम को करने के लिए जब तक संबंधित व्यक्ति को खुश नहीं किया जाए कागज आगे खिसकते ही नहीं है, क्या यही हमारा नैतिक चरित्र है? हम इतने गिरे हुए क्यों हैं कि हम अपने कर्तव्य पालन करने में भी अतिरिक्त लाभ की कामना करते हैं। हमें अपना नैतिक आदर्श एवं मूल्यों का स्तर ऊंचा उठाना होगा। हमारी छवि स्वच्छ होगी तो ही हम संस्कृति की रक्षा कर पाऐंगे।

नैतिक मूल्यों की आवश्यकता व्यक्तिगत सामाजिक एवं राष्ट्रीय स्तर तक बनी हुई है। हमें अपने राष्ट्र के प्रति भी उतना ही उत्तरदायी बनना है जितना हम परिवार के प्रति होते हैं। इन सभी के लिए नैतिक मूल्यों का स्तर उच्च होना चाहिए। व्यक्तित्व के मौलिक गुणों में नैतिक विकास पर शिक्षा पद्धति में ध्यान दिया जाऐ। बाल्यावस्था में ही शिक्षण के माध्यम से विद्यार्थियों को नैतिक गुणों की शिक्षा दी जाऐ, उन्हें परिवार, राष्ट्र एवं समाज के प्रति कर्तव्यों की सीख दी जाऐ, उन्हें आदर्श नागरिक बनाया जाऐ जिसमें ईमानदारी के साथ कर्तव्य पालन की सीख, धार्मिक संस्कार एवं मितव्ययीता की शिक्षा भी सम्मिलित हो जिससे वे अपनी आवश्यकताओं को सीमित रखते हुए श्रेष्ठ जीवन जीए, मानवधिकारों का पालन करे, सामाजिक समरसता का ध्यान रखें उनके मन में संवेदनाऐं हो जिससे वे समाज में दीन हीन, रूगण व्यक्तियों के दुखों को बाँटे, वृद्धों के प्रति सम्मान भाव रखें, माता-पिता की आज्ञा का अनुसरण करें। ऐसे श्रेष्ठ संस्कारित शिक्षण के माध्यम से हम अपने परिवार, समाज एवं राष्ट्र को सुरक्षित रख पाऐंगे। हमारा समाज विकास की ओर अग्रसर होगा। हम अपराधविहिन समाज की कल्पना कर सकते हैं। भ्रष्टाचार मुक्त राष्ट्र में जी पाऐंगे एवं स्वच्छ सुरक्षित पर्यावरण में अपने आत्मिक एवं सामाजिक विकास कर पाऐंगे। अत: नैतिक मूल्यों एवं आदर्शों को प्राथमिकता से बच्चों को सिखाए जाएं। आज के बालक ही कल के नागरिक हैं यदि हमें भविष्य अच्छा चाहिए तो वर्तमान को सुधारना होगा, अच्छी नींव से ही अच्छी ईमारत बनती है। इस बात को ध्यान में रखते हुए बच्चों के पालन-पोषण पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है जो परिवार, संस्था एवं स्कूलों के माध्यम से ही संभव है। वही युवा पीढ़ी को भी सजग एवं सतर्क रखने की आवश्यकता है तभी सामाजिक विकास एवं नैतिक मूल्यों की सुरक्षा संभव है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. दैनिक भास्कर।
2. योजना पत्रिका।
3. कुरूक्षेत्र।
4. दैनिक जागरण।
5. दैनिक नईदुनियां।
6. रचना।

* प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

नैतिक मूल्यों की गिरावट में परिवार एवं समाज की भूमिका

भारत भूषण श्रीवास्तव * कमलेश भार्गव **

प्रस्तावना – वर्तमान युग नि:संदेह विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी का युग है। विज्ञान ने संचार माध्यमों की खोजकर मानो मनुष्य के भौतिक विकास की गति को पंख लगा दिये हैं ,किन्तु यही भौतिक साधन किन्हीं कारणों से नैतिक पतन का कारण बनते जा रहा है। टेलीविजन के निजीकरण ने प्रायवेट चेनल्स की बाढ़ ला दी है। वर्तमान में इन प्रायवेट चेनल्स पर अधिकांशत: औचित्यहीन कार्यक्रम आते हैं जो कि परिवार के सदस्यों के मध्य द्वेष, वैमनस्य एवं अलगाववाद को प्रोत्साहन देने से संबंधित कार्यक्रम परोसे जा रहे हैं जो कि शिक्षाहीन होकर मनोरंजन के नाम पर फूहड़ प्रदर्शन मात्र होते है। पालक इन कार्यक्रमो के प्रति इतना लगाव रखते हैं कि इनको देखने के लिये वे अपनी संतानो पर पर्याप्त ध्यान नहीं देते और बच्चों को भी अपने साथ बैठा लेते हैं।

शिक्षाप्रद कार्यक्रमों का अकाल सा छा गया है जिन चैनल्स पर शिक्षाप्रद कार्यक्रम आते है उनको प्रायोजक तक नहीं मिलते। शिक्षाप्रद एवं धार्मिक कार्यक्रमों की अपेक्षा कार्टून और इस तरह के अन्य कार्यक्रमों को ज्यादा तरजीह दी जाती है। घर बच्चे की प्रथम पाठशाला एवं माता पिता बच्चे के प्रथम गुरू होते है। लेकिन जब घर पर ही बच्चों को नैतिक मूल्य सिखाने हेतु समय नहीं दिया जावेगा तो समाज की बात ही क्या।

भारतीय संस्कृति जो कि संस्कार, शिष्टाचार, इत्यादि अपने नैतिक गुणों के कारण विश्व सिरमौर है, से हमारे बच्चे अनभिज्ञ है। पाश्चात्य संस्कृति के अंधानुकरण की होड़ मची हुई है। जो कि सनातन संस्कृति को दूषित कर रही है।

हमारे धर्मग्रंथों में भी सर्वत्र नैतिकता एवं चरित्र निर्माण पर ही बल दिया गया है यथा गोस्वामी तुलसीदास जी ने श्रीरामचरितमानस की चौपाइयों मे उल्लेख किया है कि प्रातःकाल उठकर रघुनाथा मात पिता गुरू नावही माथा एवं धर्म न दूसर सत्य समाना आगम निगम पुराण बखाना। स्पष्ट है हमारे आराध्य ने एवं महापुरूषों ने स्वयं ऐसे उच्च आदर्श स्थापित किये हमे भी उन्ही आदर्शों को ग्रहण करना चाहिए।

यदि परिवार के वरिष्ठ सदस्य ही नैतिकता का पालन नहीं करेगें तो बच्चों को किस प्रकार से प्रेरित करेंगे। शिक्षाप्रद कहानियाँ जो कि नैतिक मूल्यों को ही समर्पित होती थी भूतकाल की बाते हो चुकी है। परिवार एकाकी होते जा रहे है घर के बुजुर्ग वृद्धाश्रमों मे जीवन जीने को मजबूर है। आर्थिक प्रगति की होड़ ने नैतिकता को ताक पर रख दिया है।

शिक्षण भले ही स्कूलों में हो लेकिन व्यक्तित्व का निर्माण तो घर की पाठशाला में ही होता है। अत: अगर हमको भावी पीढ़ी को अच्छा बनाना है तो घर को एक पाठशाला के रूप में विकसित किया जाना चाहिये। माता पिता को अपना स्वभाव, काम करने का तरीका, घर की व्यवस्था तथा वातावरण ऐसे बनाना चाहिये जिससे की गीली मिट्टी के तरीके से बालक ढाँचे में ढलते हुए चले जाएँ।

बच्चों को सुसंस्कृत बनाने के लिये केवल वाणी द्वारा दिया गया शिक्षण पर्याप्त नहीं है इसके साथ साथ हमारे आचरण को भी हमे उस अनुरूप ढालना होगा। तभी वह ज्ञान स्वभाव में उतर पाएगा। परिवार के प्रत्येक बड़े सदस्य का कर्तव्य है कि सभ्यता एवं संस्कृति के क्रम को ठीक बनाने के लिये युवा पीढ़ी को नैतिक मूल्यों का व्यावहारिक ज्ञान दे। स्कूलों में तो बच्चे चार या पाँच घण्टे ही रहते हैं बाकी के बीस घण्टे तो घर पर व्यतीत होते है। अत: अधिक प्रभाव तो घर के वातावरण का ही पड़ता है। अत: यह ध्यान देना परमावश्यक है कि संस्कारवान एवं कर्मठ युवा पीढ़ी कैसे तैयार हो उनका रहन सहन कार्यशैली जीव मात्र के प्रति उनका व्यवहार कैसा हो।

नैतिकता की शिक्षा जिन देशों में होती है वास्तव में वो ही देश इस लायक होते हैं कि जो अपने भीतर की अंतरंग व्यवस्था को कायम रख सके और दूसरे देशों का मार्गदर्शन कर सके।हमारा देश इसीलिये विश्वगुरू के रूप में जाना जाता था क्योंकि सभ्यता सबसे पहले यहीं जन्मी एवं विकसित हुई। अत: पुन: उसी सम्मान को हाँसिल करने के लिये हमें अपने आप को अनुशासित करना होगा।जब व्यक्ति स्वयं अनुशासित होगा तो परिवार अनुशासित होगा और जब परिवार अनुशासित होगा तो राष्ट्र अनुशासित होगा।

आज हमारे समाज में यदि चोरी,लूट,व्यभिचार,वैमनस्यता आदि बढ़े हैं तो इसके लिये जिम्मेदार हम स्वयं ही है। क्योंकि ये कार्य वही करते है जिनको नैतिक मूल्यों की शिक्षा नहीं दी गई हो। इसी कारण से वे दिगभ्रमित होकर अपराध करने की ओर प्रवृत्त हो रहे है। टेलीविजन,मोबाइल,इन्टरनेट आदि सूचना एवं स्वच्छ मनोरंजन के माध्यम न होकर अपराध के तरीके सीखने का माध्यम बन गये है। संचार माध्यमों पर आने वाले अधिकांश कार्यक्रमों का उद्देश्य येन केन प्रकारेण धन कमाना रह गया है। निर्माता निर्देशक अपनी फिल्मों को सफल करने के लिये एवं सस्ती लोकप्रियता हाँसिल करने के लिये धार्मिक भावनाओं के साथ खिलवाड़ कर रहे है। ताकि विवादित होने के कारण अधिक से अधिक दर्शक मिले। मोबाइल एवं इन्टरनेट पर विदेशों मे बने हिंसक खेल बच्चों को खिलाने का व्यापार फल फूल रहा है जो बच्चों मे हिंसक प्रवृत्ति को जन्म दे रहा है। ऐसा व्यापार करने वाले को कोई सामाजिक सरोकार नहीं वे अपना आर्थिक हित साधने के लिये देश के बचपन को बर्बाद करने मे लगे हुए है। क्या यही नैतिक दायित्व हमारा समाज निभा रहा है।

नि:संदेह जर्मनी एवं अन्य देशों ने भी फिल्म उद्योग का उपयोग किया लेकिन यह अपने नागरिकों को वैज्ञानिक जानकारी देने, विश्व में व्याप्त अनेक समस्याओं की जानकारियाँ देने के लिये, स्वास्थ्य संबंधी जानकारी देने के लिये किया तथा उससे राष्ट्र को सुशिक्षित किया था लेकिन हमारे देश मे तो सब और चौपट ही चौपट है। फिल्म जगत को इस बात को खुली छूट दी गई है कि लोगों के अंदर कामुकता भड़काए, अनैतिकता पैदा करे,व्यक्ति

* अतिथि विद्वान (वाणिज्य) शासकीय महाविद्यालय, नलखेड़ा (म.प्र.) भारत
** अतिथि विद्वान (समाजशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, नलखेड़ा (म.प्र.) भारत

को बुरा आदमी बनाए। वाहियात किस्मों की फिल्मों से टॉकीज भरे पड़े है। परिवार और समाज की जिम्मेदारी है कि वे इस प्रकार की चीजों से बच्चों एवं नवयुवको को बचाकर रखे। इसके लिये सत्साहित्य तथा धार्मिक ग्रंथों का वाचन अनिवार्य कर देना चाहिये। यौन शिक्षा के स्थान पर योग शिक्षा दी जानी चाहिये। शारीरिक व्यायाम खेलकूद आदि के माध्यम से सर्वांगीण विकास पर बल दिया जाना चाहिये। साहस और शौर्य का शिक्षण महापुरूषों की गाथाएँ सुनाकर दिया जाना चाहिये। ताकि व्यक्ति का जीवन अनुशाासित बन सके। जो व्यक्ति छोटी उम्र मे अनुशासन नहीं सीख सका, जिसने कभी अनुशासन का पालन नहीं किया वो कभी किसी को अनुशासन में नहीं रख सकता अत: परिवार को ही शिष्टाचार एवं शालीनता की शिक्षा छोटी उम्र में बच्चों को दी जाना चाहिये। व्यक्ति व्यक्ति में नैतिकता की भावना जागृत होनी चाहिये। समाज के प्रबुद्ध वर्ग को दिग्भ्रमित होती युवा पीढ़ी को भाारतीय संस्कुति से जोड़ने के लिये पहल करनी चाहिये ताकि व्यक्तित्व का निर्माण किया जा सके, तभी भावी जीवन का उन्नयन हो सकेगा तथा समाज दृढ़ हो सकेगा तभी हमारा देश समर्थ और समृद्ध बन सकेगा, अन्यथा नैतिक मूल्यों का और अधिक पतन एवं दुर्दशा का उत्तरदायी भी हमारा समाज ही होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. दैनिक भास्कर।
2. योजना पत्रिका।
3. कुरूक्षेत्र।
4. दैनिक जागरण।
5. दैनिक नईदुनियां।
6. रचना।

****

वर्तमान परिवेश में नैतिक मूल्य

डॉ. वन्दना अग्निहोत्री *

प्रस्तावना – वर्तमान सभ्यता में हमारे लक्ष्य और व्यवहार के तरीके इतने जटिल और विविध प्रकार के हो गए हैं कि इस आधार पर मूल्य निर्धारण करना बहुत ही कठिन हो गया है। इस हेतु जीवन और अच्छे जीवन का भेद समझना आवश्यक है। हो सकता है कोई वस्तु विचार या कर्म जीवन रक्षा में सहायक हो, किन्तु वह शुभ नही कहा जा सके। यदि वह सबके हित में अथवा सम्पूर्ण व्यक्तित्व के विकास में सहायक नहीं होती तो उसका कोई वास्तविक मूल्य नहीं हैं।

वास्तव में नैतिक मूल्य वही हैं जो मनुष्य को आत्म–विकास की ओर ले जायें। जीवन अपने–आप में मूल्यवान नही है, बल्कि जीवन जिस प्रकार का होता है, उसी से उसका मूल्य समझा जाता है। ' मनुष्य के लिए मूल्य का प्रत्यय (concept of velue) इच्छा की पूर्ति और जैविक (Biological) तथा शारीरिक हित से अधिक उच्च एवं विस्तृत होना चाहिए। मनुष्य और चाहे जो उसमें आत्मा तथा व्यक्तित्व तो होता ही हैं। इसलिए मानवीय मूल्य की कोई उचित कल्पना आत्मानुभूति तथा आत्म सिद्धि के प्रत्यय को सम्मिलित किए बिना नहीं की जा सकती।'[1] इसी तथ्य पर विचार करते हुए प्रो. मेकेन्जी ने लिखा है– ' साध्य मूल्य से हमारा आशय होता है, जो एक विचारशील जीव को उस पर शान्ति से विचार करते हुए वैसा प्रतित हो। इस तरह मूल्यवान की परिभाषा विचारपूर्ण चुनाव के सीधे लक्ष्य के रूप में दी जा सकती है।'[2]

सत्य,शिव और सौन्दर्य तीनो आत्मा से कभी अलग न किए जाने वाले मूल्य हैं और पारस्परिक बंधन में एक दूसरे के साथ गुँथे हुए है। और वे प्रत्येक व्यक्ति के लिए समान रूप से मूल्यवान है। इसलिए उन्हे मूलत: एक ही कहा जा सकता है। 'सत्य तथा सौन्दर्य मानव व्यक्तित्व के एक–एक पहलू से सम्बन्ध रखते हैं, परन्तु शिव या शुभ का सम्बन्ध मनुष्य के पूरे व्यक्तित्व से है। इसके अर्न्तगत मानव–जीवन के सभी मूल्यों का समावेश हो जाता है। इसलिए शिव या श्रेयस (goodness) को उच्चतम शुभ (highest good) मानते हैं।'[3]

किसी भी कार्य को उचित या सत् कहने में हम प्रधानतया उस कार्य के परिणाम का विचार करते हैं न कि उसके चुनने मे उसकी अभिरूचि का । इसलिए 'जब हम किसी कार्य के सत् या उचित होने की बात करते हैं तो हमारा यही आशय होता है कि जहाँ तक हम जानते हैं वह कार्य श्रेयस की उत्पत्ति करनेवाला है'[4]

महर्षि वाल्मिकी का कहना है कि 'श्रेष्ठ पुरूष दूसरे पापाचारी प्राणियों के पाप को ग्रहण नहीं करता। उन्हें अपराधी मानकर बदला नही लेना चाहता।' हमारे ऋषियों और आचार्यो ने जब कहा कि 'आचार परमो धर्म:' तो इसका अर्थ यही रहा कि नैतिकता ही सबसे बड़ा धर्म है।

भारतीय दर्शन में आठ मूल्यों को व्यक्ति के लिए अनिवार्य माना गया है, ये मूल्य हैं– शील, प्रेम, करूणा, त्याग, सहिष्णुता, विनम्रता, ईमानदारी और सत्य 'भारतीय संस्कृति में शील सर्वोपरि है। इसमें समस्त मूल्यों का समावेश हो जाता है। भारतीय संस्कृति की प्राणशक्ति यही मूल्य है।'[4]

' नैतिक मूल्य किसी भी समाज के वे आदर्ष होते है, जिनके प्रति व्यक्ति श्रृद्धा व्यक्त करता है। नैतिक मूल्य वे मापदण्ड है, जो अनुचित, सही – गलत, अच्छे–बुरे व्यवहार की व्याख्या करते हैं। नैतिक मूल्य सम्बन्धित समाज की विशेष निधि होते हैं।[5]

भारतीय संस्कृति में मानव मे सभी नैतिक मूल्यों का समन्वय होता है। नैतिक मूल्यों के अभाव में व्यक्ति कभी मानव नही बन सकता। नैतिक मूल्यों का सम्बन्ध व्यक्ति के व्यक्तित्व से होता है। मनुष्य के लिए शील सबसे महत्वपूर्ण गुण है। इसके बाद दया, त्याग, सत्य, प्रेम, ईमानदारी, सहिष्णुता और विनम्रता उसके अन्य गुण हैं। ' इन गुणों से मनुष्य का जीवन तो सुधरता ही है, साथ ही परिवार ,समाज और राष्ट्र भी आध्यात्मिक विकास करता है। देश में शाँति एवं सुखी जीवन के लिए नैतिक मूल्यों की महती आवश्यकता है।'[6]

वर्तमान समाज में मूल्यों का स्तर दिन पर दिन गिरता जा रहा है। सभी प्रकार के मानवीय मूल्यों के घटने में चरित्र–पतन सबसे बड़ा कारण है। वर्तमान मे यह एक विचारणीय प्रश्न है कि मानव का चरित्र इतना नष्ट–भ्रष्ट क्यों हो रहा है।

महाकवि वेद व्यास ने अठारह पुराणों का सार भाग प्रस्तुत करते हुए कहा है–

'अष्टादष पुराणेषु व्यासस्य वचनं द्वयम।
परोपकाराय पुण्याय पापाय परपीडनम्।।'

अर्थात दूसरो को पीडा देने से बड़ा कोई पाप नही है और परोपकार से बढ़कर कोई पुण्य नही है। वर्तमान परिवेश में जब हम इस पर विचार करते हैं तब देखते हैं कि आज तो पाप–पुण्य का जैसे भेद ही मिट गया है।

शिष्टाचार, सदाचार, शीलाचार आदि सब कुछ धराशायी होकर समाज के उच्च आदर्शो और मूल्यों से दूर जा पडे हैं। इसलिए चारो ओर भ्रष्टाचार का एकछत्र राज्य फैल चुका है। हम अपने सभी प्रकार के सम्बन्धों पर इसके दुष्प्रभाव या तो भूल चुके है या तोड चुके हैं 'भ्रष्टाचार की गोद में ही अनाचार, दुराचार, मिथ्याचार पलते हैं, जो हमारे संस्कार को न पल्लवित होने देते हैं और न अंकुरित ।'

वर्तमान में नैतिक मूल्यों के पतन के कारण समाज में मानवीयता का अभाव पाया जाने लगा है। आदर्शो की कमी के कारण व्यक्ति अपने मार्ग से भटक रहे हैं। जहाँ किसी प्रकार से जीवन को न तो शान्ति, न विश्वास, न

* विभागाध्यक्ष (हिन्दी) माता जीजा बाई शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

आस्था, न मिलाप, न सौहार्द और न सहानुभूति ही मिलती है। पूरा जीवन मूल्य विहीन रेत सा नीरस और तृण सा बेदम होने लगता है।

नैतिक मूल्य मनुष्य के आभूषण तो है ही, साथ में वह समाज और राष्ट्र के लिए ऐसे दिव्य गुण है, जिससे पूरे राष्ट्र में शक्ति का संचार होताहै। किसी भी राष्ट्र की संस्कृति और सभ्यता को महानता के शिखर पर नैतिक मूल्य ही पहुँचाते है। वह राष्ट्र अन्य देशो की तुलना में श्रेष्ठतम सिद्ध होते हैं। अन्य राष्ट्र उनसे प्रभावित होते हैं तथा उनका अनुकरण करना चाहते हैं।

आज के भौतिकवादी युग में नैतिक मूल्यों का जो ह्रास चुका है उसे देखते हुए संसार के कम ही राष्ट्र और समाज में नैतिक मूल्य बच पाये हैं। परस्पर स्वार्थपरकरता, लोलुपता, और अपने–पराये का भेदभाव, कटुतापूर्ण व्यवहार जो चारो तरफ व्याप्त हो रहा है उसके मूल में नैतिक मूल्यों का न होना ही है।

'आज मनुष्य मनुष्यता को भूलकर पशुता को ही सब कुछ श्रेय और प्रेय इसलिए मान रहा है कि नैतिकता का परिवेश उसे कहीं दिखाई नहीं देता हैं।'[7] आश्चर्य की बात है कि भारत जो नैतिकता के गुणों से युक्त राष्ट्र रहा है और जहाँ हम नैतिकता के इस सिद्धान्त का पालन करते हुए अघाते नही थे कि –

'सर्वे भवन्तु सुखिन: सर्वे सन्तु निरामया
सर्वे भद्राणि पष्यन्तु मा कष्चिद् दु:ख भाग भवेत।'

वर्तमान परिवेश में मनुष्य किस प्रकार सुख और शान्ति प्राप्त करे, यह कोई नहीं बता सकता। नैतिक मूल्यों का जीवंत रूप किसी भी समाज और राष्ट्र की युवा पीढ़ी होती हैं क्योंकि नैतिक मूल्यों के विकास की संभावना एवं पात्रता जितनी युवा पीढ़ी में होती है उतनी और किसी में नही होती।

'विद्या ददाति विनयम्।' विद्या विनय की देवी है और विनय से ही पात्रता प्राप्त होती है। पात्रता ही सब गुणों को भूषण बनाने में सक्षम होती है। शिष्टाचार मानव का प्रथम रूप है और शिष्टाचार से ही नैतिकता प्राप्त होती है। सब पूज्यों के प्रति शिष्ट और अन्यों के प्रति सद्वृत्तियों को धारण करने से ही नैतिकता का जन्म होता है। किन्तु वर्तमान में शिष्टाचार समाप्त होता जा रहा है।

समाज और नैतिक मूल्यों का एक–दूसरे से गहरा सम्बन्ध है। इसका अभिप्राय यही है कि नैतिक मूल्यों से ही समाज का आदर्श स्वरूप बनाता है। समाज की हर अच्छाई और बुराई के लिए नैतिक मूल्य आवश्यक है। नैतिक मूल्यों के द्वारा ही समाज, समाज है, अन्यथा वह नरक कुण्ड है जहाँ दुर्गन्धभरी साँसे एक क्षण के लिए जीवन धारण करने के लिए अवष कर देती है।

निष्कर्ष – वर्तमान परिवेश में पाश्चात्य संस्कृति ने मानवीय व नैतिक मूल्यों को पतन के कगार पर लाकर खड़ा कर दिया है। आज संयुक्त परिवारों की परम्परा टूटती जा रही है। इंसान ही इंसान के खून का प्यासा हो रहा है। नैतिकता और मानवता जो कुछ वर्षो पूर्व तक मनुष्य के हृदय में बसती थी, वह आज कहीं देखने को नही मिलती है। अत: समाज सुधार एवं व्यक्तित्व विकास के लिए नैतिक मूल्यों की पुन: स्थापना पर बल दिया जाना चाहिए।

वर्तमान में निरन्तर हिंसक घटनाओं में वृद्धि हो रही है उसका कारण नैतिक मूल्यों की कमी है। नैतिक मूल्य ही व्यक्ति के चरित्र का निर्माण करते हुए उसे संस्कारों का प्रेणता बनाने की दिशा में अग्रसर होते हैं समाज के अनैतिक तत्वो द्वारा की जानेवाली हिंसक घटनाएँ नैतिक मूल्यों के पतन के कारण ही जन्म लेती हैं। जिस पर नियन्त्रण पाना वर्तमान परिवेश में आवश्यक प्रतीत होता है। नैतिक मूल्य ही मनुष्य को धर्म और अध्यात्म की ओर प्रवृत्त करते है। नैतिक संस्कारो के संरक्षक कहलाने वाले मनुष्य ही समाज और राष्ट्र के विकास में अपनी भागीदारी दे सकते है। निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि वर्तमान परिवेश के सामाजिक एवं राष्ट्रीय उत्थान के लिए उच्च नैतिक मूल्यों को धारण करना अत्यावश्यक है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. Fundamentals of Eihics – Pro. Urlean -18
2. A Manual of Ethics –pro. maekenzie – 219
3. Groudwork of Ethics- welon- p – 102
4. नितिशास्त्र की रूपरेखा– चौधरी बलवीरसिंह जी गौछवाल पृ. 121

5,6. नैतिक मूल्य और भाषा – डॉ. शशिराय –पृ. 13

7,8. आक्सफोर्ड हिन्दी निबन्ध– डॉ. रामविलास गुप्ता – पृ. 214

****

आधुनिक जीवन और सामाजिक मूल्य

डॉ. मंगला ठाकुर *

प्रस्तावना – मौजूदा भारतीय समाज संक्रमण के दौर से गुजर रहा है। पुरानी पीढी अपने आचार–विचार, परंपराएँ, रीति–रिवाजों, नियम, धर्म, मानवीय मूल्य एवं सरल जीवन शैली को थामे है, वहीं नई पीढी खास तौर पर युवा वर्ग भारतीय संस्कृति की इस अमूल्य धरोहर को दकियानूसी या 'आउट डेटेड' कहकर ऊँची उड़ान भर रहे हैं।

इस नई जीवन पद्धति ने हमें अपनी जमीं से दूर खड़ा कर दिया है। भारत में आज भी दो समांतर सोच, जीवन पद्धति एवं संस्कृति प्रवाहित हो रही है। महानगरीय आधुनिक शैली बनाम ग्रामीण भारतीय संस्कृति दोनों में जमीं–आसमां का अंतर है।

आधुनिक जीवन शैली के निम्न लक्षण अति तीव्रता से अपने पैर पसारते जा रहे हैं–

1. **एकल परिवार –** परंपरागत भारतीय समाज संयुक्त परिवार का कुन्बा था, जहाँ सभी रिश्ते आपस में गर्मजोशी एवं अपनत्व रखते थे। आज समाज में एकल परिवार का प्रचलन जोरों पर है, जहाँ हमारे नाते–रिश्तों के लिये अपनत्व के लिये कोई स्थान नहीं है।

2. **धन लालसा–** जहाँ भारतीय संस्कृति का मूलमंत्र 'संतोष' हुआ करता था आज उसके लिये कोई जगह नहीं है। धन लिप्सा या संपत्ति के प्रति इतना आकर्षण बढ़ गया है कि हर कीमत पर व्यक्ति धन– संपदा प्राप्त करना चाहता है, इसलिये वह गलत तरीके अपनाने से भी परहेज नहीं करता।

3. **नई सोच–** परंपरागत भारतीय समाज में अपनों का साथ महत्वपूर्ण था। उसकी जगह आज व्यक्तिवाद ने ले ली है। अपनी उन्नति के धनसंग्रह या नाम की खातिर व्यक्ति या युवा पीढ़ी मात्र अपने सपनों का साथ लेकर ही महानगर या विदेश प्रस्थान करती है, बड़ों की सेवा या उनकी देखभाल या उनका सामिप्य उनके विकास की बाधा है, जिन्हें उसके पीछे छोड़ दिया है।

4. **संचार क्रांति–** संचार क्रांति के कारण संपूर्ण विश्व सिमट गया है अत: हम दूर जाकर भी मेल, मोबाईल इत्यादि इलेक्ट्रॉनिक्स मीडिया पर आश्रित होकर अपने एकांतवास या अकेलेपन या दूरी को कम करते हैं, माँ–बाप की यही सोच है कि दूर से ही सही बच्चों से बात–चीत हो जाती है, अत: वे भी मजबूरी में कड़े मन से अपने बच्चों को शिक्षा, नौकरी या व्यवसाय हेतु कहीं भी भेज देते हैं।

5. **मेट्रोपोलिटिन संस्कृति–** भारत की आत्मा जहां गाँवो में बसती थी, अब तेजी से महानगरीय संस्कृति अपने पैर पसार रही है। मेट्रोपोलिटिन सिटी में फ्लेट–संस्कृति, जीवन की भागदौड़, काम की अधिकता आदि ने अपनों को अपनों से दूर कर दिया है। इसका ताजा उदाहरण नोयडा की दो बहनों की मौत है, जो भयंकर अवसादग्रस्त होकर अपने फ्लेट में ही कैद हो गई, उनमें से एक की मृत्यु तक हो गयी एवं दूसरी को महीनों बीमार होने पर स्वयंसेवी संगठन द्वारा अस्पताल में भर्ती करवाया गया। ऐसे अनेक उदाहरण आज यत्र–तत्र पढ़ने को मिल जाते हैं। पारिवारिक प्रेम, पड़ौसी धर्म, मानवीय संवेदना का मेट्रोपोलिटिन सिटी में कोई स्थान नहीं है।

6. **पाश्चात्य जीवनशैली का प्रभाव–** आज का युवा वर्ग पश्चिमी सभ्यता एवं संस्कृति के रंग में रंगा हुआ है। मॉल–संस्कृति, फास्ट–फूड, शीतल पेय, अंग्रजी परिधान, पश्चिमी तौर–तरीके आदि अपनाकर वह अन्य लोगों की तुलना में अपने आप को श्रेष्ठतर साबित करना चाहता है, सभ्यता व संस्कृति पर प्रहार होता है, तो राष्ट्र कमजोर पड़ता है। वहीं दूसरी ओर बहुसंख्यक युवा वर्ग इन सब से दूर रहकर अवसाद एवं हीन भावना से ग्रस्त है।

7. **महिलाओं को वस्तु समझना–** इस घोर उपभोक्तावादी युग महिलाओं के प्रति आदर, स्नेह, मानवीय संवेदनाएँ खत्म करते हुए, उन्हें उपभोग की वस्तु बना दिया है। महिलाओं के प्रति रिश्ते में ईमानदारी, सम्मान, प्रेम, नैतिकता, त्याग, भावना आदि उच्च आदर्शों का युवाओं सहित समूचे समाज ने त्याग कर उन्हे भोग्या बना दिया है।

समाज में बढ़ते हुए विवाह विच्छेद, टूटते परिवार, महिलाओं पर हो रहे विभिन्न अपराधों का कारण यही है। लिव–इन–रिलेशनशिप ने हमारी सामाजिक एवं पारिवारिक मान्यताओं को बड़ा जबरदस्त आघात पहुँचा रहा है।

8. **जिम्मेदारियों से पलायन करना –** नैतिक मूल्यों के पतन के साथ ही वर्तमान परिपेक्ष्य में बहुधा यह देखने, सुनने में आता है कि लोग अपनी जिम्मेदारी के प्रति उपेक्षित रवैया अपना कर पलायनवादी प्रवृत्ति अपना रहे हैं। यही कारण है कि भारतीय समाज में निराश्रित महिला या पुरूष आश्रम, वृद्धाश्रम, अनाथालय बालगृह बड़ी संख्या में स्थापित हो रहे हैं, जो हमारे मानवीय एवं नैतिक मूल्यों की धज्जियाँ उड़ा रहे हैं।

9. **भारतीय मूल्यों के प्रति उपेक्षा –** वर्तमान समय में भारतीय मूल्यों के प्रति उपेक्षापूर्ण दृष्टिकोण अपनाया जा रहा है।

आत्मसंयम, आत्म अनुशासन, सत्य, अहिंसा, धैर्य, वीरता, सदाचार जैसे उच्च मानवीय आदर्श समाज से बाहर हो रहे हैं, इनके स्थान पर जल्दबाजी, कपट, झूठ, षडयंत्र, धोखा, व्यभिचार, दिखावा, तड़क–भड़क ने अपना मायाजाल फैला दिया है। इनके उदाहरण हम सड़क पर रेल्वे क्रासिंग या किसी कारणवश परिवहन बाधित होने पर देख सकते हैं। वहीं किसी भव्य विवाह समारोह में तड़क–भड़क, प्रदर्शन व शान–शौकत का छद्म प्रदर्शन देखना आम बात है।

निष्कर्ष – उपरोक्त लक्षण मौजूदा भारतीय समाज में यत्र–तत्र बिखरे हैं, तेजी से उभर रहे हैं, जिनके परिणामस्वरूप भारतीय समाज व संस्कृति संक्रमण के दौर से गुजर रहे हैं। यहाँ इस बात को कोई नहीं समझना चाहता कि चीन, जापान, जर्मनी, फ्रांस, इंग्लैण्ड जैसे देश विकसित देशों की कतार में अपनी सभ्यता, संस्कृति व मूल्यों को लेकर ही जगह बना पाये हैं, अन्य देशों की नकल करके नहीं। यदि हमें अपने समाज, परिवार एवं व्यक्ति को पतन के गर्त से बचाना है तो, उच्च नैतिक मूल्यों का पालन करना होगा तभी हमारी अगली पीढ़ी को सुरक्षित वातावरण मिल पाएगा।

* प्राध्यापक (इतिहास) शासकीय महाविद्यालय, बड़वाह (म.प्र.) भारत

नैतिक मूल्य एवं सामाजिक विकास

डॉ. प्रेमलता तिवारी *

प्रस्तावना – वर्तमान सामाजिक अव्यवस्था एवं बढ़ते हुए अपराधों के लिए सांस्कृतिक पतन उत्तरदायी है। भारतीय संस्कृति उच्च नैतिक मूल्यों के लिए विष्वभर में सराही जाती रही है। वैदिक परम्परा में नैतिक मूल्यों एवं आदर्शों को चरित्र के आवश्यक अंग माना गया है। आश्रम व्यवस्था में जीवन के प्राम्भिक पच्चीस वर्ष व्यक्ति के व्यक्तित्व विकास में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करते थे। व्यक्ति शिक्षण के साथ–साथ उच्च नैतिक गुणों की शिक्षा भी ग्रहण कर समाज का योग्य नागरिक बनता था। धीरे–धीरे सामाजिक व्यवस्था में बदलाव आता गया। आधुनिकीकरण एवं वैज्ञानिक उन्नति ने व्यक्ति के सोच को प्रभावित किया। वैश्वीकरण के परिणामस्वरूप पाश्चात्य सभ्यता एवं संस्कृति ने भारतीय संस्कृति पर हमला किया। हम अपनी मूल संस्कृति को भूलकर विदेशी संस्कृति को अपनाने की होड़ में लगे हुए हैं। जिसमें व्यक्ति अति महत्वाकांक्षी, आत्मकेंद्रित एवं स्वार्थी होता चला जा रहा है। प्रतिस्पर्धा बढ़ रही है इसमें व्यक्ति स्वउन्नति के दौड़ में नैतिक मूल्यों को भूलता जा रहा है। भौतिकवाद का चरम वर्तमान सामाजिक व्यवस्था में दिखाई दे रहा है न केवल महानगर अपितु ग्रामीण एवं छोटे–छोटे नगर भी आधुनिकता की दौड़ में आते हैं। सर्वाधिक प्रभाव समाज के युवा वर्ग पर पढ़ रहा है। वे परिवार के आदर्शों एवं नैतिक मूल्यों की परवाह न करते हुए धन कमाने की अंधी दौड़ में शामिल हो रहे हैं। जीवन के वास्तविक उद्देश्य एवं लक्ष्यों को भूलकर विलासिता पूर्ण जीवन जीना ही एकमात्र लक्ष्य मान बैठे हैं। जिसका परिणाम कई सामाजिक समस्याओं के रूप में दिखाई दे रहा है जैसे महिलाओं की असुरक्षा, युवाओं में नशाखोरी, परिवार व्यवस्था का टूटना, बढ़ती हुई तलाक की दर, लिव इन रिलेशनशिप इत्यादि।

संयुक्त परिवार में बुजुर्गों का नियंत्रण युवापीढ़ी को बांधे रखता था वहां नैतिक मूल्यों का पालन अनिवार्यत: किया जाता था। व्यक्तिगत स्वच्छदंता न के बराबर थी इसका प्रभाव समाज व्यवस्था पर भी दिखाई देता था। सामाजिक **संगठन** दिखाई देता था। अपराध नियंत्रित थे किन्तु वर्तमान महानगरीय सभ्यता में संयुक्त परिवार का पालन सामाजिक मूल्यों में गिरावट का प्रमुख कारण दिखाई दे रहा है। महिलाओं के प्रति सम्मान में कमी दिखाई दे रही है। पुरूषों की निगाहों में नारी केवल भोग्या बन कर रह गई है। पुरूषों का व्यवहार नारी के प्रति पाश्विक होता जा रहा है। महिलाओं के प्रति जघन्य व्यवहार इन नैतिक मूल्यों के अभाव में किये जा रहे हैं। उच्च चारित्रिक गुणों के अभाव में युवा वर्ग भटक रहा है। नशे की अवस्था में वह विवेक शून्य हो विकृत मानसिकता का परिचय देता है।

बढ़ते हुऐ अपराधों एवं नैतिक मूल्यों के पतन में सोश्यल मीडिया ने भी बढ़ावा दिया है। कच्ची उम्र के बच्चों के सामने नेटवर्क के जरिये समस्त सामग्री सहज उपलब्ध है जिससे बच्चा जिज्ञासावश उन सभी जानकारियों को प्राप्त कर लेता है जो उसे परिपक्व उम्र में लेना चाहिए। इस दूषित पर्यावरण में विकसित बच्चे का सामाजिक एवं मानसिक विकास भी दूषित हो रहा है। बाल सुलभ सहजता समाप्त होती जा रही है। बाल्यावस्था में ही परिपक्व होता जा रहा बचपन नैतिक मूल्यों से दूर होता चला जा रहा है।

सामाजिक विकास में बाधक आर्थिक अपराध भी चरम स्तर पर दिखाई दे रहे हैं। समाज में बढ़ता हुआ भ्रष्टाचार भी नैतिक पतन के लिए उत्तरदायी है। उच्च पद से लेकर चपरासी एक नैतिक मूल्यों को ताक में रखकर निहित स्वार्थों की पूर्ति में लगा हुआ है। किसी भी काम को करने के लिए जब तक संबंधित व्यक्ति को खुश नहीं किया जाए कागज आगे खिसकते ही नहीं है, क्या यही हमारा नैतिक चरित्र है? हम इतने गिरे हुए क्यों हैं कि हम अपने कर्तव्य पालन करने में भी अतिरिक्त लाभ की कामना करते हैं। हमें अपना नैतिक आदर्श एवं मूल्यों का स्तर ऊंचा उठाना होगा। हमारी छवि स्वच्छ होगी तो ही हम संस्कृति की रक्षा कर पाऐंगे।

नैतिक मूल्यों की आवश्यकता व्यक्तिगत सामाजिक एवं राष्ट्रीय स्तर तक बनी हुई है। हमें अपने राष्ट्र के प्रति भी उतना ही उत्तरदायी बनना है जितना हम परिवार के प्रति होते हैं। इन सभी के लिए नैतिक मूल्यों का स्तर उच्च होना चाहिए। व्यक्तित्व के मौलिक गुणों में नैतिक विकास पर शिक्षा पद्धति में ध्यान दिया जाऐ। बाल्यावस्था में ही शिक्षण के माध्यम से विद्यार्थियों को नैतिक गुणों की शिक्षा दी जाऐ, उन्हें परिवार, राष्ट्र एवं समाज के प्रति कर्तव्यों की सीख दी जाऐ, उन्हें आदर्श नागरिक बनाया जाऐ जिसमें ईमानदारी के साथ कर्तव्य पालन की सीख, धार्मिक संस्कार एवं मितव्ययीता की शिक्षा भी सम्मिलित हो जिससे वे अपनी आवश्यकताओं को सीमित रखते हुए श्रेष्ठ जीवन जीए, मानवधिकारों का पालन करे, सामाजिक समरसता का ध्यान रखें उनके मन में संवेदनाऐं हो जिससे वे समाज में दीन हीन, रूगण व्यक्तियों के दुखों को बाँटे, वृद्धों के प्रति सम्मान भाव रखें, माता–पिता की आज्ञा का अनुसरण करें। ऐसे श्रेष्ठ संस्कारित शिक्षण के माध्यम से हम अपने परिवार, समाज एवं राष्ट्र को सुरक्षित रख पाऐंगे। हमारा समाज विकास की ओर अग्रसर होगा। हम अपराधविहिन समाज की कल्पना कर सकते हैं। भ्रष्टाचार मुक्त राष्ट्र में जी पाऐंगे एवं स्वच्छ सुरक्षित पर्यावरण में अपने आत्मिक एवं सामाजिक विकास कर पाऐंगे। अत: नैतिक मूल्यों एवं आदर्शों को प्राथमिकता से बच्चों को सिखाए जाएं। आज के बालक ही कल के नागरिक हैं यदि हमें भविष्य अच्छा चाहिए तो वर्तमान को सुधारना होगा, अच्छी नींव से ही अच्छी ईमारत बनती है। इस बात को ध्यान में रखते हुए बच्चों के पालन–पोषण पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है जो परिवार, संस्था एवं स्कूलों के माध्यम से ही संभव है। वही युवा पीढ़ी को भी सजग एवं सतर्क रखने की आवश्यकता है तभी सामाजिक विकास एवं नैतिक मूल्यों की सुरक्षा संभव है।

* प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय महाविद्यालय, बड़वाह (म.प्र.) भारत